Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AYURVED VIJNAN

1957 G. K. U.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Samaj Foundation Chenn

omain. Gurukul Kangri Co

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

079406

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

Stock Verification-20..

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ४ भाद्रपद सम्वत २०१४ संख्या ६

सितम्बर १९५७

COMPILED

आयुर्वेद-विज्ञान

चिकित्सा संसार में क्रान्ति लाने वाला मुख्य वैज्ञानिक पत्र

AYURVED-VIJNAN

The Leading Hindi Journal Explaining The Ayurvedic System on Scientific Lines

सम्पादक

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

079406

079406

विषय-सूची

१. त्रिवेन्द्रम में आयुर्वेदिक चिकित्सकों को राष्ट्रपति का हितोपदेश	...	१२९
२. पचन व्यवस्था का सूक्ष्म विवेचन	... ...	१३०
३. परमाणु बम जन्य भयंकर व्याधियां	... ...	१३४
४. अकस्मात आविष्कार की घटना	... ...	१४३
५. आहार के अतियोग का परिणाम	... ...	१४४

प्रकाशक—

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य, आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय, २२ फैज बाजार, देहली।

मुद्रक—चदलिया प्रिंटिंग प्रेस, दाईवाड़ा नई सड़क, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियम

१—आयुर्वेद-विज्ञान प्रत्येक अंग्रेजी मास की १ तारीख को प्रकाशित होता रहेगा।

२—डाक-व्यय सहित इसका मूल्य ३) वार्षिक, एक प्रति का मूल्य ।=) होगा।

३—पत्र मंगाने वालों को अपना पता साफ २ अक्षरों में लिखना चाहिये।

४—जिन व्यक्तियों के पास उस मास की ५ ता० तक पत्र न पहुंचे उन्हें इसकी सूचना देनी चाहिये।

५—यदि एक-दो मास के लिये पता बदलवाना हो तो उसका प्रबन्ध स्वयम् डाकखाने से कर लेना चाहिये। अधिक समय के लिये पता बदलवाना हो तो फिर हमें सूचित करना चाहिये।

६—पत्र व्यवहार करते समय ग्राहकों को अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये। अन्यथा उत्तर नहीं दिया जावेगा।

७—पत्र व मूल्य सम्बन्धी पत्र-व्यवहार मैनेजर आयुर्वेद विज्ञान के नाम से और लेख, समालोचनादि व पुस्तकादि सम्पादक के नाम से भेजना चाहिये।

८—कोई भी पत्र, पुस्तक समालोचना के लिये भेजी जाय उनकी दो प्रति भेजनी चाहिये।

९—आयुर्वेद विषयक वैज्ञानिक गवेषणापूर्ण लेखों को पत्र में सर्व-प्रथम स्थान दिया जायेगा और श्रेष्ठ सचित्र लेखकों को पुरस्कृत भी किया जायगा।

१०—वृथा के आडम्बर पूर्ण पृष्ठ-पोषक लेखों के लिये इसमें स्थान नहीं मिलेगा। किसी भी लेख को घटाने, बढ़ाने व प्रकाशित करने, न करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार होगा।

११—जो लेख भेजे जायें, कागज पर एक तरफ हाशिया छोड़ कर लिखे होने चाहिये।

१२—उत्तम २ अलभ्य आयुर्वेद साहित्य सम्बन्धी चित्र लेख व वनस्पतियों आदि को जो सुरक्षित भेजेंगे उनको सपारिश्रमिक मार्ग व्यय आदि सब आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय से दिया जायेगा।

१३—आयुर्वेद शास्त्र सम्बन्धी प्रश्नों को छोड़ कर किसी परामर्श सम्बन्धी या किसी रोगी के लिये रोग-सम्बन्धी प्रश्नों पर प्रति प्रश्न के लिये आयुर्वेद-विज्ञान के ग्राहक आठ आना, जो ग्राहक नहीं वह प्रति प्रश्न एक रुपये का टिकट प्रश्न के साथ भेजेंगे तभी उनके प्रश्न और उत्तर छापे जायेंगे।

विज्ञापन छापने के नियम

१—किसी भी विज्ञापन छापने वाले या बन्द करने वाले को पत्र प्रकाशन से १५ दिन पूर्व सूचना देनी चाहिये।

२—अश्लील सभ्यता के विरुद्ध विज्ञापन नहीं लिए जायेंगे।

३—कोई भी विज्ञापन जनता को धोखा देने वाला सिद्ध [illegible] पर उसका प्रकाशन बन्द कर दिया जायगा [illegible] जब तक वह सन्तोषप्रद प्रमाण न देगा जो मूल्य आ चुका है वापस नहीं दिया जायगा।

४—विज्ञापन का मूल्य सर्वथा प्रथम लिया जायगा।

५—आधे कालम से कम विज्ञापन दाताओं को आयुर्वेद विज्ञान बिना मूल्य नहीं दिया जायगा।

६—एक वर्ष के लिये विज्ञापन देने वाले को =) रुपया कमीशन काट दिया जायगा।

विज्ञापन के दर

७—१ पृष्ठ यानी २ कालम की प्रतिबार			की छपाई	४०)
आधा पृष्ठ	" १	"	"	" २४)
चौथाई ,,	१।२	"	"	" १६)
टाइटल के पीछे के पृष्ठ की			"	" ५०)
" तीसरे	"	की	"	" ४५)
" चौथे	"	की	"	" ६०)

८—ट्रेड डायरैक्टरी में विषय वार विज्ञापन प्रति ३) रु० के हिसाब से लिया जावेगा।

मैनेजर—आयुर्वेद विज्ञान,
२२, फैज बाजार, देहली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद-विज्ञान

आयुर्विदेव वितते किल शास्त्र जाते पुम्भिः प्रयत्नपरकैर्भवतीह लभ्यम् ।
शक्तिं शिवं च जनता यदि कांक्षतीयम् विज्ञानमेव भजतां सततं विशेषम् ।।

वर्ष ४ | २०१४ भाद्रपद वि०, सितम्बर १९५७ ई० | अंक ६

त्रिवेंद्रम में आयुर्वेदिक चिकित्सकों को राष्ट्रपति का हितोपदेश

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने १४ ता० को त्रिवेन्द्रम आयुर्वेदिक कालेज की नई इमारत का उद्घाटन करते हुए आयुर्वेदिक चिकित्सकों को सम्बोधन कर सलाह दी कि वे सब विज्ञान की उन्नति से कदम मिलाकर चलने का प्रयत्न करें वरना उनके लिये उन्नति करना सम्भव नहीं, उन्हें आधुनिक चिकित्सा पद्धति को समझना चाहिये और उसकी समस्त उपयोगी बातों को ग्रहण कर लेना चाहिये। ऐसा करने पर ही आयुर्वेद का पुनरुत्थान सम्भव है।

राष्ट्रपति ने कहा—आयुर्वेद यद्यपि अन्य चिकित्सा प्रणालियों से आगे नहीं बढ़ा, तब भी वह किसी से पीछे नहीं है। यह इसलिये नहीं कि वह जीवन का विज्ञान है, न कि रोग का। आजकल में देखता हूँ कि उत्तम स्वास्थ्य बनाने पर इतना जोर नहीं दिया जाता जितना कि व्याधियों के निवारण पर। उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति के बारे में तो लोग यह मान बैठे हैं कि वह अपने आप ही प्राप्त हो जाता है। किन्तु जहां देखो गिरते हुए स्वास्थ्य और बढ़ते हुए रोगों की ही चर्चा दिखाई देती है। यदि लोग जीवन की विभिन्न क्रियाओं के समय संयम से काम लें और ऋतु अनुकूल स्वास्थ्य कर बातों की ओर ध्यान रखें और अपना दैनिक जीवन तथा स्वभाव उसी के अनुसार बनावें तो उन्हें हर समय चिकित्सकों के पास भागना नहीं पड़ेगा।

उन्होंने आगे कहा—आधुनिक चिकित्सकों और आयुर्वेदिक चिकित्सकों को अपने ही हित के लिये एक दूसरे की चिकित्सा प्रणाली को समझने का प्रयत्न करना चाहिये। और आधुनिक चिकित्सकों को आयुर्वेद के प्रति सहानुभूति और सम्मान रखना चाहिये। जिसे वह जानते नहीं उसे ठुकराना नहीं चाहिये। उन्हें चाहिये कि वे उसे समझने का प्रयत्न करें और अध्ययन करें तथा यह मालूम करें कि उसका क्या आधार था जिसके बल पर यह प्रणाली इतने काफी अर्से से जारी है तथा देश के करोड़ों लोगों की आवश्यकता की पूर्ति करती चली आ रही है।

अभी अभी स्वास्थ्य मन्त्री ने शिकायत की है कि देश में अस्पतालों, डाक्टरों और नर्सों की बहुत कमी है। मैं हैरान हो गया और सोचने लगा क्या हमारा लक्ष्य यही होना चाहिये कि देश व्याधियों से परिपूर्ण हो ज[illegible] ताकि उन सबों के लिये डाक्टरों की व्यवस्था की जाय। हमारा तो लक्ष्य यह होना चाहिये कि जन समाज के स्वास्थ्य की दिशाओं में ऐसा सुधार करें कि व्याधियां एक अपवाद बन जांय और चिकित्सकों की सहायता की कभी कभी ज़रूरत पड़े।

हमारे राष्ट्रपति जी ने आयुर्वेदिक चिकित्सकों तथा डाक्टरों को इतना उचित समयोपयोगी हितोपदेश दिया है जिस पर दोनों को ध्यान देना चाहिये। हम डाक्टरों से तो इस सम्बन्ध में कोई निवेदन करने का अधिकार नहीं रखते किन्तु वैद्यों को कहने का पूरा अधिकार रखते हैं कि वह अब भी चेतें और आधुनिक विज्ञान की कृपा से चिकित्सा क्षेत्र में जो उन्नति हो रही है उसे समझें और उसे ग्रहण कर आयुर्वेद के जिन अंगों में कोई कमी है उससे उसकी पूर्ति करें। और आयुर्वेद को इतना समृद्ध बनावें कि वह अलोपैथी के ज्ञान की तुलना में आ जाय।

होम्योपैथी की ओर देखो चिकित्सा उसकी अपनी है निदान शरीर का अवशेष ज्ञान जो भी विज्ञान उसे देता है वह उसका आश्रय लेकर किस तेजी से उन्नति कर रहा है। क्या हमारे लिये यह पथ बाधक है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पचन व्यवस्था का सूक्ष्म विवेचन

प्राणी तो संसार में अनेक प्रकार के हैं। किन्तु उन सबों के आहारीय द्रव्यों को खाने की एक सीमा देखी जाती है कोई प्राणी घास खाता है तो कोई मांस। बहुत कम प्राणी ऐसे मिलेंगे जिन्होंने परिस्थिति प्रभाववश दोनों ओर मुंह मारा हो। किन्तु मानव प्राणी एक ऐसा प्राणी है जिसे सर्व भक्षी कहा जाता है। यह न घास छोड़ता है न मांस। यही नहीं इनसे भिन्न ऐसे ऐसे जहरीले, कटु पदार्थ भी खाने से नहीं चूकता जिसे संसार का कोई प्राणी सूंघना तक पसन्द नहीं करता। इसीलिये तो इस द्विपादी जीव के साथ सर्व-भक्षी विशेषण लगाने से ठीक हुआ किन्तु घास, पात, अन्न, धान, फल, फूल, कन्द, मूल, भेड़, बकरा, सांप, गोह, मेंढक, मछली, आदि अनेकों प्रकार के वानस्पतिक व प्राणिज पदार्थों को जो नित्य खाता है इन सबों को उसका शरीर किस रूप में बदल कर उपयोग करता है? इस बात की व्यवस्था को हजारों वर्षों तक वह स्वयं न जान सका।

जब इसने कृत्रिम साधनों का उपयोग जाना, शरीर व्यच्छेद के साधन उसके हाथ लगे तब इसे कुछ कुछ पचन व्यवस्था का ज्ञान हुआ। जैसे जैसे शरीर के सूक्ष्म अंगों के छेदन, भेदन की विधि का ज्ञान बढ़ता चला गया शरीर की आन्तरिक व्यवस्था कैसे चलती है? इस पर प्रकाश पड़ता चला गया। इस यान्त्रिक-युग में आकर मनुष्य ने ऐसे सूक्ष्म साधन प्राप्त कर लिये जिनके द्वारा शरीर के भीतर चलने वाली व्यवस्था को वह सही तौर पर समझने में समर्थ हुआ। और वह यह बात भी सही तौर पर जान सका कि समस्त खाद्य, पेय पदार्थों के जितने वाह्य रूप दिखाई देते हैं अन्दर जाकर वह उतने ही रूप में नहीं रहते, प्रत्युत उनका रूपान्तर होकर वह कुछ श्रेणी में विभक्त हो जाते हैं। यह खाद्यपेय की वस्तुएं कौन से कारणों को पाकर कैसे बदलती हैं? और शरीर के भीतरी भाग में कैसे प्रवेश करती हैं इन बातों को भी अनेक साधनों से जान लिया गया है। जो भी वस्तुएं अन्न प्रणाली में प्रवेश करती हैं वहाँ से वह सब रस वाही स्रोत मार्ग में प्रवेश करने वाली कैसे बनती है? इसको समझने के लिये हमने जो परिभाषा बनाई वह पचन शब्द से व्यक्त की। हमने जब अग्नि का आविष्कार कर उसको व्यवहार योग्य बनाया तो हमने देखा अनेक वानस्पतिक, व प्राणिज द्रव्य अग्नि जल का संयोग पाकर गल जाते हैं और घुल मिलकर एक हो जाते हैं हमने समझा, बस ऐसी ही व्यवस्था हमारी उदरदरी में भी है, कि इसी तरह की किसी भौतिक अग्नि के प्रभाव से खाद्य, पेय की प्रत्येक वस्तुओं का पचन होता है। क्या वस्तुतः ऐसी ही पचन व्यवस्था हमारी अन्न प्रणाली में है? जब इस बात को देखने जानने के साधन उपलब्ध हुए तो ऐसी कोई बात नहीं देखी गई। तब उदरदरी में वस्तुएं कैसे गलती और पचती हैं? इसको नये सिरे से समझने का प्रयत्न हुआ। इस बात का प्राचीन चिकित्सकों को स्वप्न में भी ध्यान नहीं था कि ग्रन्थि तुल्य अंगों का इस प्रक्रिया संचालन में कोई महत्व पूर्ण हाथ होगा। यद्यपि प्रकृत का कार्य व्यापार इस अंश में होता उन्होंने देखा भी था। पित्त की उत्पत्ति और उसका यकृत से चलकर पित्ताशय में संचय का ज्ञान उस समय प्राप्त कर लिया गया था और यह भी जान लिया गया था कि पित्त विशेष प्रणाली से चलकर ग्रहणी में पहुँचा करता है किन्तु इसके पहुंचने का मुख्य उद्देश्य क्या है? इसको उस समय नहीं समझा जा सका था।

खैर! जैसे जैसे समय बीतता गया मुख, आमाशय, ग्रहणी और क्षुद्रान्त्र आदि अन्न प्रणाली के मार्गों में ग्रन्थियों का ज्ञान होता चला गया और इन ग्रन्थियों के रसों के सम्पर्क से खाद्य, पेय की अनेक वस्तुओं के घुलने और रूपान्तरित होकर पचने का अर्थ नई विधि से समझने का अवसर मिला। किन्तु क्या पानी, दूध, गोंद, राल, दवाइयां, खटाई, मिठाई, अन्न, माँस सब एक ही विधि से पचा करते हैं? ऐसी बात नहीं है। लोग कहते हैं, पानी पच गया, दवाई पच गई, क्या यह चीजें भी पचा करती हैं? ऐसी बात नहीं देखी गई। तब पानी, नमक, क्षार, क्षार-समोद, भस्में, रस, आदि क्या पेट में जाकर पचते नहीं? तो फिर यह शरीर के भीतर रक्त में बिना पचे कैसे पहुँच जाते हैं? यही तो पाठकों के समझने की चीज है।

कौन कौन सी वस्तुएं पचती हैं कौन सी नहीं? इसको किस तरह समझा जाय और जाना जाय? इस पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस यान्त्रिक-युग में खूब अनुसन्धान हुए हैं। शरीर धर्म शास्त्र के ज्ञाताओं ने इस बात को प्रयोगों द्वारा जान लिया है कि कुछ चीजों का शरीर में शोषण,व अभिसरण होता है और कुछ चीजों का परिवर्तन या पचन, जिन चीजों का शोषण या अभिसरण(Osmosis)होता है उनका पचन नहीं होता अर्थात उनके उदरस्थ होने में वहाँ कोई परिवर्तन नहीं आता, तब वह किस विधि से रक्त में पहुँचती हैं ? सुनिये !

आप भोजन करते हैं और भोजन करते समय जल-पान भी करते हैं आपने जो जल पिया वह भी भोजन के साथ पचेगा ऐसा जो ख्याल करते हैं यह आपका भ्रम है। जल की पचन व्यवस्था भोजन के साथ नहीं चलती। तब जल कहां जाता है ? सुनिये—

हमारी अन्न प्रणाली के अन्तस्तर पर जो भीतर की ओर कला (आवरण) चढ़ी हुई है वह श्लेष्मिक कला के नाम से पुकारी जाती है। यह कला जल ग्राही होती है। भोजन के साथ जब हम जल पीते हैं और पेट हमारा भर जाता है उस समय पेट की तरफ से उस कला पर जल का दबाव ज्यादा होता है इसलिये उस कला द्वारा जल शोषित व अभिसरित होकर सीधे रक्त में पहुँचने लगता है। आपको हजारों बार यह अनुभव में बात आई होगी कि आपको तृषा लग रही है जिससे गला मुख, तालु सब सूख रहे हैं, जहां आपने गिलास जल पिया नहीं कि सबके सब अंग उसी क्षण कैसे तर हो जाते हैं ? इसमें प्रधान कारण यही है कि पानी मुख में जाते ही मुख की कला, गले, तालु की कला जल ग्राही होने से उसी समय उस कला में जल का शोषण व अभिसरण होने लग जाता है, इसीलिये बात की बात में प्यास बुझ जाती है। यदि जल की कमी भीतर भी हो रही हो और रक्त भी गाढ़ा हो रहा हो तो उतने जल से सारे अवयवों की तृप्ति नहीं होती इसीलिये पुनः जल पान करने की इच्छा होती है। वह सारा का सारा जल आमाशय से आगे नहीं जाता, प्रत्युत शोषण, अभिसरण विधि से वह जल आमाशय की कला द्वारा शोषित होकर सीधे रक्त में मिल जाता है। इसलिये जल का पचन नहीं होता शोषण व अभिसरण होता है।

आप सबों को बीसों बार यह बात अनुभव में आयी होगी कि आपने रोगी को कोई औषध दी और आपके देखते देखते रोगी चैतन्य हो गया। इतनी जल्दी औषध किस तरह पच गई ? इस बात को आप ठीक तौर पर नहीं समझ सकते। वास्तव में हमारी भस्में क्षार प्रकृति की होती है, बहुत सी औषधियों के गुण प्रभावी भाग भी क्षार समोद (Alkaloid) युक्त होते हैं। बहुतों में कई प्रकार के लवण, क्षार भी मिश्रित होते हैं यह समस्त वस्तुएं पचती नहीं, प्रत्युत उदरदरी में पहुंच कर जल में घुल जाती हैं और वह औषध के गुणांश वाला जल या लवण, क्षार युक्त जल वहीं उसी समय आमाशय की कला से शोषित व अभिसरित होकर रक्त में पहुंच जाता है। रक्त परिभ्रमण की गति इतनी तीव्र है कि ५ मिनट से पहिले ही रक्त सारे शरीर में एक चक्कर लगाकर पुनः हृदय में पहुंच जाता है। जहाँ औषध रक्तस्थ हुई कि उसका उप-योग जहां होना है रक्त चक्रिकाएं उसे उसी क्षण उस अवयव पर उसको उपयोजित करने का आयोजन करती है परिणामतः उसी समय सिर दर्द, गुल्म, शूल, मूर्छा आदि कोई भी कष्ट हों सद्यः जो लाभ देखा जाता है उसका कारण जल के माध्यम से उक्त औषध का शोषण व अभिसरण है।

जिस तरह लवण, क्षार, भस्मों के अंश क्षार समोद आदि घुलकर विना पचे सीधे रक्त में पहुंच जाते हैं इसी तरह क्या चीनी का शर्बत, दूध भी विना पचे रक्त में पहुँच जाता है ? चीनी, गुड़, शहद आदि मीठी चीजें पानी में घुलकर जब पेट में पहुंचती हैं, दूध पिया हुआ जब पेट में पहुँचता है तो यह दोनों ही घोल जलवत् शोषित या अभिसरित नहीं होते। जैसे लवण, क्षारादि हो जाते हैं। ऐसा अन्तर क्यों ? शर्कराएँ बहुत प्रकार की हैं इक्षु शर्करा, यवशर्करा दुग्धशर्करा, द्राक्षशर्करा आदि यह सब जल में घुलनशील अवश्य हैं किन्तु इनमें से यवशर्करा और द्राक्षशर्करा को छोड़ कर बाकी शर्कराएं शोषण या अभिसरण-विधि से कला द्वारा प्रवेश नहीं कर सकतीं। इनके लिये उक्त कला अप्रवेश्य है। कोई भी शर्करा जब तक द्राक्षशर्करा या यवशर्करा में नहीं बदल जाती उसका कण चाहे जल में घुला रहे, जल के साथ अभिसरण विधि से उसका कला-प्रवेश नहीं होगा केवल जल शोषित होकर घोल गाढ़ा होता चला जायगा किन्तु जब इक्षुशर्करा दुग्ध शर्करा आदि द्राक्षशर्करा में जैसे जैसे बदलते चले जायंगे उनका उतना ही अंश साथ साथ अभिसरण विधि से शोषित होकर रक्त में पहुंचता रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुग्ध भी पिया हुआ उदरदरी में जाकर लवणाम्ल के मिश्रण से छोटे छोटे चक्कों में फटकर जमने लगता है उसका जल, दुग्ध शर्करा, लवण उस थक्के से भिन्न हो जाते हैं, थक्के की वस्तुएं तो ग्रन्थिरस प्रभाव से परिवर्तित होती या पचती हैं, जल का लवणांश शोषित हो जाता है और शर्करा जब द्राक्ष शर्करा में बदल जाती है तब वह अभिसरण विधि से रक्त में पहुंच जाती है।

वस्तुओं के रूप विभेद का कारण और इनका पचन–आप देखते हैं संसार में बनस्पतियां ही लाखों प्रकार की हैं, इसी तरह जलचर, थलचर और नभचर प्राणियों की संख्या भी लाखों से ऊपर है। हमारे शास्त्रकारों ने जो ८४ लाख योनियां मानी हैं आप यही मान लीजिये कि विश्व में प्राणि और वनस्पति सब मिलाकर ८४ लाख योनि अर्थात् इन भेदों में सृष्टि फैली हुई है। आप देखते हैं कि गेहूँ, चना, अरहर में केवल रूप का ही अन्तर नहीं है प्रत्युत तीनों के अन्दर का खाद्य द्रव्य भी एक दूसरे से रूप, गुण, स्वभाव, प्रभाव में अन्तर रखता है। इसमें मुख्य कारण यह है कि उनकी वाह्य रचना में ही भेद नहीं है प्रत्युत उनके आन्तरिक पदार्थ रचना में भी भारी भेद होता है।

यद्यपि अनुसन्धान कर्त्ताओं की जहाँ तक पहुंच हुई है उन्होंने खोज करते करते इस बात को जान लिया है कि चाहे बनस्पति हो या कोई प्राणि उनकी शरीर रचना जिस द्रव्य से निर्मित है वह अस्रजन (Protein) नामक एक जटिल यौगिक का मूल पदार्थ हैं किन्तु विश्व के समस्त प्राणि न तो एक सी परिस्थिति में उत्पन्न हुए हैं न एक सी परिस्थित में उनका निवास है। इसी भिन्नता के कारण उन्होंने अपने शरीर के मूल घटक इस द्रव्य को अपनी परिस्थिति के अनुरूप बनाया है, इसीलिये उनके उस अस्रजन की जटिल रचना में ही अन्तर नहीं हुआ प्रत्युत उनके बाह्य रूप, गुण, स्वभाव में भी काफी अन्तर देखा जाता है। अनुसन्धान कर्त्ताओं ने देख देखकर अब तक इस अस्रजन का जो श्रेणी विभाजन किया है उन्होंने इसकी आन्तरिक रचना के अनुसार २२ प्रकार मालूम किये हैं। जिस तरह दूध के अस्रजन से दाल, गेहूँ, मण्डूक, शेर, बकरी के अस्रजन में हम प्रकटतया अन्तर पाते हैं। केवल वाह्य रंग रूप में ही नहीं इनकी आन्तरिक रचना में भी काफी अन्तर होता है। इसीलिये तो हम बकरे का मांस तो खा जाते हैं पर शेर, व्याघ्र का नहीं खा सकते क्यों? मनुष्य ने अनुभव से जाना कि भेड़ बकरियाँ खाद्य द्रव्य हैं पर शेर, कुत्ता, शृगाल, श्वान नहीं। इसी प्रकार पक्षियों में भी कुछ खाद्य और कुछ अखाद्य है। यद्यपि शेर व्याघ्र उन्हीं जानवरों के मांस पर जीवन निर्वाह करते हैं जिन्हें मनुष्य भी खाता है किन्तु शेर के मांस का अस्रजन बकरा, भेड़ के अस्रजन से भिन्न रचना रूप का है और वह ऐसी रचना रूप का है जिसे हमारे शरीर के पाचक रस पचाने में समर्थ नहीं, इसीलिये उसे हम नहीं खाते।

जिन वनस्पतियों प्राणियों के शरीर का अस्रजन ऐसा है जिसे हमारा शरीर ग्रहण कर अपने आन्तरिक ग्रन्थि प्रभाव से शरीरोपयोगी रूप में बदल लेता है उन्हीं को हम खाते हैं, वही पाच्य है। जिस की गिनती २० के लगभग है। इन २० प्रकार के अस्रजन वाले पदार्थ जब हम खाद्य रूप में ग्रहण करते हैं तो इन्ही अस्रजनों के अंश उदरदरी में जाकर ग्रन्थि-रस प्रभाव में आकर घुलते हैं और वह फिर पवनाम्ल (Amino Acid) के रूप में बदलते हैं। पवनाम्ल अस्रजन का वह रूप है जिससे एक अस्रजन दूसरे अस्रजन में बदलने से पूर्व आता है तब वह फ़िर शरीर में विद्यमान कई प्रकार के अस्रजनों में बदलता है। अर्थात शरीर के अंगों की रचना के अनुरूप हमारे शरीर के अवयवों में भी कई प्रकार के अस्रजन विद्यमान रहते हैं, वहाँ की कोषाएं उस पवनाम्ल से अपने उपयोग के योग्य अस्रजन अर्थात आंगिक कोष का निर्माण कर लेती हैं।

किसी भी वनस्पति या प्राणिज अस्रजन को खाकर मनुष्य उसी रूप में उसे कभी ग्रहण नहीं कर सकता, न यह किसी ऐसी घुलित दशा में होते हैं? जो अभिसरण विधि से कला द्वारा शोषित किये जा सकते हैं। इनके तो ग्रहीत रूप को बदलने की आवश्यकता होती है इसी लिये आमाशयिक ग्रन्थि रस, क्लोम ग्रन्थि रस का स्राव उस ग्रहीत अस्रजन को पवनाम्ल के रूप में लाने के लिये उसमें मिलता है। इन ग्रन्थि रसों में विद्यमान विकर के प्रभाव से उस अस्रजन का रूप घुलता है और उसमें रूपान्तर होता है। यह क्रिया कई घंटे चलती है तब वह अस्रजन पवनाम्ल के रूप में आ जाता है जो कला द्वारा अभि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरित नहीं होता प्रत्युत इसको वृहदान्त्र के प्ररोह आचूषण करते हैं, जो चीजें क्षुद्रान्त्र या वृहदान्त्र के प्ररोहों द्वारा आचूषित होती है वही वस्तुएं पाचित हुई मानी जाती हैं। पचन तीन श्रेणी के पदार्थों का होता है (१) अस्र-जनीय (२) शार्करी (३) स्नेही।

शार्करी श्रेणी के मण्ड निशास्ता (सितसार आदि पदार्थों पर सर्व प्रथम लाला ग्रन्थि रस के विकर का सम्पर्क होता है यह विकर बहु शर्करोज को एक शर्क-रोज में बदल देता है फिर एक शर्करोज द्राक्ष शर्करा, यव शर्करा में बदलता है तब इसके घोल का अभिसरण विधि से अन्त: प्रवेश होता है और आचूषण विधि से भी वह अन्त: प्रवेश करता है। और यह क्रिया कई घंटे चलने के बाद पूरी होती है इसी लिये इसे भी पचन या परिवर्तन होने की संज्ञा प्राप्त है। इसी तरह स्नेही पदार्थ घृत, तेल, वसा आदि जितने भी चिकनाई वाले पदार्थ हैं चाहे वह वानस्पतिक हों या प्राणिज यह सब भोजन के साथ उदरस्थ हो जाने के बाद शरीर की स्वाभाविक ऊष्मा से पिघल कर अन्य भुक्त द्रव्यों के कांदव (कीचड़) में ऐसे मिलते चले जाते हैं कि इनके कण फैल कर इतने सूक्ष्म रूप में आ जाते हैं जिससे वह कांदव दूधिया सा बनता चला जाता है। जब भुक्त द्रव्य कांदव का रूप ग्रहण कर ग्रहणी में प्रवेश करता है तो वहां उस कांदव में पित्त आकर धीरे-धीरे मिलता रहता है पित्त क्षारीय प्रतिक्रिया वाला रस होता है जिसका प्रभाव उस कांदव में मिले स्नेह कणों पर ही होता है। पित्त के स्पर्श से स्नेह कण पूर्णतया दूधिया बन जाता है अर्थात पित्त के स्नेह कणों में मिलने पर सावुनीकरण होता है, जब साबुनीकरण होता है स्नेह का स्नेहाम्ल मधुरिन से भिन्न होकर पित्त के कणों से मिलकर साबुन बन जाता है, मधुरिन भी मधुरोद में बदल जाता है इन दोनों के रूपान्तर हो जाने पर फिर यह वृहदान्त्र के प्ररोहों से आचूषित होने के योग्य बन जाता है।

यह साबुन और मधुरोद श्लेष्म कला द्वारा ग्रहीत नहीं होता इसका भी प्ररोहों द्वारा आचूषण होता है। इसकी क्रिया भी कई घंटे चलने के बाद पूरी होती है। जैसे-जैसे स्नेह कणों में साबुनीकरण होता जाता है वैसे-वैसे आचूषित होने के योग्य हो जाता है जिसे प्ररोह चूसकर लसिका प्रणाली में पहुँचाते रहते हैं, जहाँ से वह रक्त में पहुँच जाता है और इसका कुछ भाग दहन क्रिया में काम आ जाता है जो बचता है वह पुन: वसा कणों में बदल कर त्वचा के नीचे या जहां संचय योग्य स्थान होता है संचित होने लगता है। स्नेह का भी रूपान्तरित होने के कारण इसे भी पचन व्यवस्था के अन्दर माना जाता है।

हम सब ज्ञात या अज्ञात दशा में वानस्पतिक या प्राणिज जितने भी प्रकार की वस्तुएँ बनाकर या बिना बनाये खाते हैं उन सबों में अनेकानेक प्रकार के पदार्थ होते हैं। इनमें से कुछ खाद्य श्रेणी के और कुछ औषध श्रेणी कुछ स्वास्थ्य संरक्षक द्रव्य होते हैं। वह निम्न है—खाद्य श्रेणी के पदार्थों में (१) अस्रजन (२) शार्करी और (३ स्नेही पदार्थ आते हैं। जिनकी संख्या ४० के लगभग होती है। स्वास्थ्य संरक्षण की श्रेणी में (४) खाद्योजांश के अनेक प्रागरूप व रूप होते हैं। जिनकी सँख्या १९-२० के लगभग है। इससे भिन्न अन्य श्रेणी के निम्न पदार्थ भी खाद्य द्रव्यों के साथ होते हैं (५) अनेक प्रकार के अम्ल (६) कई प्रकार के कषाय स्वरूप पदार्थ (७) कई प्रकार के क्षार या आधारीय द्रव्य (८) कई धातुओं के लवण (९) कई प्रकार के क्षारसमोद (Alkaloids) (१०) धूप जाति के तीन चार पदार्थ (११) कई प्रकार के रंजक द्रव्य (१२) कई प्रकार के सन्धानीय द्रव्य या विकर (१३) मधुपक्षीय श्लेषीय द्रव्य (१४) कई प्रकार के गोंद (१५) कई प्रकार का निर्यासी सर्ज (१६) कुछ निष्क्रियी द्रव्य (१७) कई प्रकार के उड़ायी तैल (Volatile oils) (१८) वल्कलोज (१९) कई तरह के अन्त:स्रावीरस (२०) कई प्रकार के धातु यौगिक और कई प्रकार के वायवीय यौगिक भी हमारे शरीर के भीतर इच्छा अनिच्छा से प्रवेश पा जाते हैं। इन सारे द्रव्यों का प्रवेश होने पर जो वस्तु जिस श्रेणी में आती हैं उसी के अनुरूप उनका अभिसरण या शोषण होता है जिनको विस्तार के साथ किसी अगले लेख में बताने का प्रयत्न करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमाणु बमजन्य भयंकर व्याधियाँ

वैद्यों ने रेडियम, थोरियम, यूरेनियम आदि रश्मि-प्रद धातुओं का नाम तो सुना या पढ़ा होगा और अब उन्होंने यह भी सुन या पढ़ लिया होगा कि भारत सरकार ने विदेशी वैज्ञानिकों की सहायता से बम्बई के पास एक ऐसी परमाणु भंजनी भट्टी लगाई है जो यूरेनियम के परमाणु को तोड़कर उससे शक्ति और कृत्रिम रश्मि-प्रद तत्व उत्पन्न करेगी। और उन कृत्रिम रश्मि प्रद तत्वों को मनुष्य शरीर में भोजन के साथ पहुंचाकर अनेक आन्तरिक रोगों का निदान किया जाएगा।

जिन तत्वों से हमारा शरीर बना है, जैसे गन्धक, (वलिका), कज्जलिका, स्फुरिका, नैलिका (आयोडीन) चूनजम (केल्शियम) आदि इन्हीं तत्वों को उक्त परमाणु भंजनी भट्टी में रखकर रश्मि-प्रद बनाया जाता है और उन तत्वों को जब मनुष्य शरीर के भीतर पहुंचा दिया जाता है तो वह तत्व रक्त-परिभ्रमण में पहुंचकर उन स्थानों में एकत्र होने लगता है जहां शरीर का कोई अवयव विकृत या विकार वान् हो रहा हो या हो जाता है। जब यह रश्मि-प्रद तत्व शरीर के किसी एक स्थान पर एकत्र हो जाते हैं तो वैज्ञानिकों ने एक ऐसा रश्मि-मात्रा-प्रग्राही गायगर कौण्टर (Geiger Counter) यन्त्र बनाया है जिसे शरीर पर फिराने से जहां वह रश्मि-प्रद तत्व विद्यमान होता है रश्मि-मात्रा प्रग्राही यन्त्र उसके ऊपर जब पहुंचता है उसी समय उस यन्त्र की सूई विचलित होकर उसकी उपस्थिति नाप कर बता देती है। इससे शरीर में रुग्ण हुए अग का पता ठीक ठीक लग जाता है। जिन देशों ने इस परमाणुभंजनी भट्टी का आविष्कार किया है, उनमें तीन देश मुख्य हैं रूस, अमेरिका और इंगलैण्ड। इन तीनों ने जन समाज के लाभार्थ इन भट्टियों का निर्माण किया हो या ऐसा ध्यान में रखकर इन्होंने आविष्कार किया हो, सो कुछ नहीं। वास्तव में बात यह थी कि जब मेडमक्यूरी ने सब से पहिले पिच् ब्लैण्ड नामक खनिज के कई मन ढेर में से कुछ रत्ती रश्मि विकीरक रेडियम तत्व का आविष्कार किया तो वह मारे खुशी के उछल पड़ी। उसे भान हुआ कि उसने एक अद्भुत तत्व का आविष्कार कर लिया है। उस कुछ रत्ती रेडियम को उसने एक शीशी में डाल कर अपने आस्तीन में छिपा लिया। उस समय उसे इस नये तत्व के गुण धर्म का कोई ज्ञान न था। आधे घंटे के बाद ही जहां वह रेडियम आस्तीन के नीचे रखा था वहां की त्वचा में एकदम जलन होने लगी, उसने उस शीशी को वहां से हटाकर पेटी में बन्द कर दिया। जितनी जगह पर उसकी रश्मियां त्वचा पर पड़ रही थीं, वहां आधे घंटे के भीतर छाला पड़ गया और उस जगह पर इतना भयंकर व्रण बन गया कि पूरे तीन वर्ष उपचार करने पर बड़ी कठिनता से दूर हुआ।

उस रेडियम के आविष्कार ने संसार में एक भयंकर क्रांति का उद्‌भव किया। अन्य वैज्ञानिकों ने उस रेडियम की कणिका को प्राप्त कर उसकी स्थिति का अध्ययन किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि इस तत्व के परमाणु स्वतः टूटते रहते हैं और उनके टूटने से सीसा (सिक्का=नाग) और हिमजन (हीलियम) नामक वायुवीय तत्वों की उत्पत्ति होती है। परमाणु के टूटने की क्रिया जो मन्द गति से चलती रहती है उससे ही एक प्रकार के रश्मि-पुंज का प्रदुर्भाव होता है, यही रश्मि-पुंज इतना तीव्र वेधी है कि १½ फुट मोटी शीशे की दीवार को पार करके दूसरी ओर फोटो प्लेट पर प्रभाव डालता है।

रेडियम के आविष्कार से पूर्व वैज्ञानिकों की यह धारणा थी कि सृष्टि के रचक प्रत्येक तत्व के परमाणु अच्छेद्य, अभेद्य होते हैं। इन्हीं तत्वों को भौतिक जगत् की सूक्ष्म इकाई माना जाता था, किन्तु रेडियम के परमाणु टूट कर उससे जब सीसा, हिमजन (हीलियम) बनते पाये गये तो वैज्ञानिकों की जिज्ञासा इस बात को जानने की ओर बढ़ी कि रेडियम के परमाणु किस सत्ता के द्वारा निर्मित हुए हैं जिनके टूटने से नये तत्व के परमाणुओं का प्रादुर्भाव होता है। इस रहस्य का पता पाना वास्तव में विश्व के रचक परमाणुओं के अन्तर रहस्य का पता पाना था, जो महान् क्रान्तिकारी रहस्यमयी पहेली थी। साडी, रदरफोर्ड, क्रुक्स, रॉञ्जन आदि अनेक वैज्ञानिकों के सतत प्रयत्न से इस रहस्य की गुत्थी खुल गई। मालूम हो गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि प्रकृति के सत (प्रोटोन) रज (इलेक्ट्रोन) तम (न्यूट्रोन) नामक भिन्न भिन्न विद्युतावेशी रश्मि स्वरूप प्रपराणु होते हैं जिनकी भिन्न संख्या व अनुपात के योग से परमाणु की रचना होती हैं। यह प्रकृति के गर्भ में कैसे मिलते हैं और किन कारणों से विच्छिन्न होते हैं? इसको जानने की ओर वैज्ञानिकों का ध्यान गया, उन्हीं दिनों महर्षि आइन्स्टाइन ने अपने गणित के बल पर भविष्यवाणी की कि सूक्ष्म से सूक्ष्मतम विश्व निर्माता इन प्रपराणुओं को बांधने वाली सामर्थ्य जो इनके भीतर निहित है यदि बलात् किसी परमाणु को तोड़ा जाय तो उससे इतनी सामर्थ्य उद्भूत हो सकती है जिसे मनुष्य उत्पन्न नहीं कर सकता इसको उसने गणित द्वारा गणना कर सिद्ध किया।

परमाणु भंजन का प्रयत्न

रेडियम के बाद यूरेनियम मिला और उसके बाद थोरियम, यह सब रश्मि बिकीरक भिन्न भिन्न तत्व थे और सब के परमाणु टूट कर उनसे अन्य तत्व के परमाणु बनते रहते थे। वैज्ञानिकों ने इस बात को जानने का प्रयत्न किया कि यह जो स्वत: टूटते रहते है, क्यों और कैसे टूटते रहते हैं? इनको तोड़ने वाली प्रकृतिजन्य कौन सी शक्ति है? इस ढूंढ़ खोज में वह प्रकृति के गर्भ में पहुँच गये और उन्हें ज्ञात हो गया कि तमप्रपराणु को यदि अपने अधिकार में कर लिया जाय और इसकी बौछार वेग से परमाणु के भीतर मारी जाय तो सत्त, रज प्रपराणुओं की जो बन्धनी सामर्थ्य होती हैं वह टूट जाती है और परमाणु एकाएक विच्छिन्न हो जाता है इस विच्छेद काल में जब सतप्रपराणु केन्द्र से निकल कर भागते हैं तो रजोमण्डल का विध्वन्स हो जाता है जिससे एकाएक भयंकर ज्वाला का प्रादुर्भाव होता है। उससे इतना भारी उत्ताप जनित होता है कि लोहा, प्लाटिनम जैसी धातुएं गल कर व वाष्प बन कर हवा में उड़ जाती हैं। जिन देशों के आधीन उन वैज्ञानिकों ने इस रहस्य को मालूम किया था उन देशों के राज नीतिज्ञों को सूझी कि कोई ऐसी विधि ढूंढी जाय कि इन तत्वों के परमाणुओं को लोहाबरण में बन्द करके जहां इन गोलों को फेंका जाय वहां गिरते समय निश्चित अवधि के भीतर उन गोलों में विद्यमान तम प्रपराणु की अपने आप परमाणु केन्द्र में बौछार होने लगे तो परमाणु का अस्तित्व मिट कर उससे जो ज्वाला उत्पन्न होगी वह शत्रु देश को टी. एन. टी. के सैकड़ों गोलों की संहारकारणी शक्ति से अधिक वेग से संहार करने वाली सिद्ध हो सकती है। राजनीतिज्ञों के इन विचारों ने वैज्ञानिकों को इसे बनाने की ओर प्रेरित किया। १९४१-४२ में परमाणु बम के निर्माण में अमेरिका सफल हो गया। उस समय द्वितीय विश्व युद्ध चल रहा था, रूस, जापान जीत रहे थे, तभी १९४४ में अमेरिका वर्तानियां की मदद पर आया और जब कि युद्ध में रूस, जापान का पलड़ा भारी हो रहा था, ६ अगस्त १९४५ को प्रातःकाल ८ बज कर ५ मिनट पर जापान के शहर हिरोशिमा पर एक बम मारा और ९ अगस्त १९४५ को दूसरा बम नागासाकी पर मारा जिसमें ७०००० व्यक्ति एक क्षण में मृत्युग्रास हो गये। इन बमों के गिरने से इतनी भयंकर ज्वाला और गमय रश्मि का प्रादुर्भाव हुआ कि दस पन्द्रह मील में फैले हुए वह नगर ध्वस्त हो गये। हिरोशिमा के ५ मील के इर्दगिर्द ६० हजार व्यक्ति मर गये और सब कुछ जल कर राख हो गया, १० मील के इर्दगिर्द भी कई हजार लोग बुरी तरह झुलस गये। उससे परे के लोगों पर गमया रश्मि ने इस बुरी तरह जलाया कि उनकी चिकित्सा १९५५ तक होती रहने पर भी वह ठीक होने में नहीं आये। १२ वर्ष बाद ६ अगस्त १९५७ को उस हिरोशिमा नगर में बम विस्फोट की द्वादशाब्दी मनाने के लिए शान्ति स्मारक-उद्यान में २० हज़ार व्यक्ति एकत्र हुए। और जो उस परमाणु बम से ६० हजार व्यक्ति मृत्यु मुख में चले गये थे उनके स्मारक पर जापान के मेयर ने, जापान की राजकुमारी तथा राजकुमार ने पुष्प मालाएं चढ़ाईं। इसके बाद जापान के मेयर ने ठीक परमाणु बम छोड़ने के समय के १२ वर्ष बाद १८५ व्यक्तियों की सूची पढ़ कर सुनाई कि यह व्यक्ति ११ वर्ष तक उस बम विस्फोट प्रभाव से उठी गमय रश्मि के प्रभाव से रोग ग्रसित रह कर पिछले वर्ष मरे हैं इनकी अनेकों कुशल डाक्टरों ने चिकित्सा की किन्तु इस रश्मि जन्य प्रभाव को वह दूर करने में समर्थ नहीं हुए। इससे भिन्न अनेक व्यक्तियों को अमेरिकन सरकार अपने खर्च पर न्यूयार्क इसलिये ले गई कि इनकी चिकित्सा करके इस बात को जाना जा सके कि इस नई परमाणु बम जन्य भयंकर व्याधियों का उपचार कैसे करना चाहिये। इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस वर्ष में कितने ही व्यक्तियों का न्यूयार्क में उनकी त्वचा का प्लास्टिक-शल्य विधि तथा अन्य शल्य-विधि से और न जाने कौन कौन विधि से उपचार किया गया, किन्तु अभी तक इसकी चिकित्सा में उन्हें कोई सफलता नहीं मिली।

अमेरिका के उन दो परमाणु बमों ने लाखों का एक क्षण में संहार कर उस समय लड़ाई समाप्त कर दी किन्तु शत्रु-पक्ष और निर्बल पक्ष चुपचाप बैठने वाले न थे। अमेरिका के बाद रूस ने भी परमाणु बम बना लिया और बर्तानियां ने भी। बर्तानियां अमेरिका एक ओर रूस इनका प्रतिद्वन्दी था। पहिले तो यूरेनियम का ही परमाणु बम के निर्माण में उपयोग हुआ था, किन्तु यह धातु कठिनता से प्राप्त होने वाली मंहगी धातु थी इसलिये यह प्रयत्न होने लगा कि किसी अन्य तत्व को परमाणु बम बनाने में क्यों न प्रयुक्त किया जाय। यूरेनियम सब से भारी धातु थी, जिसका परमाणविक संगठन २३८ था यह इतना शिथिल न था किन्तु इसी में ७ प्रति अंश ऐसे यूरेनियम का था जिसका भार २३५ था वह शिथिल बन्धी था, इसके तम (न्यूट्रोन) प्रपराणु की केन्द्र में बौछार मारने पर केन्द्र के सत-प्रपराणु निर्बन्ध हो रज प्रपराणु मंडल की शृंखला को भंग कर भाग खड़े होते थे इससे परमाणु एकाएक टूट कर ताप और रश्मि पुञ्जों में बदल जाता था। एक परमाणु के बाद उस बम में विद्यमान समस्त परमाणुओं में यह निर्बन्धी शृंखला फैल कर सारे बम का विभ्राट कर देती थी। यही बम हिरोशिमा और नागासाकी पर पड़े थे। किन्तु वैज्ञानिकों ने सोचा जो प्रक्रिया यूरेनियम तत्व के परमाणु पर की जाती है यदि उदज़न (हाइड्रोजन) तत्व के परमाणुओं की वाष्प को द्रव, द्रव से ठोस बना कर उसे खूब दबा दबा कर एक बक्स में बन्द कर उस उदजन परमाणु में यह विखण्डन की प्रक्रिया आरम्भ करावें तो क्या उसके परमाणु विखण्डित नहीं हो सकेंगे? इन्हें भी होना ही चाहिये। इन विचारों के वैज्ञानिकों ने जब उदजन के परमाणुओं को बड़े भारी दबाव में बहुत बड़ी मात्रा में एकत्र किया और उसके भीतर विखण्डनीय तम प्रपराणु समूह की बौछार का प्रबन्ध कर इसको समय बन्धी अवधि के संचालक यन्त्रों से बांध कर नेवादा में परीक्षण लिया गया तो यह उदजन-बम यूरेनियम बम से हजारों गुणा शक्तिशाली बहुविस्तृत क्षेत्र का विनाशक सिद्ध हुआ। यह उदजन बम का पहिला विस्फोट अमेरिका ने १ नवम्बर १९५२ को एलूगिलाब द्वीप के एनी वेटाक एलाट नामक स्थान पर किया था। उस समय जो निरीक्षक साथ गये थे उनका कहना था कि इस उदजन बम विस्फोट द्वारा उत्पन्न ताप व प्रकाश का अन्दाजा यह था कि विस्फोट के बाद एकाएक सारा द्वीप एक अग्नि की ज्वालामयी लपट के नीचे ढक गया था। जिस विस्फोट से इतना तीव्र प्रकाश उत्पन्न हुआ था कि आँखें चौंधिया गई थी। जहां पर वह बम द्वीप की पृथ्वी पर गिरा था वहां १७५ फुट का गहरा गढा कई मील के घेरे में बन गया था जिसमें समुद्र का जल भर गया था। इस बम की ज्वाला का विस्तार १० मील के घेरे में था। जो निरीक्षक उत्ताप मापक यन्त्र लगाकर वहां का उत्ताप देख रहे थे उनका कथन था कि इस विस्फोट से प्रादुर्भूत उत्ताप १० लाख शतांश के ऊपर था अर्थात ८० लाख टन टी० एन० टी० यदि एक बार विस्फोट किया जाय तो यह उसके बराबर था। १ मार्च १९५४को बिकनी द्वीप पर जो उदजन बम फेंका गया था वह अब तक के समस्त बमों से बड़ा बम था। जिसके विस्फोट का क्षेत्र ७ हजार वर्ग मील के घेरे में था। इन बड़े राष्ट्रों की युद्ध लिप्सा और प्रभुत्व की आकांक्षा में एक दूसरे को नीचा दिखाने की गरज से रण-हुंकार शीत युद्ध के दाव पेंच खेले जाने लगे। इनमें उदजन बमों के परीक्षण इस रण-हुंकार के शक्तिद्योतक करिश्मे थे, जो एक दूसरे को डराने धमकाने की दृष्टि से किये जाने लगे। किन्तु इन परमाणु बमों के परीक्षण जिन जिन देशों में किये जा रहे थे, उन देशों के आस-पास के जलचर, थलचर, नभचर प्राणियों पर क्या प्रभाव होता है, उनका सामूहिक जीवन विपत्ति में फंस कर नष्ट हो रहा है इसको साम्राज्यवादी लोलुप देशों ने आज तक कोई जांच कमीशन बिठा कर जानने का प्रयत्न नहीं किया और यह परीक्षण वह योरूपीय देश अपने प्रदेशों में न कर के प्रशान्त महासागर के द्वीपों में जो उनसे बहुत दूर हैं वहां कर रहे हैं और करते भी उस समय हैं कि जब हवा का बहाव उनके देशों के विपरीत हो रहा हो। हवा का रुख उनके देशों की ओर हो रहा हो तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह परीक्षण बन्द रखते हैं। यहां भी जाति भेद, वर्ण भेद पर खूब दृष्टि रखी जाती है, मरें तो काली त्वचा के व्यक्ति मरें जिन्हें सदा से ही वह इसी योग्य समझते हैं। जिन द्वीपों में परीक्षण हो रहे हैं क्या वे द्वीप प्राणी विहीन हैं ? ऐसा समझना भूल है, वहां वनस्पतियां हैं, और उन वनस्पतियों पर निर्वाह करने वाले अनेक प्रकार के जीव भी हैं, जो वहां मनुष्य थे वह जरूर वहां से हटा लिये गये थे। फिर भी इन उदजन बमों की संहारकारणी शक्ति का प्रभाव किस तरह प्रत्यक्ष दर्शियों द्वारा देखा तथा समाचार पत्रों द्वारा किस तरह जनसमाज तक पहुँचा पाठकों व वैद्यों के समझने की यह एक बहुत बड़ी चीज है, हम इस पर प्रकाश डालेंगे।

उदजन बम विस्फोट से कौन कौन सी शक्ति का प्रादुर्भाव होता है ?

बम चाहे यूरेनियम परमाणु विभंजन का हो चाहे उदजन परमाणु विभिजंन वाला हो सिद्धान्ततः दोनों के परमाणुओं का विच्छेद होकर उससे पांच शक्तियाँ प्रादुर्भूत होती हैं (१) विस्फुटन के साथ धमाके का भयंकर शब्द (२) परमाणु विच्छेद से प्रादुर्भूत महानतम ताप (गरमी) (३) परमाणु विच्छेद से परमाणु जनक सत, रज प्रपराणुओं का रश्मि रूप में वहिर्गमन (Initial Nuclear Radiation) (४) परमाणु प्रभंजन काल में गमय रश्मियों (Initial Gamma Radiation) का प्रादुर्भाव व विकरण तथा (५) अन्य तत्वों की उत्पत्ति।

(१) शब्द विनाद (Blast)—जब बम फटता है तो इसका शब्द निनाद इतना भारी होता है कि ५ मील के घेरे में उसके निनाद के कारण प्रत्येक प्राणी मर जाते हैं। १० मील तक उस निनाद से भयंकर हानि होती है। १५ मील के घेरे में विद्यमान स्त्रियों के गर्भपात तक हो जाते हैं। बीस मील तक उस निनाद की हानियां देखी जाती हैं।

(२) उत्ताप (Heat)—बम विस्फोट से प्रादुर्भूत उत्ताप ८ मील के घेरे तक प्राणियों का प्राण हरण कर लेता है। दस मील तक के घेरे में आये प्राणी ५० प्रतिशत उसी क्षण मर जाते है १५ मील के घेरे में रहे प्राणी उस उत्ताप से काफी झुलस जाते हैं।

(३) रश्मि पुंज (प्रकाश)—परमाणु विच्छेद से जब रश्मि स्वरूप सत, रज प्रपराणु उसमें से वहिर्गमन करते हैं तो उससे इतना भारी प्रकाश प्रदीप्त हो उठता है कि आंखें उसके सामने नहीं ठहरतीं, जैसे सूर्य के सामने। अर्थात् बम विस्फोट काल में सूर्य जैसा ही असह्य प्रकाश उस स्थल से उठकर चारों ओर फैल जाता है। जो नंगी आँखों को अवश्य हानि पहुंचाता है और उसका कोई प्रभाव नहीं होता।

(४) गमय रश्मि विकरण—यह वही रश्मियां हैं जो मेडम क्यूरी को रेडियम की प्राप्ति के समय जब रेडियम को आस्तीन के भीतर छिपा लेने पर उसकी त्वचा को जला डाला था। बम विस्फोट ही इन रश्मियों के प्रादुर्भाव का स्थल है। कारण परमाणु का विखण्डित होना। चहे परमाणु स्वतः टूट रहा हो या बलात् उसे तोड़ा जाय दोनों स्थितियों में इस रश्मि का प्रादुर्भाव एक प्राकृतिक घटना है जिसे कोई रोक नहीं सकता। जहां भी परमाणुओं का विच्छेद हो रहा हो वहाँ यह रश्मियां अवश्य उत्पन्न होती हैं। किन्तु इन रश्मियों की मात्रा चाहे कितनी ही न्यून से न्यून हो वह सजीव जगत् को अवश्य प्रभावित करती हैं। इस बात का ज्ञान जब तक रश्मि मात्रा प्रमापी यन्त्र (Geiger Counter) का आविष्कार नहीं हुआ था तब तक इस बात का ज्ञान नहीं हो सका था कि इस गमय रश्मि की कितनी मात्रा किस तरह की हानि करती है। किन्तु इस यन्त्र के आविष्कार से एक तो इस बात का पता लग सका कि जिस पृथ्वी के भाग में कोई रश्मि विकीरक तत्व विद्यमान होता है इस यन्त्र को वहाँ ले जाने पर पृथ्वी से लगाते ही उसकी सूई विचलित होकर गमय रश्मि विकरण की मात्रा को बता देती है। इससे भिन्न बलात् परमाणु विभंजन द्वारा जब गमय रश्मि का प्रादुर्भाव होता है तो वह रश्मि आस-पास के प्रत्येक सजीव निर्जीव पदार्थों पर पड़कर उसमें व्याप्त हो जाती है, जितनी इसकी प्रबल मात्रा उस प्रादुर्भाव के स्थल पर अधिक होती है उतनी ही अधिक यह प्रत्येक पदार्थ में शोषित हो जाती है, उसको यही रश्मि मात्रा प्रमापी यन्त्र ठीक ठीक बता देता है।

हम लेख के आरम्भ में जिस परमाणु भंजनी भट्टी का उल्लेख कर आये है और वहां उस भट्टी में कृत्रिम रश्मि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकीरक तत्व उत्पन्न किये जाते हैं वहाँ उस परमाणु भंजनी भट्टी में परमाणु जब टूटते हैं तो यही गमय रश्मियों का प्रादुर्भाव होता है जो वहां रखे हुए कज्जलिका, स्फुरिका, नैलिका आदि तत्वों के परमाणुओं में शोषित होकर उन्हें रश्मि प्रद बना देती है। उन्हीं तत्वों को फिर चिकित्सक निदान के लिये प्रयुक्त करते हैं। चूंकि इन कृत्रिम रश्मि विकीरक तत्वों में गमय रश्मि की मात्रा अत्यन्त न्यून इसकी इकाई के आस पास ही होती है इसलिये इन तत्वों के खिलाये जाने पर उसका कोई बुरा प्रभाव नहीं देखा जाता। किन्तु जहां बलात् उदजन परमाणु का विच्छेद कराया जाता है वहां तो इसकी मात्रा २५-३० सहस्र रान्तजन (Rontgen units) से ऊपर होती है जिसको उक्त यन्त्र से नाप कर अच्छी तरह मालूम कर लिया जाता है। यह रश्मियां वहाँ से उठी धूल गुबार सब में व्याप्त होती है। १ मार्च १९५४ को प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) के बिकनी द्वीप पर अमेरिका ने जो सबसे बड़े उदजन बम का विस्फोट किया था उसके विस्फोट का प्रभाव ७ हज़ार वर्ग मील के क्षेत्र पर पड़ा जाना गया था, उस समय उस विस्फोट में जो गमय रश्मियों का प्रादुर्भाव हुआ था, रश्मि-मात्रा प्रमापी यन्त्र से ज्ञात हो सका था कि बम विस्फोट के समय १२ मील के क्षेत्र में गमय रश्मि ५ सहस्र की मात्रा में व्याप्त हो रही थी। १०० मील की दूरी तक उसकी मात्रा २३०० रान्तजन थी। १६० मील के अन्तर पर वह मात्रा ५०० रान्तजन थी। १९७ मील की दूरी पर उसकी मात्रा ३०० रान्तजन थी। और २२० की दूरी पर उसकी मात्रा ३०-३५ रान्तजन थी।

मनुष्य पर ५ रान्तजन इकाई तक उक्त रश्मियें पड़ जांय तो उसका कोई बुरा प्रभाव नहीं देखा जाता। यदि यह मात्रा १० हो तो मनुष्य के स्वास्थ्य पर उसका बुरा प्रभाव होता है।

(५) बिकनी द्वीप पर फैंके इस उदजन बम से एक नये तत्व का प्रादुर्भाव—हम पीछे बतला चुके हैं कि रेडियम के परमाणु जब प्रकृति में स्वतः विच्छेद होते हैं तो उस विच्छेद काल में सीसा धातु और हिमजन वायु तत्व उससे बनते देखे गये थे। किन्तु बिकनी द्वीप पर फेंके उदजन बम विस्फोट के समय जब परमाणु शरीर का भंजन हुआ तो वहाँ एक स्ट्रांशियम (Strantium) नामक तत्व का भारी मात्रा में अस्तित्व मिला। इस तत्व का परमाणु भार (मात्रा) ८७.६३ है। किन्तु जो इस बम विस्फोट काल में प्रादुर्भूत हुआ था उसकी मात्रा ९०.० पाई गई। अर्थात् यह प्राकृतिक स्ट्रान्शियम से कुछ भारी था यह तत्व चूनजम तत्व की जाति का है। मैण्डलीक आवर्त सम्विभाग में यह चूनजम कोष्ठ के दक्षिण स्थान पर पड़ता है, इसलिये इसके गुण धर्म चूनजम के साथ मिलते हैं। यह स्ट्राँशियम तत्व प्रादुर्भाव के साथ गमय रश्मि से व्याप्त हो गया था जिसका प्रभाव भी मनुष्य शरीर पर काफी हानिकर होता है।

इन बम विस्फोटों का प्रभाव मानव प्राणी पर तथा ऋतुओं पर कैसा हो रहा है?—१९४१ में यूरेनियम तत्व के परमाणु विच्छेद की विधि का अमेरिका के वैज्ञानिकों ने आविष्कर कर लिया था! तीन चार वर्ष में ही उसने परमाणु बम बना लिया और उसका पहिला प्रयोग जापान के हिरोशिमा, नागासाकी शहरों पर किया। उस बम विभ्राट से उन शहरों का सर्वनाश हुआ, किन किन रूपों में हुआ, इसका विस्तृत विवरण उस समय संसार को नहीं मिल सका था। इसमें मुख्य कारण था जापान पर अमेरिका का आधिपत्य हो जाना। उसने उस समय इस सर्वनाश की विधियों का वर्णन प्रकाशित नहीं होने दिया। उस समय इतना ही प्रकाश में आया कि बम विभ्राट से पचासों हजार जन जलभुन गये, पचासों हजार झुलस गये, जो दूर थे वह भी कई तरह से झुलसे, बहुतों की त्वचा खराब हो गई, बहुतों को और अनेक व्याधियां हो गई। यह सब व्याधियां किन किन कारणों से कैसे हुई? इसका विवरण उस समय प्राप्त नहीं हो सका था। साम्राज्य-वादी राष्ट्र इस रहस्य को इसलिये भी प्रकट होने देना नहीं चाहते थे कि कहीं जन समाज की इन बम विभ्राटों द्वारा होने वाली हानियों का पूर्ण ज्ञान हो गया तो वह हमारी इस युद्ध लिप्सा में कहीं बाधक न बन जांय। आज भी यह साम्राज्यवादी जहां परीक्षण कर रहे हैं वहां सैंकड़ों मील के घेरे में शान्ति समिति के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूतों को इसलिये जाने नहीं देते कि कहीं इन बम विभ्राट द्वारा प्रादुर्भूत विनाशकारी कारणों को जानकर उसको प्रकाशित कर जन-समाज को इन परीक्षणों के विरुद्ध उभाड़ न दें। किन्तु इनके लाख छिपाने के प्रयत्नों के बावजूद १० वर्ष के बाद इस पर से एकाएक पर्दा उठ गया। यद्यपि इन साम्राज्य-वादी राष्ट्रों का सिरताज अमेरिका ने १ मार्च १९५४ को जो उदजन बम परीक्षण प्रशान्त महासागर के मार्शल द्वीप समूह के विकनी एटाल नामक द्वीप पर किया था, उस समय उसने उस द्वीप समूह के आस पास किसी भी राष्ट्र के व्यक्ति को संरक्षित क्षेत्र के पास फटकने नहीं दिया था, इस प्रबन्ध के बावजूद उस द्वीप से सौ मील के परे 'लकी ड्रेगन' जिसका दूसरा नाम फांर्च्युनेट ड्रेगन भी बताया जाता है इस बम विभ्राट की दुर्घटना का शिकार हो गया। यह मछली पकड़न वाली नौका अपना शिकार करती फिर रही थी, जिसमें २३ मछुवे थे, यह नौका उस सरक्षित क्षेत्र से १०० मील की दूरी पर थी, बावजूद इसके एक नाविक मजीरो मासूदा ने जो बयान १४ दिन बाद जापान के माजू नामक बन्दरगाह पर पहुँचकर दिया वह निम्न था :—

हमने एकाएक पश्चिम की तरफ इतना तीव्र प्रकाश युक्त आग का गोला देखा मानों सूर्य स्वयम् पृथ्वी से १० अंश का कोण बनाता उतर आया हो फिर वह आकाश की ओर उठने लगा और उसके चारों ओर आकाश अग्नि की तरह लाल पीला चमकता दिखाई दिया। फिर एक गुम्मद के आकार का बादल उस आग के गोले में से उठता आसमान की ओर लहरों में बढ़ता दिखाई दिया। प्रकाश के उठने के छः मिनट बाद भयंकर विस्फोट की आवाज सुनाई दी। तब मैं डरा, और सोचने लगा कहीं पिकाडोव (परमाणु बम) तो नहीं फेंका गया। उस निनाद के प्रभाव से हमारा जहाज दहनी ओर घूमता प्रतीत हुआ। हम सब मछुवे भयभीत हुए, उस बम विस्फोट की ओर देखते उससे दूर हटने का प्रयत्न करने लगे। निगाहें उस उठते हुए बादल की ओर थीं, जिसमें इन्द्र धनुष की रंगावली बाच बीच में दिखाई दे रही थी। हवा का रुख हमारी नौका की ओर था इसलिये हम सब तेजी से उससे पीछे हट रहे थे। कोई दो घंटे के बाद एक सफेद धूल सी हमारी ओर बहती आ रही दिखाई दी। कुछ मछुवे तो धूल देख कर नीचे के खाने में चले गये। हम रबड़ के दस्ताने पहिने अपनी ड्यूटी पर जमे हुए थे। उस सफेद धूल ने हमारे जहाज को ढक लिया, काफी धूल मेरी आंखों में चली गई, जिससे आंखों में एकाएक जलन होने लगी। मेरे शरीर के कपड़ों पर, चेहरे पर, जहाज की ऊपरी सतह पर काफी धूल बरसी। मुझे एकाएक गर्मी और घबराहट हुई, मैंने हाथ के दस्ताने उतारने का प्रयत्न किया तो उस दस्ताने पर चढ़ा रबड़ चुरमुराकर चूरा २ हो गया। हम और हमारे साथी अन्य मछुवे सबको दाह लग गई। कप्तान सुसुई तो दाह, जलन से इतना घबरा रहा था कि उसने तीव्रता से जहाज को बढ़ाने का आदेश दिया। हम लोग उस समय जापान से लगभग दो हजार मील के फासले पर होंगे। हमारा जहाज बड़ी तेजी से जापान की ओर बढ़ रहा था। भोजन का समय आने पर उस कष्ट से हम सब इतने व्याकुल व बेचैन हो रहे थे कि शाम का खाना न खा सके। क्षुधा बढ़ाने की इच्छा से मदिरा पान करने लगे, पर मदिरा न तो उस व्याकुलता को कम कर सकी न अपना रंग जमा सकी, न क्षुधा बढ़ी। तीन दिन में हमारे जहाज ने लगभग ५०० मील का मार्ग तह किया, इस बीच हम सब यह निश्चय न कर सके कि यह कोई ज्वालामुखी का विस्फोट था, या परमाणु बम। फिर भी हमने जहाज पर फैली सफेद धूल एक औंस के लगभग एकत्र कर मोमजामे के कागज में पुड़िया बना कर रख ली थी कि इसकी जापान में चलकर परीक्षा करवायेंगे। तीन दिन के बाद हम सबों के खुले चेहरे जब पेंसिल जैसे काले होने लग पड़े तो और भी घबराहट हुई और यह विश्वास होने लगा कि न तो यह तीव्र सूर्य प्रकाश के प्रभाव का परिणाम है न ज्वालामुखी की धूल का। यदि हम सबों को यह विश्वास हो जाता कि यह परमाणु-बम का ही परिणाम है तो शायद हम सब पास में मिडवे द्वीप में जाकर अमेरिका वालों से इसमें सहायता की याचना करते, किन्तु वास्तविकता से अनभिज्ञ होने के कारण अपने घर की ओर ही भागने का आदेश कप्तान दे रहा था। इसलिये जापान की ओर बढ़े जा रहे थे। पांचवें दिन मेरे हाथों और चेहरे पर शोथ उत्पन्न होने लगा और उसमें जोर की खारश उठने लगी। और पीला-सा पानी बहने लगा। कइयों को इसके साथ शिरःशूल, वमनेच्छा, हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहां २ शोथ, श्यामता और दाह त्वचा पर हो रही थी छटवें दिन वहां गहरे छाले पड़ने लग गये और उन छालों के फूटने से गहरे व्रण बनने लग पड़े और उसमें से बुरा मवाद बहने लगा। उन व्रणों में दाह, दर्द इतना तीव्र था कि हम सब उस पीड़ा से तड़पने, चिल्लाने लग रहे थे।

१४ मार्च को जापान के माजू नामक बन्दरगाह में सुबह ६ बजे के करीब हमारा जहाज लगा। बड़ी कठिनाई से इन पांच-६ दिनों में जहाज को बन्दरगाह तक पहुँचाने में समर्थ हुए थे। मय कप्तान सुसुई के सबकी हालत गंभीर हो रही थी। बन्दरगाह के क्योरितसू अस्पताल के डाक्टर ओई के पास हम सबों को लेजाया गया। डाक्टर सबकी शक्लें देख कर चट जान गया कि यह तो उदजन बम विस्फोट के शिकार हो गये हैं। उसी समय उसने तोकियो विश्वविद्यालय के परमाणु विशेषज्ञ से टेलीफोन पर इन मछुओं की स्थिति बताई। उस परमाणु विशेषज्ञ ने हिदायत की कि इस जहाज का सामान और आदमी एक दम बन्दरगाह से हटाकर संरक्षित स्थान (क्वारण्टीन) में कर दिये जांय। किन्तु इधर जहाज जब बन्दरगाह पर लगा था, मछलियां खराब न हो जांय इस बात को अधिकारी ध्यान में रखकर उन्होंने शीघ्र टूना, शार्क आदि मछलियां जहाज से उतारकर टोकियो, ओसाका, क्योतो, नागोया, तोकू आदि शहरों को रेल द्वारा रवाना कर दी थीं। डाक्टर को माल को रोकने का आर्डर जब बन्दरगाह पर पहुंचा तो जहाज मछलियों से खाली हो चुका था। तोकियो विश्वविद्यालय को जब बन्दरगाह के अधिकारियों ने सूचना भेजी कि मछलियां तो कल परसों तक जापान के अनेक शहरों में पहुंचने वाली हैं तो विश्वविद्यालय की ओर से चेतावनी दी गई, रेडियो स्टेशनों द्वारा और समाचार पत्रों द्वारा सारे देश की जनता को सावधान किया गया कि माजू बन्दरगाह से भेजी गई मछलियां कोई व्यक्ति न खाय। १६ ता० को टोकियो विश्वविद्यालय के परमाणु विशेषज्ञ ने जब उन मछलियों पर रश्मि-मात्रा प्रग्राही यन्त्र रखा तो यन्त्र की सूई ४ हजार अंक को पार गई। इसीलिये ४१२५ पौण्ड मछलियां दफना दी गईं।

उन बीमार आदमियों को क्वारन्टीन में ले जाया गया और रश्मि-मात्रा प्रग्राहीयन्त्र मंगाया गया। मासूदा के सिर पर जब वह यन्त्र रखा गया तो यन्त्र की सूई ६५०० की संख्या पर जा पहुंची। मासूदा ने जो धूल परीक्षा के लिये एकत्र की थी उस पर जब यन्त्र रखा गया तो ४०००० की संख्या पर सूई जा पहुंची। मासूदा के सिर के बाल मूंड देने पर ५ दिन के बाद जब रश्मि-मात्रा प्रग्राही यन्त्र रखा गया तो गमय रश्मि की मात्रा घटकर ६५४ रह आगई।

एक मार्च के बाद २० मार्च तक जो भी मछली पकड़ने वाले जहाज समुद्र में फिर रहे थे जब वह बन्दरगाहों पर आकर लगे तो उन जहाजों में से जो बिकनी द्वीप की ओर गये थे ऐसे ८ जहाजों पर उनकी खाद्य सामग्री व मछलियों पर गमय रश्मि की उपस्थिति पाई गई। इसीलिये उन जहाजों पर लदी मछलियां दफना दी गईं। एक महीने तक जापानियों ने बिना मछली के भोजन किया।

आज भी मासूदा आदि मछुओं की चिकित्सा हो रही है किन्तु उन्हें कोई लाभ होता दिखाई नहीं देता। वह धीरे-धीरे मृत्यु की ओर जा रहे हैं, इनको बचाने का भारी प्रयत्न होने पर भी इस रश्मि-प्रभाव के निवारण का कोई उपाय अभी तक ज्ञात नहीं हो सका। इस विवरण के बाद अनेक वैज्ञानिकों ने भी गमय रश्मि के विनाशकारी अनेकों प्रभावों का समय समय पर जो उल्लेख किया है उनमें उन्होंने बताया है कि इस गमय रश्मि का प्रभाव केवल शरीर के वाह्य भाग पर ही नहीं होता प्रत्युत गमय रश्मि व्याप्त पदार्थों के खाने से पाण्डु, श्वेताणु वृद्धि, शोष, रक्ताणु-रचनावरोध, गंज, धुन्ध, दृष्टिनाश, गम्भीरव्रण, दुष्टव्रण, अर्बुद, दुष्टार्बुद, आदि बीसों व्याधियाँ ऐसी हो जाती हैं जिनका कोई अभी तक उपचार ज्ञात नहीं हो सका। इससे भिन्न सबसे भयंकर इस गमय रश्मि का प्रभाव कोष की आन्तरिक रचना पर भी होता है। जहाँ जैवाद्यम में संस्काराणुओं की एक १४ अणुओं की माला फैली होती है जिसके कारण ही प्रत्येक प्राणी के अंगों का विकास उन संस्कारी अणुओं की उपस्थिति में— जो पैत्रिक गुण सम्पन्न होते हैं—उन्हीं की उपस्थिति में कोषाएं अपने पैत्रिक रूप, गुण, स्वभाव के अनुरूप अंगों उपांगों का विकास करता है। इस संस्कारी अणुओं पर इस रश्मि का घातक प्रभाव हो सकता है। यदि उक्त संस्कारी कणिकाओं में से कोई एक दो कणिका इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

०२९५०६

रश्मि प्रभाव से नष्ट हो जाय तो उस मनुष्य की सन्तान अंगहीन, कानी, कुवड़ी, विरूप उत्पन्न हो सकती है और आगे की सारी सन्तानों में वही अंग हीनता वंश परम्परागत बनी रहेगी जिसे कोई दूर नहीं कर सकता। अभी ११ अगस्त को टोकियो (जापान) में विश्व वैज्ञानिकों का एक सम्मेलन हुआ जिसमें उदजन बमों के प्रयोगों के विरुद्ध हो रहे इस तीसरे विश्व वैज्ञानिक सम्मेलन में उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि युगवाश (कनाड़ा) में जो जुलाई के आरम्भ में विश्व वैज्ञानिकों का सम्मेलन हुआ था उस समय कहा गया था कि यदि परमाणु बमों से युद्ध हुआ तो उसका परिणाम मानव जाति का पूर्ण विनाश होगा। इस विश्व वैज्ञानिक सम्मेलन ने उस वक्तव्य की पूर्णतया पुष्टी की है।

गमय रश्मि विकरण की हानि से स्वयं अमेरिका कैसे घबरा उठा?

इस का ताज़ा प्रमाण लीजिये। रूस के अखबार प्रावदा ने अमेरिका स्थित एटलांटिक सिटी का एक समाचार प्रकाशित किया है जो भारत के अखबारों में भी छप चुका है। उस में कहा गया है कि गत २९ जुलाई को एक अमेरिकी वायुयान ने २५ टन अणुबम और आणविक युद्ध शस्त्र समुद्र में डुबो दिये। यह हवाई जहाज़ ग्लोबमास्टर अमरीकी सेनाओं के लिये अणुशस्त्र लेकर योरुप को जा रहा था कि उसे यह शस्त्र किनारे से कुछ दूर १०० फुट गहरे जारी में डाल देने पड़े।

प्रावदा ने कई दुर्घटनाओं का उदाहरण स्वरूप उल्लेख करते हुये संकेत किया था कि अमरीकी नागरिक अब अधिकाधिक यह समझते जाते हैं कि अणु प्रयोगों को और आगे जारी रखना हानिकारक है।

प्रावदा ने यह भी लिखा है कि अमरीकी अणुबमों के कारखानों के सामने अब यह समस्या आ गई है कि वह गमय रश्मि से दूषित कचरे को कहां डालें। कुछ कारखाने यह कचरा नदियों में डालते हैं पर इससे नदियों का जल भी दूषित हो जाने का भय है। इस सम्बन्ध में प्रावदा ने न्यूयार्क की एक घटना का उल्लेख भी किया है।

घटना इस प्रकार है कि एक जहाज़ गमय रश्मि प्रभावित कचरे को लेकर एक विद्युत अणु कारखाने से जा रहा था। उसने इस कचरे के भरे टीन न्यूयार्क नगर से १८६ मील दूर समुद्र में डाल दिये। यह सब टीन समुद्र में डालने पर डूब गये पर दुर्भाग्यवश उन में से दो टीन नहीं डूबे। उन टीनों को अमरीकी बेड़े के वायुयानों ने गोली मार कर डुबाया। उन में से एक टीन दो दिन तक अज्ञात रहा। तब वह मशीनगनों से डुबाया गया। चूंकि इनके समीप आने से खतरा था इसलिये वायुयानों ने इन पर १४५० फुट की ऊंचाई से गोलियां दागीं। प्रावदा ने एक कैलीफोर्निया निवासी के एक पत्र का भी उद्धरण दिया है जो उसने अणु आयोग को लिखा और जिसमें कहा कि अणुबमों का परीक्षण मानव जाति के विरुद्ध बहुत बड़ा और अक्षम्य अपराध है।

ऋतुओं पर प्रभाव—उदजन बमों के परीक्षण जिन द्वीपों में हो रहे हैं उन द्वीपों के आसपास समुद्र ही समुद्र है। इन बमों के विस्फोट से जो भयंकर उत्ताप पैदा होता है उसके प्रभाव से न जाने कितना समुद्र का जल और पृथ्वी गर्भ से वाष्प बनकर उड़ता जा रहा है इसका हिसाब किसी ऋतु विशेषज्ञ ने आज तक नहीं निकाला।

वायुमण्डल में जल वाष्प को धारण करने की एक सीमा होती है हम यहां पर इसकी वैज्ञानिक व्याख्या में जाना नहीं चाहते। जो वाष्प उदजन बम विस्फोट काल में बनकर वायुमण्डल की ओर उठती है एक तो वह गमय रश्मि व्याप्त सक्रिय होती है। दूसरे प्रकृति रूप से बनने वाली जलवाष्प से यह मात्रा भिन्न होती है। किन्तु वायुमण्डल में इस वाष्प के व्याप्त हो जाने पर प्राकृतिक वाष्प के साथ यह वाष्प मिलकर उसकी मात्रा को द्विगुण, त्रिगुण बढ़ा देती है आज चार पांच वर्ष से जब से उदजन बमों का परीक्षण चल रहा है तब से प्रत्येक देश में वर्ष की मात्रा का वेग बहुत बढ़ गया है। चीन, जापान, भारत में ही इस समय बाढ़ों का जितना जोर हो रहा है अमेरिका, कनाडा में भी अपेक्षाकृत अधिक है, किन्तु परीक्षण तो प्रशान्त महासागर के द्वीपों में हो रहे हैं जहां से मानसून पूर्व की ओर ही अधिक उठ कर आता है। यह चार पांच वर्षों से वर्षा की अधिकता से जो बाढ़ें देश में आ रही हैं यह प्रकृतिक वर्षा के कारण नहीं, प्रत्युत उदजन बमों के उत्ताप से प्रादुर्भूत जल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाष्प की बढ़ी मात्रा के कारण है। जिसमें गमय रश्मियों की उपस्थिति का भी पता चल गया है। यह वर्षा का जल बाढ़ से तो जन समाज पर तबाही ला ही रहा है किन्तु गमय रश्मि व्याप्त जल. जो बनस्पतियों, कृषि के पौधों द्वारा आचूषित होकर उसके भीतर पहुँच जाता है और उन पौधों, शाक सब्जियों धान्यों को जो पशु मनुष्य खाते हैं उन पर क्या उन गमय रश्मियों का प्रभाव न होता होगा ? यह देखने समझने वाली चीज है। क्या वैज्ञानिक इधर ध्यान् देकर इस पर से पर्दा उठाने का प्रयत्न करेंगे ?

निःरश्मि बमों का आविष्कार

जब समस्त राष्ट्रों में इस बात की चर्चा जोर पकड़ती जा रही थी कि इन उदजन बमों से विश्व के मानव-जीवन का संहार हो जायगा इसको बन्द किया जाय तो साम्राज्य वादी राष्ट्रों के सरमौर अमेरिका के राष्ट्रपति ने एक महत्व पूर्ण घोषणा की कि हमारे वैज्ञानिकों ने ऐसी विधि निकाल ली है कि उदजन वम विस्फोट के समय जो गमय रश्मियां प्रादुर्भूत होकर सबसे अधिक बिनाशकारी दृश्य उपस्थित कर देती हैं जिसके प्रभाव से मानव समाज में उत्पन्न व्याधियों का निवारण कठिन है उन गमय-रश्मियों को उत्पन्न होने से रोकने की विधि हमारे वैज्ञानिकों ने जान ली है। भविष्य में ऐसी रश्मियों से रहित निर्दोष बम ही परीक्षण में छोड़े जांयगे ताकि उनसे धमाका और ताप ही उत्पन्न होगा, इससे निर्दोष व्यक्तियों पर कोई बुरा प्रभाव नहीं होगा। इस घोषणा को जब रूस के प्रधान मन्त्री ने पढ़ा तो उन्होंने उसका एक ही शब्द में उत्तर दिया कि आइसनहोवर का ऐसा कहना "साइन्स की हंसी उड़ाना है।" अर्थात इस प्रकार की कल्पना केवल जन समाज की आंखों में धूल झोंकने के बराबर है। यह तो जन समाज में बम परीक्षणों के विरुद्ध बढ़ती भावना को दबाने की एक राजनीतिक चाल मात्र है।

वास्तव में गमय रश्मि का परमाणु भंजन के समय प्रादुर्भूत होना एक प्राकृतिक घटना है परमाणु भंजन काल में जब सत प्रपराणु, रज प्रपराणुओं से टकराकर केन्द्र से निकल भागते हैं तो उन दोनों की आकर्षणी सीमा का बन्धन टूट जाता है वह आकर्षणी बन्धन की सीमा जब टूटती है तो उससे गमय रश्मियों का प्रादुर्भाव होता है। यह एक ऐसी प्राकृतिक घटना हैं जिसे कोई बदल नहीं सकता। इसीलिये तो इस पर वैज्ञानिक विश्वास नहीं करते।

संसार में कैसे कैसे आविष्कार हो रहे हैं

हमारी लोक सभा में श्री एस० एन० दास ने स्वास्थ्य मन्त्रालय से लिखित प्रश्न किया कि क्या उन्हें ज्ञात है कि फ्रांस में एक डाक्टर ने ऐसी निद्रोत्पादक औषधि का आविष्कार किया है जो ३ मिनट में निश्चित रूप से मनुष्य को गहरी निद्रा में पहुँचा देती है ?

स्वास्थ्य मन्त्री श्री करमरकर जी ने बताया कि सुना तो हमने भी है इस ओषधि के बारे में। हां जांच की ओर हमारा भी ध्यान है।

हमारे स्वास्थ्य मन्त्री उस दवा को मंगा कर कुछ डाक्टरों को बांट देंगे कि इसका प्रयोग निद्रा उत्पदन के लिये कर के देखो सफल सिद्ध होने पर हज़ारों क्या लाखों रुपये की ओषधि मंगाने का आर्डर फ्रांस को चला जायगा किन्तु उनसे यह नहीं बनता कि ऐसे योग्य डाक्टर अनुसन्धान कर्ता अपने देश में उत्पन्न करें कि उस ओषधि को विश्लेषित कर उसकी वास्तविक रचना का ज्ञान प्राप्त कर उसे यहीं बनाने का प्रयत्न करने के साधन जुटावें। क्या इगलैण्ड, अमेरीका भी हमारे स्वास्थ्य मन्त्री का अनुकरण करेंगे ? हरगिज नहीं। वह तो दवा मंगाकर उसकी बनावट को ज्ञात कर चट बना लेंगे। वह हुए स्वतन्त्र देश, हम स्वतन्त्र कैसे ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकस्मात आविष्कार की घटना

छोटे २ कीट पतंगों, मक्खियों, मच्छरों, जूं, खटमल, कीलनी, पिस्सू, मोरी के सुण्डों आदि को मारने के लिये इस समय तक जितनी भी औषधियां आविष्कृत हुई थीं उन सबों में डी. डी. टी. नामक औषध सर्वोपरि मानी गई। यही नहीं यह औषध ऐसे सूक्ष्म कृमियों कीटाणुओं को भी नष्ट कर डालने में समर्थ पाई गई जिन्हें हम अपने नेत्र से देखने में असमर्थ हैं। यह औषध इस तरह तीव्र कृमि-नाशक गुण से युक्त होने के कारण तथा अधिक विषाक्त होने के कारण इसको व्यवहार में लाने के समय बड़ी सावधानी से बरता जाता है। नगरपालिका व अन्य सरकारी आदमी जिन्हें ग्रामों, घरों, मोरियों, बाजारों में डी. डी. टी. छिड़कने का काम दिया जाता है उन्हें इसकी विषाक्तता से बचाने के लिये रबड़ के दस्ताने, मुंह पर कपड़ा आदि बाँध कर काम करने जी हिदायत की जाती है कि कहीं यह विषाक्त वस्तु शरीर के भीतर पहुंच कर कर्मचारियों को हानि न पहुंचावे।

हम अपने कारखाने व गोशालों में मक्खी, किलनी, मच्छर आदि मारने के लिये इसके ५ प्रतिशत का चूर्ण तथा १० प्रतिशत का मिट्टी के तेल में बनाया घोल काफी समय से प्रयोग में लाते चले आ रहे हैं किन्तु हम सब इसका प्रयोग करते समय बड़ी सावधानी करते थे कि कहीं नाक मुंह के भीतर न चली जाय। यह कीटाणु व कीट पतंग नाशक चमत्कारी दवा है इसीलिये भारत सरकार ने दिल्ली में इसके निर्माण की व्यवस्था की, जहां से आज यह पचासों टन की मात्रा में प्रतिवर्ष तैयार होती है। यह डी. डी. टी यदि किसी जैवी व्याधि से ग्रसित मनुष्य को खिलाई जाय तो इसका शरीर पर और जैवों पर क्या प्रभाव हो सकता है? किसी अनुसन्धान कर्ता ने आज तक इसपर प्रयोग करने का साहस इसलिये नहीं किया क्योंकि यह अत्यधिक विषाक्त गुण रखती है। और इस बात की ख्याति फैल चुकी है कि इसके खाने से मनुष्य मर सकता है या गम्भीर हानि होने की सम्भावना है।

अभी अभी सूचना मिली है बंगाल के संथाल परगना जिले के हिरनपुर थाने के भीतर मज़लाडीह नामक ग्राम में मियां सिराजुद्दीन नाम का व्यक्ति एक दो वर्ष से गलत्कुष्ठ रोग से ग्रसित हो गया उसका रोग प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था, हाथ पैरों की अंगुलियां गलने लग रही थीं, नाक मुंह विकृत होता जा रहा था उसने इस दशा में जीवन से छुटकारा पाने के लिये किसी विष को खाकर मर जाने की ठानी। उसे और कोई विष तो नहीं मिला किन्तु ५ प्रतिशत डी. डी. टी. के पावडर की उसे डिबिया मिल गई उसने उसमें से एक मुट्ठी भर पावडर निकालकर फका मार लिया कि चलो इस कष्टमय जीवन से निस्तारा मिला। किन्तु उस मुट्ठी भर डी. डी. टी. के खा लेने के बाद मृत्यु की प्रतीक्षा करता रहा कि अब आती है, अब आती है। दो दिन व्यतीत हो गये यमराज के दूत तो नहीं पहुंचे किन्तु तीसरे दिन देखता क्या है कि उसके क्षतों पर रोपण क्रिया आरम्भ होगई है, नाक मुंह की विकृति भी घट रही है, घाव सूखने लग रहे हैं, उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। अब तो मियां सिराजुद्दीन ने उस डी. डी. टी. के पावडर को खाना आरम्भ कर दिया। १५ दिन में ही हजरत का कुष्ठ गायब हो गया। उसके स्वास्थ्य पर इस डी. डी. टी. का अन्य कोई बुरा प्रभाव होने की सूचना तो अभी तक नहीं आई। भविष्य प्रयोग पर निर्भर है। यह सूचना दुमका के बड़े हस्पताल के डाक्टर को मिली वह इसकी जांच कर रहा है। क्या हमारे वैद्य भी इसकी जांच करने में समर्थ होंगे?

हमारे पाठक अन्दाजा लगाते होंगे कि आखिरकार मियाँ सिराजुद्दीन ने कितना डी. डी. टी. फांका होगा? मुट्ठी भर का मतलब है ज्यादा से ज्यादा कोई एक तोला होगा। एक तोला पावडर में खालिस डी. डी. टी. ५ रत्ती के लगभग हुई। ५ रत्ती अर्थात १० ग्रेन प्योर डी. डी. टी की मात्रा से हजारों लाखों पिस्सू खटमल मर सकते हैं किन्तु उस ५ रत्ती डी. डी. टी. ने मियाँ साहब पर जरा भी नशा नहीं किया। इस प्रयोग से क्या गलत्कुष्ठ चिकित्सा पर डी. डी. टी. को अमोघ मान लिया जाय? विद्वत् समुदाय तो एक व्यक्ति की सफलता पर कभी पूर्ण विश्वास नहीं करेगा। किन्तु इस प्रयोग ने इसमें कोई शक नहीं कि परीक्षा के लिये चिकित्सकों का मार्ग दर्शन अवश्य कर

[शेष पृष्ठ १४४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आहार के अतियोग का परिणाम

हमारे देश में काफी से अधिक व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें अच्छा भोजन खाने को नहीं मिलता। इसलिये उन लोगों का स्वास्थ्य प्रति दिन क्षीण होना चला जा रहा है उनके बच्चे हीन आहार के कारण अच्छी तरह नहीं पनपते न उनका मानसिक विकास होता है। किन्तु कुछ साधन सम्पन्न परिवार के व्यक्तियों को देखता हूँ कि वह इतना अधिक खाते हैं और अच्छे से अच्छे पौष्टिक आहार वैज्ञानिक विधि से तैयार किये ऐसे ऐसे कृत्रिम आहार खाते हैं कि उनका शरीर फूलकर कुप्पा होता चला जाता है। कुछ परिवारों के बालकों का शारीरिक विकास इतना सीमा को उल्लंघन कर जाता है कि उसको ठीक करने का लाख प्रयत्न करते हैं किन्तु उसमें कमी नहीं होती। यह विषमता हमारे देश में अधिक उग्ररूप में देखी जाती है किन्तु योरुप में ऐसी स्थिति नहीं है। क्योंकि वहां के साधारण और साधन सम्पन्न समाज के रहन सहन खान पान में इतना अन्तर नहीं होता। क्योंकि उन लोगों को क्या भोजन करना चाहिये? किस अवस्था के व्यक्ति को कितना भोजन करना चाहिये, कितनी बार करना चाहिये इसका आदेश उन्हें डाक्टरों, स्वास्थ्य संरक्षकों की ओर से दिया जाता है। उसका परिणाम यह हो रहा है कि वहां के बालकों में एक सा ही शारीरिक विकास हो रहा है। अमेरिका सारे योरुप से अधिक साधन सम्पन्न देश है वहां की खाद्य व्यवस्था सारे योरुप से अच्छी बताई जाती है। वहां की आहार सम्बन्धी व्यवस्था पर विचार प्रकट करने वाली 'न्यूट्रिशन रिव्यू' पत्रिका ने वहां के बच्चों को जो इस समय आहारीय द्रव्यों के अतियोग से पाला जा रहा है उससे बालकों का शारीरिक विकास मात्रा से अधिक हो रहा है उसके सम्बन्ध में लिखा है कि रोवेस्टर विश्वविद्यालय के डाक्टर गिल्वेट फोर्वस द्वारा जो सर्वेक्षण हुआ था उससे पता चला है कि एक वर्ष का आज का बालक १९ वीं सदी के एक वर्ष के बालक से ७ प्रतिशत अधिक लम्बा हो रहा है। और ६ वर्ष से १४ वर्ष की आयु के बालक उस समय के बालकों से ६ से ८ प्रतिशत तक डील डौल में बड़े और १२ से १५ प्रतिशत तक भारी हो रहे हैं। उनका अनुमान है कि इस आहारीय अतियोग के कारण दस प्रतिशत बालक ऐसे बढ़ रहे है जो अपनी आयु के बालकों से काफी डील डौल के भारी होते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि अधिक खाद्योजांश पूर्ण भोजनीय द्रव्यों का अतियोग है जो डाक्टरों के लिये कभी एक ऐसी समस्या खड़ी कर सकता है जैसे हीन खाद्य द्रव्यों के कारण किसी समय हमाने सामने खड़ी थी।

इस समय के वैज्ञानिक विधि से निश्चित खाद्य द्रव्यों में पोषणीय द्रव्यों की मात्रा का निर्धारण ऐसा हुआ है कि जिसके अतियोग से वास्तव में शारीरिक विकास सीमा को उलंघन करता दिखाई देता है। यदि संयम से काम न लिया गया तो रावण के वंशज होने का उन्हें सौभाग्य मिलने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं।

[शेष पृष्ठ १४३ का]

दिया है जिसने यह सिद्ध कर दिया है कि डी.डी.टी. मानव जीवन के लिये इतना विषाक्त द्रव्य नहीं जितना कि विश्वास किया जाता था। यदि इसके प्रयोग से सफलता मिली तो संसार से एक ऐसी पाप्मान व्याधि का अस्तित्व मिटने की आशा जाग उठी है जिसे दूर करना कठिन समझा जाता था।

यक्ष्मा और कुष्ठ इन दोनों के जैव अम्लसह्य ऐसे जैव हैं जिन पर बहुत कम किसी औषध का प्रभाव पड़ता था। यदि डी. डी. टी. का कुष्ठ के जैवों पर घातक प्रभाव हुआ तो निश्चय ही यक्ष्मा के जैवों पर भी उसी तरह घातक प्रभाव पड़ सकना सम्भव है, क्योंकि दोनों ही एक प्रकृति के जैव हैं, उनकी रचना भी वैसे तत्वों से हुई जिनसे कुष्ठ के जैवों की। यदि डी. डी. टी. इस क्षेत्र में सफल सिद्ध हो तो इससे विश्व की दो भयकर असाध्य व्याधियों से जन समाज को निस्तारा मिलने की आशा हो सकती है। पर हमारे देशी चिकित्सक भी क्या इधर ध्यान देने में समर्थ हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य की अनुपम कृति
भस्म-विज्ञान

भाषा-टीका सहित दो भागों में मूल्य १०)

धातु भस्मों व रस-चिकित्सा के आविष्कारक कौन थे वह कब हुए ? और आयुर्वेद में रस-चिकित्सा का प्रवेश कैसे हुआ ? साधु सन्तों, महात्माओं की भभूति, सिद्धों की रस सिद्धियों का ज्ञान वैद्यों तक कैसे पहुंचा ? इसके इतिहास का ज्ञान आयुर्वेदज्ञों को बिल्कुल नहीं, वास्तव में रस चिकित्सा सिद्धों महात्माओं की देन है। इसका सही इतिहास जानना चाहते हों तो भस्म-विज्ञान का उपोद्घात पढ़िये।

इसमें ८४ सिद्धों का विवरण सहित सचित्र इतिहास दिया है। जिसको खोजने में स्वामी जी ने भारतवर्ष के बड़े-बड़े पुस्तकालयों में जा-जाकर १४० से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थों से खोजकर सारा विवरण ढूंढ निकाला है। वह ऐसा अकाट्य प्रामाणिक है कि वैद्य समाज पढ़कर स्तम्भित व चकित रह गया है। ग्रन्थ की यही एक विशेषता नहीं।

सबसे बड़ी विशेषता तो इस ग्रन्थ की यह है कि जितने भी सिद्धों महात्माओं द्वारा भस्में बनाने की विधियां आविष्कृत हो चुकी हैं तथा जो रस ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हुए उनमें जो भस्म बनाने की विधियां आई हैं वह सब अप्रकाशित होने के कारण वैद्य समाज उनके निर्माण को नहीं जानता उनको ढूंढकर सप्रमाण इस ग्रन्थ में संग्रह किया गया है। यही नहीं, इससे भी अधिक विशेषता यह है कि यूनानी, मिश्रानी चिकित्सा में जिन पत्थरों, रत्नों, धातुओं की भस्में बनती हैं उनका ज्ञान भी वैद्यों को बहुत कम है वह समस्त विधियां भी इस ग्रन्थ में सप्रमाण संकलित कर दी गई हैं। इससे भिन्न अनेक धातु भस्मों की विधियां जो अब तक महात्माओं के गुरु परम्परा में चली आ रही थी, उनमें से अनेकों विषयों को बड़े प्रयत्न से प्राप्त कर सबको स्वामी जी ने प्रकट कर दिया है। पुस्तक कैसी है ? इस पर विद्वान वैद्यों की सम्मतियों से इसका अन्दाजा लगाइयेगा

भस्म विज्ञान पर कुछ सम्मतियाँ

"स्वास्थ्य" कृष्ण गोपाल धर्मार्थ औषधालय

कालेड़ा बोगला

रस, भस्म विज्ञान भारतीय चिकित्सा विज्ञान का महत्वपूर्ण विषय है, इस वषय के सभी ग्रन्थों में प्रायः रस-भस्मों का परिचय सूक्ष्म रूप से मिलता है। किन्तु विशद विवेचन सह स्वतन्त्र पुस्तक अभी तक प्रकाशित नहीं हुई थी जो रस एवं भस्मों के विषय में ठोस शिक्षा दे सके। इस कमी को लक्ष्य में रखकर आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान स्वामी हरिशरणानन्द जी ने अनेक रस ग्रन्थों के आधार स्वरूप बहुत परिश्रम करके संकलित कर सुन्दर हिन्दी टीका सह इस पुस्तक की रचना की है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिये लेखक को में बधाई देता हूँ।

इस ग्रन्थ में भस्म बनाने की प्राचीन शास्त्रोक्त विधि विभिन्न प्रमाण भूत ग्रन्थों से ही है उसे नव्य विज्ञान संमत उल्लेख किया है और महत्वपूर्ण सूचनायें भी देदी हैं। इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में उपोद्घात के भीतर लेखक ने धातु, उपधातु, रस, रत्न आदि के सम्बन्ध में विज्ञान समंत विस्तृत विवेचन किया है, यह अनुभव लेखक को भारतीय रसशास्त्र एवं नव्य विज्ञान सम्पन्न रसायन शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् डा० प्रफुल्लचंद्रराय द्वारा परम्परागत मिला। फिर काफी धन खर्च द्वारा दीर्घ काल पर्यन्त परिश्रम करके तथा विश्लेषण करवा कर अनुभव प्राप्त किया है इस तरह जो अनुभव मिला वह लेखक ने हृदय खोलकर पुस्तक में दे दिया है।

पुस्तक में सम्पूर्ण भस्मों का विस्तृत विवेचन किया है एवं साथ में अपना अनुभव दर्शाकर पुस्तक को अत्यन्त उपयोगी बना दिया है। यह पुस्तक फार्मेसी वालों के लिये मार्गदर्शक है, एवं आयुर्वेद के विद्वान, सामान्य चिकित्सक, छात्रगण तथा सर्व साधारण आयुर्वेद प्रेमी सज्जनों के लिये अत्यन्त उपयोगी होगी। में हृदय से इसका प्रचार चाहता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्युत् की भट्ठियां और औषध निर्माण की मशीनें !!

हम अभी तक धातु भस्में उपलों की अग्नि में तय्यार करते हैं। उपलों की आंच देने में यह त्रुटि सदा रहती रही है कभी आंच कम कभी अधिक लग जाती है, इसके नियन्त्रण के जो भौतिक साधन बताये हैं उन्हें अपनाने पर भी यह त्रुटि दूर नहीं होती, इसीलिये अन्य साधन ढूंढने पड़े। उनमें से विद्युत् की भट्ठियां सर्वोत्तम सिद्ध हुईं। विद्युत्भट्ठी में ताप नियन्त्रण की पूर्ण व्यवस्था होती है, जितनी भी मात्रा में आंच देना चाहें आप प्रसन्नता से दे सकते हैं। प्रत्येक धातु भस्में बनाने पर देखा गया है कि उन्हें एक जैसी आंच नहीं चाहिये। किस धातु भस्म को कितनी आंच देना है? इसका सही-सही ज्ञान आप हमारे लिखे भस्म विज्ञान नामक ग्रन्थ में प्राप्त कर सकते हैं।

और वह भस्में विद्युत् भट्ठी पर ही एक मात्रा में आंच लेकर बन सकती है इसका अनुभव लिया जा रहा है और उस पर एक विशेष ग्रन्थ तैयार हो रहा है। हमने ऐसी विद्युत् भट्ठियां निर्माण की हैं जिन पर धातु भस्म और कूपी-पक्व रस दोनों ही बन सकते हैं। छोटे बड़े कई आकार की भट्ठियां तय्यार करके उन पर अनुभव ले रहे हैं जो वैद्य इन भट्ठियों का उपयोग करेंगे वह निश्चिन्त बैठे हुए भस्में व कूपी-पक्व रस निर्माण कर सकते हैं। जिन्हें भट्ठी लगाने की इच्छा हो वह पत्र-व्यवहार करें।

और आज-कल ओषधियों की मांग इतनी बढ़ गई है कि हाथ से ओषधियां कूट, पीस कर उतनी जल्दी रस, वटी तय्यार नहीं होतीं जितनी मशीनों से होती हैं। हाथ तो लगातार घंटा, आधा घंटा काम कर सकते हैं फिर थक जाते हैं पर मशीन तो लगातार ८-९ घंटा या जितनी देर चाहें उन्हें चलावें क्या वह थकने वाली हैं? फिर खूबी सबसे बड़ी हमारी मशीन में यह है कि जिस तरह आयुर्वेद के ग्रन्थों में ओषधियों की कुटाई, पिसाई और घोटाई (भावना) का जो विधान दिया है जिससे ओषधियों का सार भाग गरम न हो कर वह नष्ट नहीं होते, बिल्कुल उसी विधि के अनुसार हमारी मशीनों से कुटाई, पिसाई घुटाई होती है और ओषधियां घुट कर इतने सूक्ष्म अणु-अंशों में आ जाती हैं कि जिनका प्रभाव शीघ्र होता है। प्रत्येक मशीन बिजली की शक्ति से चलने वाली है। मशीनें निम्न हैं :--

चट्टू मशीन, ढोल मशीन, खरल मशीन, गोली मशीन, टिकिया मशीन, पालिश मशीन, आसव छानने की मशीन फिल्टर आदि। अधिक मात्रा में औषध निर्माण-कर्ता यह मशीनें हमारे कारखाने में आकर देखें और सारी व्यवस्था समझ कर अपने यहां यह मशीनें लगाएं।

निवेदक-- मैनेजर पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी,
६०--६१ अकाली मार्केट, अमृतसर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ४ आश्विन सम्वत २०१४ संख्या १०

अक्टूबर १९५७

आयुर्वेद-विज्ञान

चिकित्सा संसार में क्रान्ति लाने वाला मुख्य वैज्ञानिक पत्र

AYURVED-VIJNAN

The Leading Hindi Journal Explaining The Ayurvedic System on Scientific Lines

सम्पादक
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

विषय-सूची

१. महामण्डल सदस्यों से एक प्रश्न १४५
२. शिवशर्मा द्वारा दायर मानहानि केस का फैसला १५२

प्रकाशक—
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य, आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय, २२ फैज़ बाज़ार, देहली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—बदलिया प्रिंटिंग प्रेस, दाइवाड़ा नई सड़क, दिल्ली

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियम

१—आयुर्वेद-विज्ञान प्रत्येक अंग्रेजी मास की १ तारीख को प्रकाशित होता रहेगा।

२—डाक-व्यय सहित इसका मूल्य ३) वार्षिक, एक प्रति का मूल्य ।-) होगा।

३—पत्र मंगाने वालों को अपना पता साफ २ अक्षरों में लिखना चाहिये।

४—जिन व्यक्तियों के पास उस मास की ५ ता० तक पत्र न पहुंचे उन्हें इसकी सूचना देनी चाहिये।

५—यदि एक-दो मास के लिये पता बदलवाना हो तो उसका प्रबन्ध स्वयम् डाकखाने से कर लेना चाहिये। अधिक समय के लिये पता बदलवाना हो तो फिर हमें सूचित करना चाहिये।

६—पत्र व्यवहार करते समय ग्राहकों को अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये। अन्यथा उत्तर नहीं दिया जावेगा।

७—पत्र व मूल्य सम्बन्धी पत्र-व्यवहार मैनेजर आयुर्वेद विज्ञान के नाम से और लेख, समालोचनादि व पुस्तकादि सम्पादक के नाम से भेजना चाहिये।

८—कोई भी पत्र, पुस्तक समालोचना के लिये भेजी जाय उनकी दो प्रति भेजनी चाहिये।

९—आयुर्वेद विषयक वैज्ञानिक गवेषणापूर्ण लेखों को पत्र में सर्व-प्रथम स्थान दिया जायेगा और श्रेष्ठ सचित्र लेखकों को पुरस्कृत भी किया जायगा।

१०—वृथा के आडम्बर पूर्ण पृष्ठ-पोषक लेखों के लिये इसमें स्थान नहीं मिलेगा। किसी भी लेख को घटाने, बढ़ाने व प्रकाशित करने, न करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार होगा।

११—जो लेख भेजे जायें, कागज पर एक तरफ हाशिया छोड़ कर लिखे होने चाहिये।

१२—उत्तम २ अलभ्य आयुर्वेद साहित्य सम्बन्धी चित्र लेख व वनस्पतियों आदि को जो सुरक्षित भेजेंगे उनको सपारिश्रमिक मार्ग व्यय आदि सब आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय से दिया जायेगा।

१३—आयुर्वेद शास्त्र सम्बन्धी प्रश्नों को छोड़ कर किसी परामर्श सम्बन्धी या किसी रोगी के लिये रोग-सम्बन्धी प्रश्नों पर प्रति प्रश्न के लिये आयुर्वेद-विज्ञान के ग्राहक आठ आना, जो ग्राहक नहीं वह प्रति प्रश्न एक रुपये का टिकट प्रश्न के साथ भेजेंगे तभी उनके प्रश्न और उत्तर छापे जायेंगे।

विज्ञापन छापने के नियम

१—किसी भी विज्ञापन छापने वाले या बन्द करने वालों को पत्र प्रकाशन से १५ दिन पूर्व सूचना देनी चाहिये।

२—अश्लील सभ्यता के विरुद्ध विज्ञापन नहीं लिये जायेंगे।

३—कोई भी विज्ञापन जनता को धोखा देने वाला सिद्ध होने पर उसका प्रकाशन बन्द कर दिया जायगा और जब तक वह सन्तोषप्रद प्रमाण न देगा जो मूल्य आ चुका है वापस नहीं दिया जायगा।

४—विज्ञापन का मूल्य सर्वथा प्रथम लिया जायगा।

५—आधे कालम से कम विज्ञापन दाताओं को आयुर्वेद विज्ञान बिना मूल्य नहीं दिया जायगा।

६—एक वर्ष के लिये विज्ञापन देने वाले को =) रुपया कमीशन काट दिया जायगा।

विज्ञापन के दर

७—१ पृष्ठ यानी २ कालम की प्रतिबार की छपाई ४०)

आधा पृष्ठ	" १	" " "	२४)
चौथाई ,,	१।२	" " "	१६)
टाईटल के पीछे के पृष्ठ की		" "	५०)
" तीसरे "	की	" "	४५)
" चौथे "	की	" "	६०)

८—ट्रेड डायरैक्टरी में विषय वार विज्ञापन प्रति ३) रु० के हिसाब से लिया जावेगा।

मैनेजर

शोक समाचार

बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि आयुर्वेद के प्रकण्ड पंडित महामण्डल के जीवन स्तम्भ प्राणाचार्य श्री पं० गोवर्धन शर्मा छांगाणी भिषक् केसरी ३ सितम्बर को ८० वर्ष की आयु पूर्ण कर सदा के लिये हम सबों के बीच से चले गये।

हम आयुर्वेद विज्ञान स्टाफ की ओर से इस महान वियोग व्यथा काल में छाँगाणी जी के परिवार से हार्दिक सम्वेदना और सहानुभूति प्रकट करते हैं।

हो सका तो अगले अंक में आपके जीवन घटना पर प्रकाश डालेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद-विज्ञान

आयुर्विदेव वितते किल शास्त्र जाते पुम्भिः प्रयत्नपरकैर्भवतीह लभ्यम् ।
शक्तिं शिवं च जनता यदि कांक्षतीयम् विज्ञानमेव भजतां सततं विशेषम् ।।

वर्ष ४ | २०१४ आश्विन वि०, अक्टूबर १९५७ ई० | अंक १०

महामण्डल सदस्यों से एक प्रश्न

क्या अ० भा० आयुर्वेद महामण्डल को सक्रिय सजीव संस्था बनाना है या समाप्त करना है ?

अब यह महामण्डल के किसी सदस्य से छिपी बात नहीं रही कि जिस महामण्डल पर आज १९ वर्ष से एक गुट विशेष का आधिपत्य बना चला आया है जिसका नेता शिवशर्मा था और आज भी है। वह महामण्डल के साधारण व विशेष अधिवेशनों में महामण्डल के बड़े बड़े नेताओं, हितचिन्तकों, विधान ज्ञाताओं को इस बुरी तरह छकाता रहा कि जिसके छलप्रपञ्चों हथकण्डों के आगे किसी की भी पेश नहीं गई। अन्त में वे सब धीरे धीरे हताश, निराश होकर महामण्डल से एक दम उदासीन हो गये, उन्होंने सम्मेलनों में जाना तक छोड़ दिया। जो जाते भी थे वह केवल यह देखने के लिये कि शिवशर्मा महामण्डल में अपनी धींगामुश्ती से अधिवेशन की कार्यवाहियां कैसे चला रहा है और वहां कैसे कैसे अवैधानिक कार्य कर रहा है।

महामण्डल के स्थापन का उद्देश्य— स्वर्गीय श्री शंकर दापदे शास्त्री, स्वर्गीय श्री आचार्य यादव जी, श्री शुक्ल जी आदि महानुभावों ने समय की स्थिति को देखकर महामण्डल की स्थापना इसलिये की थी कि 'संघशक्ति कलौयुगे' कलियुग में संगठन शक्ति का ही महत्व है, बिना संगठन के वैद्यक व्यवसाय का भविष्य में जीवित रहना कठिन है। उस समय भारत में अंगरेजों का राज्य था अगरेजों ने अलौपैथी चिकित्सा को मान्यता दी हुई थी। अलोपैथी शिक्षा के लिये वे यहां मेडिकल कालेज खोलते जा रहे थे। उन कालेजों से निकले डाक्टरों को ही सरकार प्रमाणित मानती थी। उन्हीं के दिये प्रमाण पत्र और व्यवस्था को सरकार स्वीकार करती थी। वैद्यों को वह पूछती तक नहीं थी। जिस चिकित्सा-पद्धति की किसी जमाने में राज्य मान्य प्रतिष्ठा हो उसकी गिरती स्थिति को देखकर ही उन महानुभावों को दुःख हो रहा था, इसी से उन्होंने वैद्य समाज को संगठित करने का प्रयास किया। उसी के परिणाम स्वरूप आज से ४२ वर्ष पूर्व आयुर्वेद महामण्डल नामक संस्था की स्थापना हुई। संस्था की स्थापना के कुछ ही समय बाद महामण्डल के सामने आयुर्वेद की व्यवस्थित शिक्षा का मुख्य प्रश्न था। वैद्यों को सरकार इसलिये प्रामाणिक नहीं मानती थी क्योंकि वह किसी सरकार द्वारा स्वीकृत कालेज से पढ़ कर नहीं निकलते थे। जहां वह पढ़ते थे वहां कोई व्यवस्थित पढ़ाई का प्रबन्ध नहीं होता था, न शिक्षा के साथ क्रियात्मक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में समझने के साघन होते थे। इसीलिये वे आयुर्वेद के नेता आयुर्वेद शिक्षा के लिये विश्व विद्यालय की स्थापना करना चाहते थे। १९१७ में भारतीय नरेशों की अंगरेजों ने दिल्ली में एक कान्फ्रेन्स बुलाई, भारत के समस्त नरेशों का दिल्ली में एकत्र होना देखकर उन सबों से मिलने में वहीं सुविधा दिखाई दी। उन नेताओं ने अनेक प्रमुख वैद्यों को एकत्र कर डेपूटेशन बना उन राजाओं से भेंट की और उनसे आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना में सहयोग देने की प्रार्थना की। उस समय ही अनेक नरेशों ने हजारों रुपया देने का वचन दिया। किन्तु उनसे रुपया उघराने कौन जाय ? इसलिये वे समय निकाल न सके और वह रुपया जहाँ का तहां ही रह गया। १९१८ में जब महामण्डल का वार्षिक अधिवेशन हुआ तो वहां अपनी अकर्मण्यता को देख उन्हें यह निश्चय करना पड़ा कि यदि आयुर्वेद विद्यालय के लिये हमारे प्रयत्न शिथिल हैं तो फिलहाल काम चलाऊ विद्यापीठ स्थापित कर हमें शिक्षा के लिये कोर्स ग्रन्थों की योजना बनाना चाहिये और पाठ्यक्रम निर्धारित कर उसके अनुसार गुरु गृह में पठित छात्रों की परीक्षा लेकर किसी एक व्यवस्था का श्री गणेश करना चाहिये उसी के परिणाम स्वरूप में यह हमारी विद्यापीठ एक भूमिका मात्र थी।

उस समय किसी संस्था को बनाकर रजिस्टर्ड करा देना, जन समाज में उसका रजिस्ट्रेशन एक महत्त्व की बात समझी जाती थी। आयुर्वेद महामण्डल एक रजिस्टर्ड संस्था हो जाने के कारण उस द्वारा संचालित विद्यापीठ की परीक्षा महत्व की समझी जाने लगी।

इस विद्यापीठ की परीक्षा में बैठने के लिये कोई बन्धन न था, कहीं पढ़ो, किसी से पढ़ो, उनके निश्चित कोर्स ग्रन्थ हों, बस परीक्षा में बैठने की सुविधा है। कोर्स चहे ३ वर्ष या पांच वर्ष का हो पर विद्यार्थी से कोई पूछने वाला नहीं होता। जब परीक्षा का समय समीप हो फार्म मंगाकर, भर कर निश्चित फीस के साथ भेज दो परीक्षा में बैठने की अनुमति मिल जाती। इस सुविधा के कारण विद्यापीठ की परीक्षा में विद्यार्थी अधिकाधिक सम्मिलित होने लगे। महामण्डल के लिये धीरे धीरे विद्यापीठ कामधेनु बनती चली गई। किन्तु विचारवान् नेता यह अच्छी तरह देख रहे थे कि इन विद्यापीठ परीक्षोत्तीर्ण छात्रों से समय की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो रही। विद्यमान सरकार की दृष्टि में इन परीक्षोत्तीर्ण वैद्यों की कोई मान्य प्रतिष्ठा न थी। न इस विद्यापीठ के उत्तीर्ण छात्र ही विशिष्ट योग्यता सम्पन्न होते थे। इसीलिये महासम्मेलन इस बात की प्रति वर्ष त्रुटि अनुभव करता था कि हमारा स्थिर रूप में कोई विद्यालय नहीं। आयुर्वेद विद्यालय तो अवश्य होना ही चाहिये। इसीलिये प्रतिवर्ष जब अधिवेशन होता था विद्यालय स्थापन पर विचार होता और कोई न कोई इस सम्बन्धी प्रस्ताव भी आता और पास हो जाता था।

१९३९ के वर्ष जब शिवशर्मा आयुर्वेद महामण्डल का प्रधान चुना गया उसी वर्ष बम्बई में बाम्बे मेडिकल प्रेक्टिशनर एक्ट पास हुआ था। बम्बई के अध्यापक सम्मेलन ने विद्यापीठ संचालकों को अपना सर्वांग पूर्ण आयुर्वेद विद्यालय खोलने का आदेश दिया था। इसे १९४० में पूरा किया जाना था। इस वर्ष पं. शिवशर्मा फिर स्वागत समिति द्वारा प्रधान चुन लिया गया। कुछ समय के बाद कोटा नरेश ने आयुर्वेद विद्यालय के लिये एक लाख रुपया नगद तथा विद्यालय के लिये काफी भूमि देने की इच्छा प्रकट की। तब महामण्डल की ओर से कोटा नरेश के प्रधान मन्त्री से पत्र व्यवहार चला और शिवशर्मा इस सम्बन्ध में कोटा नरेश से मिलने गया किन्तु वह विद्यालय के लिये न तो वहां से धन प्राप्त कर सका, न भूमि प्राप्त करने में समर्थ हुआ। १९४२ में फिर बनवारी लाल आयुर्वेद विद्यालय से मिलाकर उसे वृहद् रूप में ले जाने की योजना सामने आई। उस समय भी शिवशर्मा की महत्वाकांक्षा ने इस योजना की लुटिया डुबो दी। फिर अगले १० वर्ष तक सम्मेलनों पर प्रस्ताव ही पास होते रहे, काम कुछ नहीं हुआ।

१९५२ में जब पं० शिवशर्मा फिर महामण्डल के कार्यवाहक प्रधान बने उसे अपने निकट सम्बन्धी पं० श्रीदत्त जी भिवानी निवासी से ज्ञात हुआ कि ऋषिकेश में बाबा काली कमली वाले का एक आयुर्वेद विद्यालय है, उसके पास लाखों रुपया नगद तथा बहुत सी भूमि भी है उनके विद्यालय को यदि महामण्डल के आधीन ले लिया जाय तो बिना श्रम के विद्यालय की स्थापना हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर क्या था, शेखचिल्लियों के मनसूबे बंधने लगे, श्रीदत्त से मिलकर शिवशर्मा ने उसे हथियाने की योजना बनाई। उन दिनों पं० श्रीदत्त बाबा काली कमली वाले क्षेत्र में डेरा डाले हुए थे और वहाँ की सेवा समिति में कार्य संचालक मन्त्री थे।

२६–२७–२८ अक्तूबर १९५२ को इन्दौर में आयुर्वेद महामण्डल का अधिवेशन होता है जिसका प्रधान शिवशर्मा था। वहां जो शिक्षा सम्मेलन हुआ और जिसकी प्रधानता उसके परम मित्र पं० हरिदत्त शास्त्री ने की वहां निम्न प्रस्ताव पास किया जाता है—

"नि० भा० आयुर्वेद महा सम्मेलन का यह ३८ वां अधिवेशन निश्चय करता है कि ऋषिकेश में श्री बाबा काली कमली वाले के आयुर्वेद विद्यालय को विद्यापीठ अपना विद्यालय घोषित करे तथा उसके परिवर्धन के लिये विद्यापीठ श्री बाबा काली कमली वाले की सेवा समिति की कमेटी से परस्पर संयुक्त होकर काम करने के लिये आवश्यक शर्तें निश्चय करे। जिसके लिये वह निम्न महानुभावों की एक उप समिति का निर्माण करता है—

१–वैद्य श्री पं० शिवशर्मा २–कवि० श्री प्रतापसिंह, ३–वैद्य पं० श्री दत्त मन्त्री आयुर्वेद सेवा समिति ऋषिकेश ४–वैद्य स्वामी दयानिधि जी ५–श्री हरिदत्त शास्त्री। यह उप समिति वैधानिक रूप में नियत जरूर हो गई थी किन्तु आयुर्वेद विद्यालय स्थापन सम्बन्धी सारा पत्र व्यवहार महामण्डल की ओर से पं० शिवशर्मा ही करता रहा, उधर पं० श्रीदत्त जी करते रहे।

पं० श्रीदत्त और शिवशर्मा यही दोनों व्यक्ति बाबा काली कमली वाले क्षेत्र ट्रष्ट के ट्रष्टियों से भी मिलते रहे। इन्होंने ही दो वर्ष तक आयुर्वेद विद्यालय स्थापना की योजना को आगे बढ़ाया। २४–४–५३ को बेंगलौर में महामण्डल की स्थायी समिति का जो अधिवेशन शिवशर्मा ने बुलाया था उस अधिवेशन में शिवशर्मा ने जो आयुर्वेद विद्यालय का विषय उपस्थित करते समय रिपोर्ट पढ़ी वह निम्न है। उसने कहा—"इस कार्य को करने के लिये आरम्भिक शर्तें निश्चित करने तथा तत् सम्बन्धी योजना निर्माण का कार्य हमें सौंपा गया था, उक्त महासम्मेलन के शीघ्र पश्चात हमने कार्य आरम्भ किया तथा उप-समिति की प्राथमिक बैठक १ दिसम्बर १९५२ को ऋषिकेश में की, जिसमें क्षेत्र और सेवा समिति के सदस्यों के साथ मिलकर सिद्धान्त रूप में यह निश्चय किया गया कि उपर्युक्त प्रस्ताव के अनुसार उक्त विद्यालय को विद्यापीठ के आधीन करना उपयुक्त होगा। सेवा समिति आयुर्वेद विद्यालय को अधिकार में लेने के लिये १८ कारण आपने विस्तार से वहां बताये। और जो योजना बनाई वह सारी की सारी पाठक मई १९५३ की सम्मेलन पत्रिका में पढ़ सकते हैं। इसके बाद १० नवम्बर १९५३ को महामण्डल की स्थायी समिति का अधिवेशन दिल्ली में होता है वहाँ निम्न प्रस्ताव पास किया जाता है।

सं० १४—आयुर्वेद विश्व विद्यालय की स्वीकृत योजना को श्री बाबा काली कमली वाला पंचायती क्षेत्र समिति तथा आयुर्वेद सेवा समिति ऋषिकेश ने स्वीकार किया है। तदर्थ उक्त दोनों सभायें भारत के वैद्य समाज की ओर से धन्यवादार्ह हैं। निश्चय हुआ कि उक्त दोनों सभाओं को कार्यालय की ओर से धन्यवाद सूचक पत्र भेजे जाँय।

सं० १५—आयुर्वेद विद्यालय का शिलान्यास किसी विशिष्ट राष्ट्रीय नेता द्वारा कराया जाय और इस विषय में सम्पूर्ण व्यवस्था करने का अधिकार वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी तथा राय बहादुर श्री पं० श्रीदत्त जी को दिया जाना स्वीकार हुआ।

(देखो सम्मेलन पत्रिका नवम्बर १९५३ पृ० ६३१)

इसके बाद फरवरी १९१४ में अ० भा० आयुर्वेद सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन जो कोट्टकल में हुआ वहां निम्नलिखित प्रस्ताव पास होता है।

सं० ४—निश्चय हुआ कि क्योंकि विद्यापीठ की विश्वविद्यालय योजना को कार्यान्वित करने के लिये श्री बाबा काली कमली वाला क्षेत्र ट्रस्ट तथा उनकी आयुर्वेद सेवा समिति ने जो विशाल भूभाग तथा प्रारम्भिक आवश्यकता पूर्त्यर्थ आवश्यक बिल्डिंग आदि का विनियोग करने की अनुमति दी है वह लगभग दो लाख के क्षेत्र की तथा लगभग ३ लाख के ही आयुर्वेद सेवा समिति की होती है और दो लाख रुपया नगद आयुर्वेद सेवा समिति का जो जमा है (जिसमें ९२ हजार रुपया क्षेत्र समिति के पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमा है) सो करीब ७ लाख की सम्पत्ति उपरोक्त दोनों संस्थाओं ने इस विश्वविद्यालय योजना को कार्यान्वित करने के लिये प्रस्तुत की है । यह सम्मेलन तदर्थ उक्त दोनों संस्थाओं का धन्यवाद करता है । प्रस्ताव शिवशर्मा सभापति द्वारा । देखो सम्मेलन पत्रिका मार्च १९५५ पृ० १५४

यहां इसने इस तरह ख्याली पुलाव के १० प्रस्ताव पकाये हैं । इसके बाद योजनानुसार १९-४-५४ को शिलान्यास के लिये राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी से मिलने के लिये श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन को भेजा जाता है और १३ अक्टूबर १९५४ का दिन राष्ट्रपति शिलान्यास के लिये नियत करते हैं ।

जब शिलान्यास की सूचना बाबा काली कमली वाला क्षेत्र ट्रष्ट कलकत्ता को मिलती है तो वे २६-६-५४ को अपनी प्रबन्धकारिणी का अधिवेशन बुलाते हैं । जिस अधिवेशन में शिवशर्मा और पं० श्री दयानिधि स्वामी भी पहुँचते हैं । उस अधिवेशन की कार्यवाही व स्वीकृत प्रस्ताव की प्रतिलिपि निम्न हैं :—

"आयुर्वेद विश्वविद्यालय सम्बन्धी विषय विचारार्थ उपस्थित हुआ और श्री सभापति महोदय ने आगत प्रतिनिधियों (श्री पं० शिवशर्मा जी सभापति व प्रतिनिधि अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन, श्री स्वामी दयानिधि जी प्रतिनिधि काली कमली वाला आयुर्वेद सेवा समिति व अ० भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ) का परिचय उपस्थित महानुभावों को दिया, तत्पश्चात् कार्यवाही आरम्भ हुई ।

श्री सभापति महोदय ने सभा का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि प्रतिनिधि महानुभाव उपस्थित हैं, उनसे सदस्य महानुभाव जो स्पष्टीकरण करना चाहें वो कर सकते हैं । तदनन्तर निम्नलिखित महानुभावों ने इस सम्बन्ध में निम्न प्रकार से अपने विचार उपस्थित किये—

१—श्री बैजनाथ बाजोरिया :—

(क) क्षेत्र के प्रस्ताव १-८-५३ में चारों संस्थाओं को मिलाकर विश्वविद्यालय के कार्य को अग्रसर करने का उल्लेख है जबकि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के इन्दोर अधिवेशन के प्रस्ताव में सिर्फ तीन ही संस्थाओं के नाम हैं अतः प्रस्ताव नियमानुकूल नहीं है ।

(ख) श्री शिवशर्मा ने अपने २२-५-५४ के पत्र में जो क्षेत्र के सभापति व चेयरमैन के नाम भेजे हैं—उन पत्रों में आश्वासन दिया है कि ५ लाख रुपया शीघ्र ही दक्षिण के चार राज्यों से एकत्र करेंगे और १५ लाख तीन साल में इकट्ठा किया जायगा । सो पं० शिवशर्मा जी विश्वविद्यालय के लिये ५ लाख रुपया शीघ्र देने को तैयार हैं क्या ?

(ग) अपने रेज्यूलेशन कोट्टकल में इन्होंने ९५ हजार रुपया व एक लाख आयुर्वेद सेवा समिति वाला भी लेने का प्रस्ताव पास किया है जो नियमानुसार दिया नहीं जा सकता, अतः यह प्रस्ताव कोई मूल्य नहीं रखता ।

(घ) आयुर्वेद विद्यापीठ काली कमली वाला आयुर्वेद विद्यालय को अपना विद्यालय घोषित करे—ऐसा उल्लेख उनके इन्दोर के प्रस्ताव में है—सो जब तक आयुर्वेद सेवा समिति ही नियमानुकूल ऐसा प्रस्ताव विद्यापीठ में सम्मिलित करने का न करे तब तक इस प्रस्ताव का क्या मूल्य है ? हमें जहां तक ज्ञात है कि आयुर्वेद सेवा समिति ऋषिकेश ने ऐसा प्रस्ताव नियमानुसार स्वीकृत नहीं किया है ।

(ङ) प्रस्ताव में इस बात का जिकर है कि दो लाख रुपया आयुर्वेद सेवा समिति का मिल जायगा और क्षेत्र की जमीन की कीमत भी प्राय ३ लाख रुपया है, अतः अपने मन से निर्णय कर लेना उपयुक्त नहीं ।

(च) श्री पं० शिवशर्मा जी ने अपने उपरोक्त २२-५-५४ के पत्र में लिखा है कि क्षेत्र हमें केवल जंगल देता है, प्रधान द्वार देता है, एक टूटी जीर्ण धर्मशाला देता है आदि २ सो इसका क्या तात्पर्य है ? बाबा काली कमली क्षेत्र की जो अपनी बहुमूल्य जमीन तथा इमारतें देने की बात हो रही है, उसको इस प्रकार तुच्छ क्यों बताया जाता है ।

(छ) यदि विश्वविद्यालय स्थापित हो गया तो क्षेत्र की आय पर बुरा प्रभाव पड़ेगा जिससे आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा । अतः विश्व विद्यालय के स्थापन से क्षेत्र को लाभ नहीं होगा ।

(ज) श्री पं०श्रीदत्त जी क्षेत्र के संयुक्त मन्त्री, विद्यापीठ के मन्त्री, आयुर्वेद सेवा समिति के मन्त्री हैं और उन्हें ही पत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवहार का भार दिया गया है अतः वे आप ही पत्र देने वाले और आप ही पत्र का जवाब लेने वाले हैं जो उचित नहीं है, इसलिये क्षेत्र की तरफ से पत्र व्यवहार का भार उनसे हटाकर मन्त्री को सुपुर्द करना चाहिये।

(झ) आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना अपनी पुरानी योजना 'आत्मविज्ञान भवन' के ध्येय के विपरीत होगी और रामनगर की शान्ति में बाधा उपस्थित होगी।

(ट) आयुर्वेद सेवा समिति के इस सम्बन्ध में प्रस्ताव जिसमें कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय के लिये ४ प्रतिनिधियों का चुनाव हुआ है अनियमित व अव्यवहारिक है।

(२) मोरार जी अग्रवाल अडवोकेट—

(क) हमने पहिले लीज की बात कमेटी में उठाई थी अतः हमें देखना चाहिये कि रामनगर की लीज के शर्त मुताबिक हम वह स्थान इस कार्य के लिये दे सकने के अधिकारी हैं या नहीं।

(ख) क्षेत्र के मेमोरेण्डम व विघटन के अन्तर्गत हम ऐसे कार्य कर सकने के लिये स्वतन्त्र हैं अथवा नहीं।

(ग) हमने कई प्रस्तावों में इस योजना को अग्रसर करने की बात स्वीकार की है, अतः उसको मद्दे नजर रखकर बढ़ना है अथवा नहीं।

(घ) यह बात भी विचारणीय है कि क्या हम ऐसा कर क्षेत्र के विपरीत तो काम नहीं करते।

(३) मदनगोपाल जी पोद्दार—

(क) इस प्रकार के कार्य जब तक क्षेत्र की जनरल मीटिंग में एजेण्डा निकालकर दानी महानुभावों को आमन्त्रित कर स्वीकृत न हों तब तक नहीं होने चाहिये। हमें मालूम है कि २–६–५३ के साधारण अधिवेशन में जो प्रस्ताव इस सम्बन्ध में हुआ था वह विविध विषय में से एक था, अतः यह नियमानुसार नहीं है।

(ख) ता० १–८–५१ के प्रस्ताव से विश्वविद्यालय के प्रस्ताव की स्वीकृति कन्डीशनल है जब तक विश्वविद्यालय संचालन के नियम, उपनियम तथा अग्रीमेण्ट बनकर क्षेत्र कमेटी द्वारा हस्ताक्षरित नहीं हो जाते तबतक स्वीकृति अस्वीकृति का कुछ मूल्य नहीं।

(ग) आयुर्वेद सेवा समिति के प्रस्ताव भी ७५ परसैन्ट दानदाताओं की स्वीकृति से पास होने के पश्चात् ही व्यवहृत होने चाहिये।

(४) श्री छोटेलाल जी कानोडिया—इन्होंने भूरे लाल जी के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना का महत्व बतलाते हुए कमेटी को अवगत कराया कि यदि क्षेत्र अपने ध्येय की पूर्ति में संलग्न रहे और आयुर्वेद कालेज अपनी उन्नति में रत रहें तो हमें इस योजना को कार्यान्वित किये जाने पर आपत्ति नहीं करनी चाहिये। या पास में ही कुछ दूरी पर स्थान हो तो वहाँ बनने देने में ठीक है जिसमें क्षेत्र के ऊपर भी कोई असर न पड़े तथा यह शुभ कार्य भी होता रहे।

तदुपरान्त श्री पं० शिवशर्मा जी सभापति व प्रतिनिधि आयुर्वेद महा सम्मेलन ने कहा कि हम उन्हीं बातों का उत्तर देंगे जो हमसे सम्बन्धित हैं। दूसरी बातें जो अन्य महानुभावों या संस्थाओं से सम्बन्धित हैं उस सम्बन्ध में हमें कुछ नहीं कहना है। अतः उन्होंने आयुर्वेद महासम्मेलन व आयुर्वेद विद्यापीठ के विधान व कार्य शैली की पृथकता का वर्णन करते हुए कमेटी को अवगत कराया कि दोनों संस्थाएं भिन्न हैं उनके कार्य की प्रणाली, पदाधिकारी, कोष आदि भी अपने अपने हैं और कार्य नियमानुसार ही होता है। दोनों रजिस्टर्ड संस्थाएं हैं और दोनों की कार्य प्रणाली भी अलग अलग चली आ रही है। उन्होंने कहा—

(१) आप प्रस्तावित स्थान की जगह हमें दूसरा स्थान देने की बात करते हैं जो आयुर्वेद विश्वविद्यालय के अनुकूल न होगा। उस हालत में जहां तक हमारा ख्याल है बहुत संभव है कि आयुर्वेद महासम्मेलन उस स्थान को स्वीकार न करे।

(२) चार के बजाय जो तीन नामों का उल्लेख श्री बाजोरिया जी ने किया है वह क्लर्क की गलती से ऐसा हुआ है, उसकी समुचित व्यवस्था की जायगी, हमारे समस्त रिकार्ड मौजूद हैं जिसमेंचारों संस्थाओं का नाम नियमानुकूल लिखा हुआ है।

(३) रुपये के सम्बन्ध में हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि फंड की पूर्ति के लिये हम सचेष्ट हैं और जहाँ तक सम्भव है प्रस्तावानुसार धन एकत्र करने की चेष्टा करेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और काली कमली वाला पंचायती क्षेत्र के ऊपर' रुपये का कोई दायित्व नहीं होगा, जैसा कि आपने ता० १-८-५३ के रिजोल्यूशन में पास किया है।

(४) श्री बाजोरिया जी ने जो जंगल आदि का सकेत किया है उसके लिखने का हमारा तात्पर्य यह था कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्कीम जो आपके सन्मुख है उसके सामने हम उस जमीन को जंगल समझते हैं और वही ध्यान अब भी है, परन्तु उसका कोई उल्टा अर्थ न लगाया जाय। यह तो हमने अपनी तुलनात्मक दृष्टि से लिखा है।

तदनन्तर क्षेत्र के सभापति श्री सर बी. पी. सिंहराय के. सी. आई. ई. के. टी. आ उपस्थित हुए और उपरोक्त सभी बातों से श्री चेयरमैन महोदय ने उन्हें अवगत कराया तत्पश्चात् सभापति महोदय के प्रस्ताव व श्री चेयरमैन के अनुमोदन पर उक्त विषय पर विचार करने के लिये निम्नलिखित व्यक्तियों की एक सब कमेटी का प्रस्ताव पास हुआ। (१) प्रेसीडेन्ट (२) चेयरमैन (३) श्री आई. पी. गोयनका (४) श्री डी. डी. खन्ना (५) श्री बी. एन. बाजोरिया।

उपरोक्त क्षेत्र कमेटी की कार्यवाही से शिवशर्मा की डिक्टेटराना कार्य पद्धति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है यही नहीं इससे अधिक इस बात पर भी काफी रोशनी पड़ती है कि वह अनेक काम महामण्डल में ऐसे करता था जिस को कभी किसी अधिवेशन में प्रकट तक नहीं करता था, उक्त विवरण को पढ़ने के बाद क्या कोई महामण्डल का सदस्य बता सकता है कि उसने जो क्षेत्र कमेटी से पत्र व्यवहार किया था और कलकत्ते गया, इस पत्र व्यवहार को तथा उक्त क्षेत्र कमेटी की मीटिंग में जाने और वहां की कार्य वाही को देखने का विवरण उसने किस अधिवेशन में रखा था? और उसने ५ लाख रुपया देने का तथा १५ लाख एकत्र करके देने का जो पत्र उन्हें भेजा था इसको उसने किस अधिवेशन में स्वीकार कराया? सदस्यगण पीछे पढ़ आये हैं कि १६-४-५४ को शिलान्यास के लिये राष्ट्रपति जी से मिलकर उनसे शिलान्यास का १३-१०-५४ का समय लिया था। बाबा काली कमली वाला ट्रष्ट कमेटी की प्रबन्ध कारिणी समिति का अधिवेशन २६-६-५४ को होता है जिसमें वह सशरीर और जोशोत्साह के साथ सम्मिलित होता है।

२६-१-५४ को उक्त क्षेत्र सब कमेटी अपनी रिपोर्ट क्षेत्र कमेटी को देती है, जिसमें कहा गया है कि वायदा पूरा न होने के कारण तथा कई बैधानिक बाधाओं के कारण आयुर्वेद महामण्डल के साथ मिल कर आयुर्वेद विश्वविद्यालय की योजना को क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। इसकी सूचना भी महामण्डल कार्यालय को उन्होंने भेज दी। बावजूद इन सब बातों का ज्ञान होने के भी उसने यह मामला महामण्डल के किसी अधिवेशन में नहीं रखा। श्रीयुत राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद जी को इस बात की सूचना यदि तब भेजी गई कि शिलान्यास स्थगित हो गया है तो उसने ऋषिकेश में आयुर्वेद विश्वविद्यालय योजना की रूप रेखा, वहां के बिल्डिंग के नक्शे और राष्ट्रपति के सम्मान में पढ़ने के लिये अपना भाषण क्यों महामण्डल के खर्च से छपा डाला? इस विश्वविद्यालय पर महामण्डल का ६११९ रु० स्वाहा किया गया। इससे भिन्न दस हजार रुपया बाबा काली कमली वाले ट्रष्ट में नगद जमा कराया गया जिसमें से १९५४ में वह ७७०० रु० रह जाता है और १९५५ रु० में वह रकम १५०० रु० रह जाती है। यह रकम कैसे बराबर के नजदीक पहुँचती हैं? इसको फिर किसी समय बताया जायगा। ६११९) रु० की रकम में से शिवशर्मा के मद में निम्नलिखित रकमें महामण्डल खातों में चढ़ी हुई हैं—

२३०/८ शिवशर्मा का यात्रा व्यय बम्बई से कलकत्ता।
२०५/— बम्बई से ऋषिकेश राष्ट्रपति को अपना भाषण सुनाने के लिये।
३४०/— शिवशर्मा के भाषण की छपाई।
५८/— राष्ट्रपति के साथ शिवशर्मा का फोटो लिया गया उसका खर्च।
८१८/९ विश्वविद्यालय की अपील छपाई, ब्लाक बनवाई, नक्शे, व उनके ब्लाक बनवाई, कागज, छपाई आदि पर

तथा ९५० रु० पं० श्रीदत्त ने वकील को देने के लिये जो विद्यापीठ से लिये थे उसकी रसीद तक नहीं दी है। बाकी रुपया ऐसे ही मदों में खर्च हुआ। इस तरह उसने विश्वविद्यालय स्थापन पर महामण्डल का १६ हजार से ऊपर रुपया स्वाहा किया, और प्रतिष्ठा भी।

मानहानि का उसने जो मुझ पर केस किया था जिरह के समय शिवशर्मा ने इस मद में ली रकमें निम्न वाक्यों में स्वीकार की हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने अक्टूबर के दो बाऊचरों के अनुसार ४३५॥) की रकम महासम्मेलन से ली इसमें से एक बाऊचर २३०॥) का था, जो कि प्रस्तावित ऋषिकेश विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में बाबा काली कमली वाला ट्रष्ट से बात चीत करने मेरे आफीशियल रूप से कलकत्ता जाने के सम्बन्ध में था। दूसरा वाऊचर २०५) का था जोकि मेरा बम्बई से हरिद्वार तथा वापसी रेल किराया तथा हरिद्वार से ऋषिकेश वापसी का टेक्सी किराया व कुली खर्च का था, जोकि भारत के राष्ट्रपति का ऋषिकेश में स्वागत करने के लिये मेरे ऋषिकेश जाने आने के सम्बन्ध में था मैं एयरकण्डीशन से गया और एयरकण्डीशन से ही वापस आया था। एक जगह शिवशर्मा ने अपने बयान में कहा कि मैं महामंडल से दूसरे दर्जे का किराया लेता था। एयर कंडीशन में क्या दूसरा दर्जा होता है। कितना झूठ!

एक दूसरे स्थान की जिरह में शिवशर्मा ने कहा इस महासम्मेलन द्वारा आयोजित समारोह में राष्ट्रपति का स्वागत करने के सम्बन्धी मेरे भाषण की छपाई पर महासम्मेलन के धन से ३४०) खर्च किया गया। वह किस तरह कीर्ति लोलुप था और ता० की जिरह में इसी बात को सिद्ध करने के लिये एडवोकेट ने जब उससे पूछा तो उसने बड़े गर्व से कहा:–"मैंने राष्ट्रपति के स्वागत में अपना भाषण पढ़ा।" उसके कथन से स्पष्ट कीर्ति की गन्ध आ रही थी कि वह राष्ट्रपति को दिखाना चाहता था कि वैद्य समाज में मैं ही एक प्रभावशाली वक्ता व नेता हूँ।

अभी ताजी सितम्बर १९५७ की सम्मेलन पत्रिका में शिवशर्मा ने अपना वक्तव्य छपाया है। वह वक्तव्य हिन्दी अंग्रेजी दोनों में है जिसके लिये उसने पत्रिका के ८ पृष्ठ इसलिये काले किये हैं कि मैं न तो स्वयं राष्ट्रपति से मिला न मैंने निमन्त्रण दिया। देने वाला कोई और व्यक्ति था। निमन्त्रण देने किसी और व्यक्ति को भेजा गया हो किन्तु १० नवम्बर १९५३ के महामंडल अधिवेशन में प्रस्ताव संख्या १५द्वारा शिलान्यास की सम्पूर्ण व्यवस्था का अधिकार शिव शर्मा और श्रीदत्त जी को जो दिया गया था। इस दशा में राष्ट्रपति जी के पास किसी को भेजा गया हो—भेजने का जब अधिकारी शिवशर्मा और श्रीदत्त हैं तो उसकी उक्त सफाई का वक्तव्य उसे इस दोष से मुक्त नहीं कर सकता।

दूसरे यदि शिलान्यास स्थगित हो गया था तो वहां अभिनन्दन पत्र पढ़ने क्यों गया और महामंडल का इसमें उसने रुपया क्यों खर्च किया?

महामण्डल सदस्यो! आपने उक्त पंक्तियों द्वारा देखा कि केवल अपनी कीर्ति स्थापना के निमित्त उसने किस तरह महामण्डल की प्रतिष्ठा को धूल में मिलाया। विश्वविद्यालय का मामला जब दो महीना पहिले ही समाप्त हो चुका था, फिर उसने इसे महामण्डल सदस्यों से छिपाया और राष्ट्रपति को वहां बुलाकर किस तरह समस्त महामण्डल के नेताओं को अपमानित कराया।

संस्था से सम्बन्धित जो व्यक्ति नहीं, वह तो यही कहेंगे कि संस्था में सारे ही महामूर्ख नेता हैं। उन्हें क्या मालूम कि इस संस्था में एक ऐसा व्यक्ति है जो समाज सम्बन्धी महत्व के कामों की जानकारी सदस्यों तक नहीं पहुँचने देता और अपने आप ही सब कुछ करता रहता है।

महामण्डल की विद्यमान स्थिति–चूंकि अभी तक महामण्डल पर शिवशर्मा का पूर्णतया आधिपत्य है आगे भी आधिपत्य बना रहे इसलिये उसने चुनाव के हथकण्डों द्वारा एक अजनबी व्यक्ति उसी तरह चुना जैसे वह पीछे चुनता रहा है। महामण्डल की स्थिति से अपरिचित व्यक्ति को चुन लेने पर जब सथायी समिति के अधिवेशनों में कोई मामला पेश होता है तो वह अजनबी व्यक्ति उन बातों से अपरिचित होता है, इसीलिये उसे उस मामले को समझने के लिये सहायक की आवश्यकता होती है ऐसी स्थिति में आप उसका परामर्श दाता बनकर सारा काम उसके हाथ से आप सम्भाल लेता है। जैसे वह पं० जीवराम कालीदास की प्रधानता में, पं० वृज बिहारी चतुर्वेदी की प्रधानता में, पं० पार्थनारायण की प्रधानता में सम्भालता आया है, उसी तरह अब भी सम्भालने की इच्छा से उसने पं० अनन्त त्रिपाठी शर्मा को चुना। आज आठ महीना व्यतीत हो गये इस नये प्रधान ने अब तक महासम्मेलन की स्थायी समिति का कोई अधिवेशन नहीं बुलाया, उसने महामण्डल के साथ निकट का सम्बन्ध भी स्थापित नहीं किया।

महामंडल पर शिवशर्मा का आधिपत्य बना रहने के कारण ही उसका उपरोक्त वक्तव्य सितम्बर१९५७ की पत्रिका में ८ पृष्ठों पर जो छापा है यह महामडल के धन का आज भी दुरुपयोग कर रहा है। इसे सदस्य देखें और समझें।

[शेष टाइटल के तीसरे पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिवशर्मा द्वारा दायर मानहानि केस का फैसला

कुछ पूर्व का इतिहास

लेख आरम्भ करने से पूर्व पाठकों को यह बता देना आवश्यक समझता हूँ कि पं० शिवशर्मा के साथ–जब वह लाहौर में रहता था–उससे न तो जातीय सम्पर्क था, न व्यवसायिक, न वह मेरे कारोबार का प्रतिद्वन्दी था। उससे मेरा कोई सम्पर्क था तो एक मात्र महामण्डल का सदस्य होने के नाते उस संस्था पर जितना वह अपना अधिकार समझता था मैं भी आजीवन सदस्य होने के कारण उस पर उतना ही अपना अधिकार मानता था। संस्था किसी व्यक्ति की सम्पत्ति नहीं होती संस्था वैद्य समाज की भलाई के लिये स्थापित हुई थी, आयुर्वेदोन्नति जिसका मुख्य ध्येय था।

हम दोनों ही सदस्य होने के नाते महामण्डल के अधिवेशनों में बराबर भाग लेते थे, किन्तु हम इस प्रकृति के मनुष्य हैं कि संस्था में रह कर जो व्यक्ति संस्था के बने हुए विधि, विधान की अवहेलना करता है और संस्था में अपने स्वार्थ को दृष्टि सन्मुख रख कर गुटबन्दी करता है, संस्था के धन का अपने स्वार्थ के लिये उपयोग करता है ऐसा व्यक्ति चाहे मेरा पिता ही क्यों न हो मैं उसे संस्था का घातक, समाज द्रोही, बहुत निकृष्ट आदमी मानने वाला हूँ। बस, मेरा शिवशर्मा से विरोध केवल मात्र इसी एक बात से रहा।

१९३८ में वह महामण्डल का प्रधान बना, उसने बम्बई से ही अवैधानिक कार्यों का श्री गणेश कर दिया। लाहौर जब महामण्डल का कार्यालय आया तो प्रत्येक अधिवेशन में वह किस तरह अवैधानिक कार्य करता था, किस तरह उसने अपना बहुमत बनाने के लिये सदस्यों की भर्ती आरम्भ की, किस तरह वह प्रतिवर्ष विधान को बदलने के लिये और अपनी स्थिति को दृढ़ बनाने के लिये कैसे कैसे ढंग अख्तियार करता रहा, कैसी कैसी चालबाजियां और हथकण्डों से काम लेता था, यह सब नजदीक से देखता था। मेरा उससे विरोध इन्हीं कारणों से था, द्वेष नहीं। मैं उसे अब भी अपना न तो शत्रु समझता हूँ न कभी स्वप्न में भी उसे हानि पहुँचाने की भावना रखता हूँ। वह खूब खाय, कमाय, आनन्द ले मुझे उसकी ओर निगाह उठाने की जरूरत नहीं किन्तु महामण्डल के धन, महामण्डल की सम्मेलन पत्रिका, महामण्डल के नेतृत्व की ग्रहण कर यदि वह अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता हो और महामण्डल के साधनों से अपनी कीर्ति पताका को फहराने की इच्छा रखता हो तो मैं उसका घोर विरोध करूंगा। और समाज की आड़ में उसकी प्रतिष्ठा को तब तक बढ़ने से रोकूंगा जब तक वह समाज के लिये उपकारी सिद्ध न हो।

उसके इन अवैधानिक कार्यों का मैं ही एक विरोधी नहीं था, महामण्डल में आने से पूर्व जो उसके घनिष्ठ मित्र व पक्के साथी थे उसके अवैधानिक कार्यों को देखकर वह भी विरोधी होते चले गये। उनमें से उसका सबसे घनिष्ठ मित्र डाक्टर आशानन्द था। मूलचन्द खैराती राम ट्रष्ट पर जब शिवशर्मा ने केस करने की योजना बनाई और महामण्डल का एक हजार रुपया उसने प्रस्ताव पास करा कर हड़प लिया तो डाक्टर आशानन्द, प्राणनाथ पुष्करणा, डा० वी०एस० थापर, मदन मोहन चौपड़ा आदि उसके पक्के साथी उसे छोड़ गये। छोड़ ही नहीं गये, प्रत्युत इन्होंने शिवशर्मा के विरुद्ध ट्रैक्ट और पम्फलेट प्रकाशित किये। जो पम्फलेट डाक्टर वी० एस० थापर ने लिखा था उस पर १३ महामण्डल सदस्यों के हस्ताक्षर थे, वह पम्फलेट मेरे पास अमृतसर लाये और मुझसे कहा लाहौर में तो इसे कोई छापता नहीं आप अपने प्रेस में छाप दें। पम्फलेट लिखा बड़े गन्दे बेहूदा तरतीब से था। विधान सम्बन्धी कोई महत्व के पहलू लेकर लिखा नहीं गया था, इसलिये मैंने छापने से इन्कार कर दिया। किन्तु उन सबोंके बहुत आग्रह करने पर मैंने छापना स्वीकार कर लिया। जब छप गया तो उस में मैंने पहले ही अपना नाम पढ़ा तो मुझे बड़ा क्रोध आया कि मुझे तुमने इसके लेखकों में और प्रकाशकों में क्यों शुमार कर लिया ? मैंने कब तुम्हें इसके लिये आज्ञा दी, कहां तुम्हारे इस लेख पर हस्ताक्षर किये। यह क्यों किया ? वह पम्फलेट तो उठा ले गये थे, उनकी मिन्नत समाजत से मैं चुप तो हो गया पर रंज बहुत रहा। पम्फलेट उन्होंने जाते ही बांट दिये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा तो हुई कि इन नवयुवक मित्रों के विरुद्ध इस अनुचित कार्य का प्रतिवाद प्रकाशित कर उनके कान खींचूं। किन्तु इतने में पता चला कि शिवशर्मा इन पर केस करेगा। इस स्थिति में प्रतिवाद प्रकाशित करता तो इन मित्रों को अनुत्साहित करना था, इसलिये चुप हो गया कि चलो जो होगा सब के साथ ही। शिवशर्मा बड़ा झगड़ालू प्रकृति का व्यक्ति है यह हम सब अच्छी तरह देख रहे थे फिर भी अनेक साथी साथ में देखकर सन्तोष था। आखिर उसने डाक्टर आशानन्द, पं० कन्हैया लाल भेड़ा और हम सब १४ आदमियों पर मानहानि के तीन केस पांच २ हजार के हर्जाने सहित दायर कर दिये।

मुकदमा लड़ना कोई खाला जी का घर नहीं, समय और धन इस पर किस तरह बरवाद होता है यह भुक्त भोगी ही जानते हैं। डाक्टर आशानन्द ने तो दो चार पेशियों के बाद ही शिवशर्मा के आगे नत मस्तक हो क्षमा याचना की इसके बाद पं० कन्हैयालाल जी भेड़ा इतने साधन सम्पन्न व्यक्ति उस समय न थे। बम्बई से लाहोर आकर केस लड़ना बड़ी मुश्किल की चीज दिखाई दी, लाहौर बैठें तो रोटी से जांय, यहां वकील कहें लाओ प्रति पेशी रुपया। विचारे २-३ हजार जो पास थे खर्च कर दिये, फिर वह भी झुक गये। इन नवयुवकों ने जब दो स्तम्भ ढहते देखें इनके भी पैर उखड़ गये, थे हम १४ व्यक्ति किन्तु इनमें साधन सम्पन्न दो तीन ही व्यक्ति थे। प्रश्न जब बराबर के चन्दा देने का आता था, दो तीन बार तो सबों ने दिया फिर टांय टांय फिस होने लगी इसीलिये दो तीन व्यक्ति फूट गये और उन्होंने क्षमाका प्रार्थना पत्र चुपके से लिखकर दे दिया। तब शिवशर्मा ने अपने वकील द्वारा अदालत में कहा कि यह सब १४ व्यक्ति भी क्षमा मांग रहे हैं। उसका वास्तविक उद्देश्य तो केस लड़ने का नहीं था वह तो चाहता यह था कि यह किसी तरह क्षमा याचना करें तो फिर मेरा दबदबा बन्ध जायगा। क्षमा मांगे हुए व्यक्ति फिर उसके सामने बोलने योग्य नहीं रहते। महामण्मल में उसका रोब फिर और भी जम जाता। बस वह इतना ही चाहता था, यही था उसके मुकद्दमा लड़ने का उद्देश्य। हमारे वकील ने कहा कि स्वामी हरिशरणानन्द क्षमा नहीं मांगेंगे, वह अकेले केस लड़ेंगे। बाकी जिन्होंने हस्ताक्षर नहीं किये थे, किन्तु केस लड़वा भी नहीं चाहते थे। माननीय न्यायाधीश ने 'मौन स्वीकृत लक्षणम्' को मानकर उन्हें भी केस से मुक्त कर दिया। बस, पम्फलेट लिखा किसी ने, किया किसी ने, पर क्षमा न मांगने वाला एक व्यक्ति मैं अकेला रह गया। दो वर्ष तक में अकेला इन अन्यों की बलाय को अपने गले बांधे कलकत्ता, कराची, जयपुर, कानपुर, बनारस न जानें कहां २ कमीशन लिये वैद्यों की गवाहियां कराता फिरा, अभी केस चल ही रहा था कि पंजाब का विभाजन हो गया।

शिवशर्मा लाहौर से भागा, बम्बई में जाकर खटाऊ मिल वालों के यहां सांस ली। मैंने सन्देशे भेजे, लोगों के केस की फाइलें पाकिस्तान से भारत आ रही है। अपने केस की फाइल मंगाकर वह कहीं लगवा लो। पर वह तो वहां ही सब कुछ छोड़ आया था, मुकदमा लड़ने के लिये तो पैसे चाहिये थे। अभी तीन स्थानों पर कमीशन ने जाकर गवाहियां लेनी थीं फिर कहीं बाद में जिरह होती, तब कहीं आगे फैसला तक पहुँचने की नौबत आती। इस दो वर्ष में ही उसे पता चल गया कि केस लड़ने में क्या कष्ट आते हैं। उसने वह केस बीच में ही छोड़ दिया, वरना उसी केस से वैद्य समाज को शिवशर्मा की महामण्डल में की हुई अवैधानिक कार्यों की सारी पोल खुल जाती। खैर! वह मौका टला, तभी दूसरा अवसर हाथ आया और उसकी १८ वर्ष के महामण्डल में किये करतूतों की जीवनी लिखने का अवसर मिला।

घटना चक्र पर लिखने का अवसर;—

१९५१ में महामण्डल का कार्यालय कलकत्ता से दिल्ली आ गया, और शिवशर्मा महामण्डल के अधिवेशनों में फिर भाग लेने लगा। ५ वर्ष महामण्डल कार्यालय यद्यपि कलकत्ता रहा किन्तु वहां वह शिवशर्मा के प्रभुत्व से शून्य न था। एम० के० मुकर्जी उसके बनाये हुए ही प्रधान थे। जिन्होंने महामण्डल का प्रधान पद पाते ही अपने आरम्भिक भाषण में "झोंपड़ी से महल में" पहुँचने का स्पष्ट उल्लेख किया था। फिर भला वह ऐसे शिव शर्मा के कृतज्ञ क्यों न होते जिसने निम्न स्थिति से उन्हें वहां पहुंचा दिया जहां उन्हें स्वप्न में भी पहुँचने की आशा नहीं थी। यह सब चुनाव हथकंडों की करामात थी। जिसको गुरु शिव शर्मा ने उन्हें समझा दिया था इसीसे तो वह महामंडल की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई ठोस सेवा किये बिना ही तीन बार प्रधान पद को सुशोभित कर सके। उस महामंडल कार्यालय की व्यवस्था शिव शर्मा ने बनवाई थी वह यथावत् स्थिर थी, दिल्ली कार्यालय आते ही उसने अपने विश्वासपात्र पं० तिलकराम को फिर बुला कर उसे अच्छे वेतन पर इसलिये रखा क्योंकि यह व्यक्ति महामंडल में शिव शर्मा का इतना विश्वासी है कि वह जो कुछ नीति अनीति की आज्ञा दे यह उसे बड़े व्यवस्थित ढंग से ऐसा करता है कि किसी सदस्य को गहराई का ज्ञान नहीं होता, इसीलिये तो इसकी वेतन पद वृद्धि जिस तेजी से वैध रूप में रख कर करवाई गई कोई उसकी ओर अंगुली नहीं उठा सकता। यह व्यक्ति उतना ही चालाक है जितना शिव शर्मा। इसी एक व्यक्ति की बदौलत अब तक महामंडल पर शिव शर्मा का एकाधिपत्य बना हुआ है। सदस्य कहते हैं तिलकराम तो अन्य महामंडल के कर्मचारियों जैसा एक व्यक्ति है उनका यह समझना भूल है। यदि ऐसा होता तो विद्यापीठ मन्त्री को उसने जो अपशब्द कहे, अधिवेशनों में महामंडल सदस्यों का अपमान किया क्या कोई कर्मचारी ऐसी हरकतें कर सकता था? वास्तव में यह महामडल के लिये एक इतना बड़ा सफेद हाथी बांधा गया है जो महामंडल को रसातल की ओर ले जा रहा है। मन्त्री व प्रधान आदि के समस्त पत्र व्यवहार इसी के हाथों होते हैं। और वह सब शिव शर्मा से पूछ कर, चाहे प्रधान कोई हो ?

पं० राम नारायण जी के केस में माननीय न्यायाधीश ने पं० तिलकराम के सम्बन्ध में जो रिमार्क दिये है अपने उक्त कथन की सच्चाई को पुष्ट करने के लिये वह रिमार्क अन्तिम हैं वह निम्न हैं।

वह लिखते हैं—"अदालत में पं० शिवशर्मा ने स्वीकार किया है कि उसने तिलकराम और प्रधान मन्त्री वामनराव को अपने मित्र जंग बहादुर के पास सदस्यों द्वारा अधिवेशन बुलाने की मांग करने वालों के विरुद्ध अदालती निषेधाज्ञा की अर्जी देने के सम्बन्ध में परामर्श लेने के लिये भेजा था। जंग बहादुर के नाम लिखित पत्र जो कि एक्स ३४ जो तिलकराम के हाथ उसने भेजा था उस पत्र में तिलकराम को अपना मित्र बताया है।

इस बात पर शिवशर्मा ने कहा—'कार्यालय मन्त्री का इस प्रकार उल्लेख करने का मेरा ढंग विनम्रता कहा जा सकता है।'

लेकिन मैं आशा करता हूँ कि अभियोक्ता भी इस बात को स्वीकार करेगा कि महामंडल के दो गुटों के विवाद में–निर्वाचित सदस्यों का बहुमत चहे जिस गुट के साथ हो, लेकिन वैतनिक कर्मचारी को हमेशा तटस्थ रहना चाहिये और किसी पक्ष का समर्थन नहीं करना चाहिये।

अधिवेशन बुलाने की मांग करने वालों के साथ अपने इस विवाद में तिलकराम को शिवशर्मा ने एक पत्र के साथ निषेधाज्ञा के लिये अदालत में अर्जी देने में सहायता देने के लिये जंग बहादुर के पास जो भेजा था वह बिल्कुल अवैधानिक कार्य था और इस बात से कि तिलक राम ने इस विवाद में अपना इस तरह उपयोग अभियोक्ता के पक्ष में किया। इससे तिलकराम के सम्बन्ध में की गई टिप्पणी का औचित्य सिद्ध होता है। यह भी प्रकट हुआ कि अभियोक्ता और उसके गुट को इस विषय में तिलकराम की भक्ति का दृढ़ विश्वास था। Ex. Z-1 पत्र जो ओंकार प्रसाद ने शिवशर्मा को लिखा था उस पत्र में उन्होंने लिखा था।

'अदालत का बहुत सा काम बाकी पड़ा है अतएव आप तिलकराम को या उसके द्वारा कार्यालय के किसी अन्य कर्मचारी को मेरी मदद करने को कहें।'

मैं नहीं जानता कि कोई अन्य व्यक्ति नियुक्त किया गया था या तिलकराम ने उनकी मदद की थी। किन्तु इन बातों से इस खेद जनक अवस्था पर प्रकाश पड़ता है कि वैतनिक कर्मचारियों को संस्था के अधिकृत कार्यों में नहीं प्रत्युत विरोधी दल के साथ विवाद को चलाने में प्रयोग किया गया। कार्यालय मन्त्री ने अपना उपयोग इस तरह किया यह अनुचित हुआ। इससे स्पष्ट है कि तिलकराम अभियोक्ता के प्रभाव में था। इसलिये उसने उसके कार्य की वैधता अवैधता पर विचार किये बिना उसका साथ दिया।"

इससे आगे पं० जीवराम कालीदास का वक्तव्य देकर जब शिवशर्मा ने तिलकराम को लाहौर से कानपुर भेजा था और उसने किस तरह वहाँ ज्यादती की, किस तरह वक्तव्य को पत्रिका में लगवाया। तिलकराम को ४०) रु० पर नौकर रखकर फिर इसे किस तरह ४००) रु० तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
829406

वेतन शिवशर्मा ने बढ़वाया यह सारा मामला उक्त केस में आगे आ चुका है। इस प्रसंग में १ पृष्ठ पूरा विद्वान न्यायाधीश ने लिखा है और अन्त में निर्णय देते हुए लिखा है इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ता है कि तिलकराम ने अभियोक्ता का उद्देश्य साधन किया जो उसके कर्तव्य का अंश नहीं था। यदि वह अभियोक्ता से प्रभावित न होता तो ऐसा कदापि न करता। अभियोक्ता से प्रभावित रहने के कारण हीं उसकी आज्ञा का उल्लंघन वह नहीं कर सका।

इस विषय की जो लेख में टिप्पणी हुई है पर्याप्त तथ्य पर आधारित है। इसीलिये यह पूर्णतया विधि रक्षित है।"

कर्मचारियों के हाथ में बहुत बड़ी शक्ति होती है।

यह कैसे ?

कांग्रेस नेताओं को १९४७ में जब भारत की बागडोर अंग्रेजों ने सौंपी तो उनके पास अनेक महकमों में काम करने वाले शिक्षित कर्मचारी नहीं थे। वह तो केवल उस समय कोरे नेता थे। मन्त्री बनने पर स्वयं उन नेताओं को अपने अपने मोहकमें जब मिले उन में काम किस तरह चलता है ? उन्हें कोई ज्ञान नहीं था। इसलिये बिचारे उन मोहकमों के वरिष्ठ कर्मचारियों के अनुकूल या उनके परामर्श से उन्होंने अपने अपने काम की जानकारी हासिल की। तभी तो कांग्रेसी सरकार जिस लाल फीता शाही की उन दिनों निन्दा करती नहीं अघाती थी, उसी लाल फीता शाही के आधीश बन कर इस कड़वे घूंट को किस तरह पी गये और आज जो इनकी निर्वलता के कारण प्रत्येक मोहकमें में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। वे भ्रष्टाचारी कर्मचारी इनकी इस निर्वलता की बदौलत ही उनके हौसले बढ़े हैं। यह उसी अज्ञान का परिणाम है, जिसके कारण उन नेताओं के नाकों में उन कर्मचारियों ने ऐसी नकेल डाली है जिसे आज १० वर्ष हो गये वह अब तक निकालने में समर्थ नहीं हुए।

बस, तिलकराम के आगमन के साथ ही महामंडल पर शिव शर्मा का पैर फिर जम गया और शिव शर्मा ने किस तरह स्वर्गीय श्री यादव जी आचार्य महामंडल प्रधान की अनुपस्थिति में महामंडल का कार्यवाहक प्रधान बनते ही महामंडल में फिर झगड़ा खड़ा किया, मुकदमेंबाजी आरम्भ हुई और महामंडल का धन मुकदमेबाजी पर फूंका जाने लगा और महामंडल के अधिवेशनों में अपना बहुमत बनाये रखने के लिये इसने किस तरह से पटियाला से वैद्य अवैद्यों के ट्रक के ट्रक भर भर मंगवाये। यह बात भी सदस्यों से छिपी नहीं। शिव शर्मा ने देखा कि दिल्ली में अधिवेशन करना अब खतरे से खाली नहीं, बम्बई में महामंडल के अधिवेशन करने लगा। वहां वह रहता था, इससे वह वहां काफी अपने पक्ष के सदस्य बना चुका था, इसलिये उन सदस्यों के बल पर उसने वहां कई अधिवेशन किये। अपने मतलब के कुछ महत्व के प्रस्ताव पास कराने के लिये एक अधिवेशन उसने बंगलोर में किया।

आज कई वर्षों से महासम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन यू० पी०, सी० पी०, दिल्ली, राजपूताना आदि प्रान्तों में इसलिये नहीं होने देता कि यहाँ कहीं राजकोट जैसी फिर मेरी दुर्गति न हो। जहां महासम्मेलन की स्टेज को उसे छोड़ कर भाग जाना पड़ा था। हालांकि उसका मित्र एम. के. मुकर्जी उस अधिवेशन का प्रधान था। आज कई वर्ष से वह जिन दक्षिण के राज्यों में महामंडल के अधिवेशन करता चला आ रहा है बाबा काली कमली वाला क्षेत्र ट्रस्ट को जो चिट्ठी उसने लिखी थी उसमें उसने लिखा कि ५लाख रुपये में दक्षिण के राज्यों से लाकर दूंगा। इसने कई सम्मेलन इन दक्षिण के राज्यों में किये। बतावे अब तक उसने कितना रुपया इन दक्षिण के वैद्यों से प्राप्त कर महामंडल के कोष में जमा कराया ?

दक्षिण के प्रान्तों में अधिवेशन करने का उसका इतना ही उद्देश्य था कि इतनी दूर यू पी, सी. पी., पंजाब, दिल्ली आदि प्रान्त के वैद्य नहीं पहुंचेगे। पार्थ नारायण पंडित उसकी नीति के संरक्षक वहां हैं ही, उस प्रान्त के वैद्यों को महामंडल की वास्तविक स्थिति का कुछ ज्ञान होता नहीं। सौ दो सौ वैद्य दर्शक के रूप में आ जाते हैं, बोली भाषा भी उनकी भिन्न होती है। इधर शिव शर्मा अपने आदमियों को सूचित कर देता है अधिवेशन में पहुंचो। उसके पास वेतनभोगी, पदलोलुप, चापलूस, सदस्यों की कमी नहीं वह बिचारे इन लोभों के मारे खिंचे चले जाते हैं और अधिवेशनों में बैठ कर उसका बहुमत बनाने में सहायक होते हैं। इस तरह १९३६ तक महामण्डल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी तूती बोलती चली आई। इस १८ वर्ष के घटना काल का अर्थात महामण्डल के लगभग आधे जीवन में उसने वैद्य समाज की जो सेवा कुसेवा की आयुर्वेद की उन्नति अवनति की इसे वैद्य समाज को ही नहीं राज्य सरकारों के स्वास्थ्य अधिकारियों और जन समाज को यह बताना आवश्यक हो गया है। महामण्डल में इस समय सदस्यों की संख्या १४ सौ के लगभग है उनमें से सैंकड़ों ही व्यक्ति ऐसे हैं जो इस महामण्डल के महान् प्रेमी, सच्चे हितेच्छू, विद्वान् कर्मठ व्यक्ति हैं। जिन्होंने महामण्डल को बनाया, निष्काम सेवा की। वह सब यद्यपि शिव शर्मा के अवैधानिक कामों, अनीतियों से इतने दुखित व खिन्न थे जिसकी कोई सीमा नहीं। उनमें से अनेक उद्‌भट विद्वान, लेखक, विधान ज्ञाता भी हैं। किन्तु शिव शर्मा की झगड़ालू प्रकृति को देख कर उसके विरुद्ध लिखने का साहस इसलिये नहीं करते थे कि कहीं वह अदालत तक लिखित मामलों को लेकर पहुंचे तो उस स्थिति में हमारा आर्थिक स्थिति में सहायक कौन होगा ? मुकदमे की परेशानियों से सब घबराते थे क्योंकि वह महामण्डल में जब से आया था, एक दो नहीं प्रत्युत कई मुकदमे उसने लड़े थे। इसलिये कोई साहस कर उसकी अनीतियों के विरुद्ध कलम नहीं उठाता था। वैद्यों की इस दयनीय स्थिति को देखकर मेरे सबर का प्याला लबरेज हो गया था।

महामण्डल की आजीवन सदस्यता से त्यागपत्र :– मैंने उससे मोर्चा लेने का दृढ़ संकल्प कर लिया। यही त्याग पत्र देने का कारण था। मैं यह बात अच्छी तरह जानता था कि जब उसकी अनीतियों के विरुद्ध कुछ लिखूंगा वह मुझे महामण्डल की आजीवन सदस्यता से वंचित करने का प्रयत्न करेगा। प्रमाण लीजिये, १०-१२-४३ को राजकोट अधिवेशन पर मैंने निम्न प्रस्ताव उपस्थित किया था :—

"अ भा. आ. महा सम्मेलन के निश्चय अनुसार जो विद्यापीठ आयुर्वेद विद्यालय बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय से मिल कर खुलने जा रहा था, इस महान् कार्य में किस व्यक्ति की ओर से यह बाधा खड़ी की गई, किसके दोष से यह विद्यालय स्थापित होने से रह गया, महामण्डल इसकी जांच के लिये ३ व्यक्तियों की एक जांच कमेटी बिठाने का निश्चय करता है और जाँच पड़ताल के पश्चात जो व्यक्ति दोषी ठहरे उसे महामण्डल आयुर्वेद का शत्रु घोषित करे।" इस प्रस्ताव के आते ही हजरत साहब ने चट मेरे विरुद्ध निम्न प्रस्ताव जोधपुर निवासी अभयचन्द्र जैन वैद्य की ओर से रख दिया—

"स्वामी हरिशरणानन्द ने अपनी पुस्तक त्रिदोष मीमांसा में आयुर्वेद के मूल सिद्धान्त त्रिदोषवाद पर कुठाराघात करके अपने आपको आयुर्वेद का शत्रु सिद्ध किया है, इस पर भी उन्हें महामण्डल का सदस्य क्यों रहने दिया जाय। आयुर्वेद के प्रति विश्वासघात के कारण उन्हें महामण्डल की सदस्यता से पृथक किया जाय।"

श्री यादव जी महाराज ने उस समय जो तर्क उपस्थित किया उससे उक्त प्रस्ताव खटाई में पड़ गया। इस तरह इसके जो आड़े आया उसे ही इसने निकाला। श्री गुरुदत्त जी एम.एस.सी. पं०किशोरीदत्त शास्त्री जैसे महान व्यक्तियों को जिसने अपनी कुटिल नीति से नीचे गिराया, महामण्डल से अपदस्थ किया, फिर वह भला मुझ पर अपना वार करने से क्यों चूकने वाला था। इसीलिये अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने के निमित्त मैंने महामण्डल से त्याग पत्र दिया था १९५४ के आरम्भ में।

मैंने अपने त्याग पत्र में पं० शिव शर्मा पर अनेक अनीतिकारक अभियोग लगाये और स्पष्ट लिखा कि इन्हीं अनीतियों को देखता देखता परेशान होकर महामण्डल की सदस्यता से त्याग पत्र दे रहा हूँ। वह मेरा त्याग पत्र ६ मार्च १९५४ के कोट्टकल अधिवेशन में निम्न कारण दिखा कर स्वीकृत हुआ।

श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी अमृतसर का महासम्मेलन की आजीवन सदस्यता से त्याग पत्र पढ़ा गया। सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि त्याग पत्र में लिखित आरोपों को निराधार और अनुचित घोषित करते हुए उनके त्याग पत्र को स्वीकार किया जाय। यह मेरा त्यागपत्र एजण्डा के साथ सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित होना चाहिये था, किन्तु विचारणीय विषयों में केवल त्याग पत्र पर विचार का संकेत मात्र था। उसे साहस नहीं हुआ कि मेरे त्याग पत्र का विषय वह सदस्यों के सामने लाता, इस से विषय पर पूरा प्रकाश नहीं पड़ा। खैर!

त्याग पत्र स्वीकृत हो जाने के पश्चात अब मैं खुलकर शिवशर्मा और उसके साथियों की आलोचना कर सकता था, अब तो केवल कोई मेरी कलम पर अंकुश रखने वाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधन था तो वह एक मात्र अदालत का द्वार था। यह मैं निश्चयपूर्वक जानता था कि शिवशर्मा के विरुद्ध जहाँ कलम उठी कि वह अदालत की शरण अवश्य लेगा, क्योंकि वह झगड़ों में पटु था। पर मैंने उसका डटकर सामुख्य लेने का पहिले ही निश्चय कर लिया था फिर डरने की क्या बात थी।

लेख माला का आयोजन--

कुछ तो मसाला मैंने पहिले केस के समय नोट किया हुआ था, बाकी मसाला संचय करने में करीब एक वर्ष तक काफी परिश्रम करना पड़ा। हमारा तो उससे व्यक्तिगत कोई द्वेष न था,था तो केवल समाज सम्बन्धी संस्था में की अनीतियों के प्रति ही। इसलिये उसने १९३८ से लेकर १९५५ तक महामंडल में क्या क्या अवैधानिक कार्य किये? इसी विषय को लेकर उस सारी स्थिति पर प्रकाश डालना था, इसके प्रमाण संग्रह करना कोई साधारण काम न था मैंने इसके लिये काफी समय नष्ट किया। सारी सामग्री को क्रम वार लगाकर जुलाई १९५५ के आयुर्वेद विज्ञान में 'आयुर्वेदोन्नति का पथ कैसे प्रशस्त हो?' व्यङ्गात्मक प्रश्न के अन्तर्गत एक लेखमाला आरम्भ की। इस लेख माला में मैंने केवल शिवशर्मा की ही आलोचना नहीं की प्रत्युत वैद्य समाज के उन बड़े नेताओं की भी खूब आलोचना की जो सम्मेलन में न जाने किस तरह तीन दिन के लिये आते हैं और योग्यता का ढिंढोरा पीट कर घर पहुंचते ही महामण्डल का नाम तक भूल जाते हैं। यही नहीं उन आयुर्वेदिक पत्रों की भी कड़ी समालोचना की जो आयुर्वेद के नाम पर फार्मेसियां चलाते हैं और खूब कमाते हैं पर समाज के लिये कुछ नहीं करते। वह भी महामण्डल में होती हुई अनीतियों को देखते हैं पर स्वार्थवश उन नेताओं की आलोचना करने से डरते हैं इस लेख माला का प्रभाव श्री युत् वैद्यराज पं० रामनारायण जी पर हुआ और उन्होंने निश्चय किया कि इस लेख माला को अपने पत्र सचित्र आयुर्वेद में प्रकाशित किया जाय। उन्होंने अनुमति मांगी मैं तो पहिले ही कुछ साथ देने वाले सहयोगियों का इच्छुक था, आपका सहयोग मिलते ही मेरी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा।

एक तो आप अपने आयुर्वेदिक व्यवसाय में जिस पटुता के साथ अग्रणीय होकर समस्त आयुर्वेदिक फार्मेसियों को पीछे छोड़ गये, यह उनका श्रम अनुकरणीय है। यही नहीं कि आप केवल व्यवसाय पटु हैं प्रत्युत आयुर्वेद जगत की जितनी अधिक सेवा आपने तन, मन और बहुल धन देकर की है आज तक एक वैद्य ने भी नहीं की। कौन नहीं जानता कि आप सम्भाषा परिषद् बुलाकर उनका सारा व्यय भार उठाते रहे हैं, इससे भिन्न हजारों रुपया आपने आज तक आयुर्वेद हित में दान दिया है। भला ऐसे सुहृद व्यक्ति को साथी पाकर कौन प्रसन्न न होगा। मैंने लेखों के प्रकाशन की अनुमति दे दी।

इन चार लेखों में तो वैधानिक पहलुओं पर इतना जोर नहीं दिया गया था। साधारण रूप से ही व्यापक आलोचनायें थीं। इन चार लेखों के पश्चात नवम्बर १९५५ के आयुर्वेद विज्ञान में मुख्यतया वैधानिक विषयों को लेकर एक बहुत बड़ा लेख 'क्या आयुर्वेद महामण्डल की अन्त्येष्ठी होने वाली है?' लिखा। पहिले चार लेखों में तो पं० शिवशर्मा पर १३ साधारण रूप के अभियोग लगाये थे। किन्तु इस लेख में अवैधानिक रूप में उसके किये कार्यों के ४२-४३ अभियोग लगाये। पहिले चार लेखों में से श्रीयुत पं० रामनरायण जी ने दो लेख छापे थे, उसमें १३ अभियोग जो थे वह पाठक उनके केस के फैसले में पढ़ चुके होंगे, इसलिये उनको दोहराने की आवश्यकता नहीं। ४२ अवैधानिक कार्यों के जो अभियोग इस लेख में लगाये गये थे उसकी संक्षिप्त सूची तथा शिवशर्मा ने अपने दावे में उन अभियोगों से किस तरह मुकरता है उसका संक्षिप्त विवरण दिलचस्पी से खाली न होगा। इसलिये पाठकों व सदस्यों की जानकारी के लिये मैं इसे दे देना उचित समझता हूँ।

अभियोग सार रूप में

(१) महामण्डल रूपी सूर्य को शिवशर्मा रूपी राहू ने जब से ग्रसा है तब से उस पर कलंक बढ़ता ही चला जा रहा है और आज वह इस स्थिति में पहुंच गया है कि उसका सर्वग्रास सन्निकट दिखाई दे रहा है।

(२) हमारी सरकार तो आयुर्वेद को समाप्त करना ही चाहती है किन्तु उससे पहले कुछ कीर्ति लोलुप स्वार्थ मूर्ति उसके संगठन में विग्रह बनाये रखकर उसे जब तक समाप्त न कर दें तब तक वह दम लेना नहीं चाहते।

(३) संस्था का जीवन उसके सदस्यों पर निर्भर रहता है सदस्यों की उपस्थिति उसके जीवन का चिन्ह होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। जब उसकी प्रतिष्ठा आयके स्रोत उत्तम हो जाते हैं कुछ निधि भी संचित होने लगती है तो कीर्ति लोलुप, स्वार्थ साधक व्यक्ति उसमें घुसने का और संस्था पर आधिपत्य जमाने का अवसर ढूंढ़ने लगते हैं। वह किस गुप्त मार्ग से घुसते हैं इसकी वास्तविकता का पता उनकी कलम से देना अच्छा है।

"अधिकार प्राप्ति की प्राकृतिक इच्छा भी मेरे बम्बई अधिवेशन के सभापतित्व के लिये खड़े होने का एक कारण थी। श्री यादव जी भी मुझे बम्बई अधिवेशन का प्रधान बनाना चाहते थे,यह सब जानते हैं, पिता जी ने मेरे आग्रह पर सब पत्र लिखे। मेरे ही आग्रह से श्री यादव जी ने स्वर्गीय श्री लक्ष्मी राम स्वामी तथा अन्य मित्रों को पत्र लिखे। इन पत्रों के लिखने में कोई नई बात नहीं हुई। चुनाव पर वोट मांगे ही जाते हैं, १००) रु० देकर बम्बई से वोट खरीदे गये, यह आक्षेप संदिग्ध है।

(४) यही तो गुप्त द्वार था जिस मार्ग से घुसने वालों में आयुर्वेद जवाहर, आयुर्वेद वृहस्पति श्री शिवशर्मा जी अग्रणीय व्यक्तियों में से एक हैं।

आप साम, दाम, दण्ड,भेद नीति के ज्ञाता तो हैं ही, इससे भिन्न और भा अनेक कलाओं में आप पूर्णतया निपुण हैं।

(५) संस्था में वही व्यक्ति मन्त्री व प्रधान पद पर अधिक काल तक बैठा रह सकता है जो अपना बहुमत बनाये रखने में समर्थ हो, वह व्यक्ति अच्छा हो या बुरा, संस्था के हित में कार्य कर रहा हो या अहित में इसे देखते हुए भी उसका कोई बाल बाँका नहीं कर सकता जब तक संस्था में उसका बहुमत हो। इससे भिन्न जिस संस्था का विधि विधान शिथिल हो नियम उपनियम बदलते रहते हों। उनकी आड़ में मनमानी करने का अच्छा अवसर रहता है। इस मूल मन्त्र को पं० शिवशर्मा जी खूब जानते थे।

महामण्डल में यह नियम है कि प्रधान का चुनाव तो बहुमत से हो, बाकी पदाधिकारी प्रधान की सम्मति से चुने जायें और ५ वर्ष बाद कार्यालय भी उसकी इच्छानुसार बदला जाय।

(६) १९३८ वाँ वर्ष महामण्डल में पं० शिवशर्मा का प्रवेश काल था, इस समय तक महामण्डल में विग्रह नाम की किसी अनिष्टकारी कृत्या का अभिमर्षण नहीं हुआ था किन्तु आपके बौद्धिक बल से यह प्रकट हुई।

(७) प्रधान बनने के समय आप बिलकुल नवयुवक थे, आपका चिकित्सा व्यवसाय अभी चमका न था, इसे चमकाने के लिये ख्याति की जरूरत थी। किन्तु उसके लिये द्वार उन्मुक्त हो गया था। इसीलिये वह इसी वर्ष से महामण्डल में सदस्य संख्या बढ़ाने में तल्लीन थे, वह महामण्डल में अपना बहु मत बनाये रखने की चिन्ता में थे। कार्यकारिणी में तो उनके मित्र, पृष्ठपोषक काफी लिये जा चुके थे, किन्तु प्रत्येक प्रान्त में फैले सदस्य किस प्रकार प्रभाव में लाये जा सकते हैं? इसकी योजना आप बना रहे थे। उसी के परिणाम स्वरूप १९३९ में वामनराव वैद्य को लेकर पहिला दौरा बम्बई गुजरात प्रान्त का हुआ।

(८) प्रधान होने के बाद आप महामन्डल का कार्यालय लाहौर उठा ले गये, उसके पदाधिकारी व्यक्ति आपके मित्र थे, कुछ प्रभाव में थे, १९३९ के लिये जोधपुर से निमन्त्रण मिला हुआ था, प्रधान के चुनाव में मतदान का अधिकार प्राप्त करने के लिये वह निरन्तर सदस्यों की संख्या बढ़ा रहे थे। इस वर्ष महामण्डल में सदस्यों की संख्या उन्होंने ४०० से ऊपर पहुँचा दी। १७-९-३९ की कार्यकारिणी के अधिवेशन में प्रधान के चुनाव में जो मत आये थे उनकी संख्या ३९६ थी। इन मतपत्रों में काफी हेर-फेर, अदल-बदल व धांधली से काम लिया गया, इस तरह उन्होंने अपना बहुमत बना लिया। इन मत-पत्रों में पांच नाम छांट लिये। इन पांचों में से कौन चुना जाय? इस पर पुनः उन्हीं सदस्यों से मत लिये जाने थे, ऐसा नियम है। इस नियम की अवहेलना कर दूसरी बार का चुनाव जोधपुर स्वागत समिति से कराया, जो वास्तव में नियम विरुद्ध था। इसीलिये पं० पुरुषोत्तम सखाराम हिर्लेकर ने आपत्ति उठाई कि सभापति का चुनाव नियमावली के नियम की अवहेलना है।

(९) और हथकण्डे–१९४० में लखनऊ सम्मेलन होने वाला था प्रधान के चुनाव के लिये जो मतदाता सूची प्रकाशित हुई थी उनमें सदस्यों के अलावा २४३ साधारण व प्रतिनिधि सदस्य और बढ़ा लिये गये थे। साधारण तो वह सदस्य थे जो पत्रिका के ग्राहक थे, प्रतिनिधि वे थे जो ... में एम० के० मुकर्जी और डाक्टर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष्मी पति ने उनके नाम भेजे थे। इनमें से बंगाल के प्रतिनिधि किस संस्था की ओर से आये थे ? इसकी पोल कविराज एम० के० मुकर्जी के पत्र से ही देखिये। "बंगाल में अभी तक प्रान्तीय आयुर्वेद महामण्डल नहीं बन सका है। जुलाई के अन्त तक बन जाने की आशा है। इस समय हम ११ सम्बद्ध संस्था प्रतिनिधियों का मान्य सदस्य शुल्क ३३) रु० भेज रहे हैं। जिससे कि वह प्रधान के चुनाव में भाग ले सकें अतः इसे स्वीकार किया जाये।"

जब प्रान्तीय आयुर्वेद महामण्डल ही नहीं बना था तो ११ संस्थाएं किससे सम्बद्ध हो गई ? जिनके प्रतिनिधियों का शुल्क आया, क्या यह चुनाव में सदस्य बढ़ाने की धोकाधड़ी नहीं थी ? इससे बढ़कर इनकी और धोकाधड़ी देखिये। इसी साधारण सदस्यों व प्रतिनिधियों की सूची के अन्त में जहां बंगाल के प्रतिनिधि दिये हैं वहीं पर १७ पंजाव के प्रतिनिधियों के भी नाम हैं। इन १७ में से एक व्यक्ति ने भी अपनी जेब से सदस्य शुल्क नहीं दिया था। इन १७ व्यक्तियों के चन्दे की पूर्ति कैसे होती है ? यह भी मजेदार किस्सा है। अमृतधारा भवन के पास एक भार्गव प्रेस था, जहाँ सम्मेलन कार्यालय का बहुत सा काम छपता था। उसे सहायता के लिये प्रेरित किया गया, उसने ५१) महामण्डल को दान दिया, यह रकम जो दान खाते जमा होनी चाहिये थी। पं० शिवशर्मा के पास जब यह रकम पहुंची तो उन्होंने यह रकम ३) रु० प्रति व्यक्ति के हिसाब से १७ पंजाब प्रान्त के प्रतिनिधियों के शुल्क रूप में जमा कर लिये और उन्हें पंजाब प्रान्त का प्रतिनिधि बनाकर प्रधान के मत में वोट देने का अधिकारी बना दिया।

(१०) पं० शिवशर्मा जी जब प्रधान मन्त्री बने तो यहां इन्होंने गजब की धांधली मचाई। नियम यह है कि सम्मेलनावसर पर प्रधान की उपस्थिति में उनकी सहमति से मन्त्री आदि पदाधिकारियों का चुनाव हो। किन्तु उनके लखनऊ में मन्त्री चुने जाने पर सभा में काफी गुलगपाड़ा मचा था। जिससे वहां पदाधिकारियों का चुनाव न हो सका, न कार्यकारिणी के सदस्य ही चुने जा सके।

आपने लाहौर जाकर पदाधिकारियों की और कार्यकारिणी के ५० सदस्यों की सूची बनाई और उसे सीधा वैद्य सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेज दिया। जिसे सम्पादक पं० किशोरीदत्त शास्त्री ने निम्न शीर्षक के नीचे प्रकाशित किया।

"सम्मेलन के खुले अधिवेशन की घोषणानुसार महामण्डल और विद्यापीठ पदाधिकारियों तथा सदस्यों की नामावली जो लाहौर से प्राप्त हुई।"

(११) पं० शिवशर्मा ने जिन ५० व्यक्तियों को कार्यकारिणी का सदस्य बना लिया था उनमें से ८ वैद्यों ने महामण्डल का सदस्यता शुल्क ही नहीं दिया था, वह यह थे पं० धर्मानन्द, मदनमोहन चोपड़ा, प्राणनाथ पुष्करणा, मदन मोहन पुष्करणा, विजयकाली भट्टाचार्य, एम. के. मुकर्जी, युगुलकिशोर शास्त्री कानपुर, कृपाशंकर पांडे मंधना। जब संयुक्त प्रान्त के वैद्यों ने युगुलकिशोर शास्त्री और कृपाशंकर के नाम पढ़े तो उन्होंने प्रधान मन्त्री को पत्र लिखा कि यह दोनों व्यक्तियों ने तो कभी महामण्डल का शुल्क ही नहीं दिया, इन्हें कार्यकारिणी का सदस्य कसे बना लिया गया ? इन पत्रों के विषय को एजेन्डा में स्पष्ट नहीं किया गया। इस पर शिवशर्मा कहता है—कुछ पत्र कार्यकारिणी के सदस्यों के विरोध में यू० पी० से आये थे जिनमें कहा गया था यह सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं धांधली में किसी प्रकार कार्यकारिणी में आ गये हैं (यह धाँधली से नहीं आये थे चुना तो इन्होंने ही था।) इन पत्रों की प्रतिलिपि सदस्यों को एजन्डा के साथ इसलिये नहीं भेजी गई कि यह विषय अधिक न बढ़े (विषय बढ़ने के कारण नहीं प्रत्युत पोल खुलने के कारण) शिवशर्मा ने लिखा—ना ही विषय ऐसा था जिस पर कार्यालय से कोई पक्षपात होने की संभावना थी। (इसे पक्षपात ही नहीं बेईमानी कहना चाहिये।) वह कहता है यह झगड़ा केवल कानपुर के सम्बन्ध में था (कानपुर के सम्बन्ध में नहीं अनियमित चुनाव के संबंध में था।)

पाठक ! इसे पढ़कर समझ गये होंगे कि यू० पी० के सदस्य कार्यकारिणी में किसी धांधली से नहीं आये थे प्रत्युत इन्हें तो पं० जी ने स्वयम् घुसेड़ा था फिर कहते हैं कार्यालय से पक्षपात होने की संभावना नहीं, झूठ बोलने की भी कोई सीमा है ? स्वयम् तो शुल्क हीन व्यक्तियों को कार्यकारिणी में लिया जो शिवशर्मा के समर्थक थे, जब पोल खुलते दिखाई दी तो उसे उन्होंने कार्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारिणी में प्रकट नहीं होने दिया, स्वयम् उसके जांचकर्ता बनकर उस मामले को पी गये।

(१२) पं० शिवशर्मा सदा यह प्रयत्न करते आये हैं कि महासम्मेलन का अधिवेशन ऐसे स्थानों पर हो जहां विरोधी पक्ष का मत प्रबल न हो सके। इसीलिये १९४१-४२ में अधिवेशन चटगांव में करने का आयोजन किया, जिसने यह महान् विवाद खड़ा कर दिया।

वैद्यों के विरोध और युद्ध की स्थिति के कारण जब चटागांव का अधिवेशन रह गया तो उन्हें झांसी से निमन्त्रण मिला। किन्तु वह तो ऐसे स्थान पर और ऐसे सभापति के सभापतित्व में सम्मेलन करना चाहते थे कि जो उनके पूर्णतया अनुकूल रहे। उन्होंने कहीं से ऐसा निमन्त्रण आया न देख पंजाब प्रान्तीय आयुर्वेद सम्मेलन की ओर से उसी समय निमन्त्रण दे दिया। हालाँकि पंजाब प्रान्तीय आयुर्वेद मंडल ने न तो किसी अधिवेशन में निमन्त्रण देने का विचार किया था, न कोई उसने प्रस्ताव पास किया था, किन्तु उसमें उनका जोर था, इसलिये उसे स्वीकृत कराकर भिजवा दिया। वास्तव में निमन्त्रण ३ मास पूर्व आना चाहिये था। इस बार के चुनाव में उन्होंने काफी बोगस सदस्य भर्ती किये, यहां तक कि उसी अधिवेशन में ७ आजीवन सदस्य उसी समय बनाकर उन्हें उसी अधिवेशन में मत देने का अधिकारी बना दिया। इस पर आपने उदाहरण दिया कि बम्बई सम्मेलन पर पं० हरिदत्त शास्त्री इसी तरह बनते हैं। वहाँ इन्होंने ही तो पं० हरिदत्त शास्त्री तथा अन्य सज्जनों को सदस्य बनाया था। वहां तो उस समय मताधिकार का प्रश्न नहीं था, यहाँ तो प्रधान के लिये मतदान का प्रश्न था। ऐसी स्थिति में उसी अधिवेशन में आजीवन सदस्य बनाकर उन्हें मतदान का अधिकार देना विधान के बिल्कुल ही विरुद्ध बात थी।

यह आपत्ति उस अधिवेशन में बड़े जोर की उठी थी, पं० दुर्गादत्त शास्त्री ने उठाई, किन्तु उस अधिवेशन में पं० जी का जोर था उन्होंने उन सातों व्यक्तियों को सदस्य और मत देने का अधिकार वोटों की अधिकता से स्वीकृत करा लिया। यह कितनी उनकी अन्धेर गर्दी थी।

क्या लाहौर में सम्मेलन बुलाने का निमन्त्रण वैधानिक था? नहीं। चटागांव का अधिवेशन स्थगित होते ही सम्मेलन बुलाने का जो प्रस्ताव पं० जी ने कार्य कारिणी में रखा था, उसी अधिवेशन में तो चटागांव अधिवेशन स्थगित होने का सूचना दी गई, तभी वहीं निमन्त्रण दे दिया गया।

इस पर आप कहते हैं-"तत्काल आये हुए प्रस्ताव अधिवेशन में स्वीकृत होते रहे हैं। सम्मेलन के आदि से ऐसा चला आता है।"

जहां आपत्ति न उठी हो वह और बात है, जहां आपत्ति उठाई गई हो पक्ष विपक्षों में संघर्ष उपस्थित हो उस स्थिति में नियम ही संस्था का संरक्षण करते हैं। उसी स्थिति में तो नियम का पालन आवश्यक माना जाता है।

(१३) यहां लाहौर का निमन्त्रण विशेष उद्देश्य को लेकर रखा जा रहा था और जान बूझकर झाँसी के निमन्त्रण को टाला जा रहा था, तभी तो नियमों की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता थी। लाहौर में अधिवेशन बुलाने का प्रस्ताव जब कार्य कारिणी में आया, अध्यक्ष पं० काली चरण जी ने नियम की अवहेलना कर निमन्त्रण पर विचार करना स्वीकार किया। यह सब पं० शिवशर्मा की धींगा मुश्ती से हुआ।

(१४) नई दिव्य मूर्ति का प्रवेश-गोंडल रसशाला के अध्यक्ष पं० जीवराम कालीदास शास्त्री, जिनका नाम उस प्रांत के सिवाय शायद ही कोई सदस्य जानता हो, न वह महामंडल के सदस्य थे, न कभी किसी अधिवेशन में भाग लिया, न वह इसमें रुचि रखते थे। उन्हें चुनाव में ६० मत आये देखकर सारे सदस्य हैरान रह जाते हैं। एक व्यक्ति महामंडल का सदस्य नहीं, ऐसे व्यक्ति को प्रधान के लिये किसने मत दिलवाये? इसका नाम प्रधान पद के लिये कैसे आया? यह बातें स्पष्ट करती थी कि यह सब पं० जी की ही कारस्तानी है। दूसरी बार के चुनाव में पं० जीवराम कालीदास को १६८ मत और पं० किशोरी दत्त शास्त्री को ७१ मत पड़ते हैं वह प्रधान घोषित किये जाते हैं। इसके बाद उनकी संरक्षक सदस्यता का प्रस्ताव उसी अधिवेशन में रखा जाता है और वहीं स्वीकृत होता है। अगले दिन उन्हें तार दी जाती है कि आपको महामण्डल का प्रधान चुन लिया गया है। शीघ्र स्वीकृति दें।

पं० जीवराम कालीदास जी कहते हैं-"जिस बात से मैं दूर रहना चाहता था, जिसका मुझे जरा भी ख्याल अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोह नहीं था, उसको पढ़कर मुझे आश्चर्य हुआ।" उन्होंने उत्तर दिया—"मैं प्रधान बनकर सम्मेलन के कार्य में सारा वर्ष भाग नहीं ले सकता, मैं अपने व्यवसाय में बहुत व्यस्त हूँ।" इस तार का उत्तर फिर शिवशर्मा ने दिया—"यदि आप प्रधान पद स्वीकार नहीं करेंगे तो उसे स्वीकार कराने की प्रार्थना लेकर एक डेपूटेशन लाहौर से आयेगा।" इसको पढ़कर सदस्य समझ गये होंगे कि शिवशर्मा ने उन्हें प्रधान किस अवैधानिक क्रम से बनाया था।

(१५) उस चुनाव के सम्बन्ध में यहां तक जालसाजी हुई कि आगत कुछ मत पत्र रोक लिये गये, फाड़े गये, रद्द किये गये और इच्छित मत पत्र बढ़ाकर तब वह मत पत्र गिने गये। इस तरह पं० जीवराम कालीदास का बहुमत बनाया गया।

लाहौर अधिवेशन में जब शिवशर्मा प्रधान मन्त्री बने स्थायी समिति के लिए जिन ५० सदस्यों का निर्वाचन हुआ उनमें २४ सदस्य ऐसे चुने गए जिन्होंने सदस्यता शुल्क अदा नहीं किया था। इसीलिए उनके नामों पर तारक चिन्ह लगाकर नीचे सम्पादक की ओर से नोट छपा कि इन्होंने शुल्क अदा नहीं किया है। इसके बाद भी उन्होंने सदस्यता शुल्क अदा नहीं किया, तब उनके स्थान रिक्त घोषित किए गए। यह अंधेर गर्दी नहीं तो और क्या था?

पं० शिवशर्मा की और धींगा मुश्ती—पं० जीवराम के वक्तव्य का जो अंश दिया है वह वक्तव्य पत्रिका में कैसे छपा?

(१६) मेरा त्याग पत्र और उसका कारण—पाठक इस शीर्षक के नीचे पं० किशोरीदत्त शास्त्री सम्पादक पत्रिका का वक्तव्य पढ़ें वह निम्न था—"कुछ समय से हमारी संस्था में विवाद के दो दल बन गये हैं। यह दोनों दल इतने कमीने पन पर उतर आये हैं कि किसी शिष्टता की परवाह नहीं करते और संस्था के लिये पूर्ण घातक हो गये हैं। इस दल के एक पक्ष के मुखिया हमारे शिवशर्मा हैं, जो अपने दल के शुरु से बानी मुबानी हैं। इस समय हमारी संस्था में सर्वेसर्वा भी आप ही हैं, आपके प्रयत्नों से इस वर्ष सभापति भी अनुकूल मिल गये हैं। गत मास उन्हीं के नाम पर प्रकाशित एक पुस्तिका मई की पत्रिका के साथ वितरित हुई है, यह उनका वक्तव्य बताया जाता है। इसे पत्रिका में लगाने से पूर्व सम्पादक को दिखाया भी नहीं गया। २४ अप्रैल को वक्तव्य छाप कर लाहौर से कार्यालय का क्लर्क तिलकराम शर्मा अपने साथ लाया और जो कुछ करना था उसका आज्ञापत्र भी साथ लाया, वह सम्पादक से नहीं मिला, प्रेस में पहुंच पत्रिका छपने से रुकवा दी, मई का केवल प्रारम्भिक फार्म छोड़ कर बाकी उद्दिष्ट वक्तव्य मिलाकर पत्रिका की मिसल उठवाकर मई की पत्रिका तयार कराना आरम्भ कर दी। सारा सिलसिला बांध कर ९। बजे क्लर्क आज्ञापत्र लेकर सम्पादक के पास पहुंचे; इस समय रुग्ण सम्पादक ज्वर में बात भी नहीं कर सकते थे। सहायक सम्पादक बुला लिया, क्लर्क महोदय आज्ञापत्र देकर चले गये। पत्रिका तयार हो रही थी, उस पर कुछ पते क्लर्क ने लिखे कुछ रामचन्द्र जी से लिखवाये, पत्रिका के सारे पैकट बनवा लिये कुछ डिस्पैच भी करा लिये तब क्लर्क महोदय प्रेस से हटे।

वक्तव्य की पुस्तक में क्या भरा है? यह बात दूसरे दिन सम्पादक ने जानी, ज्ञात हुआ (१) वह विवाद के एक दल की चूडान्त पक्ष पोषक सामग्री है, (२) सम्पादक पर अविश्वास और उसके सम्मान पर पूरी आघात पुस्तक है। (३) पत्रिका की मूल नीति पर कुठाराघात है। इन कारणों से मैं त्याग पत्र देकर पत्रिका से हाथ खींचता हूँ और सम्पादकत्व से अपना नाम हटाये लेता हूँ,

—किशोरी दत्त

पं० शिवशर्मा, पं० किशोरी दत्त जी के त्याग पत्र के कारणों को पढ़कर आग बबूला हो गये। ४–६–४३ की कार्यकारिणी के अधिवेशन में उनके त्याग पत्र के कारण दिये वक्तव्य को छापने के अपराध में उन्हें सम्पादकत्व से पृथक् कर दिया। दे० स० प० जुलाई १९४३। जब सदस्यों ने इस अधिवेशन की कार्यवाही पढ़ी तो जो व्यक्ति उस अधिवेशन में विद्यमान थे उनसे पूछा गया कि पं० किशोरीदत्त जी का त्यागपत्र अधिवेशन में कैसे आगया। वह तो एजेण्डा में नहीं था। उन्होंने बताया उनके त्याग पत्र का वहां कोई विषय उपस्थित नहीं हुआ, यह तो केवल पत्रिका में पढ़ रहा हूँ। तब पता लगा कि पत्रिका तो शिवशर्मा के हाथ में है सच, झूठ जो चाहें प्रकाशित करा सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१७) पं० शिवशर्मा जब महामंण्डल में आये उनकी पार्टी बढ़ती ही गई, जहां चुग्गा मिले चिड़ियां अनायास ही पहुंच जाती हैं। वैद्य समाज में ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं जो अच्छे उद्भट विद्वान् हैं पर उनके हाथ में यश नहीं, पेट तो रोटी मांगता है, इसे वही व्यक्ति दे सकता है जिसके हाथ में सत्ता हो, साधन हों, पं० शिवशर्मा ऐसे ही व्यक्तियों को काम पर लगाने के लिये प्रचार, संगठन आदि की योजना बनाते और पास करा लेते। अब उस पर महामंडल कोष से रुपया निकाल कर देना उनका काम था।

यह योजनाएं कौन कौन सी थीं (१) आयुर्वेद प्रचार के लिये प्रान्तों का भ्रमण जिसकी आड़ में अपनी पार्टी का दृढ़ संगठन बनाना (२) प्रान्तीय मंडलों का संगठन करना जिसके द्वारा प्रतिनिध्यात्मक पद्धति से महामंडल में चुनाव का उपक्रम करना। जिससे सीधे महामंडल सदस्य बनने का मार्ग बन्द हो जाय। इस पद्धति को आरम्भ करने का अभिप्राय है वृद्ध वैद्यों के हाथों से सदा के लिये महामंडल का आधिपत्य छीन लेना।

यह दोष महामंडल में उत्पन्न करने के लिये प्रतिनिधि प्रपंच रचा गया, अर्थात अर्थ बल से अपना दृढ़ बहुमत बनाने का या यों कहो पैसे से वोट खरीदने का मार्ग निष्कंटक किया गया।

(१८) महामंडल का रुपया ठिकाने लगाने की योजना— डा० लक्ष्मीपति ने आयुर्वेदाध्यापक शिक्षापरिषद् की एक योजना शिवशर्मा के पास भेजी। इस पर दस हजार रुपया खर्च करने की स्वीकृति वह लखनऊ सम्मेलन पर ले चुके थे। यह रुपये वहां कैसे स्वकृत हुए थे? इसका रहस्य सम्मेलन में पधारे वैद्य ही बता सकते हैं।

रुपये की मांग डा० लक्ष्मीपति की ओर से बराबर रही, थोड़ी थोड़ी रकमें तो उन्हें जा रही थीं किन्तु एक मुश्त बड़ी रकम देने से पं० शिवशर्मा डरते थे। इसीलिये दूसरी बार ८-६-४७ की कार्यकारिणी के एजेण्डा में पुनः १० हजार रुपये की स्वीकृति का एक प्रस्ताव रखा गया। जब श्री यादव जी आचार्य ने उसे पढ़ा तो चेतावनी दी 'यदि हमारे इस विरोध की अवहेलना करके इस प्रस्ताव को पास करेंगे तो विद्यापीठ के धन की बरबादी करने की जुम्मेवारी उन्हीं पर होगी।' कवि० प्रताप सिंह जी इस अध्यापक शिक्षा परिषद् कमेटी के सदस्य थे, उन्होंने त्याग पत्र दे दिया।

जब भारी विरोध हुआ तो शिवशर्मा ने उक्त प्रस्ताव वापस ले लिया। फिर डाक्टर लक्ष्मीपति ने अपील निकाली कि दो हजार मिल जाँय तो हम परिषद् का काम चला सकेंगे। शिवशर्मा ने इसे फिर एजेन्डा में रखा, इसका भी काफी विरोध हुआ। तब यह पास हुआ कि डा० लक्ष्मीपति महामंडल के नाम पर चन्दा करलें और इस सम्बन्ध में साधारण खर्च महामंडल से दिया जाय। इस बीच आप डा० लक्ष्मीपति को ६००) भेज चुके थे जिसकी सूचना बहुत देर बाद प्रकाशित की। वह निम्न रूप में थी—

"लखनऊ सम्मेलन पर १० हजार परिषद् के लिये स्वीकृत हुआ था, बाद में अस्वीकृत कर दिया गया। जिसकी सूचना डा० साहब को पहुंचा दी थी। किन्तु उन्होंने परिषद् का कार्य जारी रखा, लगभग ६००) रु० उन्हें पहुंच चुका है। दो हजार चन्दा करने की अनुमति भी दे दी है।" इसके बाद पं० शिवशर्मा ने उन्हें और रुपये भेजे, जिसका जिकर उन्होंने किसी अधिवेशन में नहीं किया। २२-१२-४२ को जब विद्यापीठ का बजट अधिवेशन में आता है तब पता चलता है कि डा० लक्ष्मीपति को २२४६-११-६ दिये जा चुके हैं। नियमानुसार इतना रुपया देने का उन्हें कोई अधिकार नहीं था।

(१९) पहले जब पं० शिवशर्मा जी प्रचारार्थ निकले थे उनके यात्रा व्यय का कहीं किसी अधिवेशन में जानकर उल्लेख नहीं किया जाता था। तो क्या पं० शिवशर्मा जी महामडल कोष से यात्रा व्यय नहीं लेते थे? लेते नहीं तो क्या अपनी जेब से खर्च करते थे। वह तो ऐसी ऐसी रकमें भी महामंडल कोष से ले लेते थे जो वास्तव में लेनी नहीं चाहिये थीं। उदाहरण के लिये ताजे दो प्रमाण काफी हैं—

आप असम राज्य कांग्रेस के सम्मेलन में हवाई जहाज से जाते हैं, २४ मई को ९ बजे वहां पहुंचते हैं। २ बजे अधिवेशन होता है, यह असम राज्य का पहला वार्षिक चुनाव था, चुनाव देखा और शाम से पहिले ही सभा समाप्त हो गई। इतनी ही बात के लिये महामंडल के ४६०) पर पानी फेर दिया। प्रस्ताव जो पहले पास करा लिया था फिर आपत्ति कैसी?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२०) पं० जी ने मित्रों से मिलकर मतदान का जो ढंग बनाया है जब तक इस ढंग से मतदान होता रहेगा, हम सबों से अधिक कभी किसी को मत नहीं आ सकते। दूसरी बार के चुनाव कराने में डर रहता है कि कहीं रहस्योद्घाटन न हो जाय। इसलिये यह निश्चय पहिले ही कर लेना चाहिये कि इस बार किस को प्रधान बनाया जाय? जब मतदान हो तो उसके पक्ष में चारों अपना नाम वापस ले लिया करें। इस तरह दूसरे चुनाव झगड़े से बचा जायगा और इच्छित व्यक्ति को भेजा जा सकेगा, यह क्रम पं० शिवशर्मा ने १९४३ में आरम्भ किया था, राजकोट अधिवेशन पर प्रधान के लिये जो मत आये थे वह उनके तथा अन्य साथियों के थे यथा पं० शिवशर्मा, एम. कि मुकर्जी. डा० लक्ष्मीपति, ज्योतिषचन्द्र जी, पं० जीवराम काली दास। मुकर्जी जी के पक्ष में चारों ने अपने अपने नाम वापस ले लिये। यही क्रम फिर आगे के चुनावों में भी चला।

(२१) इस तरह ३ बार एम.के. मुकर्जी. एक एक बार डा०लक्ष्मीपति व कवि हरिरंजन मजूमदार बनाये गये। एक व्यक्ति के पक्ष में अन्य उम्मेदवारों के बैठ जाने की इस परम्परा को कोई ४२० न समझे, इसीलिये १९५२ की नियमावली में सभापति के निर्वाचन में यह नियम जोड़ा गया कि:—

"प्रस्तावित महानुभावों में से यदि चार महानुभाव अपने नाम वापस ले लें तो पांचवें महानुभाव का नाम प्रधान मन्त्री निर्वाचित रूप में घोषित कर दे।"

जब कवि हरिरंजन मजूमदार को इस तरह प्रधान पद पर आसीन किया। यह भी आपकी नीति के पूरे समर्थक थे। उन्हें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास था कि कार्यालय कलकत्ता से दिल्ली आ जाने पर महामंडल की बागडोर हमारे हाथ से जाने की नहीं। यहां उनकी नीति के समर्थक पं० गणेश दत्त जी सारस्वत मिले। श्री आसुतोष मजूमदार तो पहिले ही से उनके घनिष्ठ मित्रों में थे। इसलिये पं० शिवशर्मा की पार्टी यहां मजूमदार पार्टी के नाम से प्रख्यात थी। उसने इनकी नीति की रक्षा कैसे की। इसके एक दो ही प्रमाण काफी हैं:—

जब कवि० हरिरंजन मजूमदार जी प्रधान बने स्थायी समिति का चुनाव हुआ उनमें ऐसे व्यक्ति चुने गये जिन्होंने उस वर्ष सदस्य शुल्क अदा नहीं किया था। यह मामला जब २३-६-४९ की स्थायी समिति में प्रकट हुआ तो वहां सखेद निश्चय हुआ कि उन महानुभावों का स्थान रिक्त समझा जाय जिन्होंने शुल्क नहीं दिया। देखो स० म० दिसम्बर १९४९ पृ० ३८८

यह एक दो व्यक्ति नहीं प्रत्युत ७ थे और इनके स्थान पर लिये गये १५ व्यक्ति क्योंकि कुछ बोगस होंगें।

(२२) दूसरा प्रमाण—१९५० में नये वर्ष के लिये प्रधान का चुनाव होना था, उसके लिये पं० शिवशर्मा के पिता पटियाला से वैद्यों अवैद्यों चपड़ासियों तक को वैद्य बनाकर भर्ती कर लाये और १६-७-५० के अधिवेशन में २६२ नये सदस्यों की सदस्यता स्वीकार करा रहे थे तो वहां आपत्ति उठी कि इन सदस्यों में अनेकों अवैद्य है। इस पर खूब गर्मा गर्मी हुई, निश्चय हुआ कि जिन ७ व्यक्तियों के वैद्य होने में सन्देह है उनकी सदस्यता जांच के लिये स्थगित रखी जाय।" यह तो टालने वाली थी न किसी ने जांच की। बात टल गई।

(२३) पं० शिवशर्मा फिर अखाड़े में—सितम्बर १९५० की स्थाई समिति में नियमावली संशोधन के लिये निम्न महानुभवों का एक उपसमिति बनाई गई। (१) वैद्य शिवनाथ शर्मा (२ सुरेन्द्र मोहन आचार्य (३) श्री आशुतोष मजुमदार (४) पं० रामगोपाल शास्त्री। (देखो स० पत्रिका सितम्बर १९५०)

(२४) नियमावली में जो संशोधन हुए वे पं० शिवशर्मा की इच्छानुकूल हुए थे वह प्रान्तीय संगठन की स्थिति को दृढ़ करने वाले थे और उनके अधिकार बढ़ाते थे। पं० कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये ११-१२ अगस्त १९५१ को गाजियाबाद में स्थायी समिति का विशेष अधिवेशन होता है। श्री यादव जी आचार्य अस्वस्थ रहने के कारण न आ सके तब पं० शिवशर्मा जी उसके सभापति बने। कार्यक्रम अनुसार कमेटी की रिपोट पर सर्व प्रथम विचार होना था किन्तु पं० शिवशर्मा की आज्ञा से मन्त्री जी ने संशोधित नियमावली पर विचार का विषय उपस्थित कर दिया। सदस्यों ने आपत्ति की, यह विषय एजेण्डा में नहीं है, शिवशर्मा ने इस आपत्ति को नहीं माना, उन्होंने मतदान कराया, वे हार गये। इस तरह जब वे परास्त होते है तब उनमें बदला लेने की भावना उग्र रूप धारण करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२६) १४ जून १९५२ को उपरोक्त नियमावली पर विचार के लिये अधिवेशन होता है। शिवशर्मा ने इसकी सूचना पटियाला भेजी, पं० रामप्रसाद जी दो ट्रक वैद्यों अवैद्यों के लेकर पहुंच गये। अधिवेशन में इस बार उपस्थिति १४० से ऊपर पहुंचती है। इस अधिवेशन में बाहर से ऐसे व्यक्ति भी लाये गये जो सम्मेलन के सदस्य नहीं थे, मतदान के समय यह आपत्ति उठाई गई। मन्त्री जी ने कहा जब जाँच का समय आवेगा तब जांच कर लेंगे, किन्तु मतदान के समय उन्हें नहीं हटाया गया। तब विरोध स्वरूप कितने ही सदस्य बहिगमन कर गये, काफी सदस्यों ने विरोध स्वरूप त्याग पत्र दे दिये, जब यह सूचना श्री यादव जी महाराज को मिली उन्होंने भी अपना त्याग पत्र भेज दिया।

सदस्यों के मीटिंग से उठकर चले जाने पर भी कार्य वाही जारी रही और शिवशर्मा का बनाया निम्न प्रस्ताव पास हुआ—

स्थायी समिति का यह अधिवेशन विश्चय करता है नियमावली निर्माण, परिवर्तन स्वीकृति और लागू करने के अन्तिम अधिकार स्थायी समिति को हैं या महासम्मेलन को यह निर्णय महासम्मेलन में मत संग्रह से कराया जाय। जब तक मतदान की गणना का निर्णय न हो जाय तब तक के लिये नवीन नियमावली लागू न की जाय।

मतपत्रक १ अगस्त ५२ को पोस्टल सार्टीफिकेट्स द्वारा भेजे जायं, उन पर स्थानीय उप प्रधान और प्रधान मन्त्री के हस्ताक्षर हों। १६ अगस्त को मतगणना की जाय। बैलट बक्स उपप्रधान और प्रधान मन्त्री के सामने खोला जाय और प्रधान मतपत्रों की गणना करावे।

(२७) यह प्रस्ताव शिवशर्मा ने बनाया था, उसका इरादा था कि मत पत्रों द्वारा जिस तरह प्रधान के लिये वह मत प्राप्त कर लेते हैं, उन्हीं हथकण्डों से यहां भी प्राप्त कर लेंगे, किन्तु इस बार नये प्रधान मन्त्री श्री गुरुदत्त जी जो उसकी पार्टी में सम्मिलित हुए थे उन पर उसका सन्देह बढ़ गया तभी तो 'मतदान पत्रक पोस्टल सार्टीफिकेट्स द्वारा भेजे जाँय, और उन पर स्थानीय उप प्रधान के हस्ताक्षर हों बैलट बक्स भी उपप्रधान के सामने खोला जाय' इत्यादि शर्तें लगा दी।

श्री गुरुदत्त जी ने अपनी नियत पर जब सन्देह की बात देखी उन्होंने प्रधान मन्त्रित्व पद से त्याग पत्र दे दिया। शिवशर्मा ने उन्हें लिखा-'मैं आप पर पूर्ण विश्वास करता हूँ" इसके उत्तर में श्री गुरुदत्त जी ने सूचित किया- मैंने त्याग पत्र स्थगित कर दिया है। किन्तु शिवशर्मा की यह इच्छा बिलकुल नहीं थी कि वह त्याग पत्र वापस लें। इसीलिये इसके उत्तर में शिवशर्मा ने लिखा चूंकि आपका त्यागपत्र अभी वापस नहीं हुआ, इस पर आगामी मीटिंग में विचार होना है इस कारण इसकी भी वही अवस्था है जो अन्य त्यागपत्रों की। आपके कार्य छोड़ देने पर-यदि आप चाहें-तो मैं आपत्ति नहीं करता।

(२८) वास्तव में पं० शिवशर्मा को ध्यान आ गया कि मत पत्रों के समय यदि श्री गुरुदत्त जी प्रधान मन्त्री पद पर रहे तो मत पत्रों की जालसाजी का कहीं भांडा फूट न जाय। इस रहस्य का भांडा श्री गुरु दत्त जी ने आखिर फोड़ ही दिया उन्होंने लिखा—

प्रधान पं० शिवशर्मा ने मत संग्रह पर जो अपना रूलिंग दिया निम्न है:—

मत पत्र किन किन को भेजे जांय ? (१) महासम्मेलन के सम्पूर्ण सदस्य जिन्होंने पिछले सभापति के निर्वाचन में भाग लिया था (इनमें वह वैद्य भी सम्मिलित हैं हैं जिनका नये वर्ष का सदस्य शुल्क अभी तक नहीं आया) (३) वह वैद्य जिनका सदस्यता शुल्क १४ जून ५५ तक कार्यालय में तो आ गया किन्तु कार्याधिक्य से उनकी सदस्यता स्वीकृति नहीं हुई। (जिनकी सदस्यता स्वीकृति नहीं हुई थी वह मतदान में कैसे अधिकारी थे।)

रूलिंग की इस आज्ञाको प्रधान मन्त्री श्री गुरुदत्त जी ने मानने से इन्कार कर दिया तभी शिवशर्मा ने उन्हें प्रधान मन्त्री मानना बन्द कर दिया। स्वयम् तो पं० शिवशर्मा ने लिखा 'आपका त्याग पत्र अभी वापस नहीं किया। आगामी समिति में उस पर विचार होना है' जब उनकी आज्ञा का पालन पं० गुरुदत्त जी ने नहीं किया, तो तुम प्रधान मन्त्री नहीं रहे। क्या यह डिक्टेराना हरकत नहीं ?

(२९) वास्तव में इन्होंने मत पत्र भेजने में शिवशर्मा की इच्छा पूर्ति नहीं की, दूसरे मत पत्र गणना में जो ४२० की जाती थी, इनके मन्त्रित्व पद पर रहते नहीं हो सकती थी, इसीलिये वह इस कांटे को हटाकर निष्कंटक होना चाहते थे। उन्होंने अपने विश्वस्त साथी वामनराव वैद्य को भेज दिया, उन्होंने आते ही श्री गुरुदत्त जी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार्ज लेने का प्रयत्न किया, किन्तु उन्हों आगामी अधिवेशन से पूर्व चार्ज देने से इन्कार कर दिया।

तब प० शिवशर्मा ने रूलिंग द्वारा प्रधान मन्त्री से मतपत्र जारी करने का अधिकार छीनकर वामनराव वैद्य को दे दिया।

(३०) इस प्रकार रूलिंग द्वारा अधिकार छीन कर देना बिल्कुल अवैध कार्य है, किसी संस्था में ऐसी अन्धेरगर्दी नहीं देखी जाती कि रूलिंग द्वारा अधिकार छीने जांय। यहां तो पं० जी का मुख्य उद्देश्य था वैद्य, अवैद्य, चपड़ासी जो भी वैद्य नाम धारी उन्होंने भर्ती किये थे उन सबों को मत पत्र पहुंचने चाहिये। यह बात श्री गुरुदत्त जी के रहते होती दिखाई नहीं दी।

उस रूलिंग को लेकर वामनराव जी देहली आये और स्वयं हस्ताक्षर करके मतपत्र भेजने का आयोजन किया तो सदस्यों ने विवश होकर सब जज की अदालत से निषेधाज्ञा जारी कराई–कि ९ अगस्त तक मत पत्र न भेजे जांय और उस दिन उपस्थित होकर बतावें कि किस नियम से असदस्यों को मत पत्र भेजना चाहते हैं।

(३१) शिवशर्मा की इस अवैधानिक कार्यवाही से उनके मित्र बहुत खिन्न हुए और उन सबों ने त्यागपत्र दे दिये।

इस तरह के मामले जब उपस्थित होते हैं तो पं० जी एक चालबाजी और करते हैं किसी मित्र की ओर से उन त्याग पत्र देने वालों के विरुद्ध झूठे इल्जाम लगवाते हैं, उसकी आड़ में प्रस्ताव उपस्थित करवाकर त्याग-पत्र स्वीकृत करवाते हैं। इन्दौर अधिवेशन पर यही किया और अदालती निषेधाज्ञा के कारण भांडा फूटने के डर से निम्न प्रस्ताव पास कराते हैं।

"स्थायी समिति का यह अधिवेशन इस समय की परिस्थिति को देखते हुए १४ जून वाले मत-संग्रह सम्बन्धी प्रस्ताव के अनुसार अब मत-संग्रह करना आवश्यक नहीं समझता, अतः अब रेफरैण्डम न लिया जाय।"

(३२) नियमावली संशोधन सम्बन्धी निम्न प्रस्ताव वहाँ फिर पास कराते हैं।

"स्थायी समिति का यह अधिवेशन निश्चित करता है कि निम्नलिखित महानुभावों की एक उपसमिति नियमावली में उपयुक्त संशोधन करके इसे विषय निर्वाचिनी के विचारार्थ उपस्थित करे।"

वास्तव में पं० जी विधि विधान का रंचक मात्र भी ज्ञान नहीं रखते। अपनी इच्छा को विधि विधान का स्थान देते चले आये हैं। इसका प्रमाण देखिये—

२ दिसम्बर १९५२ को नई स्थायी समिति का अधिवेशन होता है उसके प्रधान शिवशर्मा जी होते हैं। आप पिछले वर्ष के कार्य विवरण को पढ़ने का आदेश करते हैं। केशव प्रसाद जी ने कहा नियमानुसार यह पढ़ा नहीं जाना चाहिये क्योंकि पिछले वर्ष के अधिवेशन की कार्यवाही का सिलसिला तो अधिवेशन के समाप्त होने पर समाप्त हो जाता है।

आप कहते हैं—आपत्ति तो युक्तियुक्त है तो भी प्रचलित प्रथा के अनुसार ऐसा किया जा रहा है। यह है आपका विधि विधान सम्बन्धी ज्ञान।

और देखिये! झगड़े की जड़ १४ जून वाला जो प्रस्ताव स्वयं उन्होंने बनाया था जिसमें उन्होंने लिखा था "नवीन नियमावली लागू न की जाय" यहां उसका अर्थ करते हैं पुरानी नियमावली लागू की जाय, कौन सी? किस सन की? इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं किया।

(३३) इन्दौर सम्मेलन पर उपसमिति बनाकर जो इच्छित संशोधन रखकर पास कराये उनमें से कुछ द्रष्टव्य हैं–

'प्रतिनिधि सदस्यों की श्रेणी हटा दी जाय'। यह श्रेणी स्वयं इन्होंने बनाई थी, यहाँ हटादी।

'नियमों में संशोधन आदि का अधिकार सम्मेलन को रहे।' यह अधिकार स्थायी समिति को रहे इसके लिये आपने भयंकर झगड़ा खड़ा किया था, यहां उसे उलट दिया। क्यों? वास्तव में विधि, विधान का ज्ञान होता तो किसी बात पर विचार कर उसके लाभालाभ का निर्णय कर लेने के बाद तब उसे विधि में स्थान देते। वह तो ठहरे अवसर वादी, जैसा मौका देखते हैं जिस तरह उन्हें कार्य सिद्धि का क्रम दिखाई देता है उसे आगे कर अपना उल्लू सीधा करते हैं।

(३४) १० नवम्बर ५३ को दिल्ली में कार्यकारिणी (स्थायी समिति) का अधिवेशन बुलाया गया। अब शिवशर्मा जी नहीं चाहते थे कि दिल्ली, बीकानेर आदि स्थानों पर वार्षिक अधिवेशन बुलाया जाय, क्योंकि यहां अब उनके अनुकूल परिस्थिति नहीं रही थी। उन्हें डर था कि कहीं बागडोर सदा के लिये हाथ से न निकल जाय। उन्होंने प्रसुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रज्ञा को जगाया। पं० पार्थ नारायण को तार भेजी, पिता को सन्देशा भेजा वह ट्रक भरकर वैद्यों के ले आये।

इधर मन्त्री जी ने प्रधान के चुनाव के मत पत्र अपने विरोधी पक्ष के काफ़ी व्यक्तियों के पास नहीं भेजे थे, उन्हें खाली इस अधिवेशन का एजेण्डा ही भेज दिया था। चुनाव सम्बन्धी जो हथकण्डे खेले जाते थे उन्हीं हथकण्डों से काम लिया। जिनको मतपत्र नहीं भेजे गये थे ऐसे ३६ सदस्य केवल दिल्ली के ही थे, उन सदस्यों ने अपने हस्ताक्षरों से युक्त यह आपत्ति मन्त्री को दी।

इस पर पं० जी फर्माते हैं-"जांच के लिये समय चाहिए।" इसके लिये उन्होंने अपने साथियों की एक सब कमेटी बनादी, परिणाम वही ढाक के तीन पात।

(३५) नये वर्ष के प्रधान का जो चुनाव हो रहा था, सदस्यों ने प्रश्न उठाया कि यह निर्वाचन किस नियमावली के आधार पर हो रहा है। जो नियमावली २८मार्च ५१ से लागू थी वह ४ जून ५२ के अधिवेशन में रद्द कर दी गई थी। जो संशोधन इन्दौर में हुए थे, वहां ऐसा कोई प्रस्ताव पास नहीं हुआ था कि यह संशोधन अमुक वर्ष की नियमावली के साथ लगकर लागू होंगे। जब तक नियमावली का निर्णय न हो, यह चुनाव किस नियमावली के आधार पर हो रहे हैं ? पहले यह बताया जाय। इसका उत्तर न प्रधान शिवशर्मा के पास था न मन्त्री के पास- वामनराव जी कहते हैं-"में इस आपत्ति को संस्था के विरुद्ध एक दुर्घटना कहूंगा। चुनाव किस नियमावली के आधार पर हो रहे हैं यह सर्व विदित है।" क्या विदित है ? यह आपने नहीं बताया। पाठक ! पढ़कर समझ गये होंगे कि इससे बढ़कर ४२० की घटना क्या हो सकती है।

मार्च १९५४ में संशोधित एवं स्वीकृत नियमावली प्रकाशित हो गई। इस नियमावली में स्मृति-पत्र, उद्देश्य आदि मूल भूत सिद्धान्तों से लेकर सारी नियमावली में अनेक उलट फेर हुए हैं। ऐसे महत्व के परिवर्तन किस आधार पर कर डाले गए ? क्यों किये गए ? कहां किए गए ? यह एक विचारणीय समस्या खड़ी हो गई है। यह नियमावली कब से लागू हुई ? इसका उल्लेख किसी प्रस्ताव में नहीं आया। ऐसे उलट फेर पर एक्शन लिया जाना चाहिये।

(३६) क्या आयुर्वेद विश्वविद्यालय पं० शिवशर्मा योग्यता की कसौटी है ? १९३८ में पं० शिवशर्मा ने महामण्डल की गद्दी संभाली। संस्था में आते ही आपने आयुर्वेदोन्नति के कौन कौन से काम कर डाले इसका उल्लेख ऊपर हो चुका है। इससे भिन्न सबसे बड़ा काम आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्थापना का भी आपने हाथ में लिया, इसे आपने किस उन्नति के शिखर तक पहुंचाया ? इसका लेखा जोखा 'महामण्डल सदस्यों से एक प्रश्न' नामक लेख में कर चुका हूं। उसे पढ़कर पाठक समझ गये होंगे कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय बनने से क्यों रह गया।

३७ संख्या से लेकर ४२ संख्या तक के अभियोग शिवशर्मा ने अपने दावे में छोड़ दिये थे इसीलिये इनकी चर्चा पुनः करना पाठकों का समय नष्ट करना है। जिन्हें पढ़ने की इच्छा हो नवम्बर १९५५ का आयुर्वेद विज्ञान का अंक मंगाकर पढ़लें।

शिवशर्मा की गर्वोक्ति

आयुर्वेद विज्ञान अंगरेजी की पहली तारीख को निकलता है, आयुर्वेद सम्मेलन पत्रिका १५ ता० को प्रकाशित होती है। मेरा उक्त लेख आयुर्वेद विज्ञान में जब शिवशर्मा को मिला इसने "आलोचकों को शिवशर्मा का उत्तर" नामक शीर्षक के नीचे नवम्बर की सम्मेलन पत्रिका में निम्न सूचना प्रकाशित की ?

"विगत कुछ मास से मेरे विरुद्ध कुछ लेख एक दो पत्रों में निकल रहे हैं, जिनके अनुसार मेरे कार्यों से आयुर्वेद तथा आयुर्वेद महासम्मेलन को भारी क्षति पहुंची है। कुछ पत्र और मित्र उत्तर मांगते हैं, निम्न कारणों से उत्तर नहीं भेज सकूंगा।

(१) जो समय लेखों का उत्तर देने में लगेगा, वह अन्य आवश्यक कार्यों में लगाना कहीं अधिक उपयुक्त होगा।

(२) में समझता हूं कि उत्तर देना लेखकों को वह महत्व प्रदान करेगा जो न तो उन्हें प्राप्त है और न आगे होने की सम्भावना है।

(३) यदि कोई व्यक्ति श्वेत वस्त्र पहनकर निकले और कोई उस पर कीचड़ फेंक दे तो न तो वह दूसरे पर कीचड़ फेंकता है, न वह बैठकर कपड़े धोने लगता है।

वह कपड़े धोबी को संभाल देता है। इसी प्रकार मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखों द्वारा धवल यश पर फेंके गये कर्दम को दूर करने का भी सुप्रबन्ध है ही न्यायालय।

(४) हमारे सदस्य बन्धु दो प्रकार के हैं। एक सत्य जानना चाहते हैं, दूसरे तमाशा देखना चाहते हैं, न्यायालय दोनों की इच्छा पूर्ति करता है। वहां सत्य का निर्णय भी निश्चयात्मक होता है और हमारे तमाशबीन महारथियों को तमाशा भी अच्छा दीखता है।

(५) व्यक्तिगत रूप से न्यायालय की शरण जाना किसी संस्था को अदालत में घसीटने के तुल्य अपराध नहीं।

इन कारणों से मैंने वह पत्र अपने एडवोकेट को संभाल दिये हैं। वह इन लेखकों को न्यायाधीश के सामने अपने अभियोग सिद्ध करने का पूरा अवसर देंगे। साथ ही यह सुविधा भी होगी कि कार्यालय की जो सामग्री प्राप्त हो सकती है, उसे प्रमाण देने के लिए मंगाया जा सकेगा और लेखक यह शिकायत नहीं कर सकेंगे कि उन्हें कार्यालय ने सुविधा नहीं दी। इसके अतिरिक्त न्यायालय का निर्णय झगड़े को समाप्त कर देता है। आशा है यह पग सभी के लिये जिनमें लेखक भी हैं सन्तोष प्रद सिद्ध होगा।

सम्मेलन पत्रिका में जिस समय मैंने उक्त सूचना पढ़ी खुश हुआ कि हजरत मैदान में आही तो गये। मेरे पास सम्मन जनवरी १९५६ के अन्तिम दिनों में पहुंच गये। और मैं ठीक समय पर अदालत में हाजिर हो गया।

मुकदमा मिस्टर वी०एम०गेहानी प्रेजीडेन्सी मजिस्ट्रेट १६ ए स्प्लेनेड कोर्ट, बम्बई की अदालत में था।

उन्होंने मेरे ऊपर भारतीय दण्ड विधान की धारा ५०० के आधीन मानहीन का अभियोग लगाया था मैंने अर्ज की कि मेरा लेख इस धारा के नीचे नहीं आता, न मैंने शिवशर्मा की मानहानि की है। माननीय जज ने कहा—नहीं, अभियोक्ता के दावों में दिये गए अभियोगों से यह ५०० धारा के आधीन आता है और मुझे इस केस को सुनने का अधिकार है। अतः मैं इस केस को सुनूंगा। शिवशर्मा के वकील ने जो अभियोग सूची पेश की उनकी संख्या ४२ थी। किन्तु उसेने ३६ अभियोग ही अदालत के सामने पेश किये।

माननीय न्यायाधीश ने कहा—इनमें से ६ अभियोग जिन्हें गम्भीर समझते हो उन्हें छांट लो। शिवशर्मा ने उनमें से १-३-६-९-१९-२७ छांटकर दिये।

अदालत में शिव शर्मा का बयान

मैं पिछले २५ वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सक के रूप में प्रेक्टिस कर रहा हूं। मैं आयुर्वेद के लाभ में रुचि रखने वाली विभिन्न संस्थाओं से सम्बन्धित रहा हूं।

(१) मैं स्टेट फेकल्टी आयुर्वेद एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन, बम्बई राज्य का चेयरमैन हूं।

(२) मैं बोर्ड आफ आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन का प्रधान हूं।

(३) बम्बई सरकार की नकली देसी दवाइयों की रोक थाम कमेटी का भी चेयरमैन हूं।

(४) मैं बनारस यूनीवर्सिटी का प्राचीन व नवीन चिकित्सा पद्धति के लिये फेलो हू।

(५) मैं पहली पंचवर्षीय योजना के योजना कमीशन के स्वास्थ्य विभाग का भी एक सदस्य हूँ और पंचवर्षीय योजना में आयुर्वेद के भविष्य पर विचार करने वाली कमेटी का सदस्य बनने के लिये निमन्त्रित किया गया हूँ।

(६ नवम्बर १९५५ में मैं सीलोन आयुर्वेदिक प्रेक्टिशनर कान्फ्रेंस कोलम्बो अधिवेशन में मुख्य अतिथि था।

(७) वैद्य रत्न की उपाधि सरकार ने मुझे नवम्बर १९४६ में ही दी थी।

(८) मेरे पास झांसी आयुर्वेद विश्वविद्यालय द्वारा दी हुई आयुर्वेद वृहस्पति की आनरेरी डिग्री भी है।

(९) १९३७ में मैं पंजाब सरकार की एल्लाईड साइन्सिज की कमेटी का सदस्य नियुक्त किया गया था।

(१०) पंजाब सरकार की इण्डीजनिस मैडिसन इनक्वायरी कमेटी का भी मैं एक सदस्य था।

(११) मैं पंजाब सरकार के बोर्ड आफ इन्डीजीनस मेडीसन का इसके जन्म से ही सदस्य था।

(१२) मैं आयुर्वेद से सम्बन्धित विभिन्न सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओं से सम्बन्धित रहा हूँ।

विभाजन से पूर्व तक मैं लाहौर में प्रेक्टिस करता था। विभाजन के बाद से मैं बम्बई में प्रेक्टिस करता हूँ।

मैं अभियुक्त स्वामी हरिशरणानन्द को जानता हूँ वह आयुर्वेद विज्ञान का सम्पादक व प्रकाशक है। मैं अभियुक्त द्वारा दिल्ली जिला मजिस्ट्रेट के सामने दाखिल किये दो डिक्लेरेशन की प्रमाणित कापियां पेश करता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद विज्ञान पत्र बम्बई के कई व्यक्तियों को प्राप्त होता है। मुझे भी गत २-३ वर्ष से दिल्ली कार्यालय से इसकी एक प्रति प्राप्त होती रही है।

मैं लगभग २० वर्ष से अ. भा. आ. महासम्मेलन का सदस्य हूँ। यह इसका नया नाम है जो दिसम्बर १६३८ में दिया गया था। यह भारत में आयुर्वेद व्यवसाय संरक्षण की प्रतिनिधि संस्था है, जिसकी शाखायें सभी राज्यों में हैं।

मैं दिसम्बर १६३८ में पहली बार महासम्मेलन का प्रधान चुना गया था।

अभियुक्त १६५२ तक इसका सदस्य था, यह सदा अमृतसर में ही रहता था। विभाजन के बाद उसने दिल्ली में एक कार्यालय स्थापित किया और पत्र का प्रकाशन दिल्ली में बदल लिया।

मैं और अभियुक्त पंजाब आयुर्वेद मण्डल के सदस्य थे, अभियुक्त का मेरे प्रति प्रत्यक्ष व्यवहार शत्रुतापूर्ण था और उसने सदा मुझे वैद्यों की नजरों में गिराने का प्रयत्न किया। उसने जनता की दृष्टि में मुझे गिराने की इच्छा से मेरे विरुद्ध कई लेख लिखे।

१६४३ के आसपास मैंने अभियुक्त तथा कुछ अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध सब-जज लाहौर की अदालत में अपमान जनक पम्फ्लेट लिखने के कारण मानहानि का तथा ५-५ हजार के हर्जाने का दावा भी किया था। यह दावा एक पम्फ्लेट 'आयुर्वेद का पतन और महामण्डल में फूट का कारण' नामक लेखके कारण किया था, जिसकी एक प्रति पेश करता हूँ। जिस पर हस्ताक्षर कर्ताओं में अभियुक्त भी एक है और वह इसका मुद्रक भी है। बाकी १३ हस्ताक्षर कर्ताओं ने क्षमा मांग ली थी और अभियोग वापस ले लिये थे, मेरा खर्चा अदा कर दिया था और उन सबों के ऊपर से मैंने मुकदमा उठा लिया था। परन्तु अभियुक्त ने केस लड़ा और यह मुकदमा पंजाब विभाजन के समय तक चलता रहा, किन्तु मुझे यह मुकदमा छोड़ना पड़ा और मैं देश विभाजन के कारण वहां से चला आया।

मैं आयुर्वेद विज्ञान के जुलाई, अगस्त, सितम्बर १६५५ अंक प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिनमें मेरे विरुद्ध सिलसिलेवार लेख माला है जिसका शीर्षक है 'आयुर्वेदोन्नति का पथ कैसे प्रशस्त हो?' बाद में यह लेख सचित्र आयुर्वेद में छपा। मैंने उसके सम्पादक, सहायक सम्पादक के विरुद्ध दावा भी दायर किया हुआ है।

मैं इसी पत्र का अक्टूबर १६५५ का अंक पेश करता हूँ जिसमें एक लेख का शीर्षक है 'क्या यह विवाद है या अपराध ?' इस लेख में दिखाया गया है कि मैंने एक अपराधी को बचाने का प्रयत्न किया। यह सत्य नहीं है।

मैं आयुर्वेद-विज्ञान का नवम्बर १६५५ का अंक पेश करता हूँ जिसके पृष्ठ १८४ पर अभियुक्त ने प्रसंगवश यह कहा है कि मैंने पं० श्रीदत्त के विरुद्ध उचित से अधिक कार्यवाही की, क्योंकि उसने कोई संगीन अपराध नहीं किया था। उसने त्यागपत्र दे दिया, प्रधान मन्त्री ने अधिवेशन की स्वीकृति लेने तक के लिये उसे स्वीकार कर लिया। उस त्याग पत्र की स्वीकृति के साथ मेरा कोई सम्बन्ध न था। यह सही नहीं कि इस मामले को सुलझाने के लिये श्री ढेबर को पंच बना कर उनके हवाले करने में मैं एक अपराध पर पर्दा डालना चाहता था। मैं इस पत्र के दिसम्बर १६५५ के अंक में छपे एक लेख को पेश करता हूं जिसका शीर्षक है 'श्रीदत्त के त्याग पत्र की हकीकत' लेख में यह आरोप है कि मैंने श्रीदत्त से मई १६५५ में ही त्याग पत्र ले लिया था और इसे कई मास बाद दबाये रख कर छल पूर्ण विचार से पेश किया, ताकि सदस्य समझें कि उन्होंने त्याग पत्र अभी पेश किया और वह भी अन्य कारण को लेकर। यह आरोप मिथ्या है।

मैं आयुर्वेद विज्ञान का फरवरी १६५६ अंक पेश करता हूं। इसमें 'पं० शिव शर्मा मैदान में' शीर्षक लेख छपा है इस लेख में मेरे विरुद्ध कई आरोप है। जिससे मेरी मान हानि होती है और वह सत्य नहीं हैं।

मैं आयुर्वेद विज्ञान का मार्च १६५६ का अंक पेश करता हूं जिसमें एक लेख का शीर्षक है 'महामण्डल सदस्यों से नम्र निवेदन'। इस लेख में भी मेरे विरुद्ध अपमानजनक आरोप लगाये गये हैं जो मिथ्या है।

मैं आयुर्वेद विज्ञान का वह अंक पेश करता हूँ जिसके पहले लेख का शीर्षक है 'क्या आयुर्वेद महामण्डल की अन्त्येष्ठी होने वाली है ?' अन्तिम डेढ़ पृष्ठ छोड़ कर सारा अंक इसी लेख से भरा पड़ा है। यह शीर्षक संकेत करता है कि आयुर्वेद महामण्डल शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होने वाला है। लेख का अभिप्राय आयुर्वेद महामण्डल सम्बन्धी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी कार्यवाहियों द्वारा उसके ऊपर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा है । इस लेख में कई असत्य बातें हैं, कई बातें तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर कही गई हैं और कई बातों के सम्बन्ध में अत्युक्ति की गई है जिसका उद्देश्य वैद्यों, सदस्यों और जो यह लेख पढ़े उनकी नजरों से मुझे गिराने का है और मेरी प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाना है ।

जिन ६ अभियोगों पर मुकदमा चला

अनुबन्ध १ में मुझे राहु कहा गया है । लेख में यह आरोप है कि जब से राहु के रूप में मैंने आयुर्वेद महा-मण्डल रूपी सूर्य को ग्रसा है तब से इस पर कलंक बढ़ता चला जा रहा है, यहां तक कि अब इसका सर्वग्रास सन्निकट दिखाई देता है । भारतीय साहित्य में राहु एक राक्षस है, ज्योतिष शास्त्र में अनिष्ट का ग्रह है । यह कहना कि मैंने आयुर्वेद महा सम्मेलन को ग्रस रखा है और यह कथन भी कि महासम्मेलन का सर्वग्रास सन्निकट है यह भी मिथ्या है ।

आ. महामण्डल पहले की अपेक्षा आज बहुत दृढ़ स्थिति में है । १६ह कहता है, "हली बार में इसका प्रधान बना था इसके सदस्दम फेंकी ।" इसी से भी कम थी, अब बढ़कर यह दो हजाऔर यश कोई है । इसका कोष १५ हजार से बढ़ कर अब क्ति में डेढ़ लाख तक पहुंच गया है । १९३८ में इसका ने पदाधिकारियों के व्यक्तिगत नाम था, अब यह सारी र म सम्मेलन के नाम पर जमा है ।

यह संस्था आयुर्वेद चिकित्सकों की सार्वदेशिक प्रति-निधि संस्था है । भारत सरकार ने प्रथम पंचवर्षीय योजना कमीशन के स्वास्थ्य सदस्यों की सूची में महा सम्मेलन के प्रधान का नाम भी रखा है ।

बम्बई सरकार ने महासम्मेलन की प्रान्तीय शाखा को औपचारिक रूप से यह निमन्त्रण भेजा है कि वह राज्य कर्मचारी स्वास्थ्य बीमा योजना की (Allotation) कमेटी के लिये अपना एक सदस्य नामजद करे ।

सम्मेलन की इस प्रगति का कारण कुछ तो स्वाभा-विक है, कुछ उसके कर्मठ कार्य कर्ताओं के प्रयत्न का परिणाम है ।

अनुबन्ध सं० ३ में स्वार्थ साधक, कीर्ति लोलुप जिस व्यक्ति की ओर संकेत हैं वह मेरी ओर है । यह कथन असत्य है । यह कहना कि उस संस्था का धन ऐसे व्यक्ति के लिये आकर्षण हैं, कम से कम मेरे सम्बन्ध में यह झूठ है । शब्द 'घुसने का' अर्थ है संस्था में प्रवेश करना । मेरा संस्था में प्रवेश संस्था पर आधिपत्य जमाने के उद्देश्यसे था और मैंने गुप्त मार्ग से ऐसा किया, यह सब झूठ है ।

यह सत्य है कि मैंने 'अपराधी कौन' शीर्षक वाला पत्रक छापा था और मई १९४२ की सम्मेलन पत्रिका में उस पत्रक के परिशिष्ट रूप में एक लेख भी लिखा था । मैं उसे पेश करता हूँ ।

इस अनुबन्ध में मेरे द्वारा १००) रु० भेजकर वोट खरीदने की ओर संकेत है । उक्त लेख में मैंने इस आरोप की चर्चा की थी कि मैंने प्रधान बनने के प्रयत्न में १००) खर्च किये । इस अनुबन्ध में दिया गया मेरे लेख का उद्धरण जहां समाप्त होता है मूल लेख में मैंने उसके बाद यह शब्द भी लिखे थे "क्या यह आपत्ति मुझ पर है या श्री यादव जी पर" उक्त लेख के उद्धरण में से यह शब्द छोड़कर-- यह प्रकट किया गया है, कि जैसे मैंने रुपया खर्च करके वोट खरीदे । छुटे हुए शब्दों को जोड़ देने से स्पष्ट होगा कि जो कुछ मैं कहना चाहता था वह यह था कि मुझे नहीं बल्कि श्री यादव जी को यह १०० रु० का मामला आरम्भ करने का दोषी समझना चाहिये । अपने पिता से एक पत्र मिलने पर–यह १००) रु० मैंने श्री यादव जी को चुनाव सम्बन्धी डाक खर्च आदि के लिये भेजे थे ।

इसी अनुबन्ध के अन्तिम वाक्य में जहां साम, दाम, दण्ड, भेद आदि सब गुणों की विद्यमानता मुझ में बताई गई है वहां यह भी आरोप हैं कि मैं और भी अनेक कलाओं में पूर्णतया निपूर्ण हूँ । इससे अभियुक्त ने मुझे एक अत्यन्त चालाक और असाधारण दुष्ट व्यक्ति के रूप में पेश किया है ।

अनुबन्ध सं० ६ में संकेत किया गया है कि मेरे प्रवेश से पूर्व महामण्डल विग्रह दोष से सर्वथा मुक्त था, उसे मैंने अपने बौद्धिक बल से पैदा किया । कृत्या एक पुतली (या भुतनी) होती है जिसे काला जादू जानने वाला व्यक्ति बनाता (या बुलाता) है । यह झूठ है कि मेरे प्रवेश से पूर्व महामण्डल में फूट नहीं थी ।

महासम्मेलन कार्यालय बनारस से लाहौर परिवर्तित होना इसी फूट का सीधा परिणाम था । इसी फूट के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिणाम स्वरूप दोनों मन्त्रियों ने अपने २ पद से त्याग पत्र दे दिये थे। प्रमाण के लिये सम्मेलन पत्रिका अगस्त १९३८ की पेश करता हूँ।

महासम्मेलन के अप्रैल १९३८ के नागपुर अधिवेशन में कार्यकर्ताओं में काफी मत भेदों को दूर करने वाली कमेटी का मैं एक सदस्य था। यह झूठ है कि मैंने महासम्मेलन में फूट आरम्भ की।

अनुबन्ध संख्या ९—में "हथकण्डे" "पोल" और धोका घड़ी यह शब्द मेरे प्रति अपमान जनक कहे गये हैं और मुझे दूसरों की नजरों में गिराने की नियत से लिखे गये हैं। हथकण्डे का अर्थ (Trick) और धोका धड़ी का अर्थ (Deception) है।

बंगाल के ११ प्रतिनिधि स्थायी समिति के सर्व सम्मत निश्चय से स्वीकार किये गये थे। प्रस्ताव में दिये गये आश्वासन का पूरी तरह पालन हुआ और महासम्मेलन के अगले अधिवेशन से पूर्व ही बंगाल में प्रान्तीय शाखा स्थापित हो गई थी। प्रमाण के लिये मैं अप्रैल १९४१ की सम्मेलन पत्रिका पेश करता हूँ।

अनुबन्ध सं० १९ में यह आरोप लगाया गया है कि मेरे १९४४ से पूर्व के दौरों का खर्च जान बूझ कर महामण्डल के हिसाब में नहीं दिखाया गया, यह झूठा है। इन दौरों के खर्च का उल्लेख महामण्डल के हिसाब मे इसलिये नहीं दिखाया गया क्योंकि यह रकम महासम्मेलन द्वारा खर्च नही की गई, प्रत्युत प्रान्तीय शाखाओं द्वारा खर्च की गई। स्थायी समिति केवल महासम्मेलन की रकमों का हिसाब रखती है।

१९५३ में मैंने अपने दौरों के खर्च के लिये महासम्मेलन से कुछ रकम ली थी। मैंने महासम्मेलन से दूसरे दर्जे का रेल किराया लिया। यह सत्य है कि मैं गोहाटी और बंगलौर हवाई जहाज से गया। गोहाटी से कलकत्ता तक मैं हवाई जहाज से वापस आया और कलकत्ता से बम्बई तक रेल द्वारा वापस आया। तथापि मैने महासम्मेलन से केवल दूसरे दर्जे का रेल किराया लिया और शेष रकम अपनी जेब से खर्च की। मैंने अपने असाम, बेंगलौर, बंगाल और बिहार के दौरों के खर्च के लिये ४७०) रु० के लगभग रकम ली।

बम्बई से गोहाटी तक का हवाई जहाज का किराया २९३) रु० है और बम्बई से बेंगलौर तक का किराया ९५) रु० है। मैं २५-४—५३ को स्थायी समिति की मीटिंग की कार्यवाही से प्रस्ताव संख्या ८(अ) पेश करता हूं जो मई १९५३ की पत्रिका में छपा है।

अभियुक्त ने अनुबन्ध १९ में यह प्रस्ताव अपूर्ण रूप में उद्धृत किया है और उसी अधिवेशन में स्थायी समिति के सामने दिये मेरे वक्तव्य को जान बूझकर छोड़ दिया है, जिसमें मैंने कहा था—कि मैं महामण्डल कोष से हवाई जहाज का किराया नहीं लूंगा, बल्कि केवल दूसरे दर्जे का रेल किराया लूंगा और सम्मेलन ने मेरे इस वक्तव्य को स्वीकार किया था।

अनुबन्ध सं० २७ में यह आरोप है कि मैं बहुमत प्राप्त करने के लिये मत संग्रह के समय वही चालें चलता था जो कि प्रधान के चुनाव में चला करता था। यह आरोप मिथ्या है और मेरे प्रति अपमान जनक है। इस अनुबन्ध में आगे यह आरोप लगाया गया है कि गुरुदत्त जी मेरी पार्टी के थे, किन्तु मुझे उन पर सन्देह था कि वह मेरे साथ नहीं हैं। मेरी कोई पार्टी नहीं थी। मैंने सुझाव दिया था कि मन्त्री औ त्याग पत्र की प्रधान मत पत्रों पर हस्ताक्षर करें श्रीदत्त से मई १ २ मत रखने वाले दोनों पक्षों का प्रति कई मास बा थे।

अनुबन्ध सं० ४२ तक के ि, ताकि आरोप उस पर लगाये गये थे इस तरह वह उनसे ती गया और उन्हें असत्य बताता गया।

मैं बम्बई में

कुछ कठिनाइयां—मैं बम्बई का निवासी न था, व वहां के वकीलों से कोई परिचय था। मेरे मित्रों ने वकीलों का प्रबन्ध किया था, एक दो पेशी पर दिखाई दिया कि जो वकील किये गये हैं वह तो इस केस को चला नहीं सकेंगे। फिर उन्हीं वकीलों द्वारा बड़ा वकील किया गया, वह भी अयोग्य सिद्ध हुआ, तब चिन्ता उत्पन्न हुई। जब तक योग्य वकील न हो केस को व्यवस्थित रूप से न समझे, वह अदालत में जाकर क्या जिरह कर सकता है? हिन्दी के जानने वाले वकील वहां ढू ढे न मिलते थे, इस चिन्तित स्थिति में मुझे देख श्रीयुत पं० राम नारायण जी वैद्यराज ने अपना वकील दिया, जिसने केस को व्यवस्थित किया। उसको फिर साथ लेकर अन्य वकीलों में योग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वकील को ढूंढने लगा, बड़े श्रम के बाद श्रीयुत बी. एम. मिस्त्री एडवोकेट मिल गये और उन्होंने एक सप्ताह के भीतर ही केस को पूरी तरह समझ लिया। पं० राम नारायण जी ने इस स्थिति में जो सहयोग दिया उसके लिये मैं सदा उनका आभारी रहूँगा।

अब शिवशर्मा के वस्त्र धुलने और उसके धवल यश के धुलने का समय आगया। अभियोग प्रस्तुत हो जाने के बाद लम्बी तारीख मिली थी, इतने में वकील ने केस को समझ लिया। तारीख पर हमारे वकील ने पं० शिवशर्मा पर एक एक अभियोग को लेकर जिरह करनी आरम्भ की और अनेक प्रमाणों के साथ एक एक अभियोग जब वह सिद्ध करने लगा उस स्थिति में शिवशर्मा ने दर्शकों के बीच अपने को नंगा होता पाया, कभी कभी मारे शर्मिन्दगी के आंख ऊपर न उठाता। अभी तीन ही अभियोग सिद्ध हो पाये थे कि शिवशर्मा के पैर उखड़ गये, उसने अपने मित्रों द्वारा प्रयत्न किया, राजीनामा करलो। मेरा उन लोगों से यही कहना था–केस मैंने दायर नहीं किया, स्वयं उसने किया है, वह कहता है, "हमारे धवल वस्त्र और निर्मल यश पर तुमने कर्दम फेंकी।" इसीलिये उसने स्वयं ही अपने धवल वस्त्र और यश को धोने का मार्ग ढूंढा है, जिसे उसने अपनी गर्वोक्ति में उचित, निश्चयात्मक माना है। इसे अब धुल जाने दीजिये। जब पाँचवा अभियोग भी सिद्ध हो गया तो वह बहुत घबराया और उसकी ओर से सिर तोड़ प्रयत्न किया गया, मेरे छोटे वकीलों को फोड़ा, दबाव डलवाया कि स्वामी जी इतना ही मान लें कि लेख लिखने में असावधानी हुई, मैं केस उठा लूंगा। किन्तु मैं टस से मस न हुआ। वह तो यह चाहता था कि केस बीच में ही किसी तरह समाप्त हो जाय तो अदालत का निर्णय प्रकट न हो सकेगा और मेरी प्रतिष्ठा बनी रहेगी। किन्तु मैं भला कब उसके झांसे में आने वाला था। यदि मैं सुलह कर लेता तो उसके इस धवल यश पर से पर्दा कैसे उठता। वैद्य समाज और महामण्डल के सदस्य गण कैसे जानते कि शिवशर्मा किस प्रतिभा का मालिक है, उसकी योग्यता क्या है?

इस केस के निर्णय से उसकी गर्वोक्ति के प्रत्येक वाक्य सदस्यों, पाठकों के सामने आ गये हैं। जो वास्तविकता को जानना चाहते थे उन्हें उसकी योग्यता का वास्तविक ज्ञान होगया, जो तमाशबीन थे वह अदालत में ही उपस्थित होकर खूब तमाशा देखते थे। जब शिवशर्मा से एक एक अभियोग की बातें—जिनसे वह अपने बयान में मुकर चुका था—जिरह में दो दो दिन लेकर फिर वकील के वाक्जाल में फंसकर चक्रवद्ध गति से नाक पकड़ता था, अदालत का कमरा कहकहे से गूंज उठता था।

श्रीयुत पं० रामनारायण जी के निर्णय में स्वयं माननीय न्यायाधीश ने लिखा है—"कुछ समय की जिरह के बाद उसके जैसे चतुर व्यक्ति को यह मालूम हो जाना चाहिये था कि उसकी कलई खुल गई है, और वह सारी बातें ईमानदारी से स्वीकार कर लेता तथा अपने को इस तरह लज्जित न होने देता। इस स्वीकारोक्ति के लिये ३ पृष्ठ की जिरह करनी पड़ी।" पाठक थोड़े में समझ गये होंगे कि किस तरह अभियोग को सिद्ध करने के लिये वकील को कितना प्रयत्न करना पड़ा।

शिवशर्मा की योग्यता पर प्रकाश

हमारे वकील ने शिवशर्मा पर १३-१२-५६ से जिरह आरम्भ की उसकी योग्यता की पोल तो पं० रामनारायण जी के केस में ही खुल गई थी, किन्तु वे बातें हमारे भी केस में आनी चाहिये थीं इसलिये हमारे वकील ने शिवशर्मा से जब योग्यता सम्बन्धी प्रश्न पूछे तो उसने निम्नलिखित उत्तर दिये—

मैंने पंजाब विश्वविद्यालय की प्राज्ञ परीक्षा पास की है।

हिन्दी का मेरे पास कोई प्रमाण पत्र नहीं।

मैंने साइंस लेकर मैट्रिक पास की है।

मैं किसी यूनीवर्सिटी का ग्रेजूएट नहीं हूँ।

मैं पटियाला आयुर्वेदिक डिपार्टमेण्ट का आयुर्वेदाचार्य हूँ।

मैं १९२६-२७ में आयुर्वेदाचार्य बना। मैंने पटियाला गवर्मेण्ट आयुर्वेदिक कालेज में आयुर्वेदाचार्य किया। यह आयुर्वेदिक कालेज बम्बई तथा मद्रास सरकारों द्वारा स्वीकृत है, हो सकता है अन्य सरकारों द्वारा भी स्वीकृत हो। (इस बयान के साथ उसने अपनी योग्यता का एक भी प्रमाण पत्र अदालत में पेश नहीं किया।)

आयुर्वेद बृहस्पति की उपाधि मुझे झांसी आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय द्वारा एक कनवोकेशन में दी गई, जहां देश के अन्य प्रमुख वैद्यों को भी यह उपाधि दी गई।

अगले दिन जब शिवशर्मा जिरह के समय अदालत में हाजिर हुआ तो उसने आते ही कहा--मैंने कल गल्ती से कह दिया था कि पटियाला आयुर्वेदिक डिपार्टमेण्ट से प्राप्त आयुर्वेदाचार्य का प्रमाण पत्र बम्बई और मद्रास सरकारों द्वारा मान्य है। मुझे यह गलत फहमी हुई।

बम्बई सरकार झांसी आयुर्वेद विश्वविद्यालय की आयुर्वेद वृहस्पति की डिग्री को भी मान्य नहीं करती। जब पूछा गया-आप बम्बई में रजिस्टर्ड किस श्रेणी में हुए? उसने कहा-बम्बई सरकार आयुर्वेदिक चिकित्सकों की एक सूची पुस्तक प्रकाशित करती है, उस पुस्तक के प्रथम खण्ड में उन वैद्यों के नाम हैं जिनके पास कोई प्रमाण पत्र नहीं होते, मेरा नाम इसी सूची पुस्तक के इसी खण्ड में है। क्योकि मेरे पास बम्बई सरकार द्वारा मान्य कोई प्रमाण पत्र नहीं है।

सदस्यगण! शिवशर्मा अदालत में खड़ा होकर भी कितना झूठ बोलता है ऊपर उसकी जबानी और नीचे प्रमाण में देखिये—

पटियाला में एक वैद्य हैं, श्री बलदेव सिंह जी मढ़िया जिन्हें पटियाला गवर्मेण्ट ने १९२८-२९ में छात्र वृत्ति (स्कालरशिप) देकर ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज में शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा था। आप वहां से प्रमाणित होकर आये और पटियाला के एक धर्मार्थ औषधालय में आज भी काम करते हैं। १९५० में उन्होंने पटियाला एजुकेशन डिपार्टमेण्ट को एक पत्र लिखकर पूछा था कि स्टेट की तरफ से कौन सा आयुर्वेदिक कालेज चल रहा है, क्योंकि तब तक वहां स्वास्थ्य की शिक्षा का प्रबन्ध इसी एजूकेशन डिपार्टमेण्ट की ओर से था। १४-२-५० को जो उत्तर पटियाला सरकार की ओर से आया उस लेटर की फोटो प्रतिलिपि नीचे दे रहा हूँ, पाठक पढ़लें। वह कहते हैं—

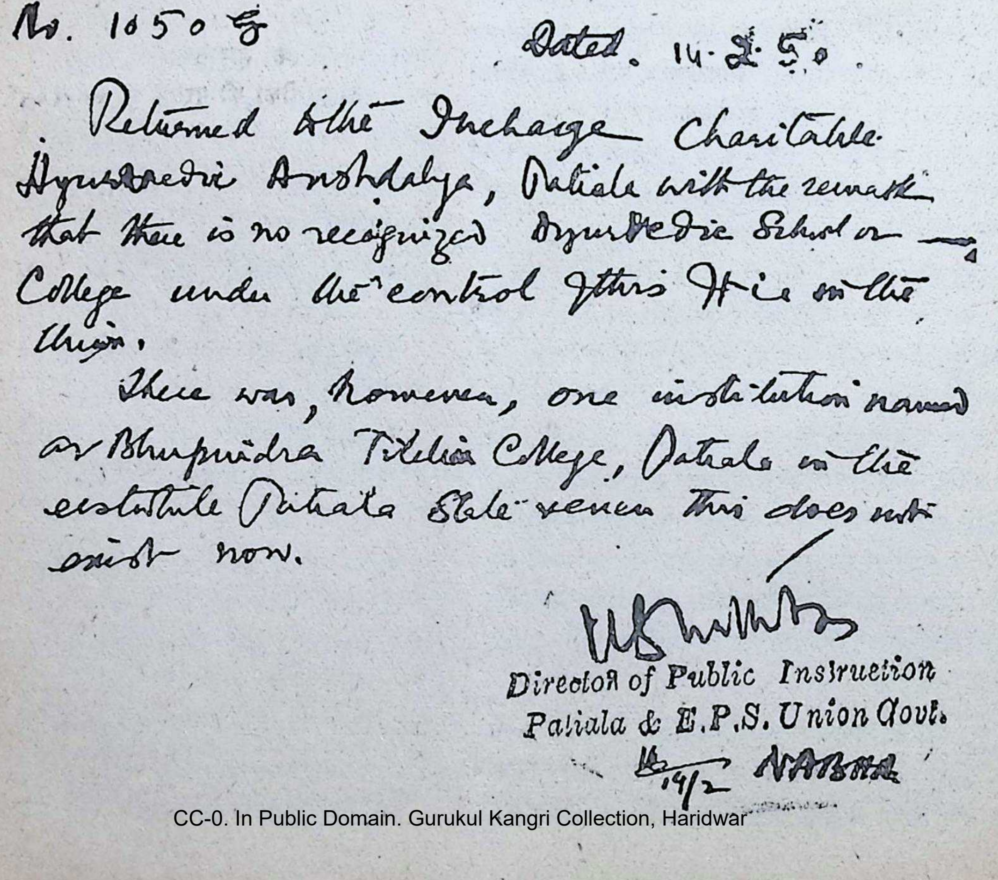
No. 1050 G   Dated. 14-2-50.

Returned to the Incharge Charitable Ayurvedic Aushdalya, Patiala with the remark that there is no recognized Ayurvedic School or College under the control of this Office in the Union.

There was, however, one institution named as Bhupindra Tibbia College, Patiala in the erstwhile Patiala State which does not exist now.

Director of Public Instruction
Patiala & E.P.S. Union Govt.
14/2 NABHA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टेट की तरफ से यहां कोई आयुर्वेदिक कालेज नहीं है, हाँ भूपेन्द्रा तिब्बिया कालेज है । वास्तव में १९५२ तक वहां कोई आयुर्वेदिक कालेज नहीं था । हां शिवशर्मा के पिता अवश्य अपने मकान पर कुछ छात्रों को प्राइवेट तौर पर पढ़ाते थे, यह काम वह यहां तब से करते थे जब से वह अपने गाँव टकसाल से आये थे । उन्होंने अवश्य छात्रों को कुछ डिगरियां दीं । किन्तु उनको डिगरी देने का अधिकार पटियाला स्टेट की ओर से कोई मिला नहीं था । न उनकी दी हुई डिग्री को पटियाला स्टेट ने कभी स्वीकार किया ।

अमृतसर में १९२३-२४ को जब शिवशर्मा पं० हेमराज नय्यायिक के पास संस्कृत पढ़ने के लिये आया था, मुझसे कई बार मिल चुका था, उन दिनों यह धातु पाठ पढ़ रहा था, संस्कृत का इसे साधारण सा ज्ञान था, हो सकता है इसने एक दो वर्ष में प्राज्ञ की परीक्षा दी हो किन्तु प्राज्ञ और मैट्रिक तो वह प्रारम्भिक डिगरियां हैं जहाँ से संस्कृत और अंगरेजी के ज्ञान का श्री गणेश होता है ।

पाठकों में से जिन्हें उससे मिलकर बात करने का अवसर मिला होगा वह उसे अंगरेजी में फर्र फर्र बोलता देखकर और उसके बयान से मैट्रिक पास का शब्द सुनकर आश्चर्य तो अवश्य कर सकते हैं और इसका कारण जानने की उनके भीतर भारी उत्कण्ठा हो सकती है किन्तु मैं इसे अभी रहस्य के गर्भ में ही रहने दूंगा ।

१९३८ के बम्बई अधिवेशन पर नि. भा. आ. महा सम्मेलन का प्रधान बन कर वहां जो उसने संस्कृत में छपा भाषण विद्वानों में वितरण कराया था और पढ़ा हिंदी का भाषण था । सम्मेलन में आये अनेक विद्वान वह लालित्य पूर्ण संस्कृत का भाषण पढ़कर बड़े प्रभावित हुए थे, वह अब उसके अदालत में दिये संस्कृत की योग्यता का बयान पढ़ते हैं तो हो सकता है वह आश्चर्य में डूबे हों और इस रहस्य को जानने की उत्कण्ठा रखते हों पहले मैं भी इस चमत्कार से चकित हुआ था, तब एक मित्र, जो उनकी घनिष्ठता में रहता था कहने लगा चकित न हों यह तो किसी मित्र की करामात थी । हाथ कंगन को आरसी क्या-नहीं विश्वास है तो हजरत से शुद्ध संस्कृत में चार पंक्तियां लिखवाकर देख लो ।

और प्रमाण–वैद्य समाज से यह बात भूली नहीं होगी कि मैंने १९३२-३३ में त्रिदोष मीमांसा प्रकाशित कर वैद्य समाज में खलबली मचा दी थी । उस समय बड़े २ आयुर्वेद के धुरन्धर विद्वान् व दर्शन शास्त्रियों ने मिलकर १९३३ में बनारस में पंचभूत त्रिदोष सम्भाषा परिषद बुलाई, उन्हीं दिनों एक सम्भाषा परिषद पनवेल में और एक नासिक में भी हुई थी । इसके बाद आजसे दो वर्ष पूर्व एक विद्वत् सम्भाषा परिषद पटना में और एक हरिद्वार में पं० रामनारायण जी वैद्यराज के प्रयत्न से हुई । इन परिषदों में शिवशर्मा क्यों नहीं आया ? यदि वह संस्कृत का ऐसा विद्वान होता जैसा उसके संस्कृत भाषणों से ज्ञात होता था तो इसमें कोई संशय नहीं कि उसकी कीर्ति पताका दिगन्त व्यापि हो जाती । पर उसे तो भय था कि इन परिषदों में गया तो अपनी योग्यता की कहीं पोल न खुल जाय । उसे पैसा कमाने के लिये सुलभ सा यश, कीर्ति फैलाने का मार्ग चाहिये था, वह उसे मिला हुआ था, फिर उसे इस विडम्बना से क्या लेना था ।

कुछ और डिगरियां–शिवशर्मा के पास विद्यालंकार वैद्य शास्त्री आदि की कुछ और डिगरियां थीं, वह आप भाव प्रकाश के हारीतक्यादि निघण्टु की शिवदीपिका नामक भाषा टीका की पुस्तक जो सन १९२६ में खेमराज श्रीकृष्णदास बम्बई वेंकटेश्वर प्रेस में छपी है उसके टायटिल पर शिवशर्मा के नाम के साथ प्रकाशित हैं, यह डिगरियां उसने कब और कहां से प्राप्त कीं ? या बोगस लगाई हुई है ? इसका रहस्य भी प्रकाश में नहीं आया ।

धन्वन्तरि आदि कुछ चापलूस मासिक पत्र उसे बी. ए. की उपाधि से सदा अलंकृत करते चले आये हैं । सम्मेलन पत्रिका ने तो उसे एम. ए. तक लिखा है । जब वह मैट्रिक था, पाठक कहेंगे—उसने अपने नाम के साथ लगी यह उपाधियां एक बार नहीं प्रतिबार पढ़ी होंगी अपने चित्र के साथ लगी हुई देखी होंगी । जब वह मैट्रिक था तो उसने अपने नाम के साथ लगी बी. ए., एम. ए. की डिग्री को देखकर उसका प्रतिवाद क्यों नहीं किया ? उन्हें बारम्बार प्रकाशित करने से क्यों नहीं रोका ? वह भला प्रतिवाद क्यों करता, यह तो उसकी ख्याति का साधन था । उसने तो वैद्य समाज और जन समाज की आंखों में धूल झोंकने में नटवरलाल के भी कान काट डाले हैं । नटवरलाल तो अपना रोजगार इसी चार पांच साल से प्रकाश में लाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हजरत का रोजगार तो आज १८ वर्ष से भी अधिक से चमकता चला आ रहा है। जिसकी बदौलत उन्हें स्टेट फेकल्टीआफ आयुर्वेद एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन बम्बई राज्य के चेयरमैन का गौरव पूर्ण पद और बोर्ड आफ आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन का गौरवपूर्ण प्रधान पद तथा कमेटी फार प्रीवेन्शन आफ स्पूरियस इनडिजिनस ड्रग्ज के चेयरमैन का गौरव पूर्ण प्रधान पद प्राप्त हुआ और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की एकेडेमिक कौन्सिल की सदस्यता का सम्मान प्राप्त हुआ। जिन साधनों की बदौलत धन और सम्मान दोनों प्राप्त होते हों भला वह मार्ग कभी छोड़ा जा सकता है। आखिर परिणाम सामने आ गया, इस केस ने तुलसीदास की इस चौपाई को सार्थक बना दिया—

उघरे अन्त न होहि निवाहु। कालनेमि जिमि रावण राहु।

विद्वान न्यायाधीश का निर्णय

अनुबन्ध संख्या ३ का निर्णय—इस अनुबन्ध का निर्णय लिखते हुए विद्वान् न्यायाधीश ने कहा—जहां तक इस आरोप का सम्बन्ध है—कि अभियोक्ता ने गुप्त मार्ग से महा सम्मेलन में प्रवेश किया। अभियुक्त ने इस अभियोग की पुष्टि में इसी अनुबन्ध में स्वयं अभियोक्ता के एक पत्र का उद्धरण दिया है। यह पत्र अदालत के रिकार्ड पर है और अदालत में अभियोक्ता की स्वीकारोक्तियों से स्पष्ट है कि १९३८ में अभियोक्ता जब पहली बार प्रधान चुना गया तो उस सयय प्रधान के चुनाव के सम्बन्ध में ही १००) श्री यादव जी को भेजा गया था। अभियोक्ता का कहना है कि १००) उसने यादव जी को लेखन सामग्री व डाक खर्च के लिये भेजे थे। यदि ऐसा होता तो मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता कि अभियोक्ता का उस पत्र में जो संदिग्ध कथन छपा है इसकी बजाय उसने यही बात साधारण और स्पष्ट शब्दों में क्यों न कही। उस पत्र में उसने कहा है कि वास्तव में यह आरोप यादव जी पर लगाया जाना चाहिये, न कि उस पर। इस कथन का अभिप्राय तो यह निकलता है कि यह आरोप लगाने का आधार तो था, यद्यपि यह यादव जी के विरुद्ध लगना चाहिये था, अभियोक्ता के विरुद्ध नहीं। यदि यह १००) यादव जी को लेखन सामग्री व डाक खर्च के लिये भेजा गया होता तो अभियोक्ता यह सब कुछ कहता। इस परिस्थिति में १००) के सम्बन्ध में अभियोक्ता का यह स्पष्टीकरण स्वीकार करना कठिन होगा।

यह लेख लिखते समय अभियुक्त के सामने अभियोक्ता का वह पत्र था जो उस वर्ष उसके प्रधान निर्वाचन सम्बन्धी दोषारोप करने वाले पम्फलेट के उत्तर में प्रकाशित किया गया था और इस पत्र की भाषा जिस प्रकार संदिग्धार्थक थी उससे कोई भी युक्तियुक्त मनुष्य इसी परिणाम पर पहुंच सकता था कि यह १००) वोट खरीदने के लिये भेजा गया।

१९३८ के बम्बई अधिवेशन में जिसका सभापतित्व अभियोक्ता ने किया, सभापति की ओर से एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया जिसके द्वारा पहले पांच नामों में से प्रधान चुनने का अधिकार स्वागत समिति को दिया गया। अभियोक्ता ने ही यह प्रस्ताव किया था और वह यह मानता है कि स्वागत समिति में ऐसे लोग होते हैं जो महासम्मेलन के सदस्य नहीं होते, फिर स्वागत समिति को प्रधान के चुनाव का अधिकार क्यों दिया जाय? यह बात साधारण समझ से परे की वस्तु है और अभियोक्ता भी इस का स्पष्टी करण नहीं करना चाहता। इस परिवर्तन के सम्बन्ध में सबसे सबल बात यह है कि यद्यपि दिसम्बर १९३८ के बम्बई अधिवेशन में पास हुये सब प्रस्ताव फरवरी १९३९ की सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। परन्तु यह प्रस्ताव प्रकाशित नहीं हुआ। अक्टूबर १९३९ में अभियोक्ता पुनः प्रधान चुना गया और उसके बाद दिसम्बर १९३९ की सम्मेलन पत्रिका में यह प्रस्ताव प्रकाशित किया गया। अभियोक्ता यह स्वीकार करता है कि यह देखना उसका कर्तव्य था कि सब प्रस्ताव अधिवेशन के तुरन्त बाद पत्रिका में छापे जाएं, परन्तु वह कहता है कि इस भूल की ओर उसका ध्यान नहीं गया। वह यह भी स्वीकार करता है कि उसने फरवरी १९३९ की पत्रिका पढ़ी और यह भी कि—यह प्रस्ताव एक महत्व पूर्ण प्रस्ताव था, परन्तु इन स्वीकारोक्तियों के होते हुये वह चाहता है कि मैं यह मान लूं कि इस भूल की ओर उसका ध्यान नहीं गया। १९३९ में जिस प्रकार से अभियोक्ता प्रधान चुना गया उसकी गलती का स्वयं उसे ध्यान था, यह बात उसके उस पत्र से स्पष्ट है जिसमें उसने स्वागत समिति को लिखा कि मैं आगामी अधिवेशन का सभापतित्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं करूंगा और वह किशोरी दत्त को चुन लें। वह कहता है कि ऐसा उसने हिर्लेकर के पत्र के बाद लिखा, परन्तु उस पत्र के कारण नहीं। किन्तु इस कथन को मन्त्री द्वारा प्रकाशित स्पष्टीकरण का वह पत्र झूठा प्रमाणित करता है।

प्रधान चुना जाने की इस रीति को ही अभियुक्त ने उस गुप्त मार्ग का नाम दिया है जिसके द्वारा अभियोक्ता ने महामण्डल में प्रवेश किया। अतः इस परिस्थिति में मेरा यह विचार है कि इस टिप्पणी के करने में अभियुक्त ने न तो कोई विशेष भूल की और न ही अनुचित अयुक्ति युक्त बात कही है।

अदालत ने अपने निर्णय में लिखा है कि यहां प्रसंग वश इस बात का उल्लेख करना भी उचित है कि अभियोक्ता के महासम्मेलन के राजनीतिक मंच पर प्रकट होने के बाद महासम्मेलन के विधान में ६ बार परिवर्तन किया गया और इन छहों अवसरों पर अभियोक्ता महासम्मेलन का कोई न कोई पदाधिकारी था। इनमें से ४ बार तो वह प्रधान था, एक बार उपप्रधान और एक बार प्रधान मन्त्री था।

छहों बार विधान परिवर्तन प्रधान की चुनाव रीति के सम्बन्ध में ही हुआ और कई बार तो पूर्व वर्ष की छोड़ी हुई प्रथा को परिवर्तन द्वारा फिर अपनाया गया। यह परिवर्तन क्यों किये गये? और एक क्रम जो एक वर्ष पूर्व मान्य समझा गया उसे अगले वर्ष क्यों अमान्य किया गया? और उससे भी अगले वर्ष उसे फिर दुबारा क्यों अपनाया गया? इस बात का अभियोक्ता के पास कोई स्पष्टीकरण नहीं।

मा०न्यायाधीश ने आगे लिखा है कि यहां यह उल्लेख करना भी उचित है कि अभियोक्ता के १९३८ में प्रधान के चुनाव में एक और अनियमितता भी हुई, वह यह कि दूसरी बार का मतदान दो बार किया गया। पहली बार मतगणना बनारस में हुई और इसे रद्द कर दिया गया। दूसरी बार मत गणना बम्बई में हुई। यद्यपि विधान के अनुसार यह बनारस में ही होनी चाहिये थी। जब अभियोक्ता से इसका स्पष्टीकरण मांगा गया तो उसने इस बात की आड़ ली कि दुबारा मतदान करने और मतगणना का स्थान बनारस से बदलकर बम्बई निश्चित करने का फैसला जिस स्थायी समिति के अधिवेशन में किया गया था उसमें वह उपस्थित नहीं था। परन्तु वह इतना स्वीकार करता है कि जहां तक उसे स्मरण है दुबारा मतदान का निश्चय इसलिये किया गया क्योंकि पहली बार मतदान में हस्ताक्षेप हुआ था। अदालत ने आगे लिखा है कि दुबारा मतगणना करने की अनियमितता एवं उसे बनारस को छोड़कर बम्बई में करने की घटना को यदि यादव जी को १००) भेजने की पूर्वोक्त घटना के साथ रखकर देखा जाय तो मेरे विचार में इस अनुबन्ध में गुप्त मार्ग सम्बन्धी लगाये गये अभियोग के लिये पर्याप्त औचित्य दीख पड़ता है।

कीर्ति लोलुप और स्वार्थ साधक-

अभियोक्ता का कथन है कि अनुबन्ध संख्या ३ में उसे स्वार्थ साधक एवं कीर्ति लोलुप कहा गया है और यह प्रकट करने के लिये प्रमाण मौजूद हैं कि कम से कम १९३८ में अभियोक्ता को अधिकार प्राप्ति की इच्छा अवश्य थी और यह इच्छा ही उसके प्रधान पद पर आसीन होने का कारण थी। उसने यह भी स्वीकार किया है कि उस समय उसने वोट भी मांगे। इससे प्रकट है कि वह ऐसा व्यक्ति था जिसके हृदय में प्रसिद्धि और सत्ता प्राप्ति की लालसा थी और इसीलिये वह प्रधान बनना चाहता था। अतः लेखक द्वारा कथित कीर्ति लोलुप की श्रेणी में तो वह फिट बैठता ही है।

अभियोक्ता कहता है-प्रधान पद के पहले वर्ष के बाद अर्थात १९३८ के बाद वह प्रधान पद से ऊब गया था, परन्तु तथ्य उसे झूठा प्रमाणित करते हैं। मेरे सामने यह प्रकट करने के लिये काफी प्रमाण विद्यमान हैं कि अधिकार प्राप्ति की उसकी लालसा १९५५ तक बनी रही, अन्यथा मई १९५५ के त्रिवेन्द्रम अधिवेशन में तीन दिन तक सभापतित्व करने और उसके बाद त्याग पत्र देने का और कोई उसके पास स्पष्टीकरण नहीं। बम्बई के मुख्य मन्त्री और त्रावणकोर राज्य के मन्त्री उस अधिवेशन में सम्मिलित हुए थे, उनकी विद्यमानता में तीन दिन सभा पतित्व करने का कारण अभियोक्ता यह देता है—कि इस अधिवेशन पर महत्वपूर्ण निश्चय किये जाने थे तथा उसकी इच्छा थी कि उक्त बड़े बड़े व्यक्तियों की उपस्थिति में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिवेशन की कार्यवाही शान और शिष्टता के साथ हो ।

ऐसा लगता है मेरी दृष्टि में तो उसका यह कथन केवल उसकी अहमन्यता का एक प्रबल प्रमाण है और इससे वैद्य समाज का बड़ा अपमान है। क्योंकि इससे यह संकेत मिलता है कि वैद्यों में उसके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा व्यक्ति नहीं था जो अधिवेशन की कार्यवाही को शिष्टता और शान के साथ चला सकता । जहां तक महत्व पूर्ण फैसले किये जाने का सम्बन्ध है मैं समझता हूँ कि उन फैसलों का करना उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना उन्हें कार्यरूप में परिणत करने का है और निश्चय ही उसने वह काम एक अपने से विम्न योग्य व्यक्ति के लिये छोड़ दिया। जैसा कि प्रकट है कि वास्तविक कारण यह था कि वह एक ऐसे अधिवेशन का सभापतित्व करने की चमक दमक दिखाने और उसके विज्ञापन का इच्छुक था जिसमें बम्बई के मुख्य मन्त्री और त्रावणकोर राज्य के मन्त्री सम्मिलित होने वाले थे, इससे भी प्रकट होता हैं कि वह कीर्ति लोलुप था और यही कारण है कि जिन ११ वर्षों तक महासम्मेलन के साथ उसका सक्रिय सम्पर्क था वह किसी न किसी पद पर आसीन रहा। वह ७ वर्ष तक प्रधान रहा, एक वर्ष उपप्रधान और बाकी समय प्रधान मन्त्री रहा ।

महासम्मेलन द्वारा उसकी ख्याति और विज्ञापन अनिवार्य रूपसे चिकित्सा व्यवसाय को भी बढ़ा देनेवाला है यह बात सामान्य ज्ञान और अनुभव से सिद्ध है । क्योंकि कोई व्यक्ति जब प्रधान के रूप में बड़े बड़े अफसरों और सरकार के मन्त्रियों के सम्पर्क में आता है तो उससे भी उसका विज्ञापन होता है और उसका नाम प्रसिद्ध हो जाता है। इस लिये जब कभी कोई व्यक्ति आयुर्वेदिक चिकित्सा के लिये विचार करता है तो उसका नाम यह समझ कर सबसे पूर्व उसके ध्यान में आता है कि जो व्यक्ति इतना प्रसिद्ध है वह अवश्य ही एक योग्य चिकित्सक होगा। इस प्रकार प्रधान बनने से व्यक्तिगत लाभ भी हो सकता है।

इस अनुबन्ध में जो उसे स्वार्थ साधक और कीर्ति लोलुप कहा गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अधिकार प्राप्ति एवं प्रसिद्धि की लालसा के उद्देश्य से ही अभियोक्ता, महामण्डल में प्रविष्ट हुआ ।

अनुबन्ध संख्या का ६ निर्णयः—इस अनुबन्ध में यह अभियोग लगाया गया है कि अभियोक्ता ने विग्रह रूपी कृत्या को जन्म दिया । अभियोक्ता ने इन शब्दों पर आपत्ति की है. परन्तु अभियुक्त का कथन है १९४१ से लेकर १९४४ तक मूलचन्द खैरातीराम ट्रष्ट के मामले में महामण्डल में जितने विरोध और मतभेद उत्पन्न हुए उन सबोंके लिये अभियोक्ता ही उत्तरदायी था तथा १९५० के बाद मत संग्रह के विषय पर जो झगड़े हुए उनके लिये भी वही उत्तरदायी था। इन्हीं विषयों पर यादव जी, वैद्य बापालाल शाह और पं० किशोरीदत्त जी आदि प्रमुख वैद्यों ने जो मत प्रकट किये हैं उनके आधार पर अभियुक्त का यह कथन कि १९४१ से १९४४ तक अभियोक्ता ही महासम्मेलन में विरोध एवं झगड़े का कारण था, यह कथन स्पष्ट रूप से ईमानदारी से किया गया एवं वास्तविकता पर आधारित है। यही नहीं, जहां तहां अपने बयान में अभियोक्ता ने यह स्वीकार किया है कि इस झगड़े के लिये वह जिम्मेदार था और यह झगड़ा महासम्मेलन के लिये नितान्त हानिकारक था ।

इसी प्रसंग में माननीय जज महोदय ने आगे लिखा है कि १९४४ में जब अभियोक्ता महासम्मेलन के राजनीतिक मंच से ओझल हो गया तब से लेकर १९५० तक महासम्मेलन में कोई झगड़ा नहीं हुआ । रिकार्ड पर विद्यमान तथ्यों में से कोई भी यह सिद्ध नहीं करता कि इन ६ वर्षों में महासम्मेलन के शान्त वातावरण को क्षुब्ध करने वाली कोई घटना घटी या स्वयं अभियोक्ता ने उक्त समय में किसी ऐसी घटना का आरोप लगाया हो कोई रिकार्ड पर नहीं हैं। परन्तु १९५० में उसके प्रधान चुने जाने के शीघ्र ही बाद फिर एक तूफान उठ खड़ा हुआ और एक ऐसा विवाद चल पड़ा जिसका केन्द्र अभियोक्ता ही था। जनवरी १९४३ की सम्मेलन पत्रिका में छपे उसके अपने भाषण में अभियोक्ता ने कहा—"यह कहना अनावश्यक है कि यदि यह मुकदमा न किया जाता तो पंजाब के वैद्यों में फूट न पड़ती ।"

१२ जनवरी १९५१ को श्री यादव जी की प्रधानता में स्थायी समिति ने महासम्मेलन के विधान में कुछ संशोधन किये । २९-४-५१ की स्थायी समिति के अधिवेशन में एक सदस्य ने यह आपत्ति उठाई कि विधान में संशो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन करना व धानिक रूप से स्थायी समिति के अधिकार से बाहर की बात है। अतः इस विषय पर कानूनी परामर्श लिया गया जो दोनों पक्षों की पुष्टि में मिला। उसके बाद महासम्मेलन का विशेष अधिवेशन गाजियाबाद में हुआ, जिसका कार्य वाहक प्रधान अभियोक्ता था। यह विषय यद्यपि उस अधिवेशन के एजेण्डा में नहीं था, परन्तु प्रधान शिवशर्मा ने इस पर मत लिये जाने की अनुमत्ति दे दी और यह विषय मतदान में गिर गया। तत्पश्चात ६ दिसम्बर १९५१ की स्थायी समिति के अधिवेशन में उस संशोधन को लागू करने का निश्चय ९४ पक्ष में और ३ विपक्ष में मतों के आने से हुआ। जिसका तात्पर्य यह था कि विधान संशोधन का अधिकार स्थायी समिति को है यह मत स्वीकृत किया गया। अभियोक्ता इस सारे काल में महासम्मेलन का उपप्रधान था। दिसम्बर १९५१ की बैठक के बाद श्री यादव जी ने प्रधान पद से त्याग पत्र दे दिया और अभियोक्ता उपप्रधान होने के कारण कार्य वाहक प्रधान बन गया। उसने प्रधान मन्त्री गुरुदत्त जी को कहा मैं इस विषय पर मत संग्रह कराना चाहता हूँ। अभियोक्ता ने यहां यह स्वीकार किया कि वह विधान संशोधन का अधिकार स्थायी समिति को देने का विरोधी था। अतः उसने कार्य वाहक प्रधान बनते ही सब व्यवस्था को उलट कर अपनी मर्जी करने के उद्देश्य से मत संग्रह का यह सिद्धान्त गढ़ लिया, यद्यपि विधान में मत संग्रह करने का कहीं नियम नहीं। विद्वान न्यायाधीश ने लिखा– कि मेरे विचार में रिकार्ड पर विद्यमान तथ्यों के आधार पर बचाव पक्ष के वकील का उक्त तर्क अयुक्ति संगत अथवा न्याय विरुद्ध नहीं। आगे भी न्यायाधीश ने मत संग्रह के झगड़े की चर्चा करते हुए विस्तार से लिखा कि १४-६-५२ की स्थायी समिति में अभियोक्ता ने एक प्रस्ताव पास कराया जिसका आशय यह था कि मत संग्रह स्थायी समिति में न कराकर महासम्मेलन के सम्पूर्ण सदस्यों से कराया जाय। उक्त कारण के विवाद पर प्रधान मन्त्री गुरुदत्त जी ने त्याग पत्र दे दिया, क्योंकि अभियोक्ता चाहता था कि मत पत्रों पर प्रधान मन्त्री के अतिरिक्त उपप्रधान के भी हस्ताक्षर हों और मत पत्रक खोलते समय भी उक्त दोनों पदाधिकारी उपस्थित हों। यद्यपि पहले यह सब कार्य केवल प्रधान मन्त्री करता था।

इस पर अभियोक्ता ने गुरुदत्त जी को दो पत्र लिखे, एक निजी पत्र जिसमें मीठी मीठी चापलूसी पूर्ण बातों द्वारा उनसे त्याग पत्र न देने का अनुरोध किया था। दूसरे औपचारिक पत्र में मत संग्रह पत्रक भेजने के सम्बन्ध में था, जिसमें अपना रूलिंग दिया, उसके अनुसार कुछ ऐसे लोगों को भी मत पत्रक भेजने का आदेश था जो महामण्डल के सदस्य नहीं थे। इस रूलिंग से विरोधी पक्ष को आश्चर्य हुआ और उनकी तरफ से विरोध का तूफान उठ खड़ा हुआ। तथा छः पदाधिकारियों ने इसके विरोध में त्याग पत्र देदिये।

विरोधी पक्ष ने इस रूलिंग पर विचार करने के लिये ३१ सदस्यों के हस्ताक्षरों से स्थायी समिति की मीटिंग बुलाने की मांग की परन्तु अभियोक्ता ने यह अधिवेशन बुलाना स्वीकार करने के अथवा अस्वीकार करने के स्थान पर अधिवेशन की मांग करने वालों को धमकी दी कि यदि विधान के अनुसार उन्होंने यह मांग की हुई मीटिंग अपने आप बुलाई तो उनके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जायगी और दोनों पक्षों में से किसी को भी महासम्मेलन से अदालती खर्च नहीं मिलेगा।

विरोधी पक्ष ने इन सब धमकियों की कोई परवाह नहीं की और मत संग्रह के विरुद्ध निषेधाज्ञा का दावा दायर कर दिया तथा २१-९-५२ को स्वयं उक्त मीटिंग बुला ली। इस पर अभियोक्ता ने अपनी जिम्मेदारी पर और अपने रुपये से ओंकार प्रसाद जी द्वारा २१-९-५२ की मीटिंग के विरुद्ध निषेधाज्ञा का दावा दायर करा दिया। इस सम्बन्ध में ओंकार प्रसाद के साथ जो उसका पत्र व्यवहार हुआ वह बड़ा रोचक है। एक पत्र में उसने लिखा कि वह इस मामले को सर्वोच्च न्यायालय तक लड़ेगा। एक पत्र में ओंकार प्रसाद को लिखा कि वह एक स्थानीय उपसमिति की होने वाली मीटिंग में जाकर उसे अवैधानिक कह कर रोक दें। अपने फैसले में इन सब घटनाओं का उल्लेख करने के बाद न्यायाधीश ने लिखा है कि अभियोक्ता का कथन है कि उक्त मुकदमे बाजी तथा अन्य सब कार्य उसने महासम्मेलन के हित के लिये किये। परन्तु यदि ऐसा ही था तो मैं नहीं समझता कि इस प्रकार की मुकदमेबाजी आरम्भ करने से पूर्व उसने स्थायी समिति की स्वीकृति क्यों न ली? मेरा विचार है कि प्रधान के नाते उसे बिना स्थायी समिति की स्वीकृति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अपनी जेब से रुपया खर्च करके भी संस्था को इस प्रकार मुकदमे बाजी में उलझाने का कोई अधिकार नहीं था।

इस बात से प्रकट होता है कि अभियोक्ता ने महा-सम्मेलन के हित में कुछ करने के बहाने इसे (अर्थात मुकदमे बाजी को) एक व्यक्तिगत कार्य के रूप में आरम्भ किया और वह इसे तब तक चलाना चाहता था जब तक कि विरोधियों को दबा न दे। इसी घटना की आगे चर्चा करते हुये माननीय जज ने लिखा कि इस घटना में अभि-योक्ता का आचरण ऐसा है जिस से इस अनुबन्ध में दिये वर्णन की पुष्टि होती है अर्थात यह कि अभियोक्ता के बौद्धिक बल से ही महासम्मेलन में ऐसे मतभेद उत्पन्न हुये जो उसके लिये घातक थे। फूट से किसी भी संस्था की उन्नति को धक्का पहुंच सकता है यह एक ऐसा सत्य है जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। अतः इस अनुबन्ध में लेखक ने जो कुछ लिखा है वह रिकार्ड पर आये तथ्यों के आधार पर अनुपयुक्त अथवा अनुचित नहीं।

अभियोक्ता यह स्पष्ट रूप से कह चुका है कि उसके रूलिंग वैधानिक रूप से गलत थे, पर नैतिक रूप से ठीक थे। यदि ऐसा होता तो उसके लिये उस रूलिंग पर स्थायी समिति में विचार होने से डरने की कोई बात नहीं थी, क्योंकि स्थायी समिति के सदस्य भी तो उस रूलिंग के नैतिक बल को देखते हुए वैधानिक आपत्ति की अवहेलना कर सकते थे। मान्य न्यायाधीश का कहना है—जहां तक मैं समझता हूँ उसे वास्तविक भय यह था कि स्थायी समिति उसके रूलिंग के विरुद्ध आपत्तियों को स्वीकार कर लेगी और इसलिये उसने अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण की सफलता के लिये इस विषय पर मुकदमेबाजी आरम्भ कर दी।

इसी सम्बन्ध में न्यायाधीश ने आगे यह लिखा कि इन्दौर अधिवेशन में जिसकी प्रधानता अभियोक्ता ने की नियमावली संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव पास करा कर अभियोक्ता ने विरोधियों की कमर तोड़ दी और विरोधी दल को समाप्त कर दिया। अभियोक्ता का हाथ छुपाये रखने के लिये विधान संशोधन का कार्य एक विशेष समिति के सुपुर्द कर दिया गया, परन्तु इस समिति ने उन्हीं चार संशोधनों की सिफारिश की जो विरोधियों के पैर उखाड़ने के लिये अभियोक्ता चाहता था। अतः अभियोक्ता के यह कहने के बावजूद कि इन संशोधनों में उसका हाथ नहीं था मैं यह मानने को तैयार नहीं।

अनुबन्ध ६ के पूर्वांश का निर्णय—जिसमें अभि-योक्ता के हथकण्डों का उल्लेख है। इस पर न्यायाधीश ने लिखा कि अभियोक्ता ने यह स्वीकार किया है कि १९५२ में उसके प्रधान चुने जाने से पूर्व पेप्सू से २५ नये सदस्य बनाये गये थे जिनमें से १४ पटियाला राज्य के आयुर्वेद विभाग से सम्बन्धित थे जिसका डायरेक्टर अभियोक्ता का पिता था।

१९५३ के चुनाव के सम्बन्ध में भी १६-१२-५३ की स्थायी समिति की मीटिंग के समय अभियोक्ता के विरोधी कवि० प्रतापसिंह तथा २५ अन्य सदस्यों ने यह आरोप लगाये थे कि अभियोक्ता ने अनुचित विधियों से चुनाव में सफलता प्राप्त की है।

इसके साथ ही इस बात पर भी ध्यान देना चाहिये कि अभियोक्ता के समय प्रधान के चुनाव सम्बन्धी विधान की धाराओं में कई बार परिवर्तन किये गये। इन सब बातों को दृष्टि सन्मुख रख कर बंगाल के ११ प्रतिनिधियों को बनाये जाने की घटना अनुपयुक्त नहीं कही जा सकती। क्योंकि अभियोक्ता की अपनी गवाही से स्पष्ट है यह प्रतिनिधि प्रधान के चुनाव में मत-दाताओं की संख्या में वृद्धि करने के अर्थ बनाये गये थे। तब फिर अभियुक्त ने यदि इसे हथकण्डे कह दिया तो मेरे विचार में यह अनुचित नहीं। यद्यपि यह शब्द कुछ अधिक कठोर है।

इस ६ वें अनुबन्ध के उत्तरांश का निर्णय मान्य न्यायाधीश ने अन्त में दिया है।

अनुबन्ध संख्या १६ का निर्णय—अभियोक्ता को आपत्ति यह है कि इस अनुबन्ध में उस पर यह अभियोग लगाया गया है कि उसने अपने दौरों का खर्च महासम्मेलन से लिया।

इस सम्बन्ध में अदालत ने लिखा है कि इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि १९५३ में बंगलौर अधिवेशन के बाद वह (अभियोक्ता) सम्मेलन से यात्रा व्यय लेता रहा है, उससे पूर्व उसने यह खर्च, सम्मेलन की प्रान्तीय शाखाओं से लिया। वास्तव में महासम्मेलन और उसकी अधीनस्थ प्रान्तीय शाखायें एक ही वस्तु हैं। अतः मेरी सम्मति में इस अनुबन्ध के प्रथम दो वाक्य वस्तुतः ठीक हैं।

श्री मिस्तरी (अभियुक्त के वकील) ने इस सम्बन्ध में [illegible] १९३८ की उस घोषणा को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और दिलाया है जब पहली बार प्रधान बनते समय उसने कहा था कि मैं भिन्न भिन्न प्रान्तों का दौरा करूंगा, परन्तु खर्च महासम्मेलन से न लेकर अपनी जेब से करूंगा। अभियोक्ता अपनी गवाही में कहता है कि उक्त घोषणा सम्मेलन पत्रिका में गलत छपी है। यह पूछा जाने पर कि उसने उस समय इस भूल का सुधार क्यों न कराया अभियोक्ता कहता है कि दौरों में व्यस्त रहने के कारण उसने यह पत्रिका नहीं पढ़ी। माननीय जज ने लिखा है कि मुझे भय है कि इस स्पष्टीकरण पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

अभियोक्ता ने इस पैरा के दूसरे भाग पर आपत्ति की है जिसमें कहा है कि वह महासम्मेलन से ऐसी ऐसी रकमें ले लेता था जो नहीं लेनी चाहिये थीं।

श्री मिस्तरी ने ऐसे कई उदाहरण गिनाये हैं जिनसे मैं भी यह अनुभव करता हूँ कि अभियोक्ता को यह रकमें महासम्मेलन से नहीं लेनी चाहिये थीं। यह, वह ५००) कीं रकम है जो उसने मीटिंग की मांग करने वाले सदस्यों के विरुद्ध निषेधाज्ञा के मुकदमों में खर्च करने के लिए अपनी जेब से पं० ओंकारप्रसाद को देहली भेजी थी। इस सम्बन्ध में यह स्मरण रखना चाहिये कि इस विषय पर श्री गुरुदत्त के साथ अपने पत्र-व्यवहार में अभियोक्ता ने यह स्पष्ट कर दिया था कि दोनों में से कोई पार्टी भी इस मुकदमे बाजी में महासम्मेलन का रुपया खर्च नहीं करेगी। परन्तु इन्दौर अधिवेशन में २०००) कानूनी व्यय के लिए स्वीकार होने पर अभियोक्ता ने उक्त ५००) सम्मेलन से ले लिया।

वैधानिक रूप से जो बजट पास होता है वह आगामी वर्ष के खर्च के लिये होता है। परन्तु इन्दौर अधिवेशन में जो दो हजार रुपये की रकम कानूनी व्यय के लिये स्वीकृत हुई अभियोक्ता और उसके साथियों ने १५३०≡)॥ का अपना पिछला कानूनी व्यय उसमें से वसूल कर लिया। इस मद की स्वीकृति के समय श्री आसुतोष मजूमदार ने जब यह प्रश्न किया कि यह २०००) की रकम भावी कानूनी व्यय के लिये है अथवा पहले हो चुके व्यय के लिये है तो प्रधान मन्त्री ने यह उत्तर दिया कि जो जैसे बिल आवेंगे चुका दिये जायेंगे।

यह एक वाक्छल था। वास्तव में इस प्रकार का कानूनी व्यय स्वीकृत न था, जब यह प्रस्ताव पास किया गया उससे प्रकट होता है कि अभियोक्ता और उसके साथियों का रुपया वापस लेने का यह तरीका अनियमित था। अभियोक्ता ने अपनी गवाही में कहा है कि कुछ और लोगों का रुपया भी उस समय खर्च हुआ था उन सबों ने वापस ले लिया, अतः अभियोक्ता ने भी ले लिया। यदि इस बात को ठीक भी मान लिया जाय तो भी मैं नहीं समझता कि क्योंकि अभियोक्ता ने स्वयं यह रुलिंग दिया था, अतः नैतिकता के नाते यह ५००) अस्वीकार करने में उसे क्या बाधा थी। अभियोक्ता के पास इस बात का कोई स्पष्टीकरण नहीं, इस लिये यह इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि अभियोक्ता किस प्रकार महासम्मेलन से ऐसी ऐसी रकमें ले लेता था जो उसे नहीं लेनी चाहिये थीं।

माननीय न्यायाधीश ने १९५३ में पं० शिवशर्मा की गोहाटी यात्रा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि चुनाव की देख भाल के लिये कुछ घण्टों के लिये असाम जाकर ठहरना। ऐसा चुनाव जो उसके बिना भी हो सकता था और जिसमें उसकी (पं० शिवशर्मा की) उपस्थिति आवश्यक नहीं थी। केवल इस थोड़े काल के लिये गोहाटी जाना यह महासम्मेलन के धन को नष्ट करना मात्र है।

अतः इस पैरा के दूसरे भाग में लेखक का कथन वास्तविक है महासम्मेलन का रुपया व्यर्थ नष्ट करने का यह उदाहरण स्पष्ट रूप से सिद्ध है।

इसलिये मेरा मत है कि यह आरोप निराधार एवं अन्याय युक्त नहीं है।

अनुबन्ध संख्या २७ का निर्णय

इस अनुबन्ध का फैसला लिखते हुए विद्वान न्यायाधीश ने पं० जीवराम कालीदास और पार्थनारायण पण्डित के प्रधान चुने जाने की घटनाओं की चर्चा की और लिखा है कि पार्थनारायण का चुनाव स्थाई समिति ने विधान के धाराओं की धज्जियाँ उड़ाते हुए कर लिया। अभियोक्ता ने उसका नाम प्रस्तावित किया और अपने भाषण में कहा कि हम अभी यहीं प्रधान का चुनाव करेंगे, जिससे प्रकट होता है कि वह उसे चुनवाने के लिये तैयार होकर आया था। इसलिये यह इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि अभियोक्ता की मर्जी का आदमी प्रधान की कुर्सी पर बिठाने के लिये किस प्रकार विधान की धज्जियाँ उड़ाई गईं। इससे यह भी प्रकट होता है कि अनुबन्ध ३ में जब अभियोक्ता को (साम, दाम, दण्ड, भेद के अतिरिक्त) अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलाओं का ज्ञाता भी लिखा गया तो लेखक का संकेत इन घटनाओं की ओर था और मेरी सम्मति में यह घटनायें उस व्यङ्ग के संकेत को न्याय युक्त ठहराती हैं।

"कृत्या" शब्द की चर्चा करते हुए विद्वान् न्यायाधीश ने लिखा कि इसका अभिप्राय यह है कि अभियोक्ता ने महासम्मेलन में विग्रह रूपी दैत्य को जन्म दिया, जो सम्मेलन के लिये घातक सिद्ध हो रहा है। अभियुक्त ने इसे न्याय संगत ठहराने का प्रयत्न किया है और मेरा विचार है कि उसमें उसे सफलता मिली है।

विरोध और मतभेदों से निश्चित ही संस्था की हानि होती है। अभियोक्ता का कथन है कि महासम्मेलन के साथ उसके सम्बन्ध काल में महासम्मेलन की आर्थिक स्थिति सुधर गई थी। किन्तु महासम्मेलन का कोष जिस धन से बढ़ा है वह विद्यापीठ का धन है, महासम्मेलन का नहीं। साथ ही यह बात भी है कि संस्था का जीवन केवल उसकी आर्थिक स्थिति पर ही निर्भर नहीं होता, अपितु संस्था के सदस्यों में ऐक्य, संगठन की भावना तथा संस्था के लक्ष्यों की पूर्ति के लिये कार्यकर्ताओं के दृढ़ संकल्प के आधार पर ही वह फलती फूलती है। परन्तु इतने लम्बे काल में जबकि अभियोक्ता का सम्पर्क महासम्मेलन से रहा इन सब बातों का उसमें अभाव रहा।

इस प्रकार सब पर विचार करते हुए मैं समझता हूँ कि अनुबन्ध सं० ६ और २७ अपवादों से विधिरक्षित हैं।

अनुबन्ध संख्या १ का निर्णय—यह अनुबन्ध सारे निबन्ध का निचोड़ है और इसमें जो कठोर पौराणिक उपमा दी गई है इसके अतिरिक्त इसका अभिप्राय यह है कि अभियोक्ता का नेतृत्व और प्रभाव महासम्मेलन के लिये बहुत हानिकारक रहा है और इसके लिये घातक सिद्ध हुआ है। यह अर्थ दर्शाने के लिये 'राहु' और 'कलंक' शब्द अधिक सख्त हैं। परन्तु केवल एक सख्त उपमा का प्रयोग इस अनुबन्ध में होने से मैं यह परिणाम नहीं निकल सकता कि यह अनुबन्ध द्वेष-भावना से लिखा गया अथवा इसे लिखते समय उचित सावधानी नहीं बर्ती गई, यदि वह दोषारोप पर्याप्त सत्य हों अथवा पर्याप्त सत्यों से युक्ति पूर्वक समझ में आने वाले तथ्यों पर आधारित हों।

सख्त भाषा का प्रयोग करने के आरोप से तो स्वयम् अभियोक्ता भी मुक्त नहीं; क्योंकि राजकुमारी अमृतकोर की नीति के सम्बन्ध में बोलते हुए उसने अपने एक भाषण में अमृत कौरीयमारकगण (Amrit kunverian Frankastine) शब्द से पुकारा था। यह उपमा भी अभियुक्त द्वारा दी गई उपमा से अधिक कठोर नहीं तो तद्वत अवश्य है। अन्तर केवल इतना है कि अभियुक्त ने पौराणिक उपमा का प्रयोग किया, जबकि अभियोक्ता ने अपेक्षाकृत आधुनिक उपमा का चयन किया। इस प्रकार एक अन्य स्थान पर उसने राजकुमारी अमृतकौर के लिये गाली देने वाली जैसी भाषा प्रयुक्त की। अनुबन्ध संख्या ६ के फ़ैसले से प्रकट होगा कि अभियुक्त द्वारा अभियोक्ता के नेतृत्व और प्रभाव के सम्बन्ध में अभियुक्त की नुकताचीनी न तो अन्याय है न अनुचित और वह पर्याप्त सत्यपूर्ण तथ्यों पर आधारित है। वह मतभेद और फूट जिसका कारण अभियोक्ता था महासम्मेलन पर एक कलंक है अन्त में जाकर इसकी जड़ों को हिला देगा और इसे बिल्कुल समाप्त कर देगा। यह अभिप्राय है जो इस अनुबन्ध में लेखक ने व्यक्त किया है अतः यह अनुबन्ध भी यद्यपि सख्त भाषा और सख्त उपमा लिये हुए हैं परन्तु मेरी सम्मति में यह भी विधिरक्षित है।

अभियोक्ता की ओर से दी गई इस दलील का कि 'यह लेख द्वेष भावना से लिखा गया है' इसके सम्बन्ध में अदालत ने लिखा कि अभियुक्त स्वयं एक वैद्य है और एक आयुर्वेदिक पत्र का प्रकाशन कर रहा है, अतः ऐसे पत्र में आयुर्वेद तथा आयुर्वेद महासम्मेलन एवं आयुर्वेद महासम्मेलन से सम्बन्धित अभियोक्ता के कार्यों पर इसमें लेख लिखना जनहित एवं महासम्मेलन के हित के लिये है। यदि उन लेखों में उसने महासम्मेलन से सम्बन्धित अभियोक्ता के कार्यों पर नुकताचीनी की है तो इससे किसी द्वेष भावना का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। माननीय न्यायाधीश ने इस सम्बन्ध में आगे लिखा कि अनुबन्ध सं० ९ के अतिरिक्त शेष अनुबन्धों में अभियुक्त ने अभियोक्ता के विरुद्ध टीका टिप्पणी की है, इस टीका टिप्पणी में कहीं भी औचित्य और युक्ति युक्तता की सीमा का उल्लंघन नहीं किया और सदा उसकी टीका टिप्पणी सत्य घटनाओं से अथवा इन सत्य घटनाओं के आधार पर समझ में आने वाले तथ्यों पर आधारित रही हैं।

विद्वान न्यायाधीश ने अपने ६१ पृष्ठ के फ़ैसले के सार रूप से अन्त में यह लिखा है कि 'इसलिये मेरी सम्मति में यह सारा लेख उचित सावधानी से लिखा गया और जनहित के लिये लिखा गया है और जिन अंशों पर

[शेष टाइटल के तीसरे पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदविज्ञान अक्टूबर १९५७ के अंक का क्रोड़ पत्र

इस सूचीपत्र से पूर्व के सूचीपत्र रद्द किए गये। १-१०-५७

जगत् प्रसिद्ध व अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन द्वारा सम्मानित तथा म्युनिसिपल कमेटियों, डिस्ट्रिक्ट बोर्डों, धर्मार्थ औषधालयों के लिये मान्य

व

पञ्जाब सरकार द्वारा स्वीकृत

पञ्जाब आयुर्वेदिक फार्मेसी

का

षाण्मासिक-सूचीपत्र

कूपीपकरस-निर्माण-विज्ञान, आसव-विज्ञान, क्षार-निर्माण-विज्ञान, मन्थरज्वर-विज्ञान, त्रिदोष-मीमांसा, ज्वर-मीमांसा, सृष्टि-रचना शास्त्र, व्याधि-मूल-विज्ञान, रोग-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, औषध-परीक्षा विज्ञान, भस्म-विज्ञान आदि ग्रन्थों के लेखक और मासिक "आयुर्वेद-विज्ञान" के

सम्पादक

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

अध्यक्ष—पंजाब आयुर्वैदिक फार्मेसी,

६०-६१, अकाली मार्केट, अमृतसर

दूसरा पता-

पंजाब आयुर्वैदिक फार्मेसी, खारी बावली, देहली

१००वीं आवृत्ति, } संस्थापित १९१९ [१ अक्तूबर १९५७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एजेन्सी के नियम

(१) आयुर्वेदिक रस, भस्म, आसव, अरिष्ट, घृत, तैल, पाक, अवलेह, चूर्ण, गुटिका आदि औषधियां ही एजेन्सी में दी जायेंगी। (वनस्पतियां, खनिज तथा प्राणिज द्रव्य, क्षार और शुद्ध वस्तुयें इसमें शामिल नहीं)

(२) कोई भी विक्रेता या वैद्य जो एक बार १००) रु० की उक्त बनी औषधियों का आर्डर देगा वह एजेयट स्वीकृत होगा।

(३) कम्पनी की आविष्कृत औषधियां जो व्यक्ति १००) रु० की एक बार खरीदेगा वह भी एजेयट स्वीकृत होगा।

(४) जो व्यक्ति प्रस्तुत और आविष्कृत दोनोंका मिश्रित आर्डर १००) रु० का देगा वह भी एजेयट स्वीकृत होगा।

(५) मंगाई हुई औषध ६ मास तक एजेयट से न बिक सके तो ऐसी औषध—यदि ठीक पैकिंग में बन्द हो—एजेयट अपने खर्च पर उसे वापस कर उसके स्थान पर अन्य औषध मंगा सकता है।

(६) सूची पत्र में अङ्कित जिस वजन के मूल्यका पैकट नियत होगा उतनेही वजन के पैकट उस मूल्य पर भेजे जाएंगे। छोटे वजनके पैकट—जिनकामूल्य अधिक है यथा ढाई ढाई तोला, पांच पांच तोला के पैकट, २० तो० के पैकट के भाव पर नहीं भेजे जाएंगे। १ तो० का मूल्य ५ तो० का $\frac{१}{४}$ होगा।

(७) औषधियां वी० पी० पार्सल से या बैंक द्वारा भेजी जायंगी। उधार या जामन पर नहीं भेजी जाएंगी।

(८) १०००) रु० नकद जमानत जमा कराने पर माल उधार पर भेजा जा सकता है।

एजेंसी कमीशन दर और सुविधा

(१०) धारा नं० २ के अनुसार बनने वाले एजेयटों को कम्पनी की प्रस्तुत आयुर्वेदिक औषध पर १२$\frac{१}{२}$ प्रतिशत।

(११) धारा नं० ३ के अनुसार बनने वाले एजेयटों को कम्पनी की आविष्कृत औषध पर २५ प्रतिशत।

(१२) धारा नं० ४ के अनुसार बनने वाले एजेयटों को कम्पनी की मिश्रित औषध पर १२$\frac{१}{२}$ प्रतिशत।

(१३) जो व्यक्ति सौ रुपये का बना माल जब २ मंगावेगा पैकिङ्ग खर्च और गुडस ट्रेन का किराया फ्री होगा अर्थात F. O. R. जहां ग्राहक मंगावेगा। यदि ग्राहक पार्सल ट्रेन से माल मंगावेगा तो आधा किराया उसे देना होगा।

नोट—नं० १३ का यह नियम मद्रास तथा आन्ध्र राज्यों के ग्राहकों, एजयटों पर लागू न होगा।

(१४) ५०) रु० अथवा अधिक के माल पर पैकिङ्ग खर्च माफ होगा। इससे कम माल मंगाने वालेको यह सुविधा नहीं दी जाएगी।

(१५) एजेयट बन जाने पर बने माल के थोड़े से थोड़े आर्डर पर भी उक्त हिसाबसे बराबर कमीशन मिलता रहेगा।

(१६) विज्ञापन के लिये हमारी फार्मेसी इस समय सिवाय सूचीपत्र के और साधन नहीं जुटाती। प्रचार का प्रबन्ध स्वयम् एजेयट अपने खर्चे से कर सकता है।

विशेष बातें नोट करें

(१७) प्रत्येक आर्डर के साथ पेशगी आनी आवश्यक है। अथवा एकबार १०) रुपये स्थायी ग्राहक के रूप में जमा करा छोड़ें। उन्हें ग्राहक नम्बर मिल जायगा, ऐसे ग्राहक को फिर पेशगी भेजने की जरूरत न होगी।

(१८) यहां से पैकिंग अच्छी तरह देखकर किया जाता है। पोस्ट या रेल कर्मचारियों की असावधानी से माल की जो हानि हो जाएगी उसकी जिम्मेवारी फार्मेसी की नहीं होगी। हां प्रामाणिक व्यक्ति के सामने बन्द माल का पैकिंग खोलने पर कोई माल कम होगा तो उसकी पूर्ति की जा सकती है।

मैनेजर

ग्रन्थ संकेत

र० प्र० सु०	रस प्रकाशसुधाकर	फा० वि०	फार्मेसी विधि	रसे० सं०	रसेन्द्रसार संग्रह	र० यो० सा०	रसयोग-सागर
यू० वि०	यूनानी विधि	बृ० यो०	बृहदयोग-तरंगिणी	भै० र०	भैषज्य रत्नावली	रसा० सं०	रसायन संग्रह
आ० प्र०	आयुर्वेद प्रकाश	र० र० स०	रसरत्न-समुच्चय	वै० सा० सं०	वैद्यकसार संग्रह	च०	चरक
भा० प्र०	भावप्रकाश	शा० ध०	शार्ङ्गधर	र० चं०	रसचण्डांशु	वै० जी०	वैद्यजीवन
र० रा० सु०	रसराज सुन्दर	यो० र०	योगरत्नाकर	च० द०	चक्रदत्त	र० हृ०	रसहृदय
वै० मृ०	वैद्यामृत	यो० त०	योगतरंगिणी	यो० चि०	योगचिन्तामणि	भा० र०	भारतीय रसायनशास्त्र
र० का०	रसकामधेनु	सि० भै० म०	सिद्धभैषज्यमणिमाला	नि० र०	निघण्टु-रत्नाकर		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्जाब आयुर्वैदिक फार्मेसी अमृतसर

का

सूचीपत्र

भस्में

नाम	२०तो.	१०तो.	५तो.	२½तो.	१तो
अक़ीक (यू० वि०)	१४)	७॥)	४)	२)	१)
अभ्रक वज्र (भा.प्र)२१पु.	२०)	१०॥)	६)		
अभ्रक वज्र भ. (आ.प्र.)६०,,				४॥)	२)
अभ्रक श्वेत (र.रा.सु.)	३)	१॥।)	१)		
कान्तलोह भस्म (र.रा.सु.)	१०)	५॥)	३)		
कांस्य भस्म (आ.प्र.)	१२)	६॥।)	३॥।)		
कपर्दिका भस्म (आ.प्र.)	३)	१॥।)	१)		
कसीस भस्म (रसे. सं)	३)	१॥।)	१)		
कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म (वै.मृ.)	१४)	७॥)	४)		
केकड़ा भस्म (यू.वि) रक्तष्ठीवने	१६)	८)	५)		
गोमेद भस्म (र.का.) मस्तिष्करोगे				२४)	१०)
जहर-मोहरा भस्म (यू.वि.)	३)	१॥।)	१)		
ताम्र सोमनाथी भस्म (र. रा. सु.)	२०)	१०॥)	६)		
ताम्रकूपीपक्व भस्म (र. रा. सु.)	२०)	१०॥)	६)		
तीक्ष्णलोह भस्म (फा० वि०) शक्तिवर्द्धक				५॥)	२॥)
सुरमली भस्म (फा० वि०) ,,					४८)
तुत्थ भस्म (र०रा०सु०)	७)	३॥।)	२)		
त्रिवंग भस्म (आ०प्र०)२१ पुटी	२०)	११)	६)		
दानायेफिरंगभस्म (यू०वि०)					६)
नागभस्म (आ०प्र०)५० पुटी				५॥)	२॥)
नागभस्म पीत (वृ० यो०)	८)	४॥)	२॥)		
नागभस्म श्याम (र०का०)	१०)	५॥)	३)		
नीलमभस्म (र०का०)उन्मादे					१२)
नीलांजन भस्म(सुरमा) (भा०र०)	८)	४॥)	२॥)		
पन्नाभस्म (यू०वि०) मस्तिष्करोगे					१५)
पुखराज भस्म (र०का०) हृद्रोगे					२०)
प्रवालभस्म अग्निपुटी (आ० प्र०)	१४)	७॥)	४)		
प्रवालभस्म चन्द्रपुटी (यू०वि०)	१०)	५॥)	३)		
पीतलभस्म (आ. प्र.)	४)	२॥)	१॥)		
फिरोजाभस्म (यू०वि०) हृद्रोग					८)
फौलादभस्म अपूर्व (फा०वि०) शक्तिवर्धने					१२)

भस्में

नाम	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो
वंगभस्म हरितालेन (आ. प्र.)	१५)	८)	५)		
वंग भस्म श्वेत (र. रा. सु.)	१४)	७॥)	४)		
बेरपत्थर भस्म (यू० वि०)	१०)	५॥)	३)		
मयूर पुच्छभस्म (र० रा० सु०)छर्दिरोगे				४॥)	२)
मण्डूरभस्म (र० रा० सु०)	४)	२॥)	१॥)		
माणिक्यभस्म (यू० वि०) हृद्रोगे					६)
मृगशृङ्ग भस्म (शा. ध.)	४)	२॥)	१।)		
मुक्ता भस्म (र०का०)शक्तिवर्द्धने ९०) रु० तोला ८) माशा					
मुक्ता भस्म चन्द्रपुटी (यू०वि०) ६०) ,, ,, ८) माशा					
यशद भस्म (यो० र०)	८)	४॥)	२॥)		
रजतभस्म (चांदीभस्म) हरितालेन				१४)	६)
रजतभस्म (चांदी भ०) पारदयोगेन				१४)	६)
राजावर्तभस्म (यू०वि०) उन्मादरोगे					५)
रौप्यमाक्षिकभस्म (र० का०)	७)	३॥।)	२)		
लहसुनिया भस्म (फा. वि.)					५)
लोहभस्म हिंगुलयोगेन(आ०प्र०)	१४)	७॥)	४)		
लोहभस्म स्वयमग्नि(र. रा. सु.)	१२)	६॥)	३॥)		
लोहभस्म वनस्पति (फा. वि.)	८)	४॥)	२॥)		
वैक्रांतभस्म (रसा. सं.) मस्तिष्करोगे				४॥)	२)
शंख नाभि भस्म (र. का.)	३)	१॥।)	१)		
सर्पास्थि भस्म (फा. वि.) कण्ठमालाव्रणे				४॥)	२)
संगयशव भस्म (यू. वि.)	१६॥)	८)	५)		
संखियाभस्म (फा. वि.) शक्तिवर्द्धने				१२)	५)
संगजराहत भस्म (आ. प्र.)	३)	१॥।)	१)		
स्वर्णभस्म (शा. ध.) रसायने					१५) माशा
स्वर्णमाक्षिकभस्म (र. रा. सु.)	७)	३॥।)	२)		
सीपभस्म(मोती) (र. रा. सु.)	७)	३॥।)	२)		
सीपभस्म (र. रा. सु.)	३)	१॥।)	१)		
सुरमा श्वेत भस्म (फा. वि.)	२)	१।)	॥)		
हरताल गोदन्ती भस्म (आ. प्र.)	१॥)	॥।=)	॥)		
हरताल पत्राख्य भस्म					५)
हिंगुलभस्म (फा. वि.) क्लीवत्वरोगे				७)	३)
हीरा(वज्र) भस्म (आ. प्र.) सर्वरोगे ३०) प्रति रत्ती					

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस, रसायन,गुटिका, गुग्गुल आदि

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो
अमीररस(सि भैं.म.)उपदंशरोगे				१२)	५)
अगस्तिसूतराज(वृ. यो.) ग्रहण्याधिकारे				४॥)	२)
अग्निकुमार वृ. (रसे. सं.) अजीर्णे	१४)	७॥)	४)		
अग्निसून (रसा. सं.) ग्रहण्याम्	१०)	५॥)	३)		
अग्निमुख (नि. र.) अग्निमांद्ये	८)	४॥)	२॥)		
अग्निरस (र. र. स.) कासे, उरःक्षते	८)	४॥)	२॥)		
अग्नितुण्डीरस (भै. र.) उदर रोगे	१२)	६॥)	३॥)		
अजीर्णकण्टक (भै. र.) अजीर्णे	१४)	७॥)	४)		
अजीर्णारि (र. रा. सु) अजीर्णे	१०)	५॥)	३)		
अतिविषादिगुटिका(र. चं) वालरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
अपचिविनाशी (फा.वि.)अपचिरोगे	१०)	५॥)	३)		
अश्वकंचुकी (वै.सा.सं.) सर्वरोगे	१८)	९॥)	५)		
अर्शोघ्नी वटी (फा. वि.) रक्तार्शे	७)	३॥।)	२)		
अश्विनीकुमार (अनु. तं.) सर्वरोगे	१८)	९॥)	५)		
आनन्दभैरव (रसेन्द्र) ज्वरातिसारे	१२)	६॥)	३॥)		
आमवातारिरस (भै. र.) आमवाते	१४)	७॥)	४)		
आमवातेश्वर (वृ० भै. र.) "	१४)	७॥)	४)		
आरोग्यवर्द्धनी(र. र.स.)कुष्ठाधिकारे	१४)	७॥)	४)		
इच्छाभेदी (रसे. सं.) उदररोगे	१२)	६॥)	३॥)		
उपदंशकुठार (र.चं) उपदंशरोगे	१४)	७॥)	४)		
एलादिवटी (च.द) कासाधिकारे	४॥)	२॥।)	१॥)		
एकांगवीर (र.रा.सु) वातरोगे	१५)	८)	४॥)		
कनकसुन्दर (रसे.सं.) अतिसारे	१२)	६॥)	३॥)		
कफकेतु (रसे.सं) कफाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
कफचिन्तामणि (रसे.सं)कफाधिकारे	१५)	८)	४॥)		
कफकुठार (र.प्र.सु) श्लेष्मरोगे	१४)	७॥)	४)		
कर्पूरादिरस (र.रा.सु) प्रमेहाधि.	१४)	७॥)	४)		
क्रव्यादिरस वृ. (र.रा.सु)उदररोगे	२५)	१४)	७॥)		
कस्तूरी भैरव वृ.(भै.र.) ज्वराधिकारे					१८)
कस्तूरीभूषण (भै. र.) सर्वरोगे				१६)	७)
कांचनारगुग्गुल(शा.ध) कण्ठमाला	३॥)	२)	१।)		
कांकायनी गुटिका(यो.र.)अर्शरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
कामदुघामोतीयुक्त(रसा.सं.)अम्लपित्ते				१८)	८)

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो.
कामदुघा(रसा.सं.)अम्लपित्ते	१९)	१०)	५॥)		
कासहर (फा.वि.) कासरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
कालकूट रस (वै.चि.) सन्निपाते				७)	३)
कालारिरस (यो.र.) वातव्याधौ	१४)	७॥)	४)		
किशोर गुग्गुल (भै.र) वातरक्ते	३॥)	२)	१।)		
कुमारकल्याण (भै. र.) वालरोगे					४८)
केशरादिवटी(फा.वि.)जीर्णप्रतिश्याये				७)	३)
कृष्णमाणिक्यरस (र.रा.सुं) कुष्ठाधिकारे				७)	३)
कृमिधूलिजलप्लव (रसे.सं.) कृमिरोगे.	१४)	७॥)	४)		
खदिरादिवटी (भै.र.) मुखरोगे	८)	४॥)	२॥)		
गगनादिलोह(रसे.सं)सोमरोगे	१५)	८)	४॥)		
गर्भपालरस (र.चं)गर्भिणीरोग	१२)	६॥)	३॥)		
गर्भविनोदरस (रसे.सं) गर्भिणीरोगे	१०)	५॥)	३)		
गर्भचिन्तामणि(भै.र.)सूतिकारोगे	२०)	१०॥)	६)		
गन्धकवटी (र.रा.सु.) जठररोगे	८)	४॥)	२॥)		
गन्धकरसायन (रसे.सं)रक्तविकारे	१९)	१०)	५॥)		
गन्धर्व रस (र.र.स)कम्पवाते	१५)	८)	४॥)		
गुल्मकालानल(भै.र.) गुल्मे	१२)	६॥)	३॥)		
गुल्मनशनरस (र.र.स.) गुल्मे	१०)	५॥)	३)		
गुल्मारिरस (र.का.)गुल्माधिकारे	१८)	९॥)	५)		
ग्रहणीकपाट (र.रा.सु) ग्रहण्याम्	१५)	८)	४॥)		
गोक्षुरादिगुग्गुल (यो.र.) प्रमेह	४॥)	२॥।)	१॥)		
चतुर्मुख रस (रसे.सं) सन्निपाते	२०)	१०॥)	६)		
चन्दनादिलोह (भै.र.) जीर्णज्वरे	१८)	९॥)	५)		
चन्द्रप्रभावटी (शा.ध)प्रमेहाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
चन्द्रकला (भै.र.) प्रमेहाधिकारे	१५)	८)	४॥)		
चन्द्रामृत लोह (भै.र.) जीर्णकासे	१०)	५॥)	३)		
चिन्तामणि चतुर्मुख(भै.र.)सर्वरोगे				११)	५)
जयमंगलरस (भै.र.) ज्वराधिकारे					१८)
जातिफलादिग्रहणीकपाट(रसे.सं) ग्रहण्याम्				९)	४)
जीर्णज्वरारिरस (फा.वि.)जीर्णज्वरे	२५)	१४)	७॥)		
जौहररसकपूर(फा.वि.)उपदंशरोगे				९)	४)
जौहर त्रिविष(फा.वि.)उपदंशरोगे				९)	४)
जौहर दारचिकना (फा.वि.)उपदंशरोगे				७)	३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो.
जौहरसंखिया (फा.वि.) शक्तिवर्द्धने				७)	३)
जौहर संखिया पीलेका, वातरोगे				४॥)	२)
जौहर हरतालपत्राख्य, कुष्ठरोगे				९)	४)
जौहर नौसादर (स्वर्णवगं का) उदरविकारे				१=)	॥)
ज्वरघ्नी वटी (र.र.स.) ज्वरे	८)	४॥)	२॥)		
ज्वरमुरारि (भै.र.) सन्निपाते	१३)	७)	३।॥)		
ज्वरार्यभ्रम् (भै.र.) जीर्णज्वरे	८)	४॥)	२॥)		
ज्वरांकुशचोक्युक्त (शा.ध.) विषमज्वरे	१०)	५॥)	३)		
ताम्र पर्पटी (रसे.सं.) ग्रहण्याम्	१९)	१०)	५॥)		
ताप्यादिलोह (रसे.सं.) रसायने				९)	४)
तालसिन्दूर (रसा. सं.) रक्तविकारे				९)	४)
त्वक्रोगान्तकवटी (फा.वि.) चर्मरोगे	७)	३।॥)	२)		
त्रयोदशांगगुग्गुल (भै.र.) वातव्याधौ	७)	३।॥)	२)		
त्रिभुवनकीर्ति (यो.र.) ज्वरे	१३)	७)	३।॥)		
त्रिपुर भैरव (र.रा.सु.) नवज्वरे	८)	४॥)	२॥)		
त्रिवंगवटी (फा.वि.) स्वप्नदोषे				९)	४)
दावानलवटी (फा.वि.) सन्निपाते	२५)	१४)	७)		
दुर्जरजलजेता (र.च.) अजीर्णाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
दुग्धवटी नं.१ (भै.र.) अहिफेनयुक्त				१२)	५)
दुग्धवटी नं.२ (भै.र.) ग्रहण्याम्	१०)	५॥)	३)		
धात्रीलोह (रसे.सं.) कामलायाम्	१३)	७)	३।॥)		
नवायसलोह (र.रा.सुं.) पाण्डुरोगे	१५)	८)	४॥)		
नारायणज्वरांकुश (यो.र.) ज्वरे	१०)	५॥)	३)		
नाराचरस (रसे.स.) उदररोगे	१३)	७)	३।॥)		
नागरस कस्तूरीयुक्त (र.च.) श्वासे				१२)	५)
नित्यानन्द (भै.र.) श्लीपदे	१५)	८)	४॥)		
नित्योदित रस (रसे.सं.) अर्शरोगे	१०)	५॥)	३)		
नृपतिवल्लभरस (र.रा.सु.) ग्रहण्याम्	१५)	८)	४॥)		
पंचामृत पर्पटी (रसे.सं.) ग्रहण्याम्	१९)	१०)	५॥)		
पंचवक्र रस (रसे.सं.) सन्निपाते	१०)	५॥)	३)		
पारे की गोली (वाजीकर) एक गोली का मूल्य				३)	
प्रतापलंकेश्वर (वृ.यो.) सूतिकारोगे	१५)	८)	४॥)		
प्रदरान्तकलोह (फा.वि.) प्रदरानुभूत	२०)	१०॥)	६)		
प्रदरारिवटी (फा.वि.) श्वेतप्रदरे	१३)	७)	३।॥)		
प्रदररिपु (रसे.सं.) प्रदरे	१३)	७)	३।॥)		
प्राणदागुटिका (भै.र.) अर्शरोगे	४॥)	२।॥)	१॥)		
प्रमदानन्दरस (रसे.सं.) रसायने	१९)	१०)	५॥)		
प्रवालपंचामृत (यो.र.) गुल्माधिकारे				२७॥)	१२)
पुनर्णवागुग्गुल (भै.र.) शोथाधिकारे	३॥)	२)	१।)		
पुनर्णवादिमण्डूर (भै.र.) पाण्डुरोगे	८)	४॥)	२॥)		
पुष्पधन्वारस (भै.र.) रसायने				७)	३)
पुटपकविषमज्वरान्तकलोह (भै.र.) ज्वराधिकारे				१८)	८)
पूर्णचन्द्ररस वृ. (रसे.सं.) रसायनाधिकारे				२२॥)	१०)
वालरस (र.रा.सु.) वालरोगे	१०)	५॥)	३)		
वालार्क रस (रसा.सं.) वालरोगे				७)	३)
वालशोषान्तकवटी (फा.वि.) वालशोषे	१०)	५॥)	३)		
वोल पर्पटी (रसा.सं.) रक्तपित्ते	१९)	१०)	५॥)		
वोलवद्धरस (वृ.यो.त.) अर्शाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
मण्डूरवटी (भै.र.) पाण्डुरोगे	८)	४॥)	२॥)		
मल्लसिन्दूर (रसा.सा.) सर्वरोगे				९)	४)
मन्मथाभ्ररस (रसे.सं.) वाजीकरणे				९)	४)
मरिचादि वटी (शा.ध.) कासरोगे	३)	१।॥)	१)		
मृत्युञ्जय रस (भै.र.) सन्निपाते	१०)	५॥)	३)		
मृत्युञ्जयलोह (रसे.सं.) उदराधिकारे	१४)	७॥)	४)		
मृतप्राणदायी रस (नि.र.) ज्वरे	१६॥)	९)	५)		
मृगाङ्क स्वर्णसंयुक्त (शा.ध.) क्षये					४८)
ज्वरांकुश वृ. (भै.र.) ज्वराधिकारे	१०)	५॥)	३)		
योगराज गुग्गुल महान् १। लक्ष चोट का—समस्त धातुयुक्त (शा.ध.) वातव्याधौ	१६॥)	९)	५)		
योगराज गुग्गुल साधारण (शा.ध.)	३॥)	२)	१।)		
यकृदरिलोह वृ. (भै.र.) यकृताधिकारे	१०)	५॥)	३)		
रजःप्रवर्तिनी (भै.र.) ऋतुकष्टे	१०)	५॥)	३)		
रसचन्द्रिकावटी (रसे.सं.) शिरोरोगे	१३)	७)	३।॥)		
रक्तपित्तकुलकण्डन (र.रा.सु.) रक्तपित्ते	१६)	९)	५)		
रसमाणिक्य (तालवाला) रक्तविकारे	१४)	७॥)	४)		
रसमाणिक्य (र.रा.सु.) कुष्ठाधिकारे				४॥)	२)
रससिन्दूर द्विगुण (र.का.)	१८)	९॥)	५)		
रससिन्दूर चतुर्गुणगन्धकजीर्ण				४॥)	२)
रससिन्दूर षड्गुणगन्धकजीर्ण				९)	४)
रसपर्पटीहिंगुलोत्थ (र.रा.सु.) ग्रहण्याम्	१८)	९॥)	५)		
रसपर्पटी विशुद्धरसेन				७)	३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२½तो.	१तो.
रामबाणरस (भै.र.) अजीर्णाधिकारे	७)	३॥।)	२)		
राजचण्डेश्वर (र.चं.) सर्वरोगे	१५)	८)	४॥)		
राजमृगाङ्क (शा.ध.) क्षयरोगे					३६)
लवंगादि वटी (वै.जी.) कासरोगे	७)	३॥।)	२)		
लक्ष्मीनारायण वृ. (रस.योग.द्वितीय) रत्नोपरत्नयुक्त					८४)
लक्ष्मीनारायणरस (र.चं.) वातरोगे	२०)	१०॥)	६)		
लक्ष्मीविलासवृ. (र.रा.सु.) शिरोरोगे	१६॥)	९)	५)		
लशुनादि वटी (शा.ध.) वातरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
लीलावतीवटी (र.रा.सु.) उदररोगे	१२)	६॥)	३॥)		
लोकनाथरस वृहत् (शा.ध.) क्षये	१२)	६॥)	३॥)		
लोकनाथ रस लघु (शा.ध.) क्षये	७)	३॥।)	२)		
लोहरसायन (वं.से.) रसायने	२५)	१४)	७॥)		
लोह पर्पटी (रसे.सं.) सर्वरोगे	१९)	१०)	५॥)		
वातगजांकुश (रसे.सं.) वातरोगे	२०)	१०॥)	६)		
वातविध्वन्स (वृ.यो.तं.) वातव्याधौ	२०)	१०॥)	६)		
वसन्तकुसुमाकर (शा.ध.) सर्वरोगे					२४)
विश्वतापहरणरस (र.रा.सुं.) सन्नि.	१९)	१०)	५॥)		
विष्मुष्टिवटी (फा.वि.) आमवाते	१०)	५॥)	३)		
विजयपर्पटी (भै.र.) ग्रहण्यधिकारे					१५)
विषमज्वरान्तकलोह (भै.र.) ज्वराधि.	२०)	१०॥)	६)		
वंगेश्वर वृहत (भै.र.) प्रमेहाधिकारे					१८)
व्योषादि वटी (यो.चि.) कासे	३)	१॥।)	१)		
श्वासकुठार वृ. (र.रा.सु.) श्वासे	१३)	७)	३॥।)		
शम्बूकादिवटी (भै.र.) शूलाधिकारे	८)	४॥)	२॥)		
श्वासारिलोह (भै.र.) श्वासे	८)	४॥)	२॥)		
श्वासान्तकरस (फा. वि.) श्वासे	१४)	७॥)	४)		
शिरःशूल वज्रारि (भै.र.) शिरःशूले	८)	४॥)	२॥)		
शिलासिन्दूर (र.रा.सुं.) कुष्ठरोगे				९)	४)
शीतगजकेसरी (भा.प्र.) शीतज्वरे	१३)	७)	३॥।)		
शीतवातेश्वर (फा.वि.) हृदयावसादे				४॥)	२)
शीतारिरस (भै.र.) ज्वराधिकारे	१३)	७)	३॥।)		
शीतांकुश रस (र.प्र.) चातुर्थिकज्वरे				४॥)	२)
शूलवज्रणी (रसे.सं.) शूलाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
शूलगजकेशरीतांत्र (शा.ध.) शूलरोगे	२६)	१४)	७॥)		
शूलगजकेशरीवटी (फा.वि.) पार्श्वशूले	८)	४॥)	२॥)		
श्रङ्गाराभ्ररस (रसे.सं.), कासे जीर्णज्वरे	१५)	८)	४॥)		

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो.
शोथ कालानल (भै.र.) शोथे	८)	४॥)	२॥)		
शंखवटी वृहत् (भै.र.) अग्निमान्द्ये	८)	४॥)	२॥)		
समीरगजकेसरी (र.रा.सु.) वातव्याधौ				७)	३)
समीरपन्नग रस (र.चं.) वातरोगे				११)	५)
सर्वांगसुन्दर (र.सं.) शूलरोगे				७)	३)
सर्वज्वरहरलोह (र.सं.) ज्वराधिकारे	१५)	८)	४॥)		
सिद्धप्राणेश्वर (रसे.सं.) ज्वरातिसारे	१४)	७॥)	४)		
सिद्धमकरध्वज (पिष्ट) स्वर्णभस्मयुक्त					७२)
सिंहनाद गुग्गुल (यो.चि.) वातरक्ते	४॥)	२॥।)	१॥)		
सुखविरेचनी (फा.वि.) सुखविरेचने	१०)	५॥)	३)		
सूतिकाविनोद (भै.र.) सूतिकारोगे	१०)	५॥)	३)		
सूतशेखर (नि.र.) अम्लपित्ताधिकारे				२०)	६)
सौभाग्य वटी (भै.र.) कासज्वरे	१०)	५॥)	३)		
संजीवनी वटी (शा.ध.) अजीर्णे	८)	४॥)	२॥)		
स्मृतिसागर (यो.र.) अपस्मारे	२५)	१४)	७॥)		
स्वर्णचन्द्रोदय षड्गुणगन्धकजीर्ण					२४)
स्वर्ण पर्पटी (र.रा.सु.) क्षयाधिकारे					१८)
स्वर्णवसन्त मालती (भै.र.) क्षयरोगे					२४)
स्वर्णवंग नं० १ (र.रा.सु.) प्रमेहे				५॥)	२॥)
स्वच्छन्द भैरव (भै.र.) ज्वराधिकारे	१२)	६॥)	३॥)		
हुताशनरस (यो.र.) श्लेष्मरोगे	८)	४॥)	२॥)		
हृदयार्णव रस (यो.र.) हृद्रोगे	१३)	७)	३॥।)		

अंजन तथा नेत्रवर्ती

नाम वस्तु	५ तो.	१ तो.
चंद्रोदयावर्ती (शा.ध.) नेत्ररोगे	१॥)	।=)
चन्द्रप्रभावर्ती (यो.र.) नेत्ररोगे	१॥)	।=)
नागार्जुनीवर्ती (भै.र.) ,, धुन्धजालायां	३॥)	॥।=)
मुक्तादि महाञ्जन (यो.र.) नेत्ररोगे	७)	१॥)
नयनामृत सुरमा (शा.ध.) ,, ज्योतिवर्द्धने	९॥)	२)
[illegible]	९॥)	२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसव अरिष्ट

नाम वस्तु	१०पौं.	५पौं.	२पौं.
अमृतारिष्ट (आयु. वे. सं) ज्वरे	१८)	९॥)	४)
अर्जुनारिष्ट (भै.र.) हृद रोगे	१८)	९॥)	४)
अशोकारिष्ट ,, ,, प्रदरे	१८)	९॥)	४)
अश्वगन्धारिष्ट (वं. से.) प्रमेहे	१८)	९॥)	४)
अभयारिष्ट (भै. र.) अर्शरोगे	१८)	९॥)	४)
कुटजारिष्ट ,, अतिसारे	१८)	९॥)	४)
खदिरारिष्ट(भै. र.) कुष्ठरोगे	१८)	९॥)	४)
जीरकाद्यरिष्ट (भै. र.) प्रसूतरोगे	१८)	९॥)	४)
दशमूलारिष्ट (शा.ध) प्रसूतरोगे	२२॥)	११॥)	५)
दशमूलारिष्ट (कस्तूरीयुक्त),,	३२॥)	१७)	७)
द्राक्षारिष्ट (शा. धं.) क्षये	१८)	९॥)	४)
रोहितकारिष्ट (भै.र.) प्लीहारोगे	१८)	९॥)	४)
लक्ष्मणारिष्ट (फा.वि)	२४)	१३॥)	६)
सारस्वतारिष्ट (भै. र.) मानसिकरोगे	२२॥)	११॥)	५)
सारिवाद्यरिष्ट (भै. र.) कुष्ठे, रक्तविकारे	१८)	९॥)	४)
उशीरासव (शा. ध.) रक्तपित्ते	१८)	९॥)	४)
कनकासव (भै. र.) श्वासरोगे	१८)	९॥	४)
कुमार्यासव (शा. ध.) उदररोगे	२२॥)	११॥)	५)
चन्दनासव (भै. र.) प्रमेहे	१८)	९॥)	४)
द्राक्षासव (शा. ध.) अर्शोदरे	१८)	९॥)	४)
पुनर्णवासव (भै. र.) शोथे	१८)	९॥)	४)
पिप्पल्यासव (शा. ध.) अर्शे, गुल्मे	२२॥)	११॥)	५)
लोहासव (शा. ध.) पाण्डुरोगे	१८)	९॥)	४)
लोध्रासव (गदनिग्रह) पाण्डु, अर्शे	१५)	८)	३॥)
शंखद्राव (र. का.) गुल्मे	१०तो. ४॥)	५तो. २॥)	
आसवनिर्माणार्थ किण्व (सुराबीज)	५ तोला का २)		

मृतसञ्जीवनी सुरासाधित आसव

नाम वस्तु	२½ तो.	१ तो
अहिफेनासव (भै. र.) अतिसारे	४॥)	२)
कर्पूरासव (भै. र.) विसूचिका रोगे	२।)	१)
मृगमदासव (भै. र.) सन्निपाते श्वासावेगे	१८)	८)

प्रसिद्ध अवलेह पाक

नाम वस्तु	२॥ सेर	१सेर	१पाव
कुटजावलेह (शा. ध.) अतिसारे	१३)	६)	१॥।)
कूष्माण्डावलेह (शा. ध.) रक्तपित्ते	१३)	६)	१॥।)
कंटकार्यवलेह (वं. से.) कासे	१३)	६)	१॥।)
च्यवनप्राशवलेह (च.) रसायने	१६॥)	७)	२)
भार्गी गुड़ (भै. र.) हिक्का, श्वासे	१३)	६)	१॥।)
मदनानन्दमोदक (र. रा. सु.) वाजीकरणे	२५)	११)	३)
मूसलीपाक (यो.चि.) क्लीवत्वे	२७॥)	१२)	३।)
वांसावलेह (भै. र.) क्षय, कासे	१३)	६)	१॥।)
श्लेष्मान्तक अवलेह (फा. वि.) शुष्कश्वासे कासे		१४)	४)
सौभाग्यशुंठी पाक (यो.चि.) प्रसूतारोगे	१३)	६)	१॥।)
सुपारीपाक (यो. चि.) प्रदररोगे	२१॥)	९)	२॥)
हरिद्रा खण्ड (भै. र.) शीतपित्ते	१३)	६)	१॥।)
हरीतकी खण्ड ,, शूले	१३)	६)	१॥।)

सिद्ध घृत व तेल

नाम वस्तु	१सेर	४औंस
फलघृत (चक्रदत्त) योनिरोगे	२०)	३)
ब्राह्मीघृत (चक्रदत्त) रसायने	१६)	२।)
महात्रिफलादि घृत (चक्रदत्त) नेत्र रोगे	२०)	३)

नाम वस्तु	२पौंड	४औंस
अर्क तेल (शा. ध.) कुष्ठे	८)	१।)
आमला तेल (फा. वि.) शिरोरोगे	१०)	१॥)
अपामार्गक्षार तेल (भै. र.) कर्णबधिरतायां	८)	१।)
इरिमेदादि तेल (शा. ध.) मुखरोगे	८)	१।)
कासीसादि तेल (शा. ध.) अर्शरोगे	१२)	१॥।)
केशराज तेल (फा. वि.) केशवर्द्धने	१०)	१॥)
चन्दनादि तेल (भै. र.) जीर्णज्वरे	१२)	१॥।)
दशमूल तेल (भै. र.) वातरोगे	८)	१।)
ब्राह्मी तेल (फा. वि.) बुद्धिवर्धनार्थे	१२)	१॥।)
भृंगराज तेल (भै. र.) क्षुद्ररोगे	१०)	१॥)
महानारायण तेल (शा. ध.) वातरोगे	२०)	३)
मरिचादि तेल (चक्रदत्त) कुष्ठे	१०)	१॥)
महालाक्षादि तेल (शा. ध.) जीर्णज्वरे	१२)	१॥।)
विषगर्भ तेल (यो. र.) वातरोगे	१०)	१॥)
शुष्कमूलाद्य तेल (धन्वन्तरि) कर्णस्रावे	१०)	१॥)
षड्बिन्दु तेल (चक्रदत्त) शिरोरोगे	१२)	१॥।)
क्षार तेल (शा. ध.) कर्णशूले	१०)	१॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्रीय प्रचलित चूर्ण

नाम वस्तु	१सेर	४०तो.	२०तो.
अजमोदादि चूर्ण (शा. ध.) वातरोगे	५)	२।।।)	१।।)
अग्निमुख (वं. से.) अजीर्णाधिकारे	८)	४।।)	२।।)
अपचिविनाशी (फा. वि.) कण्ठमालारोगे	८)	४।।)	२।।)
अविपत्तिकर (वं. से.) अम्लपित्ते	५)	२।।।)	१।।)
अष्टांगलवण (च.) अग्निमांद्ये	७)	३।।।)	२)
अश्वगन्धादि (शा. ध.) वाजीकरणे	५)	२।।।)	१।।)
अर्कलवण (वं. से.) उदररोगे	१०)	५।।)	३)
उलट कम्बल चूर्ण, ऋतुकष्टे	८)	४।।)	२।।)
कामदेव चूर्ण (यो. र.) क्लीवत्वे	८)	४।।)	२।।)
गंगाधर बृहत् (शा. ध.) अतिसारे	५)	२।।।)	१।।)
गोक्षुरादि चूर्ण (वा. भ.) वाजिकरणे	७)	३।।।)	२)
चन्दनादि चूर्ण (यो. त.) प्रदरे, रक्तपित्ते	७)	३।।।)	२)
ज्वरनाग मयूर चूर्ण (भै. र.) सर्वज्वरे	२८)	१५)	८)
तालीसादि चूर्ण (शा. ध.) ज्वरे, कासे	८)	४।।)	२।।)
दाड़िमाष्टक चूर्ण (शा. ध.) अरुचिरोगे	५)	२।।।)	१।।)
न्यग्रोधादि चूर्ण	५)	२।।)	१।।)
नारसिंह चूर्ण (च. द.) क्लीवत्वे	७)	३।।।)	२)
नारिकेल लवण (वं. से.) शूले	८)	४।।)	२।।)
पंचसम चूर्ण (शा. ध.) उदररोगे	५)	२।।।)	१।।)
नारायण चूर्ण (शा. ध.) उदरविकारे	५)	२।।।)	१।।)
प्रदरान्तक चूर्ण (फा. वि.) प्रदररोगे	५)	२।।।)	१।।)
पुष्यानुगचूर्ण केसरयुक्त (भै. र.) प्रदरे	१४)	७।।)	४)
महाखाण्डव (शा. ध.) अजीर्ण रोगे	७)	३।।।)	२)
लवणभास्कर (शा. ध.) अग्निमांद्ये	७)	३।।।)	२)
[illegible]चूर्ण 'नायिका' (भै. र.) ग्रहण्याधिकारे	७)	३।।।)	२)
लवंगादि वृ. (शा. ध.) ज्वरे, कासे	१६)	८)	५)
शिवाक्षार पाचन (फा. वि.) पाचने	८)	४।।)	२।।)
सारस्वतचूर्ण (भै. र.) मस्तिष्क रोगे	७)	३।।।)	२)
सर्पगन्धा चूर्ण (ब्लडप्रेशर पर)	१२)	६।।)	३।।)
स्वादिष्ट विरेचन (फा. वि.) मृदुरेचने	५)	२।।।)	१।।)
सितोपलादि चूर्ण (शा.ध.) कासे, क्षये	१३)	७)	४)
सुदर्शनचूर्ण वृ. (शा. ध.) ज्वराधिकारे	८)	४।।)	२।।)
सुदर्शन चूर्ण (चक्रिका)	१०)	५।।)	३)
हिंग्वाष्टक चूर्ण (शा. ध.) उदररोगे	७)	३।।।)	२)
हिंग्वादि चूर्ण (शा. ध.) उदररोगे	७)	३।।।)	२)
त्रिफला चूर्ण	[illegible]	२।)	१।)

लेप और मरहम

नाम वस्तु	४०तो.	५तो.
अर्शोघ्न मरहम, अर्शे	७)	१)
कालीमरहम, व्रणशोधनार्थे	३)	।।)
दशांग लेप, विसर्प रोगे	३)	।।)
नीली मरहम, व्रण रोपक	२)	।-)
पीली मरहम, व्रण रोपक	२)	।-)
पारदादिमरहम, जन्तुघ्न या कीटाणुनाशक	८)	१।)
श्वेत कुष्ठहरलेप, श्वित्र कुष्ठे	३)	।।)
सिध्महरलेप, सिध्मरोगे, खर्जुरोगे	७)	१)

क्वाथ

नाम वस्तु	१सेर	२०तो.
दशमूल क्वाथ (शा. ध.) प्रसूतारोगे	१)	।-)
देवदार्व्यादि क्वाथ (शा. ध.) ज्वरे	१।।)	।≋)
लघुमंजिष्ठादि क्वाथ ,, ,, रक्तविकारे	१।।)	।≋)
महामंजिष्ठादि ,, ,, कुष्ठे	२।।)	।।।)
महारास्नादि क्वाथ ,, वातरोगे	२।।)	।।।)
सुदर्शन क्वाथ (शा. ध.) सर्वज्वरे	२।।)	।।।)
हवन सामग्री	१।।)	।≋)

फार्मेसी द्वारा प्रस्तुत शुद्ध वस्तुयें

शुद्ध वस्तु	१सेर	५तो.
कज्जली शुद्ध पारदसे		४)
कान्त लोह	५)	।=)
कुचला	३)	।)
कुचलाचूर्ण	६)	।।)
गन्धक आमलासार	१०)	।।।)
गुग्गुल	६)	।≡)
जमालगोटा	१८)	१।)
तुत्थ	४)	।-)
दालचिकना		४)
धतूर बीज श्याम	८)	।।=)
पारद अष्ट संस्कार पूर्ण		१०)
पारद हिंगुलोत्थ	५०)	३।।)
भल्लातक	२)	≡)
मण्डूर	१।)	=)
मनसिल	१२)	१।)

शुद्ध वस्तु	१सेर	५तो.
रस कपूर		४)
रसौंत	६)	।≋)
राजावर्त 'मशगूल'		४)
लोहचूर्ण रेतीका	४)	।-)
वंग	१६)	१=)
वज्राभ्रक (धान्याभ्रक)	४)	।=)
शंख टुकड़े	१)	=)
शंखनाभी	१।।)	≡)
शिंगरफ	५०)	३।।)
शृङ्गिक (काला)	८)	।।=)
शृङ्गिकचूर्ण	१०)	।।।)
सीप मोती	१०)	।।।)
संखिया		२)
हरताल वर्की		४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वानस्पतिक क्षार

नाम वस्तु	२०तो.	५तो.
अपामार्ग क्षार	३)	१)
अर्क ,,	३)	१)
इन्द्रायण ,,	४)	१।)
इमली ,,	४)	१।)
कण्टकारी ,,	३)	१)
कदली ,,	३)	१)
गोक्षुरू ,,	३)	१)
चना ,,	३)	१)
तिल ,,	३)	१)

	२०तो.	५तो.
पलाश क्षार	४)	१।)
पुनर्नवा ,,	४)	१।)
मूली ,,	३)	१)
यव ,,	३)	१)
वज्र ,,	४)	१।)
वांसा ,,	३)	१)
स्नुही ,,	४)	१।)
सत्यानाशी,,	४)	१।)
सज्जी ,,	१)	।)

वानस्पतिक तेल व प्राणिज स्नेह

नाम वस्तु	१पौण्ड	२औं.	१तो.
अजवायन तेल	५)	।।।)	≡)
इलायची(जापानी)	५।।)	।।।।)	≡)
इलायचीविलायती	२५)	३।।)	१)
कास्ट्रायल(आगरा)	२)	।=)	
कुष्ठ तेल		३)	।।।)
खसखास रोगन	६।।)	।।।=)	।)
गुल्ल रोगन	३।)	।।)	=)
चावल मोंगरा	५)	।।।)	≡)
जमालगोटा तेल	४८)	७)	१।।)
जायफल तेल	२५)	३।।)	।।।=)
जैतून तेल	८)	१।)	।-)
तुवरक तेल	१०)	१।।)	।=)
तारपीन तेल	१)	≡)	
दालचीनीतेल	२५)	३।।)	१)

नाम वस्तु	१पौण्ड	२औं.	१तो.
धतूरा तेल			२।)
नीम तेल	३)	।।)	≡)
बादामरोगन	१५)	२)	।≡)
बावचीतेल	६)	१।)	।-)
बिरोजा तेल	५)	।।।)	≡)
भिलावा तेल		२)	।।)
मालकंगनीतेल	६।।)	।।।=)	।)
यूक्लिप्टसआइल	८)	१।)	।-)
रीछ की चर्बी	५)	।।।)	
लौंगतेल	२५)	३।।)	१)
वराहकी चर्बी	५)	।।।)	
सूस मछलीकातेल		४।।)	१)
सौंफतेल	२०)	३।।)	।।।)
सांडेकातेल			३)
चन्दनतेल		९)	२)

विषोपविष

निम्नलिखित विष मंगाते समय लाइसेन्सदार अपने लाइसेन्स का नम्बर व पूरा २ पता, डिवीजन के साथ दें तथा डाक्टर व वैद्य महोदय पत्र में यह शब्द अवश्य लिखें कि "हम व्यवहार के लिये मंगाते हैं", तभी माल भेजा जायगा।

विष	१सेर	५तोला
संखिया सफेद	६)	।।=)
संखिया खनिज	१२)	१)
संखिया पीला	१२)	१)
संखिया लाल	१२)	१)
रसकपूर	५०)	३।।)
रसकपूर पपड़ी का	५६)	४)
दारचिकना	५०)	३।।)

	१सेर	५तो
धत्तूर बीज श्याम	५)	।=)
धत्तूर बीज सफेद	३)	।)
मीठातेलिया सफेद	६)	।।)
मीठातेलिया काला	८)	।।=)
हरतालवर्की बढ़िया	८०)	६)
हरतालवर्कीनं०१	५४)	३।।।)
हरतालवर्कीनं०२	४०)	३)
हरताल वर्कीचुरा	२०)	१।।)

प्राणिज व खनिज द्रव्य

नाम वस्तु	१सेर	१तो०
अम्बर अशहब नं० १		३६)
अम्बर अशहब नं० २		१८)
अभ्रकश्याम बढ़िया	२।।)	
अभ्रक वज्र नं० २	१।।)	
अकीक दाना नं० १		१।)
अकीक दाना नं० २		।।।)
अकीक दाना नं० ३		।।)
अकीक खरड	४)	
कस्तूरी(खुतन)दानेदार		९०)
कस्तूरी नैपाली		८४)
कस्तूरी काश्मीरी		६६)
कछुआ खोपड़ी	२)	
कसीस हरा	।।)	
कासीस लाल	३।)	
कान्तलोह ग्वालियर	३)	
केंचुवे धुले	३।।)	
कौड़ी पीली मोटी	३)	
कौड़ी पीली छोटी	१।।।)	
गोरोचन असली नं० १		५४)
गोमेद		८)
जहरमोहरा बढ़िया	५)	
जस्ता पटड़ी का	२)	
जस्ता फूल	२।।)	
जंगार असली	२५)	
जुन्द बेदस्तर		२।।)
जोंक	३५)	
तुरमली बढ़िया		२०)
ताम्र बुरादा	५)	
नखू (नख)	७०)	
नाग (सीसा)	२)	
नीला थोथा	२।)	
नीलम नं० १		८)
नीलम खरड		१)
नौसादर देशी		२।)

नाम वस्तु	१सेर	१तो.
नौसादर डला	१।।)	
नौसादर टिकिया	१।।।)	
पन्ना नं० १		८)
पन्ना नं०२		५)
पन्ना खरड		१।।)
प्रवाल शाखा नं.१	२८)	
प्रवाल मूल	२)	
पारद	३८)	
पीतल चूर्ण	४)	
पत्थर का दिल		२)
पुखराज		८)
फिटकरी लाल	।।)	
फिटकरी श्वेत	।।)	
मधुरश्वेत	४)	
राजावर्त		१)
फ़िरोजा		८)
बंग ईंट की	१२)	
वीर बहूटी	२०)	।=)
बारासिंगा	२।।)	
बेरपत्थर	१४)	
मुर्दासंग	२।।)	
मण्डूर पुराना	।।।)	
मैनसिल	३।।)	
मैनसिल चूरा	२।।)	
माणिक्य 'चूनी' नं० १		८)
माणिक्य ,, नं० २		४)
माणिक्य ,, नं० ३		१।।)
माणिक्य खरड		।।।)
मोतीवसरई नं० १		८४)
मोतीवसरई नं० २		६६)
मोती आस्ट्रेलिया नं०१		५४)
मोती आस्ट्रेलिया नं० २		४२)
मोती चावला बड़ादाना		४०)
मोती चावला छोटा दाना		४८)
मोती बेडोल		४८)
मोती बिंधा हुआ		४२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वस्तु	१सेर	१तो.
मोम देशी असली	६॥)	
रूपामक्खी चतुष्कोण	४)	
रूपामक्खी(गोलदाना)	३)	
लोहचूर्ण रेतीका	२)	
लोहचूर्ण मुंड	१॥)	
वैक्रान्त नं० १	५)	
वैक्रान्त नं० २	२॥)	
शिलाजीत पत्थर	४॥)	
शिलाजीत सूर्यतापी	३०)	।॥)
शिलाजीत अग्नितापी	२४)	॥=)
शिलारस	५)	
शोरा कलमी	२)	
शंख टुकड़े	॥=)	
शंखकीट		३)
शखनाभी	।॥=)	
संग सरमाही	२४)	
संग्रासक	८)	

नाम वस्तु	१सेर	१तो.
सफेदा काशगरी	१।)	
समुद्रफेन	३॥)	
सरतान	६)	
सिंगरफ रूमी	३६)	
सिंदूर	२॥)	
सीप मोती बाजारी	१८)	
सीप मोती असली	६)	
सुरमा काला	३।)	
सुहागा	१॥)	
सुहागा चौकिया	३॥)	
सोना गेरू	॥)	
सोनामक्खी अ.नं.२.	८)	
हरताल गोदन्ती बढ़िया	१॥)	
हरताल गोदन्ती नं०२	१)	
हरताल पीली	८)	
हाथी दांत बुरादा	२)	

आयुर्वैदिक तथा यूनानी वनस्पतियां

नाम वस्तु	१सेर
अकरकरा असली	६०)
अगर बुरादा	३)
अगर काला	५॥)
अतीस श्वेत कड़ु नं० १	३२)
अतीस मीठी	५)
अतिबला पंचांग (कङ्घी)	१)
अनन्तमूल (वंगाल)	१॥)
अनन्तमूल (देशी)	।॥)
अपराजिता (विष्णुक्रांता)	२)
अपराजिता बीज	४)
अपामार्ग बीज	१।)
अमलतास गूदा	।।)
अम्लवेद गुच्छी (चूका)	२॥)
अर्जुन त्वक्	॥)
अंजीर मूल	२)
अंजीर फलसूखे	२)
अरणी छाल	।॥)
अशोक छाल	१।)
असगन्ध नागौरी	२)
अफतीमून	८)
अवेरशम	१६)
अजवायन खुरासानी	३)

नाम वस्तु	१ सेर
अजवायन देशी साफ	१)
अजवायन दाना	।॥=)
अनारदाना	३।)
अजमोद	॥=)
आंवला	।≡)
अंकोल बीज	१)
अंकोल छाल	।॥)
अर्कदुग्ध	८)
अष्टवर्ग	६)
इक्षुमूल	।॥)
इन्द्रयव मीठे	१।॥)
इन्द्रयव कड़वे	१)
इन्द्रायण मूल	१)
इन्द्रायण फल	१)
इमली छाल	।॥)
इलायची छोटी नं० १	३०)
,, ,, नं०२	२७)
इलायची बड़ी(डोडा)	६)
इलायची दाना	१०)
इरिमेद छाल	।॥)
ईसवगोल भूसी असली	४॥)
ईसवगोल दाना	१॥)
ईश्वर मूल	२)
उटंगन बीज	२)
उन्नाव	३)

नाम वस्तु	१ सेर
उशबा मगरबी असली	९)
उलट कम्बल	७)
उशक	३)
उस्तेखदूस	१०)
ऊंटकटारा	॥=)
ऊद सलीब	७॥)
एरण्डमूल	।॥)
एरण्ड बीज	१)
एलवालुक फल	२॥)
एलुवा(मुसब्बर)असली	७॥)
ऋषभक(बहमनश्वेत)	३)
कचूर	१।)
कतृण (रोसाघास)	।॥)
कदम्बछाल	।॥)
कपित्थ फल	।॥)
कपूर कचरी	।॥=)
कमरकस	३॥)
कमल केसर	८)
कनेर मूल	१॥)
कत्था	१०)
कंचन फल	८)
कंवीला छना हुआ	३॥)
कश्मीरी पत्ता	१।)
कपूर देशी डली का	१०)
कपूरभीमसेनी असली	२) तो.
,, ,, बाजारी	॥) तो.
कमल गट्टे	१।) से.
कमल फूल	२) से.
करंज पत्र	१।)
करंज बीज	१)
कलिहारी (लांगुली) मूल	५)
कहरवा (स्पैशल)	६) तो.
कहरवाशमईनं. १,२.।॥), ।=)तो.	
कहरवा चूरा	।) तो.
कायफल	॥=)से.
कालीजीरी	१।)
काहू	४।)
काकनासा (काकनज)	२॥)
काकनासा (वाघनखी)	।॥)
काकोली श्याममूसली	१।)
काकोली (वंगाल)	२०)
काकोली (देहरादून)	४)
कालमेघ	१)
काकजंघा पंचांग	।॥)
काकड़ासिंगी	२॥)
कुकरौंधा	॥=)

नाम वस्तु	१सेर
कुलंजन	१।॥)
कुन्दरगोंद	२।)
कुटकी	४)
कुठ मीठी	१)
कुष्ठ उत्तम नं० १	४।)
कुष्ठ ,, ,, २	२)
कुष्ठ चूरा मोटा अच्छा	१)
कुटज (कूड़ा) छाल	॥-)
केसरमोंगरा काश्मीरी	१०)तो.
केसर लच्छा	६॥) तो.
कौंचबीज (काले छोटे)	१) सेर
कंटकारी लघु पंचांग	॥=)
कंटकारी फल	१॥)
कंटकारी वृहती पंचांग	॥=)
कंकुष्ठ (उशारा रेवन्द)	२५)
खतमी	२)
खब्बाजी	१)
खस (बम्बई)	१॥)
खदिर छाल	॥=)
खसखास	२॥)
खुरफा	१॥)
खूबकलां	२॥)
गजपीपल	॥=)
गम्भारी छाल	।॥)
गन्ध प्रसारणी	।॥)
गारीकून	३२)
गावजबां	२॥)
गिलोय	॥)
गुञ्जा श्वेत	५)
गुंजा लाल	१)
गुग्गल महिषाक्ष साफ	३)
गुड़ ५० साल पुराना	८)
गुड़मार बूटी	१)
गुल गावजबां	२४)
गुलबनफशा नं०१	१२)
गुलबनफशा नं०२	६॥)
गुल सुर्ख पेशौरी	४)
गुल सुर्ख देशी(पहाड़ी)	४)
गोखरू पञ्चाङ्ग	॥)
गोखरू फल लघु	।॥=)
गोखरू फल वृहत	१॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वस्तु	१सेर
गोंदबबूल	३)
गोंदकतीरा	४)
गोंद छुहारा	७)
गोरखमुण्डी	।।=)
गोरखपान	१)
गौरीसर (सिरवाला)	१॥)
गँगेरन छाल	१।)
चन्दन काष्ठ श्वेत	५॥)
चन्दन बूरा श्वेत	६॥)
चन्दन बूरा लाल	१=)
चव्य (कृष्ण मिर्च मूल)	१॥)
चक्रमर्दबीज	॥)
चन्द्रसूर (हालौं)	१)
चावल मोंगरा बीज	४)
चाकसू	१।॥)
चित्रक मूल छाल	३॥)
चिड़िया कन्द	१॥)
चिरायता	२॥)
चिरौंजी	५)
चोकमूल पञ्जाब	१।)
चोपचीनी असली	५)
चोरक (ग्रन्थिपर्ण)	३)
जलपीपल	।॥)
जलनिम्ब	१।)
जलापा	३०)
जरिश्क मीठा	३)
जवासा	१)
जायफल	५०)
जावित्री	४२)
जामुन गुठली	।।=)
जीवक (हरा)	४)
जीवपुत्रक (जियापोता)	१॥)
जीरा श्वेत	३॥)
जीराकाला असली नं.१	१०)
जीवन्ती (बंगाल)	३॥)
जूफा	५)
जैपाल बीज(जमालगोटा)	३॥)
जंगली प्याज सूखा	१)
तगर (सुगन्ध वाला मूल)	२)
तालमखाना	२)
तालीस पत्र असली	२)
तिंतडीक(समाक दानां)	१॥)
तुरञ्जबीन असली	५॥)
तुख्म रेहां	१)

नाम वस्तु	१सेर
तुख्म कसूस असली	२)
तुख्म खिरनी	५)
तुख्म बालंगा	२॥)
तुलसीपत्रअसली	५)
तेजपत्र	।॥)
तेजवल बीज (कबाबा)	१॥)
तेजवल त्वक्	१॥)
तोदरी लाल	३)
तोदरी श्वेत	६)
दन्तीमूल	१)
दरूनज अकरबी	८)
दरियाई नारियल	७)
दशमूल चूर्ण (क्वाथ)	१)
दशमूल बिना कुट्या	।॥)
दालचीनी	४)
दारूहल्दी (लकड़ी)	।=)
दारुहल्दी बुरादा	१॥)
देवदारु	।॥)
देवदारु बुरादा	१॥)
देवदालीफल(बन्दालडोडा)	१॥)
द्रोणपुष्पी	।॥)
धवलवरुआ (चांदमरुआ)	८)
धतूरा पंचांग	।॥)
धातकी (धावेके) फूल	।॥=)
धनियां	१॥)
धमासा	१)
धूपलकड़ी	३)
नकछिकनी	१)
नगन्ध बावरी	१)
नागरमोथा	।।=)
नासपाल	।॥)
नागकेसर असली	३०)
नागकेसर बाजारी दाना	२॥)
नागवला	।॥)
निर्गुण्डी पंचांग	।।=)
निर्मली	१)
निम्बत्वक्	॥)
निंबोली नीम की	॥)
निम्बफूल	१॥)
निर्विसी (जदवार)	१२)
निसोत(त्रिवृता]	७)
नीलकण्ठी	१॥)
नीलोफर फूल	१॥)
पतङ्ग काष्ठ	१॥)
पतङ्ग बुरादा	३)

नाम वस्तु	१सेर
पटोल पत्र	२)
पद्मकाष्ठ (पद्माख)	॥)
परस्योशां (हंसराज)	१)
प्रसारणी	।॥)
पाण्ला त्वक्	॥)
पाठा मूल (पाढ़ मूल)	१)
पाषाण भेद	।॥)
पिप्पली लघु	१५)
पिप्पली वृहत्	५।)
पिप्पली मूल नं०१,२, ८।)	५)
पीपल जटा	३)
प्रियंगू फल (बङ्गाल)	६)
प्रियंगू (पञ्जाब) असली	१॥)
पित्तपापड़ा (शाहतरा)	॥)
पियाबांसा	।॥)
पिपरमेन्ट ५०) पौंड	१॥)तो.
पृश्निपर्णी लम्बा पत्र	३)से.
पृश्निपर्णी	१)
पुनर्णवा मूल	१)
पुष्कर मूल	४)
पुदीना पंचांग	।॥)
पुदीना जंगली	।॥)
फरफीऊन विलायती १पौंड	२॥)
फालसा छाल	।॥)
फिन्दक	२)
फिरंजमुश्क	२)
वच मधुर	३॥)
वच मधुर बारीक	३)
वला पञ्चांग (खरेंटी)	।॥)
वहमन सफेद	२॥)
वहमन लाल	१॥)
वहुफली	।॥)
वच तीक्ष्ण	१)
वकायन छाल	॥)
वकायन फल	।॥)
ववूल छाल	।॥)
वृद्धि (सालव कसेरू)	४)
ब्रह्म दण्डी	।॥)
ब्रह्मीबूटी धुली हुई	२)
ब्रह्मीबूटी	१॥)
वाराहीकन्द	१)
बावची	।।=)
बालछड़ (बिल्लीलोटन)	३॥)
बादरंजबूया	।।=)
बादावरद	१।)

नाम वस्तु	१सेर
वायविड़ंग	१।)
वांसा मूल त्वक्	३)
वांसा पत्र (पञ्चाङ्ग)	॥)
वांसा मूल	।॥)
वट जटा	।॥)
विजया बीज छोटेअसली	२)
विजया बीज मोटे	१।)
विहीदाना	१०)
विदारी कन्द	१)
विधारा बीज	१०)
विधारा मूल	१)
विरोजा सूखा	१।)
,, गीला	१)
विस्फायज	१॥)
विजयसार छाल	१)
विजयसार लकड़ी	।॥)
विजयसार गोंद(दमुलखैवन)	३२॥)
विल्वछाल	।॥)
बीजाबोल (मुरमकी)	१२)
बीजबन्द (काले)	१॥)
बीजबन्द लाल	।।=)
बंसलोचन नं. १,२,५७),	५२)
बंशलोचन नं. ३	५१)
भिलावा	॥)
भूआंवला	१॥)
भोजपत्र	१॥)
मकोय दाना	२)
मगज कद्दू	३॥)
मगज खरबूजा	४)
मगज खीरा	५)
मगज तरबूज	१।॥)
मगज बादाम	१०॥)
मस्तगी रूमी असली	३०)
मयूर शिखा	१॥)
ममीरी मूल	८)
महाबला (सहदेवी)	।॥)
महामेदा	८)
मूषाकर्णी असली	८)
मरोड़फली	।॥)
मैनफल	१)
महुआफूल	।॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वस्तु	१ सेर
माजूफल	६)
माषपर्णी	१)
माईं	२)
मिर्च श्वेत	१२)
मिर्च काली नं० १	३॥)
,, ,, ,, २	३)
मुनक्का काला (असली)	२)
मुश्कतरामसी	२॥)
मुद्गपर्णी	।॥)
मुलहठी	१।)
मूसली श्वेत	१२)
मूसली श्याम	१)
मेदा (शकाकल)	२॥)
मेढ़ासिंगी	१॥)
मैदा लकड़ी	॥)
मोचरस असली	३॥)
मौलश्री छाल	१॥)
मजीठ	२॥)
रतन जोत	१॥)
रसौंत	३॥)
रास्ना मूल बंगाल	१।॥)
राल	२॥)
रुद्रवन्ती	२)
रेणुका बीज	२॥)
रेशा खत्मी	२।॥)
रेवंद चीनी	१॥)
रोहितक छाल	१)
लता कस्तूरी	५॥)
लवंग (लौंग)	१२)
लाख पीपल	३)
लाजवन्ती बीज (छोटा)	२)
लोवान कौड़िया	३)
शरपुंखा	॥=)
श्योनाक छाल	।॥)
शालपर्णी	।॥)
शिवलिंगी बीज	६)
शङ्खपुष्पी	१)
समुद्रशोष	१॥)

नाम वस्तु	१ सेर
सत्यानासी बीज	१)
सप्तपर्णछाल	१॥)
सपिस्तान(लसूड़ियां)	।॥)
सकमूनिया ऊंटनी मा. १पौं.	२५)
सतावर सेर	१।॥)
सनाय	२)
समुद्र फल	॥=)
स्थौणेयक (जम्बू)	४)
सातला (शिकाकाई)	१)
सालव प्याजी	४॥)
सालव लहसुनिया	४॥)
सालव मिश्री	३०)
सालव पंजा नं० १	३५)
सालव पंजा ,, २	२४)
सिरसबीज सफेद	२)
सिरस बीज काले	३)
सिम्बलमूसली	१)
सीतलचीनी(सर्दचीनी)	१२)
सुपारी काठा	४॥)
सुपारी दक्षिणी	७)
सुगन्धवाला पंचांग	१)
सत्व गिलोय	१०)
सत्व अजवायन प्रतिपौंड	२०)
सत्व पुदीना ,, ,,	५०)
सत्व लोवान ,, ,,	६)
सत्व निम्बू सेर	५॥)
सत्व मुलेठी	१०)
सुरञ्जां शीरीं (मीठी)	५॥)
सुरञ्जांतलख (कड़वी)	६)
सुहांजना छाल	॥=)
सोंठ पूर्वी (वम्बई)	२)
सोमवल्ली (ईफेड्राबलेगरस)	१।)
सोया	॥=)
सौंफ	१॥)

नाम वस्तु	१ सेर
सौभाञ्जन बीज	३)
हरमल बीज	॥)
हाथी सुण्डी	।॥)
हाऊबेर	।॥)
हिरन तूतिया	२०)
हिरनखुरी	॥=)
हिंगु पत्री	१।॥)
हींग तालाब	४०)
हींग अंगूरी	३६)
हींग हीरा	३२)
हींग बाजारी	६)
क्षीर काकोली (बंगाल)	६)
क्षीर विदारी	१॥)
त्रायमाण	४)

वर्क (पत्र) सोना चांदी

स्वर्ण दफ्तरी १२० पत्र५रत्ती	७॥)
स्वर्ण ,, ,, १माशा	१४)
स्वर्ण ,, ;, २ माशा	२६)
स्वर्ण ,, ,, ३ माशा	४१)
स्वर्ण का चूरा १ माशा	१०)
चांदी १ दफ्तरी ३ माशा	१॥)
चांदी दफ्तरी ४॥ माशा	२॥)
चांदी ,, ६ माशा	३)
चांदी ,, ८ माशा	३॥)
चांदी ,, १० माशा	४)
चांदी चूरा १ तोला	३॥)

हरीतकी भेद

नाम वस्तु	१सेर
हरड़ जीवन्ती नं० १	२४)
हरड़ जीवन्ती नं० २	१६)
हरड़ जीवन्ती— नं०३,४,५	१२),८);४)
हरड़जीवन्ती साधारण	२४)
हरड़जी अभया(लघुबीजा)न०१	१२)
हरड़ अभया—नं० २, ३, ४	८), ६), ४)
हरड़ विजया गोल	२०)
हरड़ अमृता (काबली)— नं० १. २. ३	१०),४), २)

हरीतकी प्रति नग

हरीतकी नग एक ३।) तो.	४०)
हरीतकी ,, ,. ३) ,,	३०)
हरीतकी ,, ,,२।॥) ,,	१५)
हरितकी ,, ,, २॥) ,,	१०)
हरीतकी ,, ,, २।=) ,,	८)
हरीतकी ,, ,, २।-) ,,	६)
हरीतकी ,, ,, २।) ,,	४)
हरीतकी ,, ,, २≡) ,,	३॥)
हरीतकी ,, ,, २=) ,,	३)
हरीतकी ,, ,, २-) ,,	२॥)
हरीतकी ,, ,, २) ,,	२)
हरीतकी १तो. ११माशा की	१।)

आयुर्वेदीय सिद्धांतों की विज्ञान सम्मत विवेचना के लिये एवं नव्य ज्ञान विज्ञान की नित्यप्रति हो रही प्रगति से अपने आपको परिचित रखने के लिये प्रसिद्ध मासिक पत्र 'आयुर्वेद विज्ञान' का स्वाध्याय करें। वार्षिक मूल्य केवल ३)

आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय
२२—फैजबाजार, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी द्वारा आविष्कृत

गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया से रजिस्टर्ड

हज़ारों बार की परीक्षित औषधियां

अनेमीन

(पाण्डु, कामला, हलीमक की वेनजीर औषध)

लाभ—विषम ज्वर के पश्चात् यकृत, प्लीहा बढ़जाने पर यह दवा लाभ करती है। शरीर में रक्त की कमी को दूर करती है। एक सप्ताह के सेवन से ही इसका चमत्कार पूर्ण प्रभाव दिखाई देता है। रक्त कमी, शोथ, जलोदर आदि रोगों में रामवाण है। मात्रा १ गोली सुबह, १ गोली शाम को।

सेवन विधि—दही, तक्र व दूधसे दोनों समय सेवन करावें

१४ गोली के पैकट का मूल्य १॥)

अमीरी जुलाब

योग—**गुलाब की गुलकन्द में कुछ सरल रेचक द्रव्य मिलाये गये हैं।**

गुण—नाजुक और अमीर मिजाज के आदमी या निर्बल स्त्रियों के लिये जुलाबी गुलकन्द बड़ी स्वादिष्ट है और बच्चे से लेकर बड़ों तक जिनका मृदुकोष्ठ हो बड़ी मुफीद है। इसके खाने से न तो जी मचलाता है, न पेट में दर्द, जलन व मरोड़ ही होता है; इतना वेनजीर जुलाब है कि रात्रि को सोते समय ३-४ माशा पानी से या दूध से खा लो सुबह को १-२ दस्त खुलकर आ जाते हैं। जुलाब लेना हो तो सुबह को गर्म दूध या गर्म जल से ३-४ माशे के लगभग दवा खा लें २-३ दस्त खुलकर आ जाएंगे।

२॥ तोले दवा के पैकट का मूल्य १॥)

अनिद्रांतक वटी

नवीन आविष्कृत चांद बरुवा चूर्णकी टिकिया

गुण—जिन रोगियों को खून का दबाव बढ़ जाने के कारण नींद नहीं आती या किसी मानसिक रोग जैसे उन्माद, मालीखोलिया, चिन्ता या अन्य किसी ऐसे विकार से जिसका प्रभाव दिमाग पर बना रहता है और नींद नहीं आती-ऐसी हालत में इस दवा को दो चार दिन खिलाने से ही रोगी को आराम की नींद आने लगती है। उक्त कारण के उन्माद रोगियों में से ८० प्रतिशत को यह पूरा लाभ पहुँचाती है। २॥ तोला के पैकट का मूल्य १॥) रु०, ५ तोला का २॥) है।

मात्रा—१ से २ टिकिया पानी या दूध से दें।

अलसोरीन

(मुँह के छालों की अजीब दवा)

लाभ—किसी भी रोग के कारण मुँह में छाले पड़े रहते हों और जख्म बने रहते हों, ऐसी हालत में यह दवा उक्त छालों को ठीक करने में वेनजीर है। मुँह में छिड़कते ही ठण्डक मिलती है, और दर्द शीघ्र ही जाता रहता है।

½ औंस का पैकट मूल्य १॥)

ऑपथलमीन

लाभ—आंख आना या आंख दुखना, आंख की पुरानी लाली, आंख के गोलकों का दर्द, रोहे या कुकरे, धुन्ध, जाला, आंख से पानी जाना और खारश पर फौरन लाभ दिखाती है। सलाई द्वारा आंख में लगावें। दो ड्राम की शीशी का मूल्य १॥)

आस्थमीन

(बलगमी दमा की उत्तम दवा)

लाभ—यह दवा बलगमी दमा पर अच्छा काम देती है, जिसका दौरा प्रभातको अधिक होता हो और बलगम गाढ़ी, पीली अधिक मात्रामें निकलती हो, कुछ दिन सेवन करने पर दमा जड़ से जाता रहता है।

सेवन—१ गोली पानी या दूध से दें।

१४ गोली के पैकट का मूल्य १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एट्रोफील

(सूखियां मसान रोग की अद्भुत दवा)

गुण—यह दवा बच्चों के **सूखा** रोग (मसान) में अत्यन्त गुण करती है। जिसे लोग **सूखिया** मसान या परछाई पड़ना भी कहते हैं, उसमें यह दवा अत्यन्त लाभ करती है। कुछ दिन सेवन करने से बच्चा खूब मोटा ताजा हो जाता है। १ गोली सुबह १ शाम पानी से दें। १४ गोली के पैकट का मूल्य १।।)।

एलोप्सीन

(बालचर की बेनजीर दवा)

गुण—कभी-कभी एकाएक सिर के या दाढ़ी मूँछ के बाल गिरने लग जाते हैं और दुवन्नी चुवन्नी के बराबर जगह बिल्कुल साफ हो जाती है। इस रोग को बालचर या बालखो भी कहते हैं। इसके लिये हमारी यह औषध अत्यन्त लभदायक है। सेवन-थोड़ी सी मरहमको अँगुलीसे उस जगह पर लगाकर मालिश करें। आधे औंस के पैकट का मूल्य १।।)।

एस. टुथ पौडर

(सर्वश्रेष्ठ सुगन्धित मंजन)

लाभ—दांतों का दर्द, दांतों में पानी लगना, दांतों का कमजोर होना, हिलना, मुँहसे दुर्गन्ध आना इत्यादि दांतों व मसूढ़ों की बीमारियों में लाभ करता है।

एक औंस का पैकट मूल्य ।।)

एस. डिस्पेप्सोल

शाही हाजमा

(बड़ा स्वादिष्ट, पाचक चूर्ण)

लाभ—बदहजमी, खट्टे डकार, वमन, मितली, अतिसार, उदरपीड़ा आदि को दूर करता है। १ पाव के पैकट का मूल्य २।।)

एस. पायोरीन

(पायोरिया की अचूक औषध)

लाभ—यह धारणा अब छोड़ दो कि पायोरिया दांत निकलवा कर ही जा सकता है। एस. पायोरीन के प्रयोग से एक तो गला हुआमांस ठीक होकर पुनःभरने लगता है, दूसरे हिलते हुए दांत फिर मजबूत होजाते हैं।

प्रयोग—ब्रश या दातुन पर दवा को लगाकर मसूढ़ों की जड़ों में मंजन की तरह लगाओ, और कुल्ला कर डालो। एक औंस के पैकट का मूल्य २।।)

एस. बाल घूंटी

प्रायः देखा जाता है कि जहां पेट में नुक्स हुआ कि बच्चों के पेट में दर्द, अतिसार, ज्वर आदिके उपद्रव दिखाई देने लगते हैं। ऐसे समय यह बाल घूँटी बड़ी ही लाभदायी है। इसकी १-२ माशे तक की मात्रा जलमें घोलकर पिला देने से एक दो दस्त खुलकर आ जाते हैं। यदि १ माशेसे कम दिया जाय तो मल का पाचन होजाता है जिससे आते हुए दस्त बन्द होजाते हैं और ज्वर आदि उपद्रव सब जाते रहते हैं। इस घूँटी को सप्ताह में एकबार बच्चों को देते रहें तो किसी किस्म की बीमारी होने का भय नहीं रहता।

२।। तोला का पैकट मूल्य १)

एस. बाल शर्बत

(बच्चों की ताकत के लिए आयुर्वेदिक शर्बत)

यह शर्बत बच्चों की प्रत्येक निर्बलता में अत्यन्त लाभदायक है। बीमारी से उठे हुए बच्चों के लिए तो यह शर्बत अमृततुल्य है, अत्यन्त रक्त-वर्द्धक तथा शक्ति वर्द्धक है। पाण्डु, रक्त की कमी आदि रोगोंमें बड़ों को भी फायदा करता है। मू० ४औंसकी शीशी १।।)

एस. वेजीटेबोल

(विष्टम्भहर और रेचक गोली)

लाभ—रात्रि को सोते समय ३ से ४ गोली तक यदि खाई जायें तो सुबह तक एक दो पाखाने साफ आ जाते हैं, ४ से ६ गोली दिनमें खाई जावें तो चार पांच जुलाब आकर उदर साफ हो **जाता** है।

८० गोली का पैकट मूल्य १।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओजीना

नये-पुराने जुकाम, पीनस की तत्काल फलप्रद औषध

लाभ—जिन व्यक्तियों का जुकाम के कारण दिमाग कमजोर हो या जुकाम बिगड़कर नजला या पीनस बनगया हो, कोई औषध शरीर के अनुकूल न बैठती हो ऐसी दशा में ओज़ीना दो चार खुराकें ही जुकाम ठीक कर देती हैं।

१० तोला माजून का पैकट मूल्य १।।)

कटारीन

लाभ—दमा की बीमारी, पुरानी खांसी में सुबह के समय जब काफी बलगम खारिज होती हो और बलगम की अधिकता से रोगी अधिक कमजोर हो चुका हो तो कटारीन के सेवन से अत्यन्त फायदा होता है।

सेवनविधि—सारी दवाको १० तोला खांड में डालकर मिलालें और शीशी में भर कर रखलें खुराक १½-१½ माशे दोनों समय पानी से दें। १ मास की दवा के पैकट का मूल्य १।।)

कर्णदुःख हर तेल

लाभ—यह तेल कान के दर्द को फौरन बन्द करता है। इससे भिन्न इसमें सबसे बड़ी खूबी यह है कि कान से पानीवत् पाक या राद सदा बहता हो, कान के भीतर जख्म हो रहे हों तो इसके कुछ दिन डालते रहने से कान का बहना बिल्कुल बन्द हो जाता है।

१ तोले की शीशी ।।), २।। तोले की शीशी १)

कफसोल

(खांसी की बेनजीर दवा)

लाभ—राजयक्ष्मा की खांसी को छोड़ कर बाकी प्रत्येक खांसी में इसके सेवन से अवश्य लाभ होता है। श्लेष्मज श्वास व दौरे के श्वास को भी रोकती है। इसके सेवन से पुरानी से पुरानी खांसी भी जाती रहती है

मात्रा—एक रत्ती तक शहदमें दें।

१ औंस के पैकट का मूल्य १।।)

कायाकल्पवटी

लाभ—जिन आदमियों को अस्थि व्रण हो रहे हों, गम्भीर व्रण निकलते रहते हों, नासूर हो गया हो, जिनके जख्म जल्दी न भरते हों, शरीर पर रक्त विकार के भयङ्कर चिन्ह बने रहते हों, ऐसे व्यक्तियों को इन गोलियों के सेवन करने से पूरा लाभ होता है

५० गोली पैकट १।।)

१०० गोली पैकट २।।)

कार्बंकोलीन

लाभ—कार्बंकल फोड़ा, शराविका, कच्छपिका अदीठव्रण आदि जिसके नाम हैं, यह मरहम उस व्रण को राजी करने में अद्भुत प्रभाव दिखाता है। यह मरहम-केन्सर में भी लाभदायक हैं। जो व्रण प्रसरणशील भयङ्कर उपद्रव वाले दाहकारी हों जिनमें मांस, त्वचा गलती चली जाती हो उनमें अत्यन्त शांति देता है।

२।।) तोले के पैकटका मूल्य ४)

कुन्तल-जीवन

(केशवर्धक अद्भुत लेपन)

लाभ—जिन व्यक्तियों के बाल अधिक झड़ते हों या किसी निर्बलतादि कारणों से टूटते रहते हों या आधुनिक कृत्रिम सुगंधित तेलों के बुरे प्रभाव से गिरने लग रहे हों, किसी चिन्ता, शोक के कारण निर्बल होकर झड़ रहे हों अर्थात सामूहिक रूप में समय से पूर्व ही बाल कमजोर होकर गिर रहे हों तो उस दशा में इस लेप को एक सप्ताह लगा कर स्नान करने से बालों को पुनः नवजीवन प्राप्त होता है। बालों की ग्रंथियां इस लेप से पुनः पुष्ट होकर दृढ़ बालों को जन्म देती हैं और इसके १-२ मास इस्तेमाल से बाल इतने सघन लम्बे और दृढ सचिक्कण हो जाते हैं कि स्त्रियां उन्हें देख कर प्रसन्न हो जाती हैं।

प्रयोग विधि—स्नान से पूर्व १ तोला दवा को पानी में घोलकर पतला करलें और उसे सिर में लगालें। कुछ देर मलें और उसके सूखजाने पर स्नान करलें। चाहे साबुन लगा कर स्नान करें कोई हर्ज नहीं। यही सरल इसकी प्रयोग विधि है। २० तोले के पैकट का मूल्य २।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोराञ्जन

(पड़वाल का अद्भुत सुरमा)

लाभ-जिन व्यक्तियों की पलकें सुर्ख और मोटी होकर उनमें फुन्सियां निकला करती हैं तथा आंखों में बाल चुभते रहते हैं, जिन्हें पड़वाल या पद्मकोप भी कहते हैं, इस अञ्जन के लगाने से उक्त रोग समूल जाता रहता है। ६ माशा की शीशी का पैकट १॥)

गनरोल

(सुजाक, मूत्रकृच्छ्र की रामबाण दवा)

लाभ-यह योग इतना अद्भुत है कि तीव्र से तीव्र और जीर्ण से जीर्ण सुजाक में भी अवश्य लाभ करता है इसकी पहली मात्रा से ही लाभ दिखाई देता है कृच्छ्रता दवा खाने के दो तीन घंटे बाद ही बंद हो जाती है और जख्म दो तीन दिन में भर जाता है

२४ कैपसूल का पैकट मूल्य ४)

डाईसेंट्रोल

(पेचिस मरोड़ की अचूक दवा)

लाभ-यह औषध ९९ प्रतिशत व्यक्तियों को पेचिस में अवश्य ही लाभ करती है। कैसा ही मरोड हो, आंव और खून जाता हो गुद-भ्रंश या कांच निकलती हो, दिन में तीन-चार मात्रा खाते ही आराम आजाता है। पुराने से पुराने पेचिश वाले भी इसके सेवन से निराश नहीं हुए।

सेवन विधि-प्रथम हल्का जुलाब देकर पश्चात ६-६ माशे औषध दोनों समय तक्रसे दें।

४ औंस का पैकट मूल्य १॥)

डिलेरीन

(१३ सन्निपातों पर चमत्कृत प्रभाव रखने वाली दवा)

लाभ--मन्थरज्वर, न्यूमोनिया, प्रसूता ज्वर, इन्फ्लूएंजा आदि के होने पर जब अधिक ज्वर होकर मनुष्य को सरसाम या सन्निपात होजाता है और रोगी अधिक बकवास करता है, वेहोश रहता है, ऐसी हालत में यह औषध दो-दो घण्टे बाद अद्रक रस शहद से दें। रोगी की सान्निपातिक अवस्था जाती रहती है। मात्रा--१ गोली। १४ खुराक के पैकट का मूल्य १॥)

छूमंत्र

लाभ-सिर दर्द, दाढ़ दर्द और इनके अतिरिक्त कहीं भी कोई दर्द हो जरासी दवा लगाते ही दर्द छू-मन्त्र हो जाता है, बिच्छू, बरैंया, ततैय्या (भिड़) आदि के काटने पर इसके लगाने से जहर जाता रहता है।

मूल्य प्रति शीशी ।॥), १ दर्जन ८॥)।

दद्रुसंहार

लाभ--यह दवा सचमुच दाद पर लगाने से दाद को जड़ से मिटा देती है, और सबसे बड़ी खूबी तो यह है कि लगती जरा नहीं। बिना तकलीफ के दाद्र को समूल नष्टकर देती है। ½ औंस मरहम की शीशी।≈)

न्यूरेल्जीन

(आधाशीशी की त्वक्वेधी अद्भुत औषध)

लाभ--आयुर्वेद में सर्वप्रथम त्वक्चोभन द्वारा सिर दर्द को लाभ पहुँचाने वाली यह औषधि है। एकबार के त्वक्चोभन करने पर दर्द इस तरह जाता है जिस तरह मन्त्र द्वारा भूत। एक शीशी ५०-६० बीमार के लिये काम में आ सकती है। मूल्य प्रति पैकट १॥)

नज़लोल

(नजले की अपूर्व औषध)

लाभ--नजला चाहे हलक में गिरता हो या नाक के रास्ते से बहता हो प्रत्येक प्रकृति के व्यक्ति को अवश्य ही लाभ करता है। उष्ण प्रकृति व्यक्ति इसे शर्बत केसाथ सेवन करें। ८० गोली का पैकट मू० १॥)

न्यूमोनिओल

(न्यूमोनिया में ८० प्रतिशत लाभकारी दवा)

लाभ--न्यूमोनिया की प्रत्येक अवस्था में इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवन कराते रहने से फेफड़े व श्वास नाली पर पड़ा हुआ न्यूमोनिया का प्रभाव दब जाता है। हृदय की निर्बलता में, व हार्टफेल की स्थिति में यह बहुत लाभ करता है। १४ गोली का मूल्य १।।)।

पुंसोलीन (तिला)

लाभ—ध्वजभंग (नामर्दी) चाहे प्रकृति विपरीतमैथुनसे हुआ हो अथवा अति मैथुनसे हुआ हो, एकबार तो यह अपना फल अवश्य दिखाता है और नष्ट हुई शक्तिकोपुनः लौटा लाता है।

एक सप्ताह के सेवन योग्य दवा का मूल्य १।।)

पुंसोल

(नामर्दी की अचूक दवा)

लाभ—जिन व्यक्तियोंको इच्छानुसार समय पर चैतन्योदय नहीं होता, या मैथुनके समय शिथिलता आजाती है वह विकार चाहे हस्तमैथुनजन्य या क्षीण वीर्यके कारण अथवा मानसिक हो, सब में लाभ करता है।

१४ खुराक का मूल्य १।।)

प्रोराईगोन

(खारिश, खुजली की दवा)

लाभ—यह औषध प्रत्येक प्रकार की गीली सूखी छूतदार खारिश (खुजली) में अत्यन्त लाभप्रद है।

प्रयोग – दवा में १० तोला तेल सरसोंका मिलाकर मालिश करें और बाद में साबुन लगाकर स्नान करें।

१ पैकट का मूल्य १।।)

प्लूरीन

(पार्श्वशूल या दर्द पसली की दवा)

लाभ—सर्दी लगकर या न्यूमोनिया के आरम्भ में जो श्वास के साथ पसलियों के नीचे दर्द उठ रहा हो और दर्दके कारण श्वास न लिया जाता हो, उस हालत में इसकी एक मात्रा देते ही दर्द जाता रहता है। यह जोड़ों के दर्द, बदन के दर्द, पेट के दर्द में भी अपना चमत्कार दिखाती है। आधे औंस के पैकटका मूल्य१।।)

फीवर पिल्स

लाभ—हमने हजारों रोगियों पर उक्त दवा को आरम्भिक ज्वरावस्था में देकर इसका खूब अनुभव लिया है। हर प्रकार के साधारण ज्वर को यह दवा एक से दो दिन में ही अवश्य उतार देती है। जिनका बुखार दूर नहीं होताउनके ज्वर के रूप को भी यह दवा प्रकट कर देती है और वह चौथे पांचवें दिन ज्वर का रूप स्पष्ट हो जाता है। इसके सेवन से कभी कोई कष्ट नहीं बढ़ता।

८० गोली के पैकट का मूल्य १।।)

मकर ध्वजवटी

शक्ति वर्धक प्रसिद्ध योग

योग—स्वर्ण-घटित मकरध्वज, केसर, कस्तूरी आदि मूल्यवान द्रव्यों के योग से यह दवा तय्यार की गई है। निर्बलता, प्रमेह, धातु क्षीणता, शीघ्रपात, स्वप्नदोष आदि में लाभदायी पाई गई हैं। इस योग की मांग अधिक देखकर हमने भी निर्माण करना आरम्भ कर दिया हैं।

१४ गोली का पैकट मूल्य ३)

माजून सिर दर्द

लाभ—कुछ व्यक्तियों को दौरे से सिर दर्द की बीमारी होती है। दर्द इतना जोर का होता है कि रोगी अत्यन्त व्याकुल हो जाता है। कुछ बीमारोंको वमन भी आती है। सिर दर्द दो तीन दिन रह कर जाता रहता है। कई व्यक्तियों को दर्द आरम्भ होने के समय पीठ की ओर से दर्द सिरकी ओर बढ़ता प्रतीत होता है। यह दर्द ऐसा खराब है कि कई २ साल पीछा नहीं छोड़ता। हमने उक्त माजून का अनुभव कई वर्ष से किया है। इस माजून को यदि दो चार महीना सेवन किया जाय तो पुराने से पुराना सिर का दर्द जाता रहता है।

मात्रा—६ माशे से १ तोलातक। दोनों समय पानी से सेवन करना चाहिए। मूल्य एक पाव का पैकट ४।।)

मेहोरीन

[प्रमेह, धातुक्षीणता, जरियान की दवा]

लाभ—पेशाब के साथ मिलकर आने वाली या पेशाब के पीछे आने वाली धातु को रोकने में यह दवा बेनजीर है, तथा बहुमूत्र में बड़ा ही लाभ करती है। साथ ही बलवर्द्धक, शक्तिवर्द्धक है। १४ गोली की शीशी का मूल्य १।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेमो

[सूखी खांसी, तालुकण्टक, कौवा गिरने की दवा)

लाभ—जब बच्चोंके दांत निकलनेवाले होते हैं तो प्राय: बच्चों का तालु लटक जाता है और हरे पीले दस्त आने लग जाते हैं। बच्चा रात दिन सिर मार कर रोता रहता है। गर्दन सूख जाती है, कान की लौर पतली पड़ जाती है,मन्द-मन्द ज्वर बना रहता है। ऐसी हालत में रोगीके तालु भागको उक्त दवा लगी अंगुली से दो-चार बार उठाने पर और इसी दवाको दिनमें दो तीन बार खिलाने पर अवश्य हीलाभ होता है। इससे भिन्न जिन व्यक्तियों को सोते समय सीधा लेटने पर सूखी खांसी उठती है उनको इसके सेवन से अद्भुत लाभ होता है। मूल्य १ औंस का पैकट १।।)

रसवटी

(संग्रहणी के लिये आविष्कृत)

लाभ—पुराने अतिसार ग्रहणी जिसमें भोजन अपक्व रूप में ही दस्तों के द्वारा निकल जाता है पेट में गुड़-गुड़ाहट होकर प्राय: दस्त आते हैं। यह रसवटी ऐसी तकलीफ को दो चार दिन में ही ठीक करदेती है मल तो दो तीन दिन में बन्ध कर आने लगता है और भूख बढ़ जाती है।

इसमें अफीम, धतूरा बीज आदि कोई नशीली चीज नहीं पडती, यह तो कुछ वनस्पतियों का सार है।

सेवन—तक्र से १—२ गोली (मात्रा ४ माशे तक)

मूल्य ५ तोला २।।), १० तोला ४)

रोमेटीन

(गठिया या आमवात को तत्काल लाभ करनेवाली दवा)

लाभ—सन्धिवात, चलितवात, नुकरस, गठिया आदि व्याधियां चाहे उपदंश जनित हों या स्वतन्त्र नई पुरानी सब में अवश्य लाभ पहुंचाती है।

मूल्य ५० गोली का पैकट ३), १००) गोली का ५।।)

रिनालकोलीन

(पथरी निकालने वाली अद्भुत दवा)

लाभ—यह दवाई दर्द गुर्दा व पथरी की अचूक औषध है। १ मात्रा देते ही दस मिनट में वृक्कशूल बन्द हो जाता है और मूत्र साफ आता है। कुछ दिन में धीरे-धीरे सारी पथरी घुलकर बाहर आजाती है, हजारों बार की आजमाई हुई औषध है। १० तोला कच्चे दूधमें पावभर पानी मिलाकर उसके साथ दोनों समय सेवन करें।

मात्रा ६ माशे। ४ औंस पैकट का मूल्य २।।)

रक्त शोधक अर्क

(५० के लगभग रक्तशोधक औषधियों का अर्क)

लाभ—बरसातके दिनोंमें बच्चों को सफेद पानीवाली फुन्सियां निकलती व फूटती रहती हैं जहां फुन्सी निकलती है वहां छाले जैसी सूरत बन जाती है। बड़े आदमियों को उपदंश, आतशक आदि के कारण रक्त के विकार हो जाते है। उनको यह अर्क बहुत फायदा करता है। हजारों बार आजमाया हुआ उत्तम रक्त-शोधक अर्क है

मूल्य एक पौंड अर्क १।।)

ल्यूकोरीन टेबलेट

(प्रदर या ल्यूकोरियाकी अचूक औषध)

लाभ—स्त्रियों को सफेद, गुलाबी, रंगबिरंगा कई प्रकार का द्रव योनि मार्ग से जाता है जिसके कारण कमर में दर्द, भूख की कमी व निर्बलतादि बढ़ जाती है, इस दवा के सेवन से सब दूर हो जाती है। १४ टिकियों का पैकट मूल्य १।।)

ल्यूकोरीन वर्तिका

(प्रदर-विनाशनी-वर्ती)

लाभ—यह वर्तिका इतनी फलप्रद है कि रात्रि को एक वर्ती रखने पर अगले दिन ही इसका चमत्कारपूर्ण फल दिखाई देता है। अनेक बार केवल वर्ती के प्रयोग से ही प्रदर की शिकायत जाती रहती है।

१४ बत्ती के पैकट का मूल्य १।।)

विषमोल

(कुनैनसम लाभकारी मैलेरिया की दवा)

लाभ—सर्दी से लगकर चढ़ने वाले बुखारों में तो यह दवा रामबाण है और कुनैन से निम्न बातों में विशेष है—इसे तीसरे नहीं दूसरे चढ़े बुखार में दीजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरे गर्मी खुश्की नहीं करती, चौथे शर्बत निम्बू खटाई आदि के साथ दें, पांचवें लम्बे चौड़े परेहज की जरूरत नहीं। सेवन—१ टिकिया सुबह एक टिकिया शाम को निम्बू के शर्बत या पानी से सेवन करायें। मलेरिया के दिनों में यदि ५--७ दिन एक २ गोली नित्य सेवन कर ली जाय तो फिर मलेरिया ज्वरके होनेका भय नहीं रहता। मूल्य ८० गोली का पैकट १॥)

व्रणोद्धूलन

(फोड़ा फुन्सी का अद्भुत पांउडर)

लाभ—छोटे-छोटे बच्चों को वर्षाकाल में प्रायः फोड़े फुन्सियां व पाका निकलता रहता है और कई कई महीने बच्चे विचारे इन फोड़े फुन्सियों से तकलीफ उठाते रहते हैं। हमारा यह धूड़ा ऐसा है जिसे लगाते ही जलन दर्द, पीप, पानी सब बन्द हो जाते हैं और रोते हुये बच्चों को अपूर्व शान्ति मिलती है। यह धूड़ा या उद्धूलन स्फोटी (छाले) फैलने वाली फुन्सियां, खारश के जख्म व एक फुन्सी के लाग से बनने वाली अन्य फुन्सियां सब में आश्चर्य-जनक लाभ करता है।

मूल्य ५ तोला १॥)

शाही नस्य

लाभ—सिर दर्द, जुकाम, नजला नाक में छिछड़ा और नकसीर जाना आदि कष्टों में सेवन करके चमत्कार-पूर्ण लाभ देखिये। ६ माशे वाली शीशी का मूल्य।=)

एक दर्जन शीशी का मूल्य ४)

शाही सुरमा

लाभ—नेत्र ज्योति का कम हो जाना, चश्मा लगाने की आदत पड़ना, नेत्रकी खारिश, पानी जाना व मैल आना आदि कष्ट इसके सेवन से दूर होकर अद्भुत लाभ होता है।

१॥ माशा छोटी शीशी।), ३ माशा बड़ी शीशी ॥)

श्लेष्मान्तक अवलेह

(दमा की नव्य आविष्कृत औषधि)

कटारीन और अस्थमीन तो दमा की विशेष विशेष अवस्था में लाभ करते है। किंतु श्लेष्मान्तक अवलेह प्रत्येक प्रकार के दमा पर अद्भुत लाभ दिखाता है। यह दौरा तो नहीं रोकता, पर एक एक तोला इसे दोनों समय सेवन करने पर धीरे धीरे दमाका दौरा कम होता चला जाता है। यही नहीं दमा का मूल कारण-सुवह सोकर उठतेही खांसी आना और वल-गम निकलना-यह जो नित्य प्रति होता रहता है इसे शनैः २ कम करता है। धीरे धीरे रोगी को इतना आराम मिलता है कि वह चित्त चारपाई पर लेटने लग जाता है। और चित्त लेटने पर गले में खराश होकर जो खांसी आती है वह बिलकुल जाती रहती है। थोड़े दिन में ही इसके सेवन से बलगम का उत्पन्न होना, गले में सरसराहट, नाक का बन्द होना, दनकशी वगरह जितने भी दम के चिह्न हैं सब जाते रहते हैं। प्रयोगविधि—१ तो० अवलेह को १० तोला श्वासान्तक अर्क के साथ दोनों समय सेवन करें। मूल्य १ पाव पैकट का ४)

श्वासान्तक बटी

गत वर्षों में न जाने कहां से श्वास रोगियों की संख्या एकाएक हमारे औषधालय में बढ़ गई। रोगी ऐसे पुराने आये जिनको "श्लेष्मान्तक अवलेह" से लाभ तो होता था पर प्रभातको श्वासारम्भक खांसी का जो ठसका उठता था वह जल्दी न रुकता था, वही ठसका धीरे २ कुछ मिन्टों में श्वासावरोध की ओर रोगी के श्वासको बदल देता था इसको कैसे रोका जाय? इसके निवारणार्थ कई योग बनाये, अन्त में यह गोलियाँ कारगर सिद्ध हुई। इन गोलियों को मिश्री की डली के साथ मुंह में डालकर सुबह, शाम व रात तक ८-१०-१२ गोली तक चूसते रहने से इसका इतना प्रबलप्रभाव देखा गया कि श्वासावरोध के साथ श्वास के खिंचकर आनेका कष्ट घटतेर बिल्कुल घटगया और रोगी अनुभव करने लगा कि मेरा दमा दम के साथ न जाकर "श्लेष्मान्तक अवलेह और श्वासान्तक बटी" से अवश्य जाता रहेगा।

इन दोनों औषधियों के दो दो, तीन तीन माह सेवन से स्वस्थ होने की सम्भावना विश्वास में परिणत होते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखी गई है। मूल्य ५० गोली के पैकट का २) १०० गोली के पैकट का ४)

श्वासान्तक अर्क

यह अर्क भी श्वासके रोगियोंके लिये ही तय्यार किया गया है। कई रोगियों पर श्लेष्मान्तक अवलेह के साथ दिया गया। जिनका गला खुश्क रहता था या बलगम बहुत खुश्क थी खांसी भी आती रहती थी उन्हें इस अर्कके पीते ही श्लेष्म शीघ्र निकलने लग पड़ी और रोगी को उससे चैन मिला। मूल्य प्रति पौंड १)

शीतपित्तान्तक रस

शीतपित्त या उदर्द ऐसा साधारण किंतु अत्यन्त कष्टदायक रोग है जो कई२ वर्षों तक रोगी का पीछा नहीं छोड़ता। वैद्य और डाक्टर इसे रक्तविकार समझ कर जो चिकित्सा करते हैं उसमें सफल नहीं होते। १० वर्ष से अनुभव लेते २ अनुभव से यह रस ऐसा सिद्ध हुआ है कि ४-६ मात्रा देने पर पुराने से पुराना उक्त रोग जड़ से चला जाता है। पथ्य कोई नहीं, मात्रा १ रत्ती शहद से दोनों समय।
मूल्य १ तोला ४) रु०।

शीत वातेश्वर रस

प्रभाव–हृदय पर होता है।

गुण–बहुतसे हृदय रोगसे पीड़ित रोगियों को यह कष्ट देखा जाता है कि एकाएक ठण्डा पसीना आने लगता है और स्पर्श से शरीर ठण्डा लगता है हाथ-पैर भी ठण्डे शीत होजाते हैं। हृदय बैठता हुआ या उड़ता हुआ प्रतीत होता है कुछ व्यक्ति तो व्याकुलता वश बतला भी नहीं सकते, कुछ कहते हैं हमें कुछ हो रहा है। हृदय की गति रुक-रुक कर चलती है, उस समय हृदयावसादके लक्षण दिखाई देते हैं, इस दशा में यह 'शीत-वातेश्वर रस' अमोघ सिद्ध हुआ है, नव्य आविष्कृत सद्यफल-प्रद रस है।

मात्रा–१ रत्ती शहदसे मिलाकर चाट लें या खांडमें डालकर पानी से सेवन करें। कुछ दिन सेवन करने पर हृदय रोगसे मुक्ति मिल जाती है।

मूल्य १ तोला २)।

श्री सुख धारा

(प्रत्येक घर में सदा सर्वदा रहनी चाहिये)

(१) पेटका दर्द, दांत दर्द, सिरदर्द वगैहरा कोई दुःख दर्द हो उसको फौरन हरन कर सुख देने वाली धारा।

(२) बिच्छूके डंक का दर्द, वर्य्या, ततैय्या के डंक का दर्द और कनखजूरा के जहर का दर्द दूर कर सुख लाने वाली धारा।

(३) वमन, रेचन से उत्पन्न कष्ट, विशूचिका की भयंकर व्यथाको मिटाकर सुख पहुंचाने वाली धारा।

प्रयोग–पेटदर्द, वमन, कालरा में ५–१० बूंद खांड में डालकर पानी से दें। बिच्छू, वर्य्या, ततैय्या के डंक मारे स्थान पर लगावें। दांत दर्द, दांत में कीड़ा लगा हो, रूई की फुरेरी बनाकर लगावें, बहुत अच्छी कीट विनाशक, कीटाणु नाशक, शरीर संरक्षक है।
छोटी शीशी का मूल्य १) बड़ी शीशी २)
छोटी शीशी १ दर्जन १०) बड़ी शीशी १ दर्जन २०)

सारस्वत वटी

(हिस्टीरिया की दवा)

यह औषध अभी तैयार की है और कई रोगियों पर आजमाया है दिमागी कमजोरी से या मानसिक व्यथा से हिस्टीरिया का दौरा होता हो तो उसमें लाभ करती है। यह गोलियां नींद न आना मानसिक उद्वेग आदि मानसिक कष्ट में भी लाभ करती हैं। १०० गोली का मूल्य ३) रु० वी. पी. खर्च भिन्न।

सेवनविधि–पानी से एक-एक गोली दोनों समय। वैद्य लाभा-लाभ से सूचित करें।

स्वदेशी चाय

जुकाम, खांसी, गले की खर्खरी, साधारण ज्वर, दर्द बदन, सर्दी लगना, हड़ फूटन इत्यादि में इसका सेवन चाय की तरह करें। इसमें चाय जैसे नशे का दुर्गुण नहीं। मूल्य प्रति पैकट आधा पाव ।।) एक छटांक ।-)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वप्नोल

(स्वप्नदोष की अपूर्व औषध)

लाभ--अधिक स्त्रीचिन्तन, कुत्सित विचारधारणा से उत्तेजनाआकर स्वप्नावस्था या अज्ञातावस्था में रात्रि को वीर्यपात होना और सप्ताह में कईबार होना इत्यादि ऐसे विकारों को रोक देता है । २८ गोली का पैकट मूल्य २॥)

सिफलोल

(उपदंश-आतशक की दवा)

लाभ--बिना मुँह आये ही यह दवा उपदंश को जड़ से उखाड़ देती है और पुराने से पुराने आतशक के फिसाद को दो सप्ताह में दूर कर देती है ।

सेवन विधि--दवाई जो केपसूल में बन्द है केपसूल सहित पानी से निगल जाना चाहिये, दोनों समय ।

१४ केपसूल का बन्द पैकट मूल्य २॥)

सुरमा ज्योतिवर्द्धक

(नेत्र ज्योति बढ़ाने वाला सुरमा)

लाभ--जिन व्यक्तियोंकी नेत्र ज्योति किसी भी कारण से कम हो रही है वह एकबार अवश्य ही प्रयोग कर के देखें नेत्र की ज्योति बढ़ाने में इस जैसा उत्तम सुरमा नहीं मिलेगा । ३ माशे का पैकट मूल्य ॥)

६ माशे का ,, १)

हिमसोल

(गर्मी, बुखार, घबराहट को दूर करने वाली दवा)

लाभ--बुखार के अधिक घबराहट, अधिक गर्मी, धूप से लू लगना, चक्कर, प्यास आदि कष्ट बढ़नेपर इसका सेवन कराइये और अमृततुल्य लाभ देखिये । इसकी समता की शीतलता उत्पन्न करने वाली अन्य औषधि आपको किसी भी चिकित्सा में नहीं मिलेगी ।

एक औंस का पैकट मूल्य १॥)

हुपीन

(बच्चों की काली खांसी की एकमात्र दवा)

लाभ--काली खांसी या कुत्ता खांसी, ऐसी बुरी बीमारी है कि चिकित्सा कठिन है, किन्तु इस दवा के सेवनसे अवश्य लाभ होताहै। ½ औंसकेपैकटका मूल्य १॥)

हैडीक्योरीन

(सिर दर्द की चमत्कारिक दवा)

लाभ--सर्दीसे, गर्मीसे, कब्ज से और बुखार के समय होने वाले दर्द में इसे दीजिये, ५-७ मिनट में इसका अद्भुत लाभ देखिये । इसको कितनाही सेवन करें हृदय और रक्त पर कोई बुरा प्रभाव नहीं होता । पुराने से पुराने सिर दर्द में या दौरे से होने वाले दर्द में भी यह अपना लाभ दिखाती है ।

४० टिकियों का पैकट मूल्य १॥)

लक्ष्मणारिष्ट

(आसव-विज्ञान)

मुझे यह योग एक तपस्वी बाबा ने बताया था । योग बनाने का अवसर १९२१ में लगा था । मैंने जिन वन्ध्या स्त्रियों को सेवन कराया इसके सेवन से ५० प्रतिशत के सन्तानें हुई किन्तु पुरुषों में यदि वन्ध्यत्व हो उसमें इससे लाभ होता है या नहीं ? इसका मुझे ज्ञान नहीं था, मैंने यह योग अपने लिखे आसव-विज्ञान में प्रकाशित कर वैद्यों से प्रार्थना की कि इस योग को बना कर उसके लाभालाभ से हमें सूचना दें। इस ३० वर्ष में एक दर्जन वैद्य इस योग को बनाकर समय-समय पर हमें सूचना देते रहे हैं, उनमें से तीन वैद्यों ने लिखा है कि यह योग स्त्री-वन्ध्यत्व में जितना लाभ करता है उससे अधिक पुरुषों को लाभ करता है ६० वर्ष की आयु को पहुंचे व्यक्ति इसके सेवन से सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ हुए ऐसा उनके पत्रों से प्रकट हुआ । इसीलिए हमने इसे विक्रयार्थ निर्माण करने का निश्चय किया । आशा है जो वैद्य इसे बनाने में असमर्थ हैं इससे लाभ उठायेंगे । मूल्य प्रति पौण्ड ३) सेवन विधि साथ है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुटाई, पिसाई, गोली, टिकिया बनवाई भाव

कोई भी दवाई जो एक सेरसे कम होगी कुटाई १)सेर
१ सेर से ५ सेर तक दवाई की कुटाई ॥|) ,,

नोट नं० १—अधिक दवाई का चूर्ण कराना हो तो रेट विशेष पत्र-व्यवहार द्वारा तय करें।

नो० २—कुचला, निर्मली, चिरायता, विधारा-मूल आदि कठोर चीजें यदि कोई सेर दो सेर कुटावेगा तो इनकी कुटाई १॥) सेर होगी। मन दो २ मन कुटाने के लिये पत्र-व्यवहार करें।

गोली, टिकिया बनवाई

$\frac{1}{2}$ रत्ती से २ रत्ती तक का भाव २) पौण्ड।
२$\frac{1}{2}$ रत्ती से ५ रत्ती तक १॥) पौण्ड।
६ रत्ती से १ मासे तक १) पौण्ड।

इसमें पालिश कराई भी शामिल है।

चिकित्सा सम्बन्धी उपकरण

शरीर-ताप-मापक (Thermometer)—जील का मूल्य ३)
,, ,, जापानी १।)
दवाई मिलाने की छुरी (Spatula)—मूल्य—बढिया १) साधारण ९।)
गर्म पानी की रबड़ की बोतल (Hot Water Bottle)—का मूल्य ५)
फुप्फुस परीक्षा यन्त्र (Stethoscope)— मूल्य १०)
सूचिकाभरण पिचकारी (English Record Syringe) २ c.c. का मूल्य ६), ५cc ८॥), १० c.c. ११)
प्रोब (शलाका)—मरहम-पट्टी के लिए मूल्य ॥)
कान धोने की पिचकारी (Ear Syringe)—२ औंस ७॥) ४ औंस १०)
दांतों का जम्बूर (Universal Tooth Forceps)—मूल्य ६)
औषध तोलने का कांटा मय बाट (Balance)— ,, ६) बढिया निकल वाला ८)
द्रव औषध मापक ग्लास (Measure Glass)-२ड्राम॥।=) १ औंस १।) ४ औंस १॥)
ड्रापर (Droppers)—बढिया १) दर्जन
दुग्धआचूषक-ब्रैस्टपम्प (Breast pump)— मूल्य १॥)
ग्लिसरीन सिरिंज (Glycerine Syringe)- २ औंस ६)
बस्ति यंत्र (Irrigator) नाली व टूटी सहित- मूल्य ५॥)
स्पिरिट लैम्प (Spirit lamp) कांच की मूल्य २)
कैंची(Scissors)—बढिया मूल्य २)

पावर और हाथ से चलने वाली टिकिया बनाने की मशीन

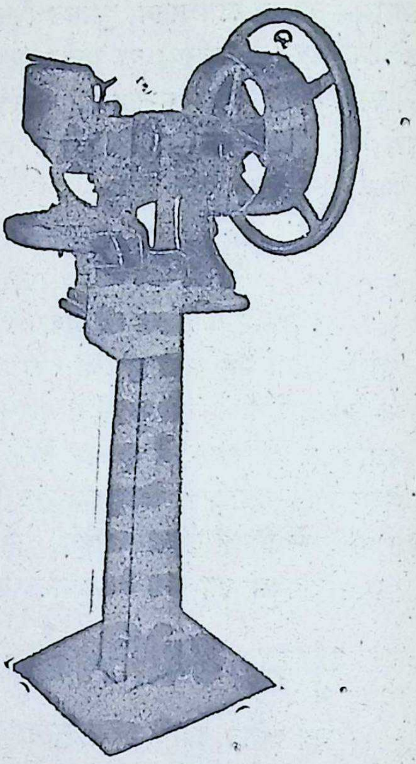

$\frac{1}{2}$ रत्ती से लेकर $1\frac{1}{2}$ माशे तक की टिकिया बनाने वाली बड़ी मशीन। मशीन के साथ दो साइज डाई पंच होंगे। मूल्य ४००)रु०

स्थायी ग्राहकों के लिये विशेष रियायत

कार्यालय के नियमानुसार पेशगी भेजना आवश्यक है यदि आप १०) रुपये एक बार भेज कर स्थाई ग्राहक बन जाएंगे तो आप को निम्न सुविधाएं दी जाएंगी।

(१) फार्मेसी की प्रस्तुत तथा पेटेन्ट दवाईयों पर एक-आना प्रति रुपया (एजण्ट न होने पर) कमीशन दिया जाएगा

[२] बार-बार पेशगी भेजने की आवश्यकता न रहेगी स्थाई ग्राहक नम्बर देना पर्याप्त होगा।

[३] यह रकम स्थाई ग्राहक न रहने पर वापिस कर दी जायगी।

मैनेजर
पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी
अमृतसर, व देहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवास पेटिका नं० १ जर्मन डिजाईन

स्टील क्लिप सहित ऊपर चमड़ा चढ़ा हुआ साईज ११$\frac{३}{४}$ × ६ × ८ इंच इसमें होमियोपैथिक ४ ड्रामकी ४८, १ औंसकी १२ और २ औंस स्टापर ४ शीशियां आती हैं।

मूल्य ३४)

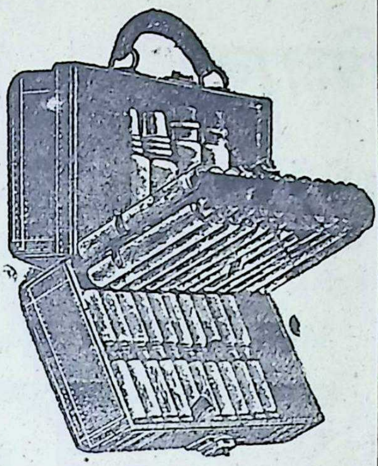

प्रवास पेटिका नं० २ जर्मन डिजाईन

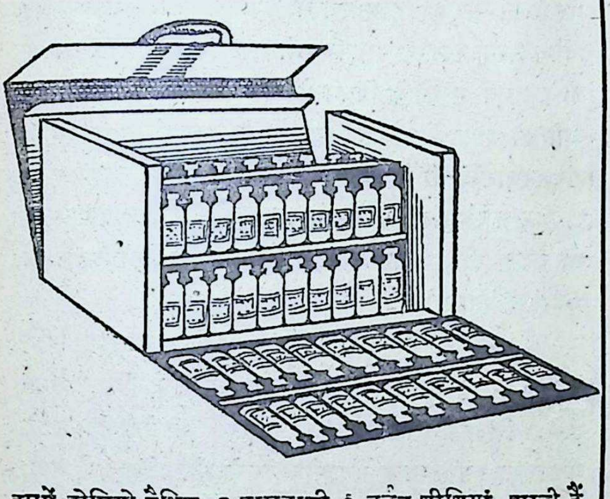

इसमें होमियो-पैथिक ७ ड्राम्वाली ६ दर्जन शीशियां आती हैं मूल्य २४)

प्रवास पेटिका नमूना नं० ३

बहुसंख्यक वैद्यों के हमें पत्र प्राप्त हुए हैं जिस में प्रार्थना की गई है कि प्रवास पेटिकामें दो साइज आने चाहियें। अर्थात् बड़ी शीशियोंके साथ छोटी शीशियां भी आसकें अब हमने प्रवास-पेटिका नमूना नं० ३ भी तैयार कराया है। इसमें होमियोपैथी की २ ड्राम वाली २४ शीशी, ४ ड्राम वाली १८ शीशी; तथा १ औंस की लम्बी गोल ८ शीशी होती हैं। इस का साईज़ 9$\frac{1}{2}$×6$\frac{1}{2}$×4$\frac{1}{2}$ इंच है। मूल्य २१)

औषध पाकेट बक्स नं० १

यह बक्स बटुए के समान है। बक्स सुन्दर और छोटा होने से जेब में आ सकता है। प्रत्येक वैद्य को यह बक्स अवश्य रखना चाहिए। इस में २ ड्राम होमियोपैथिक की १८ शीशी आ सकती हैं। अगर आप वैद्य हैं और दूर रोगी देखने जाना है बड़ा बक्स नहीं ले जा सकते तो इसे आराम से जेब में डालकर ले जाइये। मूल्य शीशी युक्त ६)

औषध पाकेट बक्स नं० २

इसमें २ड्राम होम्योपैथिक की १२शीशियां आसकती हैं। मूल्य ५)

नोटः—प्रवास पेटिकाएं ग्राहक की इच्छानुसार डिजाईन प्राप्त होने पर भी बना कर भेजी जाती हैं। परन्तु आधी रकम पेशगी आनी आवश्यक है।

हाथ से गोलियां बनाने की मशीन

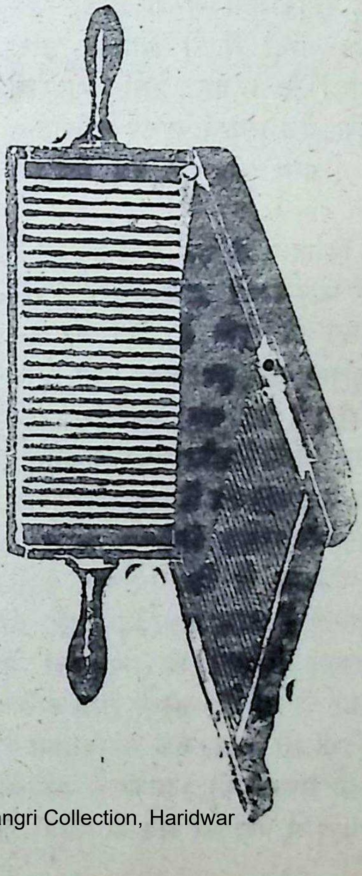

इस मशीन से बड़ी आसानी से एक व्यक्ति दिन में ४—५सेर दवाई की गोलियां तैयार कर सकता है। गोली का साइज २$\frac{१}{२}$ से ३ रत्ती का रहता है।

मूल्य ३०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य की अनुपम कृति

भस्म-विज्ञान

भाषा-टीका सहित दो भागों में मूल्य १०)

धातु भस्मों व रस-चिकित्सा के आविष्कारक कौन थे वह कब हुए ? और आयुर्वेद में रस-चिकित्सा का प्रवेश कैसे हुआ ? साधु सन्तों, महात्माओं की भभूती, सिद्धों की रस सिद्धियों का ज्ञान वैद्यों तक कैसे पहुँचा ? इसके इतिहास का ज्ञान आयुर्वेदज्ञों को बिलकुल नहीं, वास्तव में रस चिकित्सा सिद्धों महात्माओं की देन है। इसका सही इतिहास जानना चाहते हो तो भस्म-विज्ञान का उपोद्घात पढ़िये।

इसमें ८४ सिद्धों का सचित्र विवरण सहित इतिहास दिया है, जिसको खोजने में स्वामीजी ने भारतवर्ष के बड़े-बड़े पुस्तकालयों में जा-जाकर १४० से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थों में से खोजकर सारा विवरण ढूंढ़ निकाला है। वह ऐसा अकाट्य प्रामाणिक ग्रन्थ है कि वैद्य समाज पढ़कर स्तम्भित व चकित रह गया है। ग्रन्थ की यही एक विशेषता नहीं।

सब से बड़ी विशेषता तो इस ग्रन्थ की यह है कि जितने भी सिद्धों महात्माओं द्वारा भस्में बनाने की विधियां आविष्कृत हो चुकी हैं तथा जो रस ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हुए उनमें जो भस्म बनाने की विधियां आई हैं वह सब अप्रकाशित होने के कारण वैद्य समाज उनके निर्माण को नहीं जानता, उनको ढूंढ कर सप्रमाण इस ग्रंथ में संग्रह किया गया है। यही नहीं, इससे भी अधिक विशेषता यह है कि यूनानी, मिश्रानी चिकित्सा में जिन पत्थरों, रत्नों, धातुओं की भस्में बनती हैं उनका ज्ञान भी वैद्यों को बहुत कम है वह समस्त विधियां भी इस ग्रन्थ में सप्रमाण संकलित कर दी गई हैं। इससे भिन्न अनेक धातु भस्मों की विधियां जो अब तक महात्माओं के गुरु परम्परा में चली आ रही थी, उनमें से अनेकों विधियों को बड़े प्रयत्न से प्राप्त कर सब को स्वामी जी ने प्रकट कर दिया है। पुस्तक कैसी है ? इस पर विद्वान् वैद्यों की सम्मतियों से इसका अन्दाजा लगाइयेगा।

भस्म विज्ञान पर कुछ सम्मतियां

स्वास्थ्य, कृष्ण गोपाल धर्मार्थ औषधालय

कालेड़ा बोगला

रस, भस्म विज्ञान भारतीय चिकित्सा विज्ञान का महत्वपूर्ण विषय है, इस विषय के सभी ग्रन्थों में प्राय: रस-भस्मों का परिचय सूक्ष्म रूप से मिलता है। किन्तु विशद विवेचन सह स्वतन्त्र पुस्तक अभी तक प्रकाशित नहीं हुई थी जो रस एवं भस्मों के विषय में ठोस शिक्षा दे सके। इस कमी को लक्ष्य में रख कर आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् स्वामी हरिशरणानन्द जी ने अनेक रस ग्रन्थों के आधार स्वरूप बहुत परिश्रम करके संकलित कर सुन्दर हिन्दी टीका सह इस पुस्तक की रचना की है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिये लेखक का मैं बधाई देता हूं।

इस ग्रन्थ में भस्म बनाने की प्रचीन शास्त्रोक्त विधि विभिन्न प्रमाण भूत ग्रन्थों से ही हैं उसे नव्य विज्ञान संमत उल्लेख किया है और महत्वपूर्ण सूचनायें भी देदी हैं। इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में उपोद्घात के भीतर लेखक ने धातु, उपधातु, रस, रत्न आदि के सम्बन्ध में विज्ञान सम्मत विस्तृत विवेचन किया है, यह अनुभव लेखक को भारतीय रसशास्त्र एवं नव्य विज्ञान सम्पन्न रसायन शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् डा० प्रफुल्लचंद्रराय द्वारा परम्परागत मिला। फिर काफी धन खर्च द्वारा दीर्घ काल पर्यन्त परिश्रम करके तथा विश्लेषण करवा कर अनुभव प्राप्त किया है इस तरह जो अनुभव मिला वह लेखक ने हृदय खोलकर पुस्तक में दे दिया है।

पुस्तक के प्रारम्भ में रस शास्त्र का इतिहास दिया है, एवं रसाचार्यों के नाम, परिचय तथा समय का उल्लेख भी साथ-साथ दिया है, संपूर्ण भस्मों का विस्तृत विवेचन किया है एवं साथ में हिन्दी टीका देकर और अपना अनुभव दर्शाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक को अत्यन्त उपयोगी बना दिया है यह पुस्तक फार्मेसी वालों के लिये मार्गदर्शक है, एवं आयुर्वेद के विद्वान्, सामान्य चिकित्सक, छात्रगण तथा सर्व साधारण आयुर्वेद प्रेमी सज्जनों के लिये अत्यन्त उपयोगी होगी मैं हृदय से इसका प्रचार चाहता हूं।

जय आयुर्वेद, जोधपुर अगस्ताङ्क १९५४—

भस्म-विज्ञान के दो भाग हमारे पास आये हैं। प्रथम में तो शायुर्वेद में धातुओं का उपयोग कब कैसे हुआ और उसके बाद रस विद्या तथा शिव, नागार्जुन. ८४ सिद्ध आदि के सम्बन्ध में विभिन्न मत मतान्तरों का वर्णन है। पारद क्या वस्तु है? इस विषय पर लेखक ने प्रगतिशीलता से काम लिया है और लेखक ने जगत् को एक नवीन देन दी है। आगे द्रुति विधानों के बाद महारसों, वायु और वायव्य तत्त्वों, धातुओं की रचना और उसके कार्यों पर गम्भीरता पूर्वक प्रकाश डाला गया है। तृतीय साधनपाद द्वारा इस विद्या और चिकित्सा के उपयोग में आने वाले विभिन्न उपकरणों पर भी प्रकाश डाला गया है ताकि नवीन रस वैद्य व चिकित्सक कहीं अटकें नहीं।

द्वितीय भाग में भस्मों के प्रकार और भस्मों की निर्माण विधि पर अनुभव पूर्ण विवेचन दिया गया है। लेखक ने व्यवहार में लाकर विभिन्न गुणों अवगुणों एवम् तकलीफों व सुविधाओं का स्पष्ट वर्णन किया है जो ग्रन्थकी खास विशेषता का निर्देशक है।

अब तक इस विषय पर अधिक ग्रन्थ नहीं लिख गये हैं और जो लिखे भी गये हैं वे केवल शाब्दिक परिवर्तन मात्र एवम् टीका मात्र ही सिद्ध हुए हैं। किन्तु प्रस्तुत पुस्तक में लेखक का अक्षय ज्ञान भण्डार हमारे सम्मुख आता है? इस बातका प्रत्यक्ष अनुभव प्रस्तुत पुस्तक द्वारा आसानी से हो सकता है।

विद्वान लेखक की विद्वत्ता पूर्ण पुस्तक का अध्ययन प्रत्येक वैद्यको अवश्य करना चाहिए। विशेषतः रस चिकित्सक इस पुस्तक को पढ़कर नवीन पथ प्राप्त करेंगे। वास्तव में परीक्षा संस्थाओं को केवल टीका मात्र ग्रन्थको पाठ्यक्रम में न रख ऐसे मौलिक एवम् ठोस साहित्य पूर्ण ग्रन्थों को निर्धारित करना चाहिए ताकि विद्यार्थी जीवन से ही उनके संस्कार सुदृढ़ बनें और आयुर्वेद को लेकर वे कुछ कहने में समर्थ सिद्ध हो सकें। वैद्योंकी स्थितिको देखते हुए ग्रन्थका मूल्य कुछ विशेष है किन्तु उपयोगिता को देखते यह मूल्य नहीं के बराबर है।

अनुभूत-योगमाला—बरालोकपुर, इटावा (यू. पी.)

यों तो भस्मों का विधान यत्र तत्र ग्रन्थों में वर्णित ही था परन्तु वैज्ञानिक विधिसे उनका वर्णन कहीं भी उपलब्ध न था, किस धातुमें कौन २ से अवयव कितने २ परिमाण में है? क्यों यह लाभकारी हैं? कैसे तत् प्रतिनिधि रूप में किस भस्म का उपयोग हो सकता है आदि २ विषयों की पूर्ण जानकारी को बड़ी विशिष्ट शैली से प्रतिपादन कर भस्म-विज्ञान में चार चांद लगा कर एक नवीनता ला दी गई है। पुस्तक प्रत्येक वैद्य के देखने योग्य बन गई है।

आपका लिखा उपोद्घात जो २२३ पृष्ठों में समाप्त हुआ है, बड़ा ही महत्व का है और ८४ सिद्धोंके सचित्र पूर्ण पते एवं विवरणात्मक विवेचन बड़ा सुन्दर है। १४६ ग्रन्थों के आधार से उपोद्घात लिखा गया है वस्तुतः इन अमूल्य अप्राप्य ग्रन्थों की खोज एवं उनके अध्ययन के बाद ग्रन्थ प्रणयन कर स्वामी जी ने अपने अदम्य साहस का परिचय दिया है। लेखक अपने विषयके ज्ञान प्रसार में सफल हुए हैं, एतदर्थ बधाई के पात्र हैं।

पूज्य श्री यादव जी त्रिकम जी आचार्य बम्बई

२४—५—५४ के पत्र में लिखते हैं 'भस्म विज्ञान को अक्षरशः सम्पूर्ण तो नहीं परन्तु ऊपर ऊपरसे बहुत कुछ देखा है इसमें वैद्यों के काम की और उपादेय बातें बहुत हैं।

वैद्य घनानन्द जी पन्त,

३१०१ बाजार सीताराम, देहली।

११-४-५४ भस्म विज्ञान दोनों भाग मिले। आप के पूर्व प्रकाशित क्षार विज्ञान, आसव विज्ञान लघु निबन्ध पहिले देख चुका था तदनु कूपी पक्व रस निर्माण विज्ञान बड़ा ग्रन्थ जो कि पारद विषयक उत्कृष्ट ग्रन्थ है—समस्त पढ़ा आज भस्म विज्ञान देखा जिसका २२३ पृष्ट का उपोद्घात अनेक ज्ञातव्य विषयों से परिपूर्ण है। प्रत्येक भस्म विधि पर प्राचीन विचारों का नवीन विचारों से विवेचन किया गया है। आप अपनी लगन के बड़े पक्के हैं। भस्मों के विषय वर्तमान शताब्दी में यूनानी चिकित्सकोंने आयुर्वेद से लेकर जो इसमें ऊहापोह की है उसका भी उस में दिग्दर्शन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकीकादि द्रव्य जो की यूनानी चिकित्सा में विशेषोपयोगी समझे जाते हैं उनका भी आपने समावेश कर आयुर्वेदज्ञों को यूनानी द्रव्य ज्ञानमें सहायता दी है। रत्न उपरत्नों का अनेक प्रकार से शोधन मारण गुणादि का विशद वर्णन, सरल भाषामें है। आपने इस ग्रन्थ को लिखकर भस्मोंके विषय में आयुर्वेद को ऊपर उठा दिया है। पाठ्य पुस्तकों में आलोचनोपयोगी पुस्तक है।

रसायन—दरियागंज, देहली।

एक लम्बे समय के बाद श्री स्वामी हरिशरणानन्द का यह नवीन ग्रन्थ अभी २ प्रकाशित हुआ है 'कूपी पक्वरस-निर्माण-विज्ञान' और 'त्रिदोष-मीमांसा' के पाठक श्री स्वामी जी के वैज्ञानिक दृष्टिकोण और मौलिक विचार धारा से सुपरिचित हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ 'भस्म-विज्ञान' में भी उपरोक्त दोनों बातों का पूर्ण परिचय दिया गया है। धातुओं की मौलिक रसायनिक रचना भूगर्भसे यौगिक रूपमें प्राप्त हुई धातुओं की शुद्ध रूपमें प्राप्तिके आधुनिक ढंग और भौतिक तथा रासायनिक गुणोंके आधार पर किया गया उनका विवेचन वैद्य समाज के लिए वास्तव में नई चीज है।

खर्पर आदि संदिग्ध पदार्थों के निर्णय में आयुर्वैदिक यूनानी और आधुनिक रसायन शास्त्र के आधार पर दी गई सम्मति विद्वानों के लिये विचार का विषय है। वास्तव में ऐसे स्थल अनुसंधान की दिशा में प्रयत्न शील वैद्यों का पथ प्रदर्शन करते हैं। संदिग्ध द्रव्यों के निश्चय में स्वामी जी का मत शास्त्र तथा प्रत्यक्ष के गहरे अध्ययन और अनुभव पर आधारित है।

भस्मों के आधुनिक रासायनिक विश्लेषण, भिन्न-भिन्न विधिसे तैयार की गई भस्मों में अन्तर, अग्निके प्रमाण और पुट संख्या आदि के सम्बन्ध में दिये गये तथ्य तथा विचार वैज्ञानिक भित्ति पर आश्रित होने के कारण नितान्त नवीन और मौलिक है। निःसन्देह यह लेखक के आधुनिक रसायन शास्त्र के गहरे अध्ययन और कठोर परिश्रम का फल है।

भस्म निर्माण सम्बन्धी सम्पूर्ण उपलब्ध ग्रन्थों के पाठों का एकत्र संकलन भी इस पुस्तक की एक विशेषता है। उपोद्घात में रस शास्त्र की ऐतिहासिक परम्परा का वर्णन करते हुए ८४ सिद्धों का सचित्र वर्णन है। पुस्तक विद्वान वैद्यों, सामान्य चिकित्सकों तथा अनुसन्धान के विद्यार्थियों सब के लिए समान रूप से उपादेय है। आशा है वैद्य समाज में इसे उचितआदर प्राप्त होगा।

कूपीपक्व-रस-निर्माण-विज्ञान

यह ग्रन्थ स्वामी हरिशरणानन्दजी की मौलिक कृतियों में से एक है। इस ग्रन्थ की ऐतिहासिक पदार्थ सामग्री सञ्चित करनेमें आपने १५-१६ वर्ष व्यतीत किये और जिन कूपीपक्व रसोंको आप अनेक प्रकारसे बनाकर इसविषयको आज ३० वर्ष से समझते व अनुभव लेते आ रहे हैं उन्हीं रहस्योंका उद्घाटन आपने अपने इसग्रन्थमें किया है। इस ग्रन्थको आयुर्वेदमार्तण्ड यादवजी त्रिकमजी आचार्यने आयुर्वेद विद्यापीठके रसतन्त्र की पाठ्यविधिके आलोच्य ग्रन्थोंमें रखने की सिफारश की है।

२०×३० सोलह पेजी ऐंटिक पेपर पृष्ठ संख्या ५०० आर्ट पेपर पर मनोहर १४ चित्रोंसे सुसज्जित, ग्रन्थ का मूल्य सजिल्द ५) रुपया, पोस्ट और पैकिंग खर्च भिन्न।

इस ग्रन्थ पर सम्मतियां

(१) 'सुधानिधि" इलाहाबाद जून १९४१

स्वामी हरिशरणानन्दजीने यह बहुतही गवेषणा पूर्ण और महत्वकी पुस्तक लिखी है। चन्द्रोदय, मकरध्वज, रससिन्दूर स्वर्णराजवंगेश्वर, समीर पन्नग आदि कूपीपक्व रस कहलाते हैं। इसमें छोटे बड़े सब मिलाकर ढाई सौ से अधिक कूपीपक्व रसों की निर्माण विधि अनुपान और गुण लिखे गये हैं। किसी किसी रस के सम्बन्धमें यह भी लिख दिया गया है कि इसमें कितनी और कैसी आंच देनी चाहिये। इस पुस्तकमें सबसे महत्वकी बातें १२० पृष्ठके उपोद्घातमें लिखी हुई हैं। रस, निर्माणशाला, उसके उपकरण, शोधन, रस-निर्माणके सिद्धान्त आदि पर अनुभव पूर्ण अच्छा प्रकाश डाला गया है। स्वामीजी की निर्मित अब तक की सभी पुस्तकों में यह शिरोमणि है। रसायन विद्याके इतिहास विवेचनके समय की कुछ बातों में मतभेदभी होसकता है। किन्तु हम उस पर न जाकर इसके गुण गौरवका ही अभिनन्दन करते है। पुस्तक सर्वथा संग्राह्य है।

(२)श्रीयुत बालचन्द्र जी नाहटा सरदार शहर, बीकानेर से १६-२-४२ के पत्र में लिखते हैं—बहुत अर्से के बाद आप को यह पत्र लिख रहा हूँ। दो कारणों से—एक तो आप को बधाई देने के लिये और दूसरे कुछ जानने के लिये।

बधाई! आपके अनुपम ग्रन्थ 'कूपीपक्व-रसनिर्माण-विज्ञान, के प्रकाशनार्थ है जिसको पढ़कर मैंने बहुत अधिक व्यावहारिक ज्ञानप्राप्त किया। मैं आपके उक्त ग्रन्थमें दिये विधानकी विद्युत् भट्टी बनाने की बहुत इच्छा रहने पर भी समयाभावसे कलकत्ते में न बना सका। किन्तु सामान लाकर एक विद्युत् शास्त्री की सहायता से यहां उसे तैय्यार किया और उसमें १०तोला पारद, १० तोला गन्धक, २ तोला सुवर्ण डालकर उस विद्युत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भट्ठीमें मकरध्वज चढ़ाया। १००० हजार वाट प्रति घण्टे के हिसाबसे विद्युत् शक्ति खर्च करके ६ घण्टेमें मकरध्वज बना ही लिया।

जिस परीक्षणकी इच्छा वर्षोंसे थी और जिसकेलिये कलकत्ता की एक फर्मने विद्युत् भट्ठीकी कीमतका इस्टीमेट २५०) का दिया था वह विद्युत् भट्ठी आपकी कृपासे १५) या २०) रुपये में ही बना कर देखली, देखही नहीं ली उसपर कूपीपक्व रस तय्यार भी कर लिया।

इसके लिये आपको बधाई नहीं अनेकानेक धन्यवाद देना चाहिये। किन्तु यदि इतना ही होता तो धन्यवाद देकर ही रह जाता. आपने तो उसमें और इतनी अधिक प्रायौगिक बातें दी हैं जिसके लिये धन्यवाद पर्याप्त नहीं। बधाई इस लिये कि आप अपने प्रयत्न में सफल हुए।

(३) आयुर्वेदिक कालज पत्रिका, काशी विश्वविद्यालय अक्टूबर १६४१.

उपर्युक्त पुस्तक कूपी द्वारा पके हुए रसों पर लिखी गई है। लेखक उन वैद्योंमेंसे हैं जो हर एक विषयको वैज्ञानिक तरीकों से समझने और समझानेका प्रयत्न करते हैं। पूरी पुस्तक इस बात का प्रमाण है। उपोद्घात विद्वत्तापूर्ण है। रसशास्त्र और उससे सम्बन्धित अन्य विषयोंके इतिहास का संग्रह जिस परिश्रमसे किया गया है वह प्रशंसनीय है। स्थान स्थान पर विषय को नवीन विज्ञानके अनुसार स्पष्ट किया गया है। कई रसों पर प्रयोगोंका वर्णन किया गया है। अग्नि देनेके विषय में निश्चित शतांश देकर लेखक ने रसशास्त्रकी दृष्टि से आयुर्वेदज्ञ लोगोंका उपकार ही किया है पृष्ठ १५५ से अन्त तक शास्त्रोक्त कूपीपक्व रसों का वर्णन है। नवीन आयुर्वेद जगत्को ऐसी ही पुस्तकोंकी आवश्यकता है। आशा है वैद्य समुदाय इस पुस्तक का स्वागत करेगा।

(४) नृसिंहदेव शर्म्मा शास्त्री B. A. आयुर्वेदाचार्य, कविरत्न, रावलपिंडी

श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी

अध्यक्ष 'पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी, अमृतसर द्वारा रचित रसायनकी नवीन पुस्तक, कूपीपक्व-रस-निर्माण-विज्ञान मैंने आद्योपान्त पढ़ी है। स्वामी जी की यह मौलिक कृति है, जिसे पढ़कर कोई भी वैद्य रसों को बिना कुछ हानि उठाये निर्माण कर सकता है। स्वामी जी ने वैज्ञानिक सिद्धान्तोंके इस विषय पर गम्भीर और मौलिक विवेचन किया है। पुस्तकके प्रत्येक पृष्ठ से स्वामीजीके अत्यन्त गम्भीर अध्ययन, मनन और विशाल अनुभव का पता लगता है। पुस्तक वैद्य समाजके लिये अत्यन्त उपयोगी और विद्वानोंके लिये संग्रहणीय है।

(५) वैद्य-रत्न कविराज डा. प्रतापसिंह जी

(भू० पू० डायरेक्टर आफ आयुर्वेद राजस्थान)

मैंने श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा लिखित 'कूपीपक्व रस निर्माण विज्ञान, का आपात अवलोकन किया। श्री स्वामी जी सिद्ध-हस्त लेखक हैं।

इसके पूर्व स्वामी जीने 'कूपीपक्व रसायन' और 'त्रिदोष-मीमांसा'नामक पुस्तकें प्रकाशित की हैं और उससे वैद्यसमाज में नवीन चिन्तन का प्रादुर्भाव किया है।

स्वामीजी क्रान्तिवादी हैं। आयुर्वेद समाज के मृत-जीवन में पुनः क्रान्ति करके नवीन जीवन संचार करने के अभिलाषी हैं,इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये कठिन परिश्रम करते रहते हैं।

कूपीपक्व-रस-निर्माण-विज्ञान इसी मनोवृत्ति का परिणाम है। पुस्तक का प्रकाशन बड़ा ही सुन्दर हुआ है। इसका उपोद्घात् प्रत्येक वैद्यके लिये मनन करने योग्य है। इस उपोद्घात् में पौर्वात्य एवं पाश्चात्य रसायन शास्त्र का क्रमबद्ध अच्छा इतिहास है। यदि पाश्चात्य मौलिक तत्वोंके सामने उनके प्रचलित वैज्ञानिक नाम अंग्रेजी भाषा में भी दे दिये जाते तो पाठकों के लिये अधिक सरलता होती।

मैं स्वामी जी को इस वृद्धावस्था में भी कठिन परिश्रम के लिये हार्दिक बधाई देता हूँ।

आशा है स्वामी जी 'धातुवाद' पर भी विशेष प्रयोग कर आज के आणविक रसायनवाद का विवेचन कर वैद्यों के ज्ञान में परिवर्धन करने का यत्न करेंगे।

भगवान् जगन्नियन्ता से प्रार्थना है कि स्वामी जी को दीर्घायु करे और स्वास्थ्य प्रदान करे ताकि अपने अनुभव और प्रयोगोंसे चिरकाल तक आयुर्वेदका उपकार करते रहें।

क. प्रतापसिंह. १६-६-५२.

आसव विज्ञान

(तृतीय परिवर्द्धित संस्करण)

यह किसी से छिपा नहीं कि आयुर्वेद का एक चमत्कार-पूर्ण अंग आसवारिष्ट का निर्माण क्रम हमारे पास कितने अपूर्ण रूप में रह गया है। सौ बार आसव बनाइये कठिनता से दो-चार बार खराब होने से बचता है। इसका मुख्य कारण है हमारी प्राचीन रीति का लुप्त हो जाना। इसी लुप्त प्रायः विधि को स्वामी जी ने बड़े परिश्रम से पुनः प्राप्त किया है और उसी का आधुनिक विज्ञान से परिमार्जित कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उक्त पुस्तक में सरल सुस्पष्ट रूप में अंकित किया है। जिसका विस्तार निम्न रूप में है—

[१] आसव की प्राचीनता और उसका ज्ञान, [२] आसव का व्यवहार और उसकी मादकता का अनुभव, [३] नाड़ी यन्त्र का आविष्कार और उसके भिन्न-भिन्न सचित्र रूप, [४] आसव व सुराकी ऐक्यता और उसके प्रभाव, [५] आयुर्वेद में आसव का स्थान [६] आसव बनाने का प्राचीन क्रम व भेद, [७] बने बिगड़े आसव की परीक्षा, [८] आसव बिगड़ने का कारण और उसका विकृत रूप, [९] आसव और चुक्र अम्लादि में भेद, [१०] आसव बनने का कारण, [११] आसव में परिवर्तन और किण्व कीटाणु [१२] आसवोत्पादक वस्तुएं और उनका परिमाण, [१३] उत्ताप ऋतु परिवर्तनादि से आसव का बनना, बिगड़ना, [१४] भिन्न-भिन्न ऋतुओं में आसव का बनाना, [१५] आसव को सुरक्षित रखने का अनुभूत उपाय, [१६] आसव बनाने का अधिकार व राज्य नियम, [१७] आसव का शुद्ध रूप और उसका वैज्ञानिक विश्लेषण [१८] आसव के मौलिक पदार्थ व उनका गुण इत्यादि बातों का खूब अनुभवजन्य वर्णन है। स्वामी जी ने इस पुस्तक को दस वर्ष के परिश्रम के पश्चात् लिखा है।

दूसरे संस्करण की विशेषता

इस पुस्तक का जब पहिला संस्करण निकला तो अनेक रूढ़िवादी वैद्यों ने उस पर पेट भर कर आलोचनायें की। दूसरे संस्करण के प्रकाशन समय में स्वामी जी ने उनकी आलोचनात्मक बातों का जब प्रामाणिक व तर्कसिद्ध उत्तर दिया और उन वैद्यों को आह्वान किया गया कि वे पुनः इन पर अपने पक्ष का पुष्ट करने के साधन ढूंढें, इस पर उन वैद्यों से कुछ न बन पड़ा। तीसरे संस्करण तक उन वैद्यों में से एकने भी उत्तर देने का साहस नहीं किया, न स्वामीजी के दिये तर्कों का किसी ने खण्डन किया। इससे स्पष्ट हो गया कि स्वामी जी के तर्क प्रायोगिक आधार पर स्थित हैं। आसव बनाते समय उन प्रायोगिक बातों की सचाई जब स्पष्ट दिखाई देती है तो वे अपनासा मुंह लेकर चुप हो जाते हैं।

तीसरा संस्करण

इस तीसरे संस्करण में स्वामी जी ने कई संदिग्ध तथा अन्य कई ऐसी बातों की भी व्याख्या दे दी है जिसे वैद्यों द्वारा प्रश्न रूप में उपस्थित किया गया था। पुस्तक अपने विषय की इतनी जानकारी से पुष्ट हो गई है कि वैद्यों को अन्य पुस्तक की आवश्यकता नहीं रहती। ऐसी अत्युपयोगी पुस्तक का मूल्य १॥) पोस्ट खर्च भिन्न।

त्रिदोष-मीमांसा

"गवेषणापूर्ण-नव्यउपोद्घातयुक्त विवर्द्धित"

द्वितीय संस्करण

लेखक—स्वामी हरिशरणानंद वैद्य

प्रथम बार जब यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी, वैद्य संसार में खलबली मच गई थी। बहुतसे वैद्योंने उसे पढ़कर अपनी राय दी—कि "स्वामीजीने यह आयुर्वेद जगत् पर एक बड़ा ही जबरदस्त बम मारा है।" यदि उस समय त्रिदोष मीमांसा वैद्य संसारके लिये बमवत् थी तो निश्चय ही इसबार उसका उपोद्घात परमाणु बमका रूप ही समझिये।

उस समय वैद्य संसार त्रिदोष-मीमांसामें दिये स्वामीजी के प्रत्यक्ष अकाट्य वैज्ञानिक तर्कों को एलोपैथीके बताकर अपने मनको सान्त्वना देताथा, पर इस बारके दिये उपोद्घातको पढ़कर अब काल्पनिक मृग मरीचिकासे उनकी प्यास नहीं बुझ सकती।

त्रिदोष-मीमांसाका यह उपोद्घात ऐसे वैसे तर्कों व प्रमाणोंसे युक्त नहीं प्रत्युत, यह निबन्ध शुद्ध वेद भगवान् की सर्वोपरि अकाट्य प्रामाणिकताके आधार पर संकलनकर सिद्ध किया गया है कि हमारी प्राचीन चतुर्विध चिकित्सामें आयुर्वैदिक चिकित्साका उद्गम स्थान कहांसे है और वैद्यक वृत्ति का वास्तविक आदि स्रोत कहांसे चलता है।

यदि वैद्य संसार त्रिदोष-मीमांसाके इस दूसरे संस्करणको पढ़ कर भी उस अन्ध प्रगाढ़ निद्रासे न उठा और समयको न पहिचाना तो मानना पड़ेगा कि वैद्य जगत्का अस्तित्व नाम को है वास्तवमें वह समाप्त हो चुका है। वैद्य संसारको प्रबल उद्बोधन कराने वाली ३०० पृष्ठ की सर्वोत्तम पुस्तक का मूल्य २॥), पोस्ट खर्च भिन्न।

सम्मतियां

श्रीयुत डाक्टर सत्यप्रकाश जी एम. डी-लिट्.

वेलीएवन्यू, इलाहाबाद ता० १८-२-४८

"त्रिदोष मीमांसा" के द्वितीय परिवर्धित संस्करण की प्रति के लिये अनेक धन्यवाद।

आपका उपोद्घात मैंने आद्योपान्त देखा। मैं नहीं समझता था कि "त्रिदोष-मीमांसा" जैसे ग्रन्थ के उपोद्घात में प्राच्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयों का इतना सुन्दर समीचीन विवेचन होगा। वैदिक युग पर आपने बहुत अच्छा प्रकाश डाला है इसकेलिये बधाई है। वैद्यवर्ग में त्रिदोषवादके प्रति जो विप्लव आपने आरम्भ किया है, उसका समस्त श्रेय आपको ही रहेगा। न जाने कब हमारा आधुनिक वैद्य समाज रूढ़ियों को त्याग कर सत्यके अन्वेषण के लिये उसी प्रकार अग्रसर होगा, जैसा कि अपने पुरातन ऐतिहासिक काल में था। सत्यप्रकाश

आयुर्वेदाचार्य श्री हरदयालु जी

भूतपूर्व प्रिंसिपल श्रीमद्दयानन्दायुर्वेदिक कालिज, अमृतसर प्रधान—आयुर्वैदिक एण्ड यूनानी रजिस्ट्रेशन बोर्ड, पूर्वी पंजाब

त्रिदोष मीमांसा—जनवरी १९४८ में प्रकाशित द्वितीय संस्करण मेरे सामने है।

इस संस्करण में लेखक ने विद्वत्तापूर्ण उपोद्घात के ६६ पृ. और बढ़ा दिये हैं। इस उपोद्घात से अनेक भ्रम दूर होजाते हैं, वास्तव में यह उपोद्घात सर्वप्रथम पठनीय है। इसमें संशयात्मक स्थलों पर प्रकाश डाला गया है तथा नये और प्राचीन प्रमाणों से सन्देह स्थलों को बोध गम्य बनाने का सफल प्रयास हुआ है।

त्रिदोष मीमांसा के प्रथम संस्करण को पढ़कर वैद्य समुदाय में एक विशेष प्रकार का वायुमण्डल उत्पन्न हुआ था, उन सब प्रश्नों तथा आक्षेपों का उत्तर पूर्ण प्रयत्न से दिया गया है। यदि इससे वैद्य समुदाय का सन्तोष हो जाय तो निःसन्देह लेखक का प्रयत्न सफल समझना चाहिये।

इस विचार से लेखक महोदय अवश्य धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने आयुर्वेदोन्नति के सम्बन्ध में निर्भीकता से अपने विचारों को लेखबद्ध करके आयुर्वेद के महारथियों को सचेत कर दिया है। मत भिन्नता के आधार पर किसी का विरोध करना आर्यत्व का चिन्ह नहीं है। विचारास्पद गहन विषय सर्वदा गूढ़ मनन और तद्विषयक सम्भाषा परिषदों द्वारा निर्णय-स्थान तक पहुँच पाते हैं, लेखक के हृदय में आयुर्वेद के प्रति अश्रद्धा व घृणा नहीं है, प्रत्युत वह उसे विज्ञानानुमोदित शिलातल पर देखना चाहते हैं।

हरदयालुवैद्य १३-४-४८

ज्वर-मीमांसा

आयुर्वेद-ग्रन्थोंमें जिन ज्वरों व सन्निपातोंका उल्लेख आया है, इस समय उनमें से कौन-कौन से ज्वर तथा सन्निपात मिलते हैं उनके इस समय नाम रूप और लक्षण क्या हैं? तथा कौन-कौन से ज्वर व सन्निपात इस समय नहीं मिलते लुप्त हो चुके हैं। इसका ठीक-ठीक ज्ञान बहुत कम वैद्योंको है।

चिकित्सा के लिये रोगका यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना बहुत जरूरी बात है। लक्ष्य को जिसने लक्षित नहीं किया वह ठीक निशाना नहीं लगा सकता। जो वैद्य रोग को (ज्वर) नहीं पहचान पाते निश्चियही वह चिकित्सामें कभी सफल नहीं होते।

इस प्रकार के कठिन कामों को करनेका काम तो निखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन के संचालकों का था, वह वैद्य समुदायको प्राचीन और अर्वाचीन ज्वरों (रोगों) का विवेचन करके आधुनिक समय के अनुकूल उन्हें मार्ग प्रदर्शित कर चिकित्सामें उनकी सहायता करते। किन्तु उन्हें अपने ही कामों से अवसर कहां; अकर्मण्यताको देखकर स्वामीजी ने समयानुसार इस कमी को पूर्ण करने का दृढ़ संकल्प किया। उसी के परिणाम-स्वरूप यह ज्वर-मीमांसा है।

स्वामीजी ने ज्वर-सम्बन्धी विषय को लेकर निदानार्थ जो सुझाव पेश किए है तथा रोग-परिज्ञान-सम्बन्धी उनका अपना २५ वर्ष का जो अनुभव था, विस्तृत रूप से दिया है। पुस्तक कितनी उपादेय है वैद्य स्वयं पढ़कर इसकी गम्भीरता का अनुभव ले सकते हैं। मूल्य १॥)

मन्थर-ज्वर-विज्ञान

(दूसरा संस्करण)

लेखक—स्वामी हरिशरणानन्द जी वैद्य

पाठकों को ज्ञात होगा इस पुस्तक का प्रथम संस्करण 'मन्थर-ज्वरकी अनुभूत चिकित्सा' के नाम से प्रकाशित हुआ थी। आज से २५ वर्ष के मध्य मन्थर-ज्वर पर बहुत ही खोजें व छान-बीन हुई, न जाने कितनी नई नई सैद्धान्तिक बातें सामने आई, हजारों रोगियों की चिकित्सा करने पर इतने समय के बाद जो अधिक अनुभव व ज्ञान लेखक को प्राप्त हुआ, उन सबका इस वार के संस्करण में संकलन कर दिया है। चिकित्सा क्षेत्र में पुस्तक की क्रियात्मक उपयोगिता बढ़ाने के लिए आधुनिक प्रत्यक्ष विज्ञान के अनुसार मन्थर ज्वर जीवाणु की उत्पत्ति, वृद्धि एवं संचार का विस्तृत वर्णन उसमें दिया है जिसे पूर्ण तरह से समझ लेने पर इस रोग के प्रसार को रोकने सम्बन्धी समस्त ज्ञाव पाठकों को प्रत्यक्ष हो जाता है। मन्थर ज्वर जीवाणु का शरीर के अन्य अंगों पर क्या २ प्रभाव पड़ता है और क्या २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव होते हैं। तथा उनकी चिकित्सा का भी पूरा वर्णन है।

लेखक के चिरकालिक अनुभव के आधार पर कुछ ऐसे सांकेतिक लक्षणों का वर्णन दिया है जिन्हें देख कर सन्दिग्धावस्था में न रह कर निश्चयात्मक निदान करने में सहायता मिलती है।

चिकित्सा में भी स्वामी जी के चिरकाल से अनुभूत सिद्ध प्रयोगों के साथ २ नवीन आविष्कृत प्रभाव शाली औषधियों का वर्णन भी है जिससे विगड़े से बिगड़े रोगी के उपचार में चिकित्सक को सहायता मिल सकती है।

शरीर की रोग रोधक शक्ति (क्षमता) क्या है वह कैसे बढ़ाई जा सकती हैं? रक्त के श्वेताणु किस प्रकार रोगों के आक्रमण का मुकाबला करते हैं इत्यादि सब बातों का विस्तृत वैज्ञानिक वर्णन भी पुस्तक में किया गया है जो ज्ञान के पिपासु पाठकों के लिये अवश्य ही सन्तोषप्रद सिद्ध होगा। अकेले मन्थर ज्वर पर इतना विस्तार पूर्वक तथा ज्ञानवर्द्धक ग्रन्थ आपको अन्यत्र न मिलेगा। नव्य ज्ञान विज्ञान से पूर्ण होने के कारण ही पुस्तक का नये सिरे से नाम करण करना उचित समझा गया।

पुस्तक को जो भी वैद्य एक बार पढ़ कर इसमें लिखी विधि अनुसार मन्थर-ज्वर या टायफाइड का निदान करेगा तथा उसकी चिकित्सा में प्रवृत्त होगा वह कभी भी असफल नहीं होगा। मूल्य २) डाक खर्च भिन्न।

वैद्य समाज तथा जनसाधारण का परमसहायक

औषध-गुण-धर्म-विज्ञान

(अर्थात् औषधि गुण परिचय तथा सेवन-विधि)

संशोधित एवं परिवर्धित–तृतीय संस्करण

छप कर तैयार हो गया है जिसकी सहायता से वैद्य समाज के अतिरिक्त साधारण मनुष्य भी आयुर्वेदोक्त प्रत्येक औषधि प्रयोग कर लाभ उठा सकता है क्योंकि इस पुस्तक में रोग-व्यवस्था तथा समस्त विख्यात आयुर्वैदिक औषधियों का परिचय, गुण, सेवन-विधि तथा मात्रादि का निरूपण बहुत ही उत्तम शैली और सरल भाषा में किया गया है। इस बार स्वामी जी ने औषधियों के सम्बन्ध में अपने आज तक के अनुभवों को इस पुस्तक में संकलित कर दिया है।

तृतीय संस्करण की विशेषता यह है कि इसमें आयुर्वैदिक औषधियों के अतिरिक्त स्वामी जी की अपनी जितनी भी अनुभूत पेटेंट औषधियां हैं उन सबका विशद विवेचन तथा लाभ सेवन-विधि मात्रादिक का वर्णन भी अच्छी तरह किया गया है। मूल्य १) डाक खर्च भिन्न।

क्षार-निर्माण-विज्ञान

यह किसी से छिपा नहीं कि आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति में भिन्न-भिन्न वानस्पत्योद्भूतक्षारों का काफी प्रयोग होता है। किन्तु हम देखते हैं कि वैद्यों द्वारा बनाये हुए क्षार प्रायः मैले धूसर वर्ण और देखने में चित्तकार्षक नहीं होते।

स्वामी जी ने बड़े परिश्रम से क्षार-निर्माण विज्ञान का अनुभव किया और उसको वैद्यों के लाभार्थ क्रमवद्ध कर दिया है। उसमें निम्नलिखित विषयों का समावेश है :—

१. आयुर्वैदिक-चिकित्सा-पद्धति में क्षारों की उपयोगिता। २. वनस्पतियों के मौलिक तत्व व क्षारोद्भव धातुएं। ३. भिन्न-भिन्न क्षारों का रासायनिक रूप। ४. भिन्न-भिन्न वनस्पतियों में भिन्न-भिन्न प्रकार के क्षारजन्य धातुओं की मात्रा। ५. भिन्न भिन्न वनस्पति भस्म से क्षार निकालने की विधि। ६. क्षारों को विशुद्ध स्वच्छ बना कर उसको करण रूप में लाना। ७. भिन्न भिन्न क्षारों के गुण और वज्र-क्षार आदि के बनाने का क्रम तथा क्षारों का उपयोग इत्यादि विषय का खूब खुलासा वर्णन है।

मूल्य प्रति पुस्तक ॥)

रुद्रयामल तन्त्र

भैरवानन्द योगी कृत

भैरवानन्द योगी ने तान्त्रिक काल के अन्तिम दिनों में एक तन्त्र विषयक रुद्रयामल तन्त्र लिखा था। उस ग्रन्थ के भीतर धातु निरूपणम् नाम से एक अध्याय भिन्न दिया गया था। उस अध्याय के रसायन विषयक-प्रामाणिक अंश के कुछ उद्धरण डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय ने हिन्दू रसायन शास्त्र का इतिहास लिखकर उसके परिशिष्ट में उद्धृत किये थे। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ अप्राप्य था। श्रीयुत यादव जी त्रिकम जी आचार्य की कृपा से इस की हस्तलिखित प्रति प्रकाशनार्थ प्राप्त हुई, दूसरी प्रति कृष्ण गोपाल जी काशी निवासी से प्राप्त हुई दोनों ही प्रतियां लेखन प्रमाद से काफी अशुद्ध थी। उन्हें पं श्रीधर मायाधारी जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य से यथाशक्य शुद्ध कराकर प्रकाशित किया है।

मूल्य १) ए, पोस्ट खर्च भिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसव निर्माणार्थ सागवान काष्ठ के उत्तम ढोल

प्राचीन काल से ही वैद्यों में आसव निर्माणार्थ प्रायः मट्टी के पात्रों को प्रयोग करने का प्रचलन है। परन्तु मट्टी के पात्र में दो बड़े दोष हैं एक तो मसामदार होने से आसव द्रव उस में से चू कर बाहर निकल सकता है। दूसरे मृत्पात्र तापवाहक होने के कारण सन्धानार्थ द्रव के अन्दर आवश्यक उत्ताप को स्थिर नहीं रख सकता, जिस से आसव निर्माण क्रिया (सन्धान) में बाधा उत्पन्न हो सकती है। लकड़ी के ढोल इन दोनों दोषों से मुक्त हैं। लकड़ी में भी सागवान की लकड़ी ऐसी कठोर है कि निरन्तर वर्षों तक पानी के संसर्ग में रहने पर भी यह नहीं गलती। अतः सागवान के बने ढोल चिर काल तक खराब नहीं होते और आयु पर्यन्त काम देते रहते हैं। मृत्पात्र की तरह इन्हें घृत परिप्लुत करने का झंझट भी नहीं करना पड़ता। जल से प्रक्षालन कर स्वच्छ करके इन का प्रयोग किया जा सकता है। मृत्पात्र की तरह इनके फूटने का भी भय नहीं।

हमारे यहां वर्षों से इन ढोलों का प्रयोग हो रहा है। श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा लिखित "आसव विज्ञान" पुस्तक के प्रकाशन के बाद से देश के प्रत्येक कोने से इन लकड़ी के ढोलों के लिये अनेकों वैद्यो की मांग आती रही है। अतः हमने विलायत से आने वाले माल के खाली ढोल जो बड़ी बड़ी मिलों में रासायनिक पदार्थों में लग कर आते है उनके संग्रह का प्रयत्न किया है वह साफ करने पर आसव निर्माण के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। आशा है वैद्य समाज तथा औषध निर्माता इन का प्रयोग कर आसव निर्माण प्रक्रिया को समुन्नत करने की दिशा में अग्रसर होंगे। इस से उन्हें सुविधा भी होगी और आसव भी उत्तम बनेंगे। प्रत्येक ढोल की समाई इतनी है कि उसमें ६ मन आसव तैयार हो सकता है। मूल्य प्रति ढोल २०) मार्ग व्यय भिन्न।

आर्डर के साथ पेशगी आना ज़रूरी है।

निवेदक—मैनेजर पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी
अकाली मार्केट-अमृतसर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद विज्ञान पर कुछ सम्मतियां

सम्पादक, स्वास्थ्य संन्देश, पटना

आयुर्वेद विज्ञान—प्रकाशक—आयुर्वेद विज्ञान आफिस, २२ फैज बाजार, देहली। वार्षिक मूल्य—३)।

यह मासिकपत्र स्वामी हरिशरणानन्द जी के सम्पादकत्व में सम्पादित होता है। प्रकाशक भी आप ही। कुछ दिन पूर्व भी आप इस नाम का मासिक पत्र निकालते थे। अब पुनः इसी वर्ष इस पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया है। मेरे सामने तीसरा अंक है आपकी लेखनी द्वारा लिखा गया लेख बड़ा ही जोश पूर्ण होता है। आप प्राचीन आयुर्वेद अर्थात् त्रिदोष और पंचभूत वाद के विरोधी रहे हैं। आपका यह मासिक पत्र आपके विचार का प्रचारक है। आपका तर्क भी अपने ढंग का होता है। पत्र तर्क की दृष्टि से सुन्दर है। इसे वैद्यों को अवश्य पढ़ना चाहिए।

पं० गिरिजा शंकर भट्टाचार्य वैद्य "शेखर"

अमोघ औषधालय मु० उमरामउ पो० ऐहार
जि० रायबरेली

श्रीमान जी द्वारा प्रेषित आयुर्वेद-विज्ञान पत्र अप्रैल मास का अंक मेरे सम्मुख प्रस्तुत है। इसका सस्नेह ध्यान पूर्वक साद्योपान्त समावलोकन कर मन को महान् मोद मिला।

आप का यह अनुपमेय प्रयास है। पत्र में प्रकाशित लेख पंक्तियां आप की निर्भीकता एवं प्रचुर प्रज्ञान का पवित्र परिचय दे रही हैं।

मैं मानता हूँ कि आप में आधुनिक आयुर्वेद को समझने समझाने की यह अद्वितीय ईश्वर प्रदत्त विमल बुद्धि है।

वास्तव में तमसावृत्त आयुर्वेद जगत को नूतनालोक प्रदान करने वाला यह पत्र सम्पूर्ण कला युक्त सुधाकर है। मैं इस पत्र की हृदय से अभ्युन्नति चाहता हूँ।

प्रिंसिपल क० जगदीशचन्द्र भारद्वाज B. A. M. S.

अध्यक्ष श्री राम आयुर्वेदिक फार्मेसी
पनाकितान भवानी (हिसार)

आप का प्रेषित "आयुर्वेद विज्ञान" नामक मासिक पत्र अप्रैल १९५७ का प्राप्त हुआ। जो कि देखने में छोटा परन्तु उसकी सामग्री तथा प्रस्तुत लेख अति सुन्दर तथा सुपाठ्य थे जिसके द्वारा जनता भी लाभ उठा सकती है। विशेषतः चिकित्सक बन्धुओं को तो इस पत्र का ग्राहक बनना आवश्यक है। क्योंकि यह आयुर्वेद क्रांति का अग्रदूत है। अतः इस पत्र की मैं हृदय से उन्नति चाहता हूँ। भगवान इसे सफलता प्रदान करता रहे।

कविराज माधव प्रसाद जी शास्त्री

सम्पादक जय आयुर्वेद जोधपुर
(राजस्थान)

"आपके द्वारा सम्पादित "आयुर्वेद विज्ञान" के ५ अंक प्राप्त हुए, धन्यवाद !

पत्र में प्रकाशित लेखों की निर्भीकता वास्तव में आयुर्वेद जगत् को रसातल जाने से अवश्य ऊपर उठाने में समर्थ सिद्ध होगी। आजके पत्र किसी की गुण-गाथा या विज्ञापन करनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं करते प्रसन्नता की बात है कि आप इन बातों से बहुत ऊपर उठे हुए हैं आपके सुलझे हुए विचार आयुर्वेद महारथियों के उलझे हुए दिमागों की इसी प्रकार सफाई करते हुए उन्हें स्वस्थ बनाते रहेंगे। आपका पत्र आयुर्वेद-विरोधियों से डट कर मुकाबला लेने वाला है। हम इसकी उत्तरोत्तर उन्नति चाहते हैं।"

वैद्यरत्न पं० श्री प्रभुदत्त शास्त्री भिषगाचार्य

प्रिंसिपल—श्री परशुराम पुरीया राजस्थान
आयुर्वेद कालेज सीकर (राजस्थान)

"आपके द्वारा प्रेषित 'आयुर्वेद विज्ञान' मासिक पत्र का अक्टूबर मासीय अंक देखने को मिला।

आयुर्वेद को आधुनिक विज्ञान के सम्पुटसे समृद्ध बना कर इसके वैभवका विस्तार और व्यावहारिक उपयोगिता की पराकाष्ठा से वैज्ञानिक जगत को नवीन आलोक प्रदान करने वाला यह पत्र अविलम्ब ही वैद्य महानुभावों द्वारा कराम्बुज स्पर्श से उद्दीप्तिमान् हो उठेगा। इसमें संदेह जरा भी नहीं, चूंकि यह आपकी ओजस्विनी लेखनी से आपूरित सम्पादन कला—वैचित्र्य का उत्कृष्ट प्रतीक है। आधुनिक युग में ऐसे ही नूतन दृष्टिकोण से उन्मेष पाने वाले पत्रों की पाश्चात्य जगत पर धाक जमाने के लिये आवश्यकता है। धन्यवाद !"

आयुर्वेद वाचस्पति डा० रघुवंशलाल शर्मा

(M. Sc. A.)

श्री रविनन्दन आयुर्वेद भवन, मुरादाबाद

आपके द्वारा सम्पादित "आयुर्वेद विज्ञान" का चतुर्थ अंक प्राप्त हुआ अतः धन्यवाद। प्रस्तुत पत्र को ध्यान पूर्वक समावलोकन किया। मैं आपकी इस उत्तम कृति तथा आयुर्वेदोद्धार की प्रशंसा करता हूँ। मैं वैद्य समाज से सानुरोध प्रार्थना करूंगा कि प्रत्येक वैद्य वन्धु "आयुर्वेद विज्ञान" के ग्राहक बन कर अंधकार में पड़े हुये आयुर्वेद को प्रकाश में लायें। मैं इस पत्र की उत्तरोत्तर उन्नति चाहता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पृष्ठ १८० का शेष]

आरोप है उनमें से ६वें अनुबन्ध के उत्तरांश को छोड़कर शेष सब पर्याप्त सत्य घटनाओं पर अथवा उन घटनाओं से युक्ति पूर्वक समझ में आने वाले परिणामों पर आधारित हैं, जो कुछ टीका टिप्पणी हुई है उचित और युक्ति सगत है।

अनुबंध संख्या ६ के उत्तरांश का निर्णय

अनुबन्ध ६ के उत्तरांश का जिसमें पंजाब के १७ वैद्यों वाली घटना की चर्चा है उस पर विद्वान् जज ने लिखा कि अभियुक्त ने इस घटना की सत्यता को पुष्ट करने के लिये कोई प्रयत्न ही नहीं किया। उसने यह भी नहीं बताया कि उसे इस घटना की सूचना कहाँ से मिली। जिन १७ वैद्यों को सदस्य बनाने का आरोप लगाया गया था उनमें से कई मौजूद होंगे, पर उनमें से किसी को गवाही के लिये पेश नहीं किया गया। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि यह आरोप लगाने में उचित सावधानी बर्ती गई। अभियुक्त ने जो बयान दाखिल किया है उसमें कहता है कि इस अंश सम्बन्धी जो रिकार्ड महामण्डल से मंगाया गया था उसने अदालत में पेश नहीं किया, इस बात की ओर मेरा ध्यान उस समय ही दिलाया जाता—जब रिकार्ड आया था—तो मैं उसको पेश करने पर जोर देता और कारण मालूम करता। बाद में की हुई आपत्ति का कोई मूल्य नहीं। अतः हम इस घटना को प्रकाशित करने के सम्बन्ध में अभियुक्त को दोषी पाते हैं।

इसलिये माननीय न्यायाधीश श्री वी० एम० गेहानी ने आयुर्वेद विज्ञान के सम्पादक व मुद्रक स्वामी हरिशरणानन्द को मानहानि के अभियोग में ५००) दण्ड किया। दण्ड की रकम अदा न करने पर अभियुक्त को दो मास का सश्रम कारावास की सजा भुगतनी होगी।"

अभियुक्त ने उसी समय ५००) अदालत में जमा करा दिया।

क्या मैंने १७ वैद्यों के प्रतिनिधि बनाने सम्बन्धी घटना को बिना जाने समझे बूझे लिखा था? ऐसी कोई बात नहीं थी। न यह अभियोग असत्य था। हमारे पास इस घटना को सिद्ध करने के दो आधार थे। (१) महामण्डल रिकार्ड (२) जिन व्यक्तियों को प्रतिनिधि बनाया गया था उनकी गवाही। शिवशर्मा ने अपनी गर्वोक्ति में कहा था—

"लेखकों को न्यायालय के सामने अपने अभियोग सिद्ध करने का पूरा अवसर दिया जायगा। साथ ही यह सुविधा भी होगी कि महामण्डल कार्यालय की जो सामग्री प्राप्त हो सकती है उसे प्रमाण देने के लिये मंगाया जा सकेगा और लेखक को यह शिकायत करने का अवसर नहीं मिलेगा कि उन्हे कार्यालय ने सुविधा नहीं दी।"

मैंने अपने वकील द्वारा अधिकृत रूप से महामण्डल का १९३९-४०-४१-४२-४३ तक का सारा रिकार्ड एक एक चीज खुलासा लिख कर मंगाया था किन्तु महामण्डल का प्रधान कर्मचारी तिलक राम १९५१ से लेकर १९५६ तक का मांगा रिकार्ड तो लाया यह पिछला रिकार्ड नहीं लाया। जिस दिन वह रिकार्ड लेकर हाजिर हुआ था और इस रिकार्ड के सम्बन्ध में उसने जो अदालत में लिखित बयान दिया था उस दिन मेरा वकील किसी दूसरे के केस में चला गया था वह वहां हाजिर नहीं था। छोटे वकीलों ने—जिन्होंने उसका बयान पढ़ा उन्होंने यह नहीं बताया कि जो रिकार्ड आपने मंगाया था वह नहीं आया, वरना मैं उसी समय आपत्ति उठाता, क्लर्क चला गया। अगले दिन रिकार्ड देखने की आज्ञा लेकर रिकार्ड देखा तो पिछले रिकार्ड का एक कागज भी उसमें नहीं था। उसने अपने बयान में लिखा था कि कार्यालय में १९३९ से लेकर १९४४ तक का रिकार्ड नहीं है। वकील होता तो पूछता रिकार्ड कहां गया? क्योंकि महामण्डल का कार्यालय १९४४ में कलकत्ता चला गया था। १९५० में वह कलकत्ता से दिल्ली आया। यदि महामण्डल का पिछला रिकार्ड कार्यालय में न होता तो पदाधिकारियों का कर्तव्य था कि इस मामले को स्थायी समिति के अधिवेशन में रखते, कि पिछला रिकार्ड नहीं है इसको सभा के अधिकारी मालूम करते। किन्तु ऐसी कोई रिकार्ड के गायब होने की सूचना १९५६ तक के किसी अधिवेशन में नहीं आई। इससे स्पष्ट था कि रिकार्ड तो कार्यालय में था पर शिवशर्मा ने उसे पेश नहीं करने दिया क्योंकि उस रिकार्ड के आ जाने पर इन १७ सदस्यों के प्रतिनिधि बनने की जालसाजी का उससे प्रमाण तो मिल ही जाता इससे भिन्न उन वर्षों में जो

(पृष्ठ उलटिये)

[पृष्ठ १५१ का शेष]

शिवशर्मा तो दोनों ही मानहानि के मुकदमों में बुरी तरह हार कर दम ले रहा हैं। उसके इशारे पर काम करने वाले कर्मचारी महामण्डल पर छाये हुए हैं। महामण्डल की आर्थिक स्थिति बहुत ही गिर गई है। जिन महामण्डल सदस्यों को महामण्डल से स्नेह था, जो कुछ वैद्य समाज की सेवा करना चाहते थे, वह सब शिवशर्मा के अधिनायकत्व से ऊबकर घर बैठ गये हैं। ऐसी दशा में महामण्डल जिस शोचनीय दशा में त्रिशंकु बना लटक रहा है—क्या आप सब प्रधान मन्त्री या प्रधान के द्वारा अधिवेशन बुलाने की प्रतीक्षा में ही महामण्डल को इसी तरह लटका देखना पसन्द करेंगे? यदि नहीं तो वैद्य समाज की दशा को देखते हुए इसके उद्धार का प्रयत्न करिये या इस को सदा के लिये समाप्त कर दीजिये। इसके सिवाय अब कोई दूसरा मार्ग नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनियमितताएं हुई थीं उनका बहुत सा प्रमाण और भी हाथ आ जाता। इसीलिये उसने पिछला रिकार्ड पेश नहीं होने दिया, इस तरह मैं इस प्रमाण से वंचित रहा।

दूसरा प्रमाण मेरे पास गवाहों का था। इन १७ प्रतिनिधियों में से इस समय मेरे पास तीन गवाह थे जिन्हें शिव शर्मा ने १९४० के चुनाव में पंजाब से प्रतिनिधि बनाया था (१) पं० प्राणनाथ पुष्करणा, पुष्करणा आयु-वैदिक फार्मेसी अमृतसर, दिल्ली (२) श्री अमरनाथ डोगरा म्युनिसिपल कमिश्नर जालन्धर (३) श्री बल्देव राज वैद्य अमृतसर। यह तीनों ही इस बात की साक्षी देने के लिये तैयार थे कि शिव शर्मा ने उन्हें चन्दे के ५१) रुपये की रकम से प्रतिनिधि बनाया था, हमने अपने पास से चन्दा नहीं दिया था। इन सबों को बुलाने और गवाह रखने के लिये मैंने अपने वकील से बहुत कहा, वकील कहता था कि गवाह मत पेश करो। शिवशर्मा जैसे चालाक आदमी से हम सब जिरह में मतलब की बात कहलवा लेते हैं, जब हम गवाह पेश करेंगे हो सकता है उसका वकील अन्य सिद्ध हुए मामलों पर उनसे जिरह करे और वह सिद्ध हुए मामले फिर सन्दिग्ध बन जांय। इस लिये इस एक मामले में ज्यादा से ज्यादा ५००) रु० दण्ड है, दण्ड दे देना अच्छा है बाकी के सिद्ध हुए अभियोगों को बिगाड़ना अच्छा नहीं। हम चाहते थे दण्ड होना नहीं चाहिए, वह कहता था ४२ अभियोगों में से एक अभियोग के आधे अंश के असिद्ध रह जाने पर विचारवान् वस्तु-स्थिति को समझ लेते हैं। इसलिये न्याय की दृष्टि में अभियोग को सिद्ध न करने के कारण इस दण्ड को सहन कर लो, गवाह मत दो। यह बात बम्बई के समस्त वैद्य जानते हैं कि वकील के कहने पर गवाह पेश नहीं किये गये, वरना यदि कहीं मैं एक गवाह भी पेश कर देता तो माननीय न्यायाधीश के रिमार्क से यह झलक मिलती है कि वह मुझे इस अभियोग से भी अवश्य ही मुक्त कर देता। अभी अभी शिव शर्मा ने सितम्बर १९५७ की पत्रिका में फिर अपना जो वक्तव्य छपाया है वह महामण्डल के धन से फिर अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने का प्रयत्न है।

पत्रिका के पृष्ठ ५७९ पर कहता है:—"वैद्यों के पत्रों का तूफान उमड़ आया। मुझसे पूछा जाता है कि अपने विरुद्ध इस मिथ्या प्रचार की रोक के लिये मैं न्याया-लय की शरण क्यों नहीं लेता।"

एक ही दफा की डबल मार से जिसकी कमर टूट गई हो भला वह कभी फिर सिर उठाने का साहस कर सकता है? तभी तो वह आगे कहता है:—

"मैंने कानूनी अनिश्चितताओं द्वारा सम्भव भ्रान्त निर्णयों के खतरे को छोड़ कर सीधे सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा सीधी गवाही प्रकाशित कर के सत्य को प्रकाश में लाने का मार्ग क्यों ग्रहण किया है।" आगे कहता है:—

"मुकदमा करने पर न्यायाधीश निर्णय कारणों द्वारा सत्य रहित निर्णय कर सकता है।" पाठक! इसकी गर्वोक्ति की पंक्ति से इस पंक्ति की संगति को मिलाइये।" (१) मेरे कथन पर विश्वास न करके कि मैंने कभी राष्ट्रपति को शिलान्यास करने को नहीं बुलाया न वह कभी शिलान्यास के लक्ष्य से ऋषिकेश के लिये रवाना ही हुए।"

जब वह शिलान्यास के लिये नहीं गये थे तो उस दशा में तुम वहां उन्हें भाषण सुनाने किस हैसियत से गये? यह तो बताओ। सदस्यगण! वैधानिक रूप से राष्ट्रपति जी को बुलाने का यही जुम्मेवार था। सचित्र आयुर्वेद की जिस 'एक दुखद घटना'' शीर्षक पर शिव शर्मा अपनी सफाई पेश करने के लिए महामण्डल के धन का दुरुपयोग कर रहा है उसका मुंह तोड़ उत्तर 'महामण्डल सदस्यों से एकप्रश्न' नामक इसी अंक के प्रथम लेख में पढ़ लें कि "वह सचित्र आयुर्वेद का द्वेष पूर्ण आविष्कार मात्र है" कि सच्चाई पूर्ण?

अदालत का दरवाजा खटखटा कर उसका परिणाम उसके सामने यह आया है "कि न्यायाधीश के सामने जाने पर कानूनी अनिश्चितताओं द्वारा सम्भव भ्रान्त निर्णयों का खतरा है। दूसरे वह सत्य रहित निर्णय कर सकता है।" इसलिये उसका जिस न्यायालय पर बड़ा विश्वास था वह उड़ गया है। अब उसे न्यायालय पर कोई विश्वास नहीं रहा, इसलिये उसने सदस्यों को भ्रम में डालने के लिये संस्था के पैसे से अपनी प्रतिष्ठा स्थापन का मार्ग फिर अपनाया है। वह अपने जेब से पैसे न खर्च करके गरीब वैद्यों के चन्दे से जो संस्था चल रही है उसके धन को अपहरण करता रहता है, वह अब तक भी संस्था का पीछा नहीं छोड़ता। क्या इसके लिए न्यायालय जाना होगा?

ग्राहकों का सूचना

वर्षा और बाढ़ों के कारण तथा युद्ध के खतरों से देश विदेश की चीजों का भाव एकाएक चढ़ गया है। सूची पत्र छपते छपते निम्न चीजों के दाम और बढ़ गये हैं।

दारचीनी १५५) मन, पारा ४२) सेर,
सिगरफरूमी ४१) सेर, केशर कश्मीरी १३) तोला,
कस्तूरी नेपाली ८६) तोला।

इसी तरह कुछ और चीजों के भाव भी बढ़ रहे हैं। ग्राहक माल मंगाते समय इधर ध्यान रखें या प्रथम पत्र डाल कर भाव पूछ लें।

मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ४ आश्विन सम्वत २०१४ संख्या १०

अक्टूबर १९५७

8-10-57

आयुर्वेद-विज्ञान

चिकित्सा संसार में क्रान्ति लाने वाला मुख्य वैज्ञानिक पत्र

AYURVED-VIJNAN

The Leading Hindi Journal Explaining The Ayurvedic System on Scientific Lines

सम्पादक
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

विषय-सूची

१. महामण्डल सदस्यों से एक प्रश्न १४५
२. शिवशर्मा द्वारा दायर मानहानि केस का फैसला १५२

प्रकाशक—
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य, आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय, २२ फैज़ बाज़ार, देहली ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—बदलिया प्रिंटिंग प्रेस, दाईवाड़ा नई सड़क, दिल्ली

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियम

१—आयुर्वेद-विज्ञान प्रत्येक अंग्रेजी मास की १ तारीख को प्रकाशित होता रहेगा।

२—डाक-व्यय सहित इसका मूल्य ३) वार्षिक, एक प्रति का मूल्य ।=) होगा।

३—पत्र मंगाने वालों को अपना पता साफ २ अक्षरों में लिखना चाहिये।

४—जिन व्यक्तियों के पास उस मास की ५ ता० तक पत्र न पहुंचे उन्हें इसकी सूचना देनी चाहिये।

५—यदि एक-दो मास के लिये पता बदलवाना हो तो उसका प्रबन्ध स्वयम् डाकखाने से कर लेना चाहिये। अधिक समय के लिये पता बदलवाना हो तो फिर हमें सूचित करना चाहिये।

६—पत्र व्यवहार करते समय ग्राहकों को अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये। अन्यथा उत्तर नहीं दिया जावेगा।

७—पत्र व मूल्य सम्बन्धी पत्र-व्यवहार मैनेजर आयुर्वेद विज्ञान के नाम से और लेख, समालोचनादि व पुस्तकादि सम्पादक के नाम से भेजना चाहिये।

८—कोई भी पत्र, पुस्तक समालोचना के लिये भेजी जाय उनकी दो प्रति भेजनी चाहिये।

९—आयुर्वेद विषयक वैज्ञानिक गवेषणापूर्ण लेखों को पत्र में सर्व-प्रथम स्थान दिया जायेगा और श्रेष्ठ सचित्र लेखकों को पुरस्कृत भी किया जायगा।

१०—वृथा के आडम्बर पूर्ण पृष्ठ-पोषक लेखों के लिये इसमें स्थान नहीं मिलेगा। किसी भी लेख को घटाने, बढ़ाने व प्रकाशित करने, न करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार होगा।

११—जो लेख भेजें जायें, कागज पर एक तरफ हाशिया छोड़ कर लिखे होने चाहिये।

१२—उत्तम २ अलभ्य आयुर्वेद साहित्य सम्बन्धी चित्र लेख व वनस्पतियों आदि को जो सुरक्षित भेजेंगे उनको सपारिश्रमिक मार्ग व्यय आदि सब आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय से दिया जायेगा।

१३—आयुर्वेद शास्त्र सम्बन्धी प्रश्नों को छोड़ कर किसी परामर्श सम्बन्धी या किसी रोगी के लिये रोग-सम्बन्धी प्रश्नों पर प्रति प्रश्न के लिये आयुर्वेद-विज्ञान के ग्राहक आठ आना, जो ग्राहक नहीं वह प्रति प्रश्न एक रुपये का टिकट प्रश्न के साथ भेजेंगे तभी उनके प्रश्न और उत्तर छापे जायेंगे।

विज्ञापन छापने के नियम

१—किसी भी विज्ञापन छापने वाले या बन्द करने वाले को पत्र प्रकाशन से १५ दिन पूर्व सूचना देनी चाहिये।

२—अश्लील सभ्यता के विरुद्ध विज्ञापन नहीं लिये जायेंगे।

३—कोई भी विज्ञापन जनता को धोखा देने वाला सिद्ध होने पर उसका प्रकाशन बन्द कर दिया जायगा और जब तक वह सन्तोषप्रद प्रमाण न देगा जो मूल्य आ चुका है वापस नहीं दिया जायगा।

४—विज्ञापन का मूल्य सर्वथा प्रथम लिया जायगा।

५—आधे कालम से कम विज्ञापन दाताओं को आयुर्वेद विज्ञान बिना मूल्य नहीं दिया जायगा।

६—एक वर्ष के लिये विज्ञापन देने वाले को =) रुपया कमीशन काट दिया जायगा।

विज्ञापन के दर

७—१ पृष्ठ यानी २ कालम की प्रतिबार की छपाई				४०)
आधा पृष्ठ	" १	"	"	" २४)
चौथाई ,,	१।२	"	"	" १६)
टाईटल के पीछे के पृष्ठ की			"	" ५०)
"	तीसरे "	की	"	" ४५)
"	चौथे "	की	"	" ६०)

८—ट्रेड डायरैक्टरी में विषय वार विज्ञापन प्रति ३) रु० के हिसाब से लिया जावेगा।

मैनेजर

शोक समाचार

बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि आयुर्वेद के प्रकण्ड पंडित महामण्डल के जीवन स्तम्भ प्राणाचार्य श्री पं० गोवर्धन शर्मा छांगाणी भिषक् केसरी ३ सितम्बर को ८० वर्ष की आयु पूर्ण कर सदा के लिये हम सबों के बीच से चले गये।

हम आयुर्वेद विज्ञान स्टाफ की ओर से इस महान वियोग व्यथा काल में छांगाणी जी के परिवार से हार्दिक सम्वेदना और सहानुभूति प्रकट करते हैं।

हो सका तो अगले अंक में आपके जीवन घटना पर प्रकाश डालेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद-विज्ञान

आयुर्विदेव वितते किल शास्त्र जाते पुम्भिः प्रयत्नपरकैर्भवतीह लभ्यम् ।
शक्तिं शिवं च जनता यदि कांक्षतीयम् विज्ञानमेव भजतां सततं विशेषम् ।।

वर्ष ४ | २०१४ आश्विन वि०, अक्टूबर १९५७ ई० | अंक १०

महामण्डल सदस्यों से एक प्रश्न

क्या अ० भा० आयुर्वेद महामण्डल को सक्रिय सजीव संस्था बनाना है या समाप्त करना है ?

अब यह महामण्डल के किसी सदस्य से छिपी बात नहीं रही कि जिस महामण्डल पर आज १९ वर्ष से एक गुट विशेष का आधिपत्य बना चला आया है जिसका नेता शिवशर्मा था और आज भी है। वह महामण्डल के साधारण व विशेष अधिवेशनों में महामण्डल के बड़े बड़े नेताओं, हितचिन्तकों, विधान ज्ञाताओं को इस बुरी तरह छकाता रहा कि जिसके छलप्रपञ्चों हथकण्डों के आगे किसी की भी पेश नहीं गई। अन्त में वे सब धीरे धीरे हताश, निराश होकर महामण्डल से एक दम उदासीन हो गये, उन्होंने सम्मेलनों में जाना तक छोड़ दिया। जो जाते भी थे वह केवल यह देखने के लिये कि शिवशर्मा महामण्डल में अपनी धींगामुश्ती से अधिवेशन की कार्यवाहियां कैसे चला रहा है और वहां कैसे कैसे अवैधानिक कार्य कर रहा है।

महामण्डल के स्थापन का उद्देश्य— स्वर्गीय श्री शंकर दाजी पदे शास्त्री, स्वर्गीय श्री आचार्य यादव जी, श्री शुक्ल जी आदि महानुभावों ने समय की स्थिति को देखकर महामण्डल की स्थापना इसलिये की थी कि 'संघशक्ति कलौयुगे' कलियुग में संगठन शक्ति का ही महत्व है, बिना संगठन के वैद्यक व्यवसाय का भविष्य में जीवित रहना कठिन है। उस समय भारत में अंगरेजों का राज्य था अगरेजों ने अलोपैथी चिकित्सा को मान्यता दी हुई थी। अलोपैथी शिक्षा के लिये वे यहां मेडिकल कालेज खोलते जा रहे थे। उन कालेजों से निकले डाक्टरों को ही सरकार प्रमाणित मानती थी। उन्हीं के दिये प्रमाण पत्र और व्यवस्था को सरकार स्वीकार करती थी। वैद्यों को वह पूछती तक नहीं थी। जिस चिकित्सा-पद्धति की किसी जमाने में राज्य मान्य प्रतिष्ठा हो उसकी गिरती स्थिति को देखकर ही उन महानुभावों को दुःख हो रहा था, इसी से उन्होंने वैद्य समाज को संगठित करने का प्रयास किया। उसी के परिणाम स्वरूप आज से ४२ वर्ष पूर्व आयुर्वेद महामण्डल नामक संस्था की स्थापना हुई। संस्था की स्थापना के कुछ ही समय बाद महामण्डल के सामने आयुर्वेद की व्यवस्थित शिक्षा का मुख्य प्रश्न था। वैद्यों को सरकार इसलिये प्रामाणिक नहीं मानती थी क्योंकि वह किसी सरकार द्वारा स्वीकृत कालेज से पढ़ कर नहीं निकलते थे। जहां वह पढ़ते थे वहां कोई व्यवस्थित पढ़ाई का प्रबन्ध नहीं होता था, न शिक्षा के साथ क्रियात्मक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में समझने के साधन होते थे। इसीलिये वे आयुर्वेद के नेता आयुर्वेद शिक्षा के लिये विश्व विद्यालय की स्थापना करना चाहते थे। १९१७ में भारतीय नरेशों की अंगरेजों ने दिल्ली में एक कान्फ्रेन्स बुलाई, भारत के समस्त नरेशों का दिल्ली में एकत्र होना देखकर उन सबों से मिलने में वहीं सुविधा दिखाई दी। उन नेताओं ने अनेक प्रमुख वैद्यों को एकत्र कर डेपूटेशन बना उन राजाओं से भेंट की और उनसे आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना में सहयोग देने की प्रार्थना की। उस समय ही अनेक नरेशों ने हजारों रुपया देने का वचन दिया। किन्तु उनसे रुपया उघराने कौन जाय ? इसलिये वे समय निकाल न सके और वह रुपया जहाँ का तहां ही रह गया। १९१८ में जब महामण्डल का वार्षिक अधिवेशन हुआ तो वहां अपनी अकर्मण्यता को देख उन्हें यह निश्चय करना पड़ा कि यदि आयुर्वेद विद्यालय के लिये हमारे प्रयत्न शिथिल हैं तो फिलहाल काम चलाऊ विद्यापीठ स्थापित कर हमें शिक्षा के लिये कोर्स ग्रन्थों की योजना बनाना चाहिये और पाठ्यक्रम निर्धारित कर उसके अनुसार गुरु गृह में पठित छात्रों की परीक्षा लेकर किसी एक व्यवस्था का श्री गणेश करना चाहिये उसी के परिणाम स्वरूप में यह हमारी विद्यापीठ एक भूमिका मात्र थी।

उस समय किसी संस्था को बनाकर रजिस्टर्ड करा देना, जन समाज में उसका रजिस्ट्रेशन एक महत्त्व की बात समझी जाती थी। आयुर्वेद महामण्डल एक रजिस्टर्ड संस्था हो जाने के कारण उस द्वारा संचालित विद्यापीठ की परीक्षा महत्व की समझी जाने लगी।

इस विद्यापीठ की परीक्षा में बैठने के लिये कोई बन्धन न था, कहीं पढ़ो, किसी से पढ़ो, उनके निश्चित कोर्स ग्रन्थ हों, बस परीक्षा में बैठने की सुविधा है। कोर्स चहे ३ वर्ष या पांच वर्ष का हो पर विद्यार्थी से कोई पूछने वाला नहीं होता। जब परीक्षा का समय समीप हो फार्म मंगाकर, भर कर निश्चित फीस के साथ भेज दो परीक्षा में बैठने की अनुमति मिल जाती। इस सुविधा के कारण विद्यापीठ की परीक्षा में विद्यार्थी अधिकाधिक सम्मिलित होने लगे। महामण्डल के लिये धीरे धीरे विद्यापीठ कामधेनु बनती चली गई। किन्तु विचारवान् नेता यह अच्छी तरह देख रहे थे कि इन विद्यापीठ परीक्षोत्तीर्ण छात्रों से समय की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो रही। विद्यमान सरकार की दृष्टि में इन परीक्षोत्तीर्ण वैद्यों की कोई मान्य प्रतिष्ठा न थी। न इस विद्यापीठ के उत्तीर्ण छात्र ही विशिष्ट योग्यता सम्पन्न होते थे। इसीलिये महासम्मेलन इस बात की प्रति वर्ष त्रुटि अनुभव करता था कि हमारा स्थिर रूप में कोई विद्यालय नहीं। आयुर्वेद विद्यालय तो अवश्य होना ही चाहिये। इसीलिये प्रतिवर्ष जब अधिवेशन होता था विद्यालय स्थापन पर विचार होता और कोई न कोई इस सम्बन्धी प्रस्ताव भी आता और पास हो जाता था।

१९३९ के वर्ष जब शिवशर्मा आयुर्वेद महामण्डल का प्रधान चुना गया उसी वर्ष बम्बई में बाम्बे मेडिकल प्रेक्टिशनर एक्ट पास हुआ था। बम्बई के अध्यापक सम्मेलन ने विद्यापीठ संचालकों को अपना सर्वांग पूर्ण आयुर्वेद विद्यालय खोलने का आदेश दिया था। इसे १९४० में पूरा किया जाना था। इस वर्ष प. शिवशर्मा फिर स्वागत समिति द्वारा प्रधान चुन लिया गया। कुछ समय के बाद कोटा नरेश ने आयुर्वेद विद्यालय के लिये एक लाख रुपया नगद तथा विद्यालय के लिये काफी भूमि देने की इच्छा प्रकट की। तब महामण्डल की ओर से कोटा नरेश के प्रधान मन्त्री से पत्र व्यवहार चला और शिवशर्मा इस सम्बन्ध में कोटा नरेश से मिलने गया किन्तु वह विद्यालय के लिये न तो वहां से धन प्राप्त कर सका, न भूमि प्राप्त करने में समर्थ हुआ। १९४२ में फिर बनवारी लाल आयुर्वेद विद्यालय से मिलाकर उसे वृहद् रूप में ले जाने की योजना सामने आई। उस समय भी शिवशर्मा की महत्वाकांक्षा ने इस योजना की लुटिया डुबो दी। फिर अगले १० वर्ष तक सम्मेलनों पर प्रस्ताव ही पास होते रहे, काम कुछ नहीं हुआ।

१९५२ में जब पं० शिवशर्मा फिर महामण्डल के कार्यवाहक प्रधान बने उसे अपने निकट सम्बन्धी पं० श्रीदत्त जी भिवानी निवासी से ज्ञात हुआ कि ऋषिकेश में बाबा काली कमली वाले का एक आयुर्वेद विद्यालय है, उसके पास लाखों रुपया नगद तथा बहुत सी भूमि भी है उनके विद्यालय को यदि महामण्डल के आधीन ले लिया जाय तो बिना श्रम के विद्यालय की स्थापना हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर क्या था, शेखचिल्लियों के मनसूबे बंधने लगे, श्रीदत्त से मिलकर शिवशर्मा ने उसे हथियाने की योजना बनाई। उन दिनों पं० श्रीदत्त बाबा काली कमली वाले क्षेत्र में डेरा डाले हुए थे और वहाँ की सेवा समिति में कार्य संचालक मन्त्री थे।

२६–२७–२८ अक्टूबर १९५२ को इन्दौर में आयुर्वेद महामण्डल का अधिवेशन होता है जिसका प्रधान शिवशर्मा था। वहां जो शिक्षा सम्मेलन हुआ और जिसकी प्रधानता उसके परम मित्र पं० हरिदत्त शास्त्री ने की वहां निम्न प्रस्ताव पास किया जाता है—

"नि० भा० आयुर्वेद महा सम्मेलन का यह ३८ वां अधिवेशन निश्चय करता है कि ऋषिकेश में श्री बाबा काली कमली वाले के आयुर्वेद विद्यालय को विद्यापीठ अपना विद्यालय घोषित करे तथा उसके परिवर्धन के लिये विद्यापीठ श्री बाबा काली कमली वाले की सेवा समिति की कमेटी से परस्पर संयुक्त होकर काम करने के लिये आवश्यक शर्तें निश्चय करे। जिसके लिये वह निम्न महानुभावों की एक उप समिति का निर्माण करता है—

१—वैद्य श्री पं० शिवशर्मा २–कवि० श्री प्रतापसिंह, ३–वैद्य पं० श्री दत्त मन्त्री आयुर्वेद सेवा समिति ऋषिकेश ४–वैद्य स्वामी दयानिधि जी ५–श्री हरिदत्त शास्त्री। यह उप समिति वैधानिक रूप में नियत जरूर हो गई थी किन्तु आयुर्वेद विद्यालय स्थापन सम्बन्धी सारा पत्र व्यवहार महामण्डल की ओर से पं० शिवशर्मा ही करता रहा, उधर पं० श्रीदत्त जी करते रहे।

पं० श्रीदत्त और शिवशर्मा यही दोनों व्यक्ति बाबा काली कमली वाले क्षेत्र ट्रष्ट के ट्रष्टियों से भी मिलते रहे। इन्होंने ही दो वर्ष तक आयुर्वेद विद्यालय स्थापना की योजना को आगे बढ़ाया। २४–४–५३ को बंगलौर में महामण्डल की स्थायी समिति का जो अधिवेशन शिवशर्मा ने बुलाया था उस अधिवेशन में शिवशर्मा ने जो आयुर्वेद विद्यालय का विषय उपस्थित करते समय रिपोर्ट पढ़ी वह निम्न है। उसने कहा—"इस कार्य को करने के लिये आरम्भिक शर्तें निश्चित करने तथा तत् सम्बन्धी योजना निर्माण का कार्य हमें सौंपा गया था, उक्त महासम्मेलन के शीघ्र पश्चात हमने कार्य आरम्भ किया तथा [illegible] समिति की प्राथमिक बैठक १ दिसम्बर १९५२ को ऋषिकेश में की, जिसमें क्षेत्र और सेवा समिति के सदस्यों के साथ मिलकर सिद्धान्त रूप में यह निश्चय किया गया कि उपर्युक्त प्रस्ताव के अनुसार उक्त विद्यालय को विद्यापीठ के आधीन करना उपयुक्त होगा। सेवा समिति आयुर्वेद विद्यालय को अधिकार में लेने के लिये १८ कारण आपने विस्तार से वहां बताये। और जो योजना बनाई वह सारी की सारी पाठक मई १९५३ की सम्मेलन पत्रिका में पढ़ सकते हैं। इसके बाद १० नवम्बर १९५३ को महामण्डल की स्थायी समिति का अधिवेशन दिल्ली में होता है वहाँ निम्न प्रस्ताव पास किया जाता है।

सं० १४—आयुर्वेद विश्व विद्यालय की स्वीकृत योजना को श्री बाबा काली कमली वाला पंचायती क्षेत्र समिति तथा आयुर्वेद सेवा समिति ऋषिकेश ने स्वीकार किया है। तदर्थ उक्त दोनों सभायें भारत के वैद्य समाज की ओर से धन्यवादार्ह हैं। निश्चय हुआ कि उक्त दोनों सभाओं को कार्यालय की ओर से धन्यवाद सूचक पत्र भेजे जाँय।

सं० १५—आयुर्वेद विद्यालय का शिलान्यास किसी विशिष्ट राष्ट्रीय नेता द्वारा कराया जाय और इस विषय में सम्पूर्ण व्यवस्था करने का अधिकार वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा जी तथा राय बहादुर श्री पं० श्रीदत्त जी को दिया जाना स्वीकार हुआ।

(देखो सम्मेलन पत्रिका नवम्बर १९५३ पृ० ६३१)

इसके बाद फरवरी १९५४ में अ० भा० आयुर्वेद सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन जो कोट्टकल में हुआ वहां निम्नलिखित प्रस्ताव पास होता है।

सं० ४—निश्चय हुआ कि क्योंकि विद्यापीठ की विश्वविद्यालय योजना को कार्यान्वित करने के लिये श्री बाबा काली कमली वाला क्षेत्र ट्रस्ट तथा उनकी आयुर्वेद सेवा समिति ने जो विशाल भूभाग तथा प्रारम्भिक आवश्यकता पूर्त्यर्थ आवश्यक बिल्डिंग आदि का विनियोग करने की अनुमति दी है वह लगभग दो लाख के क्षेत्र की तथा लगभग ३ लाख के ही आयुर्वेद सेवा समिति की होती है और दो लाख रुपया नगद आयुर्वेद सेवा समिति का जो जमा है (जिसमें [illegible] हजार रुपया क्षेत्र समिति के पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमा है) सो करीब ७ लाख की सम्पत्ति उपरोक्त दोनों संस्थाओं ने इस विश्वविद्यालय योजना को कार्यान्वित करने के लिये प्रस्तुत की है । यह सम्मेलन तदर्थ उक्त दोनों संस्थाओं का धन्यवाद करता है । प्रस्ताव शिवशर्मा सभापति द्वारा । देखो सम्मेलन पत्रिका मार्च १९५५ पृ० १५४

यहां इसने इस तरह ख्याली पुलाव के १० प्रस्ताव पकाये हैं । इसके वाद योजनानुसार १९–४–५४ को शिलान्यास के लिये राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी से मिलने के लिये श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन को भेजा जाता है और १३ अक्टूबर १९५४ का दिन राष्ट्रपति शिलान्यास के लिये नियत करते हैं ।

जब शिलान्यास की सूचना बाबा काली कमली वाला क्षेत्र ट्रष्ट कलकत्ता को मिलती है तो वे २६–६–५४ को अपनी प्रबन्धकारिणी का अधिवेशन बुलाते हैं । जिस अधिवेशन में शिवशर्मा और पं० श्री दयानिधि स्वामी भी पहुँचते हैं । उस अधिवेशन की कार्यवाही व स्वीकृत प्रस्ताव की प्रतिलिपि निम्न हैं :—

"आयुर्वेद विश्वविद्यालय सम्बन्धी विषय विचारार्थ उपस्थित हुआ और श्री सभापति महोदय ने आगत प्रतिनिधियों (श्री पं० शिवशर्मा जी सभापति व प्रतिनिधि अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन, श्री स्वामी दयानिधि जी प्रतिनिधि काली कमली वाला आयुर्वेद सेवा समिति व अ० भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ) का परिचय उपस्थित महानुभावों को दिया, तत्पश्चात् कार्यवाही आरम्भ हुई ।

श्री सभापति महोदय ने सभा का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि प्रतिनिधि महानुभाव उपस्थित हैं, उनसे सदस्य महानुभाव जो स्पष्टीकरण करना चाहें वो कर सकते हैं । तदनन्तर निम्नलिखित महानुभावों ने इस सम्बन्ध में निम्न प्रकार से अपने विचार उपस्थित किये--

१--श्री बैजनाथ बाजोरिया :—

(क) क्षेत्र के प्रस्ताव १–८–५३ में चारों संस्थाओं को मिलाकर विश्वविद्यालय के कार्य को अग्रसर करने का उल्लेख है जबकि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन के प्रस्ताव में सिर्फ तीन ही संस्थाओं के नाम हैं अतः प्रस्ताव नियमानुकूल नहीं है ।

(ख) श्री शिवशर्मा ने अपने २२–५–५४ के पत्र में जो क्षेत्र के सभापति व चेयरमैन के नाम भेजे हैं–उन पत्रों में आश्वासन दिया है कि ५ लाख रुपया शीघ्र ही दक्षिण के चार राज्यों से एकत्र करेंगे और १५ लाख तीन साल में इकट्ठा किया जायगा । सो पं० शिवशर्मा जी विश्वविद्यालय के लिये ५ लाख रुपया शीघ्र देने को तैयार हैं क्या ?

(ग) अपने रेज्यूलेशन कोट्टकल में इन्होंने ९५ हजार रुपया व एक लाख आयुर्वेद सेवा समिति वाला भी लेने का प्रस्ताव पास किया है जो नियमानुसार दिया नहीं जा सकता, अतः यह प्रस्ताव कोई मूल्य नहीं रखता ।

(घ) आयुर्वेद विद्यापीठ काली कमली वाला आयुर्वेद विद्यालय को अपना विद्यालय घोषित करे–ऐसा उल्लेख उनके इन्दौर के प्रस्ताव में है–सो जब तक आयुर्वेद सेवा समिति ही नियमानुकूल ऐसा प्रस्ताव विद्यापीठ में सम्मिलित करने का न करे तब तक इस प्रस्ताव का क्या मूल्य है ? हमें जहां तक ज्ञात है कि आयुर्वेद सेवा समिति ऋषिकेश ने ऐसा प्रस्ताव नियमानुसार स्वीकृत नहीं किया है ।

(ङ) प्रस्ताव में इस बात का जिकर है कि दो लाख रुपया आयुर्वेद सेवा समिति का मिल जायगा और क्षेत्र की जमीन की कीमत भी प्राय ३ लाख रुपया है, अतः अपने मन से निर्णय कर लेना उपयुक्त नहीं ।

(च) श्री पं० शिवशर्मा जी ने अपने उपरोक्त २२-५-५४ के पत्र में लिखा है कि क्षेत्र हमें केवल जंगल देता है, प्रधान द्वार देता है, एक टूटी जीर्ण धर्मशाला देता है आदि २ सो इसका क्या तात्पर्य है ? बाबा काली कमली क्षेत्र की जो अपनी बहुमूल्य जमीन तथा इमारतें देने की बात हो रही है, उसको इस प्रकार तुच्छ क्यों बताया जाता है ।

(छ) यदि विश्वविद्यालय स्थापित हो गया तो क्षेत्र की आय पर बुरा प्रभाव पड़ेगा जिससे आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा । अतः विश्व विद्यालय के स्थापन से क्षेत्र को लाभ नहीं होगा ।

(ज) श्री पं० श्रीदत्त जी क्षेत्र के संयुक्त मन्त्री, विद्यापीठ के मन्त्री, आयुर्वेद सेवा समिति के मन्त्री हैं और उन्हें ही पत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवहार का भार दिया गया है अतः वे आप ही पत्र देने वाले और आप ही पत्र का जवाब लेने वाले हैं जो उचित नहीं है, इसलिये क्षेत्र की तरफ से पत्र व्यवहार का भार उनसे हटाकर मन्त्री को सुपुर्द करना चाहिये।

(झ) आयुर्वेद विद्यालय की स्थापना अपनी पुरानी योजना 'आत्मविज्ञान भवन' के ध्येय के विपरीत होगी और रामनगर की शान्ति में बाधा उपस्थित होगी।

(ट) आयुर्वेद सेवा समिति के इस सम्बन्ध में प्रस्ताव जिसमें कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय के लिये ४ प्रतिनिधियों का चुनाव हुआ है अनियमित व अव्यवहारिक है।

(२) मोरार जी अग्रवाल अडवोकेट—

(क) हमने पहिले लीज की बात कमेटी में उठाई थी अतः हमें देखना चाहिये कि रामनगर की लीज के शर्त मुताबिक हम वह स्थान इस कार्य के लिये दे सकने के अधिकारी हैं या नहीं।

(ख) क्षेत्र के मेमोरेण्डम व विघटन के अन्तर्गत हम ऐसे कार्य कर सकने के लिये स्वतन्त्र हैं अथवा नहीं।

(ग) हमने कई प्रस्तावों में इस योजना को अग्रसर करने की बात स्वीकार की है, अतः उसको मद्दे नजर रखकर बढ़ना है अथवा नहीं।

(घ) यह बात भी विचारणीय है कि क्या हम ऐसा कर क्षेत्र के विपरीत तो काम नहीं करते।

(३) मदनगोपाल जी पोद्दार—

(क) इस प्रकार के कार्य जब तक क्षेत्र की जनरल मीटिंग में एजेण्डा निकालकर दानी महानुभावों को आमन्त्रित कर स्वीकृत न हों तब तक नहीं होने चाहिये। हमें मालूम है कि २-६-५३ के साधारण अधिवेशन में जो प्रस्ताव इस सम्बन्ध में हुआ था वह विविध विषय में से एक था, अतः यह नियमानुसार नहीं है।

(ख) ता० १-८-५१ के प्रस्ताव से विश्वविद्यालय के प्रस्ताव की स्वीकृति कन्डीशनल है जब तक विश्वविद्यालय संचालन के नियम, उपनियम तथा अग्रीमेण्ट बनकर क्षेत्र कमेटी द्वारा हस्ताक्षरित नहीं हो जाते तबतक स्वीकृति अस्वीकृति का कुछ मूल्य नहीं।

(ग) आयुर्वेद सेवा समिति के प्रस्ताव भी ७५ परसेन्ट दानदाताओं की स्वीकृति से पास होने के पश्चात् ही व्यवहृत होने चाहिये।

(४) श्री छोटेलाल जी कानोडिया—इन्होंने भूरे लाल जी के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना का महत्व बतलाते हुए कमेटी को अवगत कराया कि यदि क्षेत्र अपने ध्येय की पूर्ति में संलग्न रहे और आयुर्वेद कालेज अपनी उन्नति में रत रहें तो हमें इस योजना को कार्यान्वित किये जाने पर आपत्ति नहीं करनी चाहिये। या पास में ही कुछ दूरी पर स्थान हो तो वहाँ बनने देने में ठीक है जिसमें क्षेत्र के ऊपर भी कोई असर न पड़े तथा यह शुभ कार्य भी होता रहे।

तदुपरान्त श्री पं० शिवशर्मा जी सभापति व प्रतिनिधि आयुर्वेद महा सम्मेलन ने कहा कि हम उन्हीं बातों का उत्तर देंगे जो हमसे सम्बन्धित हैं। दूसरी बातें जो अन्य महानुभावों या संस्थाओं से सम्बन्धित हैं उस सम्बन्ध में हमें कुछ नहीं कहना है। अतः उन्होंने आयुर्वेद महासम्मेलन व आयुर्वेद विद्यापीठ के विधान व कार्य शैली की पृथकता का वर्णन करते हुए कमेटी को अवगत कराया कि दोनों संस्थाएं भिन्न हैं उनके कार्य की प्रणाली, पदाधिकारी, कोष आदि भी अपने अपने हैं और कार्य नियमानुसार ही होता है। दोनों रजिस्टर्ड संस्थाएं हैं और दोनों की कार्य प्रणाली भी अलग अलग चली आ रही है। उन्होंने कहा—

(१) आप प्रस्तावित स्थान की जगह हमें दूसरा स्थान देने की बात करते हैं जो आयुर्वेद विश्वविद्यालय के अनुकूल न होगा। उस हालत में जहां तक हमारा ख्याल है बहुत संभव है कि आयुर्वेद महासम्मेलन उस स्थान को स्वीकार न करे।

(२) चार के बजाय जो तीन नामों का उल्लेख श्री बाजोरिया जी ने किया है वह क्लर्क की गलती से ऐसा हुआ है, उसकी समुचित व्यवस्था की जायगी, हमारे समस्त रिकार्ड मौजूद हैं जिसमें चारों संस्थाओं का नाम नियमानुकूल लिखा हुआ है।

(३) रुपये के सम्बन्ध में हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि फ़ड की पूर्ति के लिये हम सचेष्ट हैं और जहाँ तक सम्भव है प्रस्तावानुसार धन एकत्र करने की चेष्टा करेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रौर काली कमली वाला पंचायती क्षेत्र के ऊपर रुपये का कोई दायित्व नहीं होगा, जैसा कि आपने ता० १-८-५३ के रिजोल्यूशन में पास किया है।

(४) श्री बाजोरिया जी ने जो जंगल आदि का सकेत किया है उसके लिखने का हमारा तात्पर्य यह था कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्कीम जो आपके सन्मुख है उसके सामने हम उस जमीन को जंगल समझते हैं और वही ध्यान अब भी है, परन्तु उसका कोई उल्टा अर्थ न लगाया जाय। यह तो हमने अपनी तुलनात्मक दृष्टि से लिखा है।

तदनन्तर क्षेत्र के सभापति श्री सर बी. पी. सिहराय के. सी. आई. ई. के. टी. आ उपस्थित हुए और उपरोक्त सभी बातों से श्री चेयरमैन महोदय ने उन्हें अवगत कराया तत्पश्चात् सभापति महोदय के प्रस्ताव व श्री चेयरमैन के अनुमोदन पर उक्त विषय पर विचार करने के लिये निम्नलिखित व्यक्तियों की एक सब कमेटी का प्रस्ताव पास हुआ। (१) प्रेसीडेन्ट (२) चेयरमैन (३) श्री आई. पी. गोयनका (४) श्री डी. डी. खन्ना (५) श्री बी. एन. बाजोरिया।

उपरोक्त क्षेत्र कमेटी की कार्यवाही से शिवशर्मा की डिक्टेटराना कार्य पद्धति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है यही नहीं इससे अधिक इस बात पर भी काफी रोशनी पड़ती है कि वह अनेक काम महामण्डल में ऐसे करता था जिस को कभी किसी अधिवेशन में प्रकट तक नहीं करता था, उक्त विवरण को पढ़ने के बाद क्या कोई महामण्डल का सदस्य बता सकता है कि उसने जो क्षेत्र कमेटी से पत्र व्यवहार किया था और कलकत्ते गया, इस पत्र व्यवहार को तथा उक्त क्षेत्र कमेटी की मीटिंग में जाने और वहां की कार्य वाही को देखने का विवरण उसने किस अधिवेशन में रखा था ? और उसने ५ लाख रुपया देने का तथा १५ लाख एकत्र करके देने का जो पत्र उन्हें भेजा था इसको उसने किस अधिवेशन में स्वीकार कराया?सदस्यगण पीछे पढ़ आये हैं कि १६-४-५४ को शिलान्यास के लिये राष्ट्रपति जी से मिलकर उनसे शिलान्यास का १३-१०-५४ का समय लिया था। बाबा काली कमली वाला ट्रष्ट कमेटी की प्रवन्ध कारिणी समिति का अधिवेशन २६-६-५४ को होता है जिसमें वह सशरीर और होशोहवास के साथ सम्मिलित होता है।

२६--१--५४ को उक्त क्षेत्र सब कमेटी अपनी रिपोर्ट क्षेत्र कमेटी को देती है, जिसमें कहा गया है कि वायदा पूरा न होने के कारण तथा कई वैधानिक बाधाओं के कारण आयुर्वेद महामण्डल के साथ मिल कर आयुर्वेद विश्वविद्यालय की योजना को क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। इसकी सूचना भी महामण्डल कार्यालय को उन्होंने भेज दी। बावजूद इन सब बातों का ज्ञान होने के भी उसने यह मामला महामण्डल के किसी अधिवेशन में नहीं रखा। श्रीयुत राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद जी को इस बात की सूचना यदि तब भेजी गई कि शिलान्यास स्थगित हो गया है तो उसने ऋषिकेश में आयुर्वेद विश्वविद्यालय योजना की रूप रेखा, वहां के बिल्डिंग के नक्शे और राष्ट्रपति के सम्मान में पढ़ने के लिये अपना भाषण क्यों महामण्डल के खर्च से छपा डाला ? इस विश्व विद्यालय पर महामण्डल का ६११९ रु० स्वाहा किया गया। इससे भिन्न दस हजार रुपया बाबा काली कमली वाले ट्रष्ट में नगद जमा कराया गया जिसमें से १९५४ में वह ७७०० रु० रह जाता है और १९५५ रु० में वह रकम १५०० रु० रह जाती है। यह रकम कैसे बराबर के नजदीक पहुँचती हैं ? इसको फिर किसी समय बताया जायगा। ६११९) रु० की रकम में से शिवशर्मा के मद में निम्नलिखित रकमें महामण्डल खातों में चढ़ी हुई हैं–

२३०/८ शिवशर्मा का यात्रा व्यय बम्बई से कलकत्ता।

२०५/– बम्बई से ऋषिकेश राष्ट्रपति को अपना भाषण सुनाने के लिये।

३४०/– शिवशर्मा के भाषण की छपाई।

५८/– राष्ट्रपति के साथ शिवशर्मा का फोटो लिया गया उसका खर्च।

८१८/९ विश्वविद्यालय की अपील छपाई, ब्लाक बनवाई, नक्शे, व उनके ब्लाक बनवाई, कागज, छपाई आदि पर तथा ९५० रु० पं० श्रीदत्त ने वकील को देने के लिये जो विद्यापीठ से लिये थे उसकी रसीद तक नहीं दी है। बाकी रुपया ऐसे ही मदों में खर्च हुआ। इस तरह उसने विश्वविद्यालय स्थापन पर महामण्डल का १६ हजार से ऊपर रुपया स्वाहा किया, और प्रतिष्ठा भी।

मानहानि का उसने जो मुझ पर केस किया था जिरह के समय शिवशर्मा ने इस मद में भी रकमें निम्न वाक्यों में स्वीकार की हैं–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने अक्टूबर के दो वाऊचरों के अनुसार ४३५॥) की रकम महासम्मेलन से ली इसमें से एक वाऊचर २३०॥) का था, जो कि प्रस्तावित ऋषिकेश विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में बाबा काली कमली वाला ट्रष्ट से बात चीत करने मेरे आफीशियल रूप से कलकत्ता जाने के सम्बन्ध में था। दूसरा वाऊचर २०५) का था जोकि मेरा बम्बई से हरिद्वार तथा वापसी रेल किराया तथा हरिद्वार से ऋषिकेश वापसी का टेक्सी किराया व कुली खर्च का था, जोकि भारत के राष्ट्रपति का ऋषिकेश में स्वागत करने के लिये मेरे ऋषिकेश जाने आने के सम्बन्ध में था मैं एयरकण्डीशन से गया और एयरकण्डीशन से ही वापस आया था। एक जगह शिवशर्मा ने अपने बयान में कहा कि मैं महामंडल से दूसरे दर्जे का किराया लेता था। एयर कंडीशन में क्या दूसरा दर्जा होता है। कितना झूठ!

एक दूसरे स्थान की जिरह में शिवशर्मा ने कहा इस महासम्मेलन द्वारा आयोजित समारोह में राष्ट्रपति का स्वागत करने के सम्बन्धी मेरे भाषण की छपाई पर महासम्मेलन के धन से ३४०) खर्च किया गया। वह किस तरह कीर्ति लोलुप था और ता० की जिरह में इसी बात को सिद्ध करने के लिये एडवोकेट ने जब उससे पूछा तो उसने बड़े गर्व से कहा:—"मैंने राष्ट्रपति के स्वागत में अपना भाषण पढ़ा।" उसके कथन से स्पष्ट कीर्ति की गन्ध आ रही थी कि वह राष्ट्रपति को दिखाना चाहता था कि वैद्य समाज में मैं ही एक प्रभावशाली वक्ता व नेता हूँ।

अभी ताजी सितम्बर १९५७ की सम्मेलन पत्रिका में शिवशर्मा ने अपना वक्तव्य छपाया है। वह वक्तव्य हिन्दी अंग्रेजी दोनों में है जिसके लिये उसने पत्रिका के ८ पृष्ठ इसलिये काले किये हैं कि मैं न तो स्वयं राष्ट्रपति से मिला न मैंने निमन्त्रण दिया। देने वाला कोई और व्यक्ति था। निमन्त्रण देने किसी और व्यक्ति को भेजा गया हो किन्तु १० नवम्बर १९५३ के महामंडल अधिवेशन में प्रस्ताव संख्या १५द्वारा शिलान्यास की सम्पूर्ण व्यवस्था का अधिकार शिव शर्मा और श्रीदत्त जी को जो दिया गया था। इस दशा में राष्ट्रपति जी के पास किसी को भेजा गया हो—भेजने का जब अधिकारी शिवशर्मा और श्रीदत्त हैं तो उसकी उक्त सफाई का वक्तव्य उसे इस दोष से मुक्त नहीं कर सकता।

दूसरे यदि शिलान्यास स्थगित हो गया था तो वहां अभिनन्दन पत्र पढ़ने क्यों गया और महामंडल का इसमें उसने रुपया क्यों खर्च किया?

महामण्डल सदस्यो! आपने उक्त पंक्तियों द्वारा देखा कि केवल अपनी कीर्ति स्थापना के निमित्त उसने किस तरह महामण्डल की प्रतिष्ठा को धूल में मिलाया। विश्वविद्यालय का मामला जब दो महीना पहिले ही समाप्त हो चुका था, फिर उसने इसे महामण्डल सदस्यों से छिपाया और राष्ट्रपति को वहां बुलाकर किस तरह समस्त महामण्डल के नेताओं को अपमानित कराया।

संस्था से सम्बन्धित जो व्यक्ति नहीं, वह तो यही कहेंगे कि संस्था में सारे ही महामूर्ख नेता हैं। उन्हें क्या मालूम कि इस संस्था में एक ऐसा व्यक्ति है जो समाज सम्बन्धी महत्व के कामों की जानकारी सदस्यों तक नहीं पहुँचने देता और अपने आप ही सब कुछ करता रहता है।

महामण्डल की विद्यमान स्थिति—चूंकि अभी तक महामण्डल पर शिवशर्मा का पूर्णतया आधिपत्य है आगे भी आधिपत्य बना रहे इसलिये उसने चुनाव के हथकण्डों द्वारा एक अजनबी व्यक्ति उसी तरह चुना जैसे वह पीछे चुनता रहा है। महामण्डल की स्थिति से अपरिचित व्यक्ति को चुन लेने पर जब सयायी समिति के अधिवेशनों में कोई मामला पेश होता है तो वह अजनबी व्यक्ति उन बातों से अपरिचित होता है, इसीलिये उसे उस मामले को समझने के लिये सहायक की आवश्यकता होती है ऐसी स्थिति में आप उसका परामर्श दाता बनकर सारा काम उसके साथ से आप सम्भाल लेता है। जैसे वह पं० जीवराम कालीदास की प्रधानता में, पं० वृज बिहारी चतुर्वेदी की प्रधानता में, पं० पार्थनारायण की प्रधानता में सम्भालता आया है, उसी तरह अब भी सम्भालने की इच्छा से उसने पं० अनन्त त्रिपाठी शर्मा को चुना। आज आठ महीना व्यतीत हो गये इस नये प्रधान ने अब तक महासम्मेलन की स्थायी समिति का कोई अधिवेशन नहीं बुलाया, उसने महामण्डल के साथ निकट का सम्बन्ध भी स्थापित नहीं किया।

महामंडल पर शिवशर्मा का आधिपत्य बना रहने के कारण ही उसका उपरोक्त वक्तव्य सितम्बर१९५७ की पत्रिका में ८ पृष्ठों पर जो छापा है यह महामण्डल के धन का आज भी दुरुपयोग कर रहा है। इसे सदस्य देखें और समझें।

[शेष टाइटल के तीसरे पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिवशर्मा द्वारा दायर मानहानि केस का फैसला

कुछ पूर्व का इतिहास

लेख आरम्भ करने से पूर्व पाठकों को यह बता देना आवश्यक समझता हूँ कि पं० शिवशर्मा के साथ–जब वह लाहौर में रहता था–उससे न तो जातीय सम्पर्क था, न व्यवसायिक, न वह मेरे कारोबार का प्रतिद्वन्दी था। उससे मेरा कोई सम्पर्क था तो एक मात्र महामण्डल का सदस्य होने के नाते उस संस्था पर जितना वह अपना अधिकार समझता था मैं भी आजीवन सदस्य होने के कारण उस पर उतना ही अपना अधिकार मानता था। संस्था किसी व्यक्ति की सम्पत्ति नहीं होती संस्था वैद्य समाज की भलाई के लिये स्थापित हुई थी, आयुर्वेदोन्नति जिसका मुख्य ध्येय था।

हम दोनों ही सदस्य होने के नाते महामण्डल के अधिवेशनों में बराबर भाग लेते थे, किन्तु हम इस प्रकृति के मनुष्य हैं कि संस्था में रह कर जो व्यक्ति संस्था के बने हुए विधि, विधान की अवहेलना करता है और संस्था में अपने स्वार्थ को दृष्टि सन्मुख रख कर गुटबन्दी करता है, संस्था के धन का अपने स्वार्थ के लिये उपयोग करता है ऐसा व्यक्ति चाहे मेरा पिता ही क्यों न हो मैं उसे संस्था का घातक, समाज द्रोही, बहुत निकृष्ट आदमी मानने वाला हूँ। बस, मेरा शिवशर्मा से विरोध केवल मात्र इसी एक बात से रहा।

१९३८ में वह महामण्डल का प्रधान बना, उसने बम्बई से ही अवैधानिक कार्यों का श्री गणेश कर दिया। लाहौर जब महामण्डल का कार्यालय आया तो प्रत्येक अधिवेशन में वह किस तरह अवैधानिक कार्य करता था, किस तरह उसने अपना बहुमत बनाने के लिये सदस्यों की भर्ती आरम्भ की, किस तरह वह प्रतिवर्ष विधान को बदलने के लिये और अपनी स्थिति को दृढ़ बनाने के लिये कैसे कैसे ढंग अख्तियार करता रहा, कैसी कैसी चालबाजियां और हथकण्डों से काम लेता था, यह सब नजदीक से देखता था। मेरा उससे विरोध इन्हीं कारणों से था, द्वेष नहीं। मैं उसे अब भी अपना न तो शत्रु समझता हूँ न कभी स्वप्न में भी उसे हानि पहुँचाने की भावना रखता हूँ। वह खूब खाय, कमाये, आनन्द ले मुझे उसकी ओर निगाह उठाने की जरूरत नहीं किन्तु महामण्डल के धन, महामण्डल की सम्मेलन पत्रिका, महामण्डल के नेतृत्व को ग्रहण कर यदि वह अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता हो और महामण्डल के साधनों से अपनी कीर्ति पताका को फहराने की इच्छा रखता हो तो मैं उसका घोर विरोध करूंगा। और समाज की आड़ में उसकी प्रतिष्ठा को तब तक बढ़ने से रोकूंगा जब तक वह समाज के लिये उपकारी सिद्ध न हो।

उसके इन अवैधानिक कार्यों का मैं ही एक विरोधी नहीं था, महामण्डल में आने से पूर्व जो उसके घनिष्ठ मित्र व पक्के साथी थे उसके अवैधानिक कार्यों को देखकर वह भी विरोधी होते चले गये। उनमें से उसका सबसे घनिष्ठ मित्र डाक्टर आशानन्द था। मूलचन्द खैराती राम ट्रष्ट पर जब शिवशर्मा ने केस करने की योजना बनाई और महामण्डल का एक हजार रुपया उसने प्रस्ताव पास करा कर हड़प लिया तो डाक्टर आशानन्द, प्राणनाथ पुष्करणा, डा० वी०एस० थापर, मदन मोहन चौपड़ा आदि उसके पक्के साथी उसे छोड़ गये। छोड़ ही नहीं गये, प्रत्युत इन्होंने शिवशर्मा के विरुद्ध ट्रेक्ट और पम्फलेट प्रकाशित किये। जो पम्फलेट डाक्टर वी० एस० थापर ने लिखा था उस पर १३ महामण्डल सदस्यों के हस्ताक्षर थे, वह पम्फलेट मेरे पास अमृतसर लाये और मुझसे कहा लाहौर में तो इसे कोई छापता नहीं आप अपने प्रेस में छाप दें। पम्फलेट लिखा बड़े गन्दे बेहूदा तरतीब से था। विधान सम्बन्धी कोई महत्व के पहलू लेकर लिखा नहीं गया था, इसलिये मैंने छापने से इन्कार कर दिया। किन्तु उन सबोंके बहुत आग्रह करने पर मैंने छापना स्वीकार कर लिया। जब छप गया तो उस में मैंने पहले ही अपना नाम पढ़ा तो मुझे बड़ा क्रोध आया कि मुझे तुमने इसके लेखकों में और प्रकाशकों में क्यों शुमार कर लिया ? मैंने कब तुम्हें इसके लिये आज्ञा दी, कहां तुम्हारे इस लेख पर हस्ताक्षर किये। यह क्यों किया ? वह पम्फलेट तो उठा ले गये थे, उनकी मिन्नत समाजत से मैं चुप तो हो गया पर रंज बहुत रहा। पम्फलेट उन्होंने जाते ही बांट दिये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा तो हुई कि इन नवयुवक मित्रों के विरुद्ध इस अनुचित कार्य का प्रतिवाद प्रकाशित कर उनके कान खींचूं। किन्तु इतने में पता चला कि शिवशर्मा इन पर केस करेगा। इस स्थिति में प्रतिवाद प्रकाशित करता तो इन मित्रों को अनुत्साहित करना था, इसलिये चुप हो गया कि चलो जो होगा सब के साथ ही। शिवशर्मा बड़ा झगड़ालू प्रकृति का व्यक्ति है यह हम सब अच्छी तरह देख रहे थे फिर भी अनेक साथी साथ में देखकर सन्तोष था। आखिर उसने डाक्टर आशानन्द, पं० कन्हैया लाल भेड़ा और हम सब १४ आदमियों पर मानहानि के तीन केस पांच २ हजार के हर्जाने सहित दायर कर दिये।

मुकदमा लड़ना कोई खाला जी का घर नहीं, समय और धन इस पर किस तरह बरबाद होता है यह भुक्त भोगी ही जानते हैं। डाक्टर आशानन्द ने तो दो चार पेशियों के बाद ही शिवशर्मा के आगे नत मस्तक हो क्षमा याचना की इसके बाद पं० कन्हैयालाल जी भेड़ा इतने साधन सम्पन्न व्यक्ति उस समय न थे। बम्बई से लाहोर आकर केस लड़ना बड़ी मुश्किल की चीज़ दिखाई दी, लाहौर बैठें तो रोटी से जांय, यहां वकील कहें लाओ प्रति पेशी रुपया। विचारे २–३ हजार जो पास थे खर्च कर दिये, फिर वह भी झुक गये। इन नवयुवकों नें जब दो स्तम्भ ढहते देखे इनके भी पैर उखड़ गये, थे हम १४ व्यक्ति किन्तु इनमें साधन सम्पन्न दो तीन ही व्यक्ति थे। प्रश्न जब बराबर के चन्दा देने का आता था, दो तीन बार तो सबों ने दिया फिर टांय टांय फिस होने लगी इसीलिये दो तीन व्यक्ति फूट गये और उन्होंने क्षमाका प्रार्थना पत्र चुपके से लिखकर दे दिया। तब शिवशर्मा ने अपने वकील द्वारा अदालत में कहा कि यह सब १४ व्यक्ति भी क्षमा मांग रहे हैं। उसका वास्तविक उद्देश्य तो केस लड़ने का नहीं था वह तो चाहता यह था कि यह किसी तरह क्षमा याचना करें तो फिर मेरा दबदबा बन्ध जायगा। क्षमा मांगे हुए व्यक्ति फिर उसके सामने बोलने योग्य नहीं रहते। महामण्मल में उसका रोब फिर और भी जम जाता। बस वह इतना ही चाहता था, यही था उसके मुकद्दमा लड़ने का उद्देश्य। हमारे वकील ने कहा कि स्वामी हरिशरणानन्द क्षमा नहीं मांगेंगे, वह अकेले केस लड़ेंगे। बाकी जिन्होंने हस्ताक्षर नहीं किये थे, किन्तु केस लड़ना भी नहीं चाहते थे। माननीय न्यायाधीश ने 'मौन स्वीकृत लक्षणम्' को मानकर उन्हें भी केस से मुक्त कर दिया। बस, पम्फ्लेट लिखा किसी ने, किया किसी ने, पर क्षमा न मांगने वाला एक व्यक्ति में अकेला रह गया। दो वर्ष तक में अकेला इन अन्यों की बलाय को अपने गले बांधे कलकत्ता, कराची, जयपुर, कानपुर, बनारस न जानें कहां २ कमीशन लिये वैद्यों की गवाहियां कराता फिरा, अभी केस चल ही रहा था कि पंजाब का विभाजन हो गया।

शिवशर्मा लाहौर से भागा, बम्बई में जाकर खटाऊ मिल वालों के यहां सांस ली। मैंने सन्देशे भेजे, लोगों के केस की फाइलें पाकिस्तान से भारत आ रही है। अपने केस की फाइल मंगाकर वह कहीं लगवा लो। पर वह तो वहां ही सब कुछ छोड़ आया था, मुकदमा लड़ने के लिये तो पैसे चाहिये थे। अभी तीन स्थानों पर कमीशन ने जाकर गवाहियां लेनी थीं फिर कहीं बाद में जिरह होती, तब कहीं आगे फैसला तक पहुँचने की नौबत आती। इस दो वर्ष में ही उसे पता चल गया कि केस लड़ने में क्या कष्ट आते हैं। उसने वह केस बीच में ही छोड़ दिया, वरना उसी केस से वैद्य समाज को शिवशर्मा की महामण्डल में की हुई अवैधानिक कार्यों की सारी पोल खुल जाती। खैर! वह मौका टला, तभी दूसरा अवसर हाथ आया और उसकी १८ वर्ष के महामण्डल में किये करतूतों की जीवनी लिखने का अवसर मिला।

घटना चक्र पर लिखने का अवसर;—

१९५१ में महामण्डल का कार्यालय कलकत्ता से दिल्ली आ गया, और शिवशर्मा महामण्डल के अधिवेशनों में फिर भाग लेने लगा। ५ वर्ष महामण्डल कार्यालय यद्यपि कलकत्ता रहा किन्तु वहां वह शिवशर्मा के प्रमुत्व से शून्य न था। एम० के० मुकर्जी उसके बनाये हुए ही प्रधान थे। जिन्होंने महामण्डल का प्रधान पद पाते ही अपने आरम्भिक भाषण में "झोंपड़ी से महल में" पहुँचने का स्पष्ट उल्लेख किया था। फिर भला वह ऐसे शिव शर्मा के कृतज्ञ क्यों न होते जिसने निम्न स्थिति से उन्हें वहां पहुंचा दिया जहां उन्हें स्वप्न में भी पहुँचने की आशा नहीं थी। यह सब चुनाव हथकंडों की करामात थी। जिसको गुरु शिव शर्मा ने उन्हें समझा दिया था इसीसे तो वह महामंडल की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई ठोस सेवा किये बिना ही तीन बार प्रधान पद को सुशोभित कर सके। उस महामंडल कार्यालय की व्यवस्था शिव शर्मा ने बनवाई थी वह यथावत् स्थिर थी, दिल्ली कार्यालय आते ही उसने अपने विश्वासपात्र पं० तिलकराम को फिर बुला कर उसे अच्छे वेतन पर इसलिये रखा क्योंकि यह व्यक्ति महामंडल में शिव शर्मा का इतना विश्वासी है कि वह जो कुछ नीति अनीति की आज्ञा दे यह उसे बड़े व्यवस्थित ढंग से ऐसा करता है कि किसी सदस्य को गहराई का ज्ञान नहीं होता, इसीलिये तो इसकी वेतन पद वृद्धि जिस तेजी से वैध रूप में रख कर करवाई गई कोई उसकी ओर अंगुली नहीं उठा सकता। यह व्यक्ति उतना ही चालाक है जितना शिव शर्मा। इसी एक व्यक्ति की बदौलत अब तक महामंडल पर शिव शर्मा का एकाधिपत्य बना हुआ है। सदस्य कहते हैं तिलकराम तो अन्य महामंडल के कर्मचारियों जैसा एक व्यक्ति है उनका यह समझना भूल है। यदि ऐसा होता तो विद्यापीठ मन्त्री को उसने जो अपशब्द कहे, अधिवेशनों में महामंडल सदस्यों का अपमान किया क्या कोई कर्मचारी ऐसी हरकतें कर सकता था?वास्तव में यह महामडल के लिये एक इतना बड़ा सफेद हाथी बांधा गया है जो महामंडल को रसातल की ओर ले जा रहा है। मन्त्री व प्रधान आदि के समस्त पत्र व्यवहार इसी के हाथों होते हैं। और वह सब शिव शर्मा से पूछ कर, चाहे प्रधान कोई हो ?

पं० राम नारायण जी के केस में माननीय न्यायाधीश ने पं० तिलकराम के सम्बन्ध में जो रिमार्क दिये है अपने उक्त कथन की सच्चाई को पुष्ट करने के लिये वह रिमार्क अन्तिम हैं वह निम्न हैं।

वह लिखते हैं–"अदालत में पं० शिवशर्मा ने स्वीकार किया है कि उसने तिलकराम और प्रधान मन्त्री वामनराव को अपने मित्र जंग बहादुर के पास सदस्यों द्वारा अधिवेशन बुलाने की मांग करने वालों के विरुद्ध अदालती निषेधाज्ञा की अर्जी देने के सम्बन्ध में परामर्श लेने के लिये भेजा था। जंग बहादुर के नाम लिखित पत्र जो कि एक्स ३४ जो तिलकराम के हाथ उसने भेजा था उस पत्र में तिलकराम को अपना मित्र बताया है।

इस बात पर शिवशर्मा ने कहा–'कार्यालय मन्त्री का इस प्रकार उल्लेख करने का मेरा ढंग विनम्रता कहा जा सकता है।'

लेकिन मैं आशा करता हूँ कि अभियोक्ता भी इस बात को स्वीकार करेगा कि महामंडल के दो गुटों के विवाद में–निर्वाचित सदस्यों का बहुमत चहे जिस गुट के साथ हो, लेकिन वैतनिक कर्मचारी को हमेशा तटस्थ रहना चाहिये और किसी पक्ष का समर्थन नहीं करना चाहिये।

अधिवेशन बुलाने की मांग करने वालों के साथ अपने इस विवाद में तिलकराम को शिवशर्मा ने एक पत्र के साथ निषेधाज्ञा के लिये अदालत में अर्जी देने में सहायता देने के लिये जंग बहादुर के पास जो भेजा था वह बिल्कुल अवैधानिक कार्य था और इस बात से कि तिलकराम ने इस विवाद में अपना इस तरह उपयोग अभियोक्ता के पक्ष में किया। इससे तिलकराम के सम्बन्ध में की गई टिप्पणी का औचित्य सिद्ध होता है। यह भी प्रकट हुआ कि अभियोक्ता और उसके गुट को इस विषय में तिलकराम की भक्ति का दृढ़ विश्वास था। Ex. Z-1 पत्र जो ओंकार प्रसाद ने शिवशर्मा को लिखा था उस पत्र में उन्होंने लिखा था।

'अदालत का बहुत सा काम बाकी पड़ा है अतएव आप तिलकराम को या उसके द्वारा कार्यालय के किसी अन्य कर्मचारी को मेरी मदद करने को कहें।'

मैं नहीं जानता कि कोई अन्य व्यक्ति नियुक्त किया गया था या तिलकराम ने उनकी मदद की थी। किन्तु इन बातों से इस खेद जनक अवस्था पर प्रकाश पड़ता है कि वैतनिक कर्मचारियों को संस्था के अधिकृत कार्यों में नहीं प्रत्युत विरोधी दल के साथ विवाद को चलाने में प्रयोग किया गया। कार्यालय मन्त्री ने अपना उपयोग इस तरह किया यह अनुचित हुआ। इससे स्पष्ट है कि तिलकराम अभियोक्ता के प्रभाव में था। ईसलिये उसने उसके कार्य की वैधता अवैधता पर विचार किये बिना उसका साथ दिया।"

इससे आगे पं० जीवराम कालीदास का वक्तव्य देकर जब विशशर्मा ने तिलकराम को लाहौर से कानपुर भेजा था और उसने किस तरह वहाँ ज्यादती की, किस तरह वक्तव्य को पत्रिका में लगवाया। तिलकराम को ४०) ६० पर नौकर रखकर फिर इसे किस तरह ४००) रु० तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेतन शिवशर्मा ने बढ़वाया यह सारा मामला उक्त केस में आगे आ चुका है। इस प्रसंग में १ पृष्ठ पूरा विद्वान न्यायाधीश ने लिखा है और अन्त में निर्णय देते हुए लिखा है इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ता है कि तिलकराम ने अभियोक्ता का उद्देश्य साधन किया जो उसके कर्तव्य का अंश नहीं था। यदि वह अभियोक्ता से प्रभावित न होता तो ऐसा कदापि न करता। अभियोक्ता से प्रभावित रहने के कारण ही उसकी आज्ञा का उल्लंघन वह नहीं कर सका।

इस विषय की जो लेख में टिप्पणी हुई है पर्याप्त तथ्य पर आधारित है। इसीलिये यह पूर्णतया विशेषाधिकार रक्षित है।"

कर्मचारियों के हाथ में बहुत बड़ी शक्ति होती है।

यह कैसे ?

कांग्रेस नेताओं को १९४७ में जब भारत की बागडोर अंग्रेजों ने सौंपी तो उनके पास अनेक महकमों में काम करने वाले शिक्षित कर्मचारी नहीं थे। वह तो केवल उस समय कोरे नेता थे। मन्त्री बनने पर स्वयं उन नेताओं को अपने अपने मोहकमें जब मिले उन में काम किस तरह चलता है? उन्हें कोई ज्ञान नहीं था। इसलिये बिचारे उन मोहकमों के वरिष्ठ कर्मचारियों के अनुकूल या उनके परामर्श से उन्होंने अपने अपने काम की जानकारी हासिल की। तभी तो कांग्रेसी सरकार जिस लाल फीता शाही की उन दिनों निन्दा करती नहीं अघाती थी, उसी लाल फीता शाही के आधीश बन कर इस कड़वे घूंट को किस तरह पी गये और आज जो इनकी निर्बलता के कारण प्रत्येक मोहकमें में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। वे भ्रष्टाचारी कर्मचारी इनकी इस निर्बलता की बदौलत ही उनके हौसले बढ़े हैं। यह उसी अज्ञान का परिणाम है, जिसके कारण उन नेताओं के नाकों में उन कर्मचारियों ने ऐसी नकेल डाली है जिसे आज १० वर्ष हो गये वह अब तक निकालने में समर्थ नहीं हुए।

बस, तिलकराम के आगमन के साथ ही महामंडल पर शिव शर्मा का पैर फिर जम गया और शिव शर्मा ने किस तरह स्वर्गीय श्री यादव जी आचार्य महामंडल प्रधान की अनुपस्थिति में महामंडल का कार्यवाहक प्रधान बनते ही महामंडल में फिर झगड़ा खड़ा किया, मुकदमेंबाजी आरम्भ हुई और महामंडल का धन मुकदमेबाजी पर फूंका जाने लगा और महामंडल के अधिवेशनों में अपना बहुमत बनाये रखने के लिये इसने किस तरह से पटियाला से वैद्य अवैद्यों के ट्रक के ट्रक भर भर मंगवाये। यह बात भी सदस्यों से छिपी नहीं। शिव शर्मा ने देखा कि दिल्ली में अधिवेशन करना अब खतरे से खाली नहीं, बम्बई में महामंडल के अधिवेशन करने लगा। वहां वह रहता था, इससे वह वहां काफी अपने पक्ष के सदस्य बना चुका था, इसलिये उन सदस्यों के बल पर उसने वहां कई अधिवेशन किये। अपने मतलब के कुछ महत्व के प्रस्ताव पास कराने के लिये एक अधिवेशन उसने बंगलौर में किया।

आज कई वर्षों से महासम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन यू० पी०, सी० पी०, दिल्ली, राजपूताना आदि प्रान्तों में इसलिये नहीं होने देता कि यहाँ कहीं राजकोट जैसी फिर मेरी दुर्गति न हो। जहां महासम्मेलन की स्टेज को उसे छोड़ कर भाग जाना पड़ा था। हालांकि उसका मित्र एम. के. मुकर्जी उस अधिवेशन का प्रधान था। आज कई वर्ष से वह जिन दक्षिण के राज्यों में महामंडल के अधिवेशन करता चला आ रहा है बावा काली कमली वाला क्षेत्र ट्रस्ट को जो चिट्ठी उसने लिखी थी उसमें उसने लिखा कि ५लाख रुपये मैं दक्षिण के राज्यों से लाकर दूंगा। इसने कई सम्मेलन इन दक्षिण के राज्यों में किये। बतावे अब तक उसने कितना रुपया इन दक्षिण के वैद्यों से प्राप्त कर महामंडल के कोष में जमा कराया ?

दक्षिण के प्रान्तों में अधिवेशन करने का उसका इतना ही उद्देश्य था कि इतनी दूर यू पी, सी. पी., पंजाब, दिल्ली आदि प्रान्त के वैद्य नहीं पहुंचेगे। पार्थ नारायण पंडित उसकी नीति के संरक्षक वहां हैं ही, उस प्रान्त के वैद्यों को महामंडल की वास्तविक स्थिति का कुछ ज्ञान होता नहीं। सौ दो सौ वैद्य दर्शक के रूप में आ जाते हैं, बोली भाषा भी उनकी भिन्न होती है। इधर शिव शर्मा अपने आदमियों को सूचित कर देता है अधिवेशन में पहुंचो। उसके पास वेतनभोगी, पदलोलुप, चापलूस, सदस्यों की कमी नहीं वह बिचारे इन लोभों के मारे खिंचे चले जाते हैं और अधिवेशनों में बैठ कर उसका बहुमत बनाने में सहायक होते हैं। इस तरह १९५६ तक महामण्डल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी तूती बोलती चली आई। इस १८ वर्ष के घटना काल का अर्थात् महामण्डल के लगभग आधे जीवन में उसने वैद्य समाज की जो सेवा कुसेवा की आयुर्वेद की उन्नति अवनति की इसे वैद्य समाज को ही नहीं राज्य सरकारों के स्वास्थ्य अधिकारियों और जन समाज को यह बताना आवश्यक हो गया है। महामण्डल में इस समय सदस्यों की संख्या १४ सो के लगभग है उनमें से सैंकड़ों ही व्यक्ति ऐसे हैं जो इस महामण्डल के महान् प्रेमी, सच्चे हितेच्छू, विद्वान् कर्मठ व्यक्ति हैं। जिन्होंने महामण्डल को बनाया, निष्काम सेवा की। वह सब यद्यपि शिव शर्मा के अवैधानिक कामों, अनीतियों से इतने दुखित व खिन्न थे जिसकी कोई सीमा नहीं। उनमें से अनेक उद्‌भट विद्वान, लेखक, विधान ज्ञाता भी हैं। किन्तु शिव शर्मा की झगड़ालू प्रकृति को देख कर उसके विरुद्ध लिखने का साहस इसलिये नहीं करते थे कि कहीं वह अदालत तक लिखित मामलों को लेकर पहुंचे तो उस स्थिति में हमारा आर्थिक स्थिति में सहायक कौन होगा ? मुकदमे की परेशानियों से सब घबराते थे क्योंकि वह महामण्डल में जब से आया था, एक दो नहीं प्रत्युत कई मुकदमे उसने लड़े थे। इसलिये कोई साहस कर उसकी अनीतियों के विरुद्ध कलम नहीं उठाता था। वैद्यों की इस दयनीय स्थिति को देखकर मेरे सबर का प्याला लबरेज हो गया था।

महामण्डल की आजीवन सदस्यता से त्यागपत्र :— मैंने उससे मोर्चा लेने का दृढ़ संकल्प कर लिया। यही त्याग पत्र देने का कारण था। मैं यह बात अच्छी तरह जानता था कि जब उसकी अनीतियों के विरुद्ध कुछ लिखूंगा वह मुझे महामण्डल की आजीवन सदस्यता से वंचित करने का प्रयत्न करेगा। प्रमाण लीजिये, १०–१२–४३ को राजकोट अधिवेशन पर मैंने निम्न प्रस्ताव उपस्थित किया था :—

"अ भा. आ. महा सम्मेलन के निश्चय अनुसार जो विद्यापीठ आयुर्वेद विद्यालय बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय से मिल कर खुलने जा रहा था, इस महान् कार्य में किस व्यक्ति की ओर से यह बाधा खड़ी की गई, किसके दोष से यह विद्यालय स्थापित होने से रह गया, महामण्डल इसकी जांच के लिये ३ व्यक्तियों की एक जांच कमेटी बिठाने का निश्चय करता है और जाँच पड़ताल के पश्चात जो व्यक्ति दोषी ठहरे उसे महामण्डल आयुर्वेद का शत्रु घोषित करे।" इस प्रस्ताव के आते ही हजरत साहब ने चट मेरे विरुद्ध निम्न प्रस्ताव जोधपुर निवासी अभयचन्द्र जैन वैद्य की ओर से रख दिया—

"स्वामी हरिशरणानन्द ने अपनी पुस्तक त्रिदोष मीमांसा में आयुर्वेद के मूल सिद्धान्त त्रिदोषवाद पर कुठाराघात करके अपने आपको आयुर्वेद का शत्रु सिद्ध किया है, इस पर भी उन्हें महामण्डल का सदस्य क्यों रहने दिया जाय। आयुर्वेद के प्रति विश्वासघात के कारण उन्हें महामण्डल की सदस्यता से पृथक किया जाय।"

श्री यादव जी महाराज ने उस समय जो तर्क उपस्थित किया उससे उक्त प्रस्ताव खटाई में पड़ गया। इस तरह इसके जो आड़े आया उसे ही इसने निकाला। श्री गुरुदत्त जी एम.एस.सी. पं०किशोरीदत्त शास्त्री जैसे महान व्यक्तियों को जिसने अपनी कुटिल नीति से नीचे गिराया, महामण्डल से अपदस्थ किया, फिर वह भला मुझ पर अपना वार करने से क्यों चूकने वाला था। इसीलिये अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने के निमित्त मैंने महामण्डल से त्याग पत्र दिया था १९५४ के आरम्भ में।

मैंने अपने त्याग पत्र में पं० शिव शर्मा पर अनेक अनीतिकारक अभियोग लगाये और स्पष्ट लिखा कि इन्हीं अनीतियों को देखता देखता परेशान होकर महामण्डल की सदस्यता से त्याग पत्र दे रहा हूँ। वह मेरा त्याग पत्र ६ मार्च १९५४ के कोट्टकल अधिवेशन में निम्न कारण दिखा कर स्वीकृत हुआ।

श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी अमृतसर का महासम्मेलन की आजीवन सदस्यता से त्याग पत्र पढ़ा गया। सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि त्याग पत्र में लिखित आरोपों को निराधार और अनुचित घोषित करते हुए उनके त्याग पत्र को स्वीकार किया जाय। यह मेरा त्यागपत्र एजण्डा के साथ सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित होना चाहिये था, किन्तु विचारणीय विषयों में केवल त्याग पत्र पर विचार का संकेत मात्र था। उसे साहस नहीं हुआ कि मेरे त्याग पत्र का विषय वह सदस्यों के सामने लाता, इस से विषय पर पूरा प्रकाश नहीं पड़ा। खैर!

त्याग पत्र स्वीकृत हो जाने के पश्चात अब मैं खुलकर शिवशर्मा और उसके साथियों की आलोचना कर सकता था, अब तो केवल कोई मेरी कलम पर अंकुश रखने वाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधन था तो वह एक मात्र अदालत का द्वार था। यह मैं निश्चयपूर्वक जानता था कि शिवशर्मा के विरुद्ध जहाँ कलम उठी कि वह अदालत की शरण अवश्य लेगा, क्योंकि वह झगड़ों में पटु था। पर मैंने उसका डटकर सामुख्य लेने का पहिले ही निश्चय कर लिया था फिर डरने की क्या बात थी।

लेख माला का आयोजन--

कुछ तो मसाला मैंने पहिले केस के समय नोट किया हुआ था, बाकी मसाला संचय करने में करीब एक वर्ष तक काफी परिश्रम करना पड़ा। हमारा तो उससे व्यक्तिगत कोई द्वेष न था, था तो केवल समाज सम्बन्धी संस्था में की अनीतियों के प्रति ही। इसलिये उसने १९३८ से लेकर १९५५ तक महामंडल में क्या क्या अवैधानिक कार्य किये? इसी विषय को लेकर उस सारी स्थिति पर प्रकाश डालना था, इसके प्रमाण संग्रह करना कोई साधारण काम न था मैंने इसके लिये काफी समय नष्ट किया। सारी सामग्री को क्रम वार लगाकर जुलाई १९५५ के आयुर्वेद विज्ञान में 'आयुर्वेदोन्नति का पथ कैसे प्रशस्त हो?' व्यङ्गात्मक प्रश्न के अन्तर्गत एक लेखमाला आरम्भ की। इस लेख माला में मैंने केवल शिवशर्मा की ही आलोचना नहीं की प्रत्युत वैद्य समाज के उन बड़े नेताओं की भी खूब आलोचना की जो सम्मेलन में न जाने किस तरह तीन दिन के लिये आते हैं और योग्यता का ढिंढोरा पीट कर घर पहुंचते ही महामण्डल का नाम तक भूल जाते हैं। यही नहीं उन आयुर्वेदिक पत्रों की भी कड़ी समालोचना की जो आयुर्वेद के नाम पर फार्मेसियां चलाते हैं और खूब कमाते हैं पर समाज के लिये कुछ नहीं करते। वह भी महामण्डल में होती हुई अनीतियों को देखते हैं पर स्वार्थवश उन नेताओं की आलोचना करने से डरते हैं इस लेख माला का प्रभाव श्री युत् वैद्यराज पं० रामनारायण जी पर हुआ और उन्होंने निश्चय किया कि इस लेख माला को अपने पत्र सचित्र आयुर्वेद में प्रकाशित किया जाय। उन्होंने अनुमति मांगी मैं तो पहिले ही कुछ साथ देने वाले सहयोगियों का इच्छुक था, आपका सहयोग मिलते ही मेरी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा।

एक तो आप अपने आयुर्वेदिक व्यवसाय में जिस पटुता के साथ अग्रणीय होकर समस्त आयुर्वेदिक फार्मेसी व्यवसायियों को पीछे छोड़ गये, यह उनका श्रम अनुकरणीय है। यही नहीं कि आप केवल व्यवसाय पटु हैं प्रत्युत आयुर्वेद जगत की जितनी अधिक सेवा आपने तन, मन और बहुल धन देकर की है आज तक एक वैद्य ने भी नहीं की। कौन नहीं जानता कि आप सम्भाषा परिषद् बुलाकर उनका सारा व्यय भार उठाते रहे हैं, इससे भिन्न हज़ारों रुपया आपने आज तक आयुर्वेद हित में दान दिया है। भला ऐसे सुहृद व्यक्ति को साथी पाकर कौन प्रसन्न न होगा। मैंने लेखों के प्रकाशन की अनुमति दे दी।

इन चार लेखों में तो वैधानिक पहलुओं पर इतना जोर नहीं दिया गया था। साधारण रूप से ही व्यापक आलोचनायें थीं। इन चार लेखों के पश्चात नवम्बर १९५५ के आयुर्वेद विज्ञान में मुख्यतया वैधानिक विषयों को लेकर एक बहुत बड़ा लेख 'क्या आयुर्वेद महामण्डल की अन्त्येष्ठी होने वाली है?' लिखा। पहिले चार लेखों में तो पं० शिवशर्मा पर १३ साधारण रूप के अभियोग लगाये थे। किन्तु इस लेख में अवैधानिक रूप में उसके किये कार्यों के ४२-४३ अभियोग लगाये। पहिले चार लेखों में से श्रीयुत पं० रामनरायण जी ने दो लेख छापे थे, उसमें १३ अभियोग जो थे वह पाठक उनके केस के फैसले में पढ़ चुके होंगे, इसलिये उनको दोहराने की आवश्यकता नहीं। ४२ अवैधानिक कार्यों के जो अभियोग इस लेख में लगाये गये थे उसकी संक्षिप्त सूची तथा शिवशर्मा ने अपने दावे में उन अभियोगों से किस तरह मुकरता है उसका संक्षिप्त विवरण दिलचस्पी से खाली न होगा। इसलिये पाठकों व सदस्यों की जानकारी के लिये मैं इसे दे देना उचित समझता हूँ।

अभियोग सार रूप में

(१) महामण्डल रूपी सूर्य को शिवशर्मा रूपी राहू ने जब से ग्रसा है तब से उस पर कलंक बढ़ता ही चला जा रहा है और आज वह इस स्थिति में पहुंच गया है कि उसका सर्वग्रास सन्निकट दिखाई दे रहा है।

(२) हमारी सरकार तो आयुर्वेद को समाप्त करना ही चाहती है किन्तु उससे पहले कुछ कीर्ति लोलुप स्वार्थ मूर्ति उसके संगठन में विग्रह बनाये रखकर उसे जब तक समाप्त न कर दें तब तक वह दम लेना नहीं चाहते।

(३) संस्था का जीवन उसके सदस्यों पर निर्भर रहता है, सदस्यों की उपस्थिति उसके जीवन का चिन्ह होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। जब उसकी प्रतिष्ठा आयके स्रोत उत्तम हो जाते हैं कुछ निधि भी संचित होने लगती है तो कीर्ति लोलुप, स्वार्थ साधक व्यक्ति उसमें घुसने का और संस्था पर आधिपत्य जमाने का अवसर ढूंढ़ने लगते हैं। वह किस गुप्त मार्ग से घुसते हैं इसकी वास्तविकता का पता उनकी कलम से देना अच्छा है।

"अधिकार प्राप्ति की प्राकृतिक इच्छा भी मेरे बम्बई अधिवेशन के सभापतित्व के लिये खड़े होने का एक कारण थी। श्री यादव जी भी मुझे बम्बई अधिवेशन का प्रधान बनाना चाहते थे,यह सब जानते हैं, पिता जी ने मेरे आग्रह पर सब पत्र लिखे। मेरे ही आग्रह से श्री यादव जी ने स्वर्गीय श्री लक्ष्मी राम स्वामी तथा अन्य मित्रों को पत्र लिखे। इन पत्रों के लिखने में कोई नई बात नहीं हुई। चुनाव पर वोट मांगे ही जाते हैं, १००) रु० देकर बम्बई से वोट खरीदे गये, यह आक्षेप संदिग्ध है।

(४) यही तो गुप्त द्वार था जिस मार्ग से घुसने वालों में आयुर्वेद जवाहर, आयुर्वेद वृहस्पति श्री शिवशर्मा जी अग्रणीय व्यक्तियों में से एक हैं।

आप साम, दाम, दण्ड,भेद नीति के ज्ञाता तो हैं ही, इससे भिन्न और भा अनेक कलाओं में आप पूर्णतया निपुण हैं।

(५) संस्था में वही व्यक्ति मन्त्री व प्रधान पद पर अधिक काल तक बैठा रह सकता है जो अपना बहुमत बनाये रखने में समर्थ हो, वह व्यक्ति अच्छा हो या बुरा, संस्था के हित में कार्य कर रहा हो या अहित में इसे देखते हुए भी उसका कोई बाल बाँका नहीं कर सकता जब तक संस्था में उसका बहुमत हो। इससे भिन्न जिस संस्था का विधि विधान शिथिल हो नियम उपनियम बदलते रहते हों। उनकी आड़ में मनमानी करने का अच्छा अवसर रहता है। इस मूल मन्त्र को पं० शिवशर्मा जी खूब जानते थे।

महामण्डल में यह नियम है कि प्रधान का चुनाव तो बहुमत से हो, बाकी पदाधिकारी प्रधान की सम्मति से चुने जायें और ५ वर्ष बाद कार्यालय भी उसकी इच्छानुसार बदला जाय।

(६) १९३८ वाँ वर्ष महामण्डल में पं० शिवशर्मा का प्रवेश काल था, इस समय तक महामण्डल में विग्रह नाम की किसी अनिष्टकारी कृत्या का अभिर्भाव नहीं हुआ था किन्तु आपके बौद्धिक बल से यह प्रकट हुई।

(७) प्रधान बनने के समय आप बिलकुल नवयुवक थे, आपका चिकित्सा व्यवसाय अभी चमका न था, इसे चमकाने के लिये ख्याति की जरूरत थी। किन्तु उसके लिये द्वार उन्मुक्त हो गया था। इसीलिये वह इसी वर्ष से महामण्डल में सदस्य संख्या बढ़ाने में तल्लीन थे, वह महामण्डल में अपना बहु मत बनाये रखने की चिन्ता में थे। कार्यकारिणी में तो उनके मित्र, पृष्ठपोषक काफी लिये जा चुके थे, किन्तु प्रत्येक प्रान्त में फैले सदस्य किस प्रकार प्रभाव में लाये जा सकते हैं? इसकी योजना आप बना रहे थे। उसी के परिणाम स्वरूप १९३९ में वामनराव वैद्य को लेकर पहिला दौरा बम्बई गुजरात प्रान्त का हुआ।

(८) प्रधान होने के बाद आप महामन्डल का कार्यालय लाहोर उठा ले गये, उसके पदाधिकारी व्यक्ति आपके मित्र थे, कुछ प्रभाव में थे, १९३९ के लिये जोधपुर से निमन्त्रण मिला हुआ था, प्रधान के चुनाव में मतदान का अधिकार प्राप्त करने के लिये वह निरन्तर सदस्यों की संख्या बढ़ा रहे थे। इस वर्ष महामण्डल में सदस्यों की संख्या उन्होंने ४०० से ऊपर पहुँचा दी। १७-६-३९ की कार्यकारिणी के अधिवेशन में प्रधान के चुनाव में जो मत आये थे उनकी संख्या ३९६ थी। इन मतपत्रों में काफी हेर-फेर, अदल-बदल व धांधली से काम लिया गया, इस तरह उन्होंने अपना बहुमत बना लिया। इन मत-पत्रों में पांच नाम छांट लिये। इन पांचों में से कौन चुना जाय? इस पर पुनः उन्हीं सदस्यों से मत लिये जाने थे, ऐसा नियम है। इस नियम की अवहेलना कर दूसरी बार का चुनाव जोधपुर स्वागत समिति से कराया, जो वास्तव में नियम विरुद्ध था। इसीलिये पं० पुरुषोत्तम सखाराम हिर्लेकर ने आपत्ति उठाई कि सभापति का चुनाव नियमावली के नियम की अवहेलना है।

(९) और हथकण्डे—१९४० में लखनऊ सम्मेलन होने वाला था प्रधान के चुनाव के लिये जो मतदाता सूची प्रकाशित हुई थी उनमें सदस्यों के अलावा २४३ साधारण व प्रतिनिधि सदस्य और बढ़ा लिये गये थे। साधारण तो वह सदस्य थे जो पत्रिका के ग्राहक थे, प्रतिनिधि वे थे जो उसे संकलन में एम० के० मुकर्जी और डाक्टर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष्मी पति ने उनके नाम भेजे थे। इनमें से बंगाल के प्रतिनिधि किस संस्था की ओर से आये थे ? इसकी पोल कविराज एम० के० मुकर्जी के पत्र से ही देखिये। "बंगाल में अभी तक प्रान्तीय आयुर्वेद महामण्डल नहीं बन सका है। जुलाई के अन्त तक बन जाने की आशा है। इस समय हम ११ सम्बद्ध संस्था प्रतिनिधियों का मान्य सदस्य शुल्क ३३) रु० भेज रहे हैं। जिससे कि वह प्रधान के चुनाव में भाग ले सकें अतः इसे स्वीकार किया जाये।"

जब प्रान्तीय आयुर्वेद महामण्डल ही नहीं बना था तो ११ संस्थाएं किससे सम्बद्ध हो गईं ? जिनके प्रतिनिधियों का शुल्क आया, क्या यह चुनाव में सदस्य बढ़ाने की धोकाधड़ी नहीं थी ? इससे बढ़कर इनकी और धोकाधड़ी देखिये। इसी साधारण सदस्यों व प्रतिनिधियों की सूची के अन्त में जहां बंगाल के प्रतिनिधि दिये हैं वहीं पर १७ पंजाब के प्रतिनिधियों के भी नाम हैं। इन १७ में से एक व्यक्ति ने भी अपनी जेब से सदस्य शुल्क नहीं दिया था। इन १७ व्यक्तियों के चन्दे की पूर्ति कैसे होती है ? यह भी मजेदार किस्सा है। अमृतधारा भवन के पास एक भार्गव प्रेस था, जहाँ सम्मेलन कार्यालय का बहुत सा काम छपता था। उसे सहायता के लिये प्रेरित किया गया, उसने ५१) महामण्डल को दान दिया, यह रकम जो दान खाते जमा होनी चाहिये थी। पं० शिवशर्मा के पास जब यह रकम पहुंची तो उन्होंने यह रकम ३) रु० प्रति व्यक्ति के हिसाब से १७ पंजाब प्रान्त के प्रतिनिधियों के शुल्क रूप में जमा कर लिये और उन्हें पंजाब प्रान्त का प्रतिनिधि बनाकर प्रधान के मत में वोट देने का अधिकारी बना दिया।

(१०) पं० शिवशर्मा जी जब प्रधान मन्त्री बने तो यहां इन्होंने गजब की धांधली मचाई। नियम यह है कि सम्मेलनावसर पर प्रधान की उपस्थिति में उनकी सहमति से मन्त्री आदि पदाधिकारियों का चुनाव हो। किन्तु उनके लखनऊ में मन्त्री चुने जाने पर सभा में काफी गुलगपाड़ा मचा था। जिससे वहां पदाधिकारियों का चुनाव न हो सका, न कार्यकारिणी के सदस्य ही चुने जा सके।

आपने लाहौर जाकर पदाधिकारियों की और कार्यकारिणी के ५० सदस्यों की सूची बनाई और उसे सीधा वैद्य सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेज दिया। जिसे सम्पादक पं० किशोरीदत्त शास्त्री ने निम्न शीर्षक के नीचे प्रकाशित किया।

"सम्मेलन के खुले अधिवेशन की घोषणानुसार महामण्डल और विद्यापीठ पदाधिकारियों तथा सदस्यों की नामावली जो लाहौर से प्राप्त हुई।"

(११) पं० शिवशर्मा ने जिन ५० व्यक्तियों को कार्यकारिणी का सदस्य बना लिया था उनमें से ८ वैद्यों ने महामण्डल का सदस्यता शुल्क ही नहीं दिया था, वह यह थे पं० धर्मानन्द, मदनमोहन चोपड़ा, प्राणनाथ पुष्करणा, मदन मोहन पुष्करणा, विजयकाली भट्टाचार्य, एम. के. मुकर्जी, युगुलकिशोर शास्त्री कानपुर, कृपाशंकर पांडे मंधना। जब संयुक्त प्रान्त के वैद्यों ने युगुलकिशोर शास्त्री और कृपाशंकर के नाम पढ़े तो उन्होंने प्रधान मन्त्री को पत्र लिखा कि यह दोनों व्यक्तियों ने तो कभी महामण्डल का शुल्क ही नहीं दिया, इन्हें कार्यकारिणी का सदस्य कसे बना लिया गया ? इन पत्रों के विषय को एजेन्डा में स्पष्ट नहीं किया गया। इस पर शिवशर्मा कहता है—कुछ पत्र कार्यकारिणी के सदस्यों के विरोध में यू० पी० से आये थे जिनमें कहा गया था यह सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं धांधली में किसी प्रकार कार्यकारिणी में आ गये हैं (यह धाँधली से नहीं आये थे चुना तो इन्होंने ही था।) इन पत्रों की प्रतिलिपि सदस्यों को एजन्डा के साथ इसलिये नहीं भेजी गई कि यह विषय अधिक न बढ़े (विषय बढ़ने के कारण नहीं प्रत्युत पोल खुलने के कारण) शिवशर्मा ने लिखा—ना ही विषय ऐसा था जिस पर कार्यालय से कोई पक्षपात होने की संभावना थी। (इसे पक्षपात ही नहीं बेईमानी कहना चाहिये।) वह कहता है यह झगड़ा केवल कानपुर के सम्बन्ध में था (कानपुर के सम्बन्ध में नहीं अनियमित चुनाव के संबंध में था।)

पाठक ! इसे पढ़कर समझ गये होंगे कि यू० पी० के सदस्य कार्यकारिणी में किसी धांधली से नहीं आये थे प्रत्युत इन्हें तो पं० जी ने स्वयम् घुसेड़ा था फिर कहते हैं कार्यालय से पक्षपात होने की संभावना नहीं, झूठ बोलने की भी कोई सीमा है ? स्वयम् तो शुल्क हीन व्यक्तियों को कार्यकारिणी में लिया जो शिवशर्मा के समर्थक थे, जब पोल खुलते दिखाई दी तो उसे उन्होंने कार्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारिणी में प्रकट नहीं होने दिया, स्वयम् उसके जांचकर्ता बनकर उस मामले को पी गये।

(१२) पं० शिवशर्मा सदा यह प्रयत्न करते आये हैं कि महासम्मेलन का अधिवेशन ऐसे स्थानों पर हो जहां विरोधी पक्ष का मत प्रबल न हो सके। इसीलिये १९४१-४२ में अधिवेशन चटगांव में करने का आयोजन किया, जिसने यह महान् विवाद खड़ा कर दिया।

वैद्यों के विरोध और युद्ध की स्थिति के कारण जब चटागांव का अधिवेशन रह गया तो उन्हें झांसी से निमन्त्रण मिला। किन्तु वह तो ऐसे स्थान पर और ऐसे सभापति के सभापतित्व में सम्मेलन करना चाहते थे कि जो उनके पूर्णतया अनुकूल रहे। उन्होंने कहीं से ऐसा निमन्त्रण आया न देख पंजाब प्रान्तीय आयुर्वेद सम्मेलन की ओर से उसी समय निमन्त्रण दे दिया। हालाँकि पंजाब प्रान्तीय आयुर्वेद मंडल ने न तो किसी अधिवेशन में निमन्त्रण देने का विचार किया था, न कोई उसने प्रस्ताव पास किया था, किन्तु उसमें उनका जोर था, इसलिये उसे स्वीकृत कराकर भिजवा दिया। वास्तव में निमन्त्रण ३ मास पूर्व आना चाहिये था। इस बार के चुनाव में उन्होंने काफी बोगस सदस्य भर्ती किये, यहां तक कि उसी अधिवेशन में ७ आजीवन सदस्य उसी समय बनाकर उन्हें उसी अधिवेशन में मत देने का अधिकारी बना दिया। इस पर आपने उदाहरण दिया कि बम्बई सम्मेलन पर पं० हरिदत्त शास्त्री इसी तरह बनते हैं। वहाँ इन्होंने ही तो पं० हरिदत्त शास्त्री तथा अन्य सज्जनों को सदस्य बनाया था। वहां तो उस समय मताधिकार का प्रश्न नहीं था, यहाँ तो प्रधान के लिये मतदान का प्रश्न था। ऐसी स्थिति में उसी अधिवेशन में आजीवन सदस्य बनाकर उन्हें मतदान का अधिकार देना विधान के बिल्कुल ही विरुद्ध बात थी।

यह आपत्ति उस अधिवेशन में बड़े जोर की उठी थी, पं० दुर्गादत्त शास्त्री ने उठाई, किन्तु उस अधिवेशन में पं० जी का जोर था उन्होंने उन सातों व्यक्तियों को सदस्य और मत देने का अधिकार वोटों की अधिकता से स्वीकृत करा लिया। यह कितनी उनकी अन्धेर गर्दी थी।

क्या लाहौर में सम्मेलन बुलाने का निमन्त्रण वैधानिक था? नहीं। चटागाँव का अधिवेशन स्थगित होते ही सम्मेलन बुलाने का जो प्रस्ताव पं० जी ने कार्यकारिणी में रखा था, उसी अधिवेशन में तो चटागांव अधिवेशन स्थगित होने का सूचना दी गई, तभी वहीं निमन्त्रण दे दिया गया।

इस पर आप कहते हैं—"तत्काल आये हुए प्रस्ताव अधिवेशन में स्वीकृत होते रहे हैं। सम्मेलन के आदि से ऐसा चला आता है।"

जहां आपत्ति न उठी हो वह और बात है, जहां आपत्ति उठाई गई हो पक्ष विपक्षों में संघर्ष उपस्थित हो उस स्थिति में नियम ही संस्था का संरक्षण करते हैं। उसी स्थिति में तो नियम का पालन आवश्यक माना जाता है।

(१३) यहां लाहौर का निमन्त्रण विशेष उद्देश्य को लेकर रखा जा रहा था और जान बूझकर झाँसी के निमन्त्रण को टाला जा रहा था, तभी तो नियमों की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता थी। लाहौर में अधिवेशन बुलाने का प्रस्ताव जब कार्यकारिणी में आया, अध्यक्ष पं० काली चरण जी ने नियम की अवहेलना कर निमन्त्रण पर विचार करना स्वीकार किया। यह सब पं० शिवशर्मा की धींगा मुश्ती से हुआ।

(१४) **नई दिव्य मूर्ति का प्रवेश**—गोंडल रसशाला के अध्यक्ष पं० जीवराम कालीदास शास्त्री, जिनका नाम उस प्रांत के सिवाय शायद ही कोई सदस्य जानता हो, न वह महामंडल के सदस्य थे, न कभी किसी अधिवेशन में भाग लिया, न वह इसमें रुचि रखते थे। उन्हें चुनाव में ६० मत आये देखकर सारे सदस्य हैरान रह जाते हैं। एक व्यक्ति महामंडल का सदस्य नहीं, ऐसे व्यक्ति को प्रधान के लिये किसने मत दिलवाये? इसका नाम प्रधान पद के लिये कैसे आया? यह बातें स्पष्ट करती थी कि यह सब पं० जी की ही कारस्तानी है। दूसरी बार के चुनाव में पं० जीवराम कालीदास को १६८ मत और पं० किशोरी दत्त शास्त्री को ७१ मत पड़ते हैं वह प्रधान घोषित किये जाते हैं। इसके बाद उनकी संरक्षक सदस्यता का प्रस्ताव उसी अधिवेशन में रखा जाता है और वहीं स्वीकृत होता है। अगले दिन उन्हें तार दी जाती है कि आपको महामण्डल का प्रधान चुन लिया गया है। शीघ्र स्वीकृति दें।

पं० जीवराम कालीदास जी कहते हैं—"जिस बात से मैं दूर रहना चाहता था, जिसका मुझे जरा भी ख्याल अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोह नहीं था, उसको पढ़कर मुझे आश्चर्य हुआ।" उन्होंने उत्तर दिया—"मैं प्रधान बनकर सम्मेलन के कार्य में सारा वर्ष भाग नहीं ले सकता, मैं अपने व्यवसाय में बहुत व्यस्त हूं।" इस तार का उत्तर फिर शिवशर्मा ने दिया—"यदि आप प्रधान पद स्वीकार नहीं करेंगे तो उसे स्वीकार कराने की प्रार्थना लेकर एक डेपूटेशन लाहौर से आयेगा।" इसको पढ़कर सदस्य समझ गये होंगे कि शिवशर्मा ने उन्हें प्रधान किस अवैधानिक क्रम से बनाया था।

(१५) उस चुनाव के सम्बन्ध में यहां तक जालसाजी हुई कि आगत कुछ मत पत्र रोक लिये गये, फाड़े गये, रद्द किये गये और इच्छित मत पत्र बढ़ाकर तब वह मत पत्र गिने गये। इस तरह पं० जीवराम कालीदास का बहुमत बनाया गया।

लाहौर अधिवेशन में जब शिवशर्मा प्रधान मन्त्री बने स्थायी समिति के लिए जिन ५० सदस्यों का निर्वाचन हुआ उनमें २४ सदस्य ऐसे चुने गए जिन्होंने सदस्यता शुल्क अदा नहीं किया था। इसीलिए उनके नामों पर तारक चिन्ह लगाकर नीचे सम्पादक की ओर से नोट छपा कि इन्होंने शुल्क अदा नहीं किया है। इसके बाद भी उन्होंने सदस्यता शुल्क अदा नहीं किया, तब उनके स्थान रिक्त घोषित किए गए। यह अंधेर गर्दी नहीं तो और क्या था?

पं० शिवशर्मा की और धींगा मुश्ती—पं० जीवराम के वक्तव्य का जो अंश दिया है वह वक्तव्य पत्रिका में कैसे छपा?

(१६)**मेरा त्याग पत्र और उसका कारण**—पाठक इस शीर्षक के नीचे पं०किशोरीदत्त शास्त्री सम्पादक पत्रिका का वक्तव्य पढ़ें वह निम्न था—"कुछ समय से हमारी संस्था में विवाद के दो दल बन गये हैं। यह दोनों दल इतने कमीनेपन पर उतर आये हैं कि किसी शिष्टता की परवाह नहीं करते और संस्था के लिये पूर्ण घातक हो गये हैं। इस दल के एक पक्ष के मुखिया हमारे शिवशर्मा हैं, जो अपने दल के शुरु से बानी मुबानी हैं। इस समय हमारी संस्था में सर्वेसर्वा भी आप ही हैं, आपके प्रयत्नों से इस वर्ष सभापति भी अनुकूल मिल गये हैं। गत मास उन्हीं के नाम पर प्रकाशित एक पुस्तिका मई की पत्रिका के साथ वितरित हुई है, यह उनका वक्तव्य बताया जाता है। इसे पत्रिका में लगाने से पूर्व सम्पादक को दिखाया भी नहीं गया। २४ अप्रैल को वक्तव्य छाप कर लाहौर से कार्यालय का क्लर्क तिलकराम शर्मा अपने साथ लाया और जो कुछ करना था उसका आज्ञा पत्र भी साथ लाया, वह सम्पादक से नहीं मिला, प्रेस में पहुंच पत्रिका छपने से रुकवा दी, मई का केवल प्रारम्भिक फार्म छोड़ कर बाकी उद्दिष्ट वक्तव्य मिलाकर पत्रिका की मिसल उठवाकर मई की पत्रिका तयार कराना आरम्भ कर दी। सारा सिलसिला बाँध कर ९। बजे क्लर्क आज्ञापत्र लेकर सम्पादक के पास पहुंचे; इस समय रुग्ण सम्पादक ज्वर में बात भी नहीं कर सकते थे। सहायक सम्पादक बुला लिया, क्लर्क महोदय आज्ञापत्र देकर चले गये। पत्रिका तयार हो रही थी, उस पर कुछ पते क्लर्क ने लिखे कुछ रामचन्द्र जी से लिखवाये, पत्रिका के सारे पैकट बनवा लिये कुछ डिस्पैच भी करा लिये तब क्लर्क महोदय प्रेस से हटे।

वक्तव्य की पुस्तक में क्या भरा है? यह बात दूसरे दिन सम्पादक ने जानी, ज्ञात हुआ (१) वह विवाद के एक दल की चूडान्त पक्ष पोषक सामग्री है, (२) सम्पादक पर अविश्वास और उसके सम्मान पर पूरी आघात पुस्तक है। (३) पत्रिका की मूल नीति पर कुठाराघात है। इन कारणों से मैं त्याग पत्र देकर पत्रिका से हाथ खींचता हूँ और सम्पादकत्व से अपना नाम हटाये लेता हूँ,

—किशोरी दत्त

पं० शिवशर्मा, पं० किशोरी दत्त जी के त्याग पत्र के कारणों को पढ़कर आग बबूला हो गये। ४-६-४३ की कार्यकारिणी के अधिवेशन में उनके त्याग पत्र के कारण दिये वक्तव्य को छापने के अपराध में उन्हें सम्पादकत्व से पृथक् कर दिया। दे० स० प० जुलाई १९४३। जब सदस्यों ने इस अधिवेशन की कार्यवाही पढ़ी तो जो व्यक्ति उस अधिवेशन में विद्यमान थे उनसे पूछा गया कि पं० किशोरीदत्त जी का त्यागपत्र अधिवेशन में कैसे आगया। वह तो एजेण्डा में नहीं था। उन्होंने बताया उनके त्याग पत्र का वहां कोई विषय उपस्थित नहीं हुआ, यह तो केवल पत्रिका में पढ़ रहा हूं। तब पता लगा कि पत्रिका तो शिवशर्मा के हाथ में है सच, झूठ जो चाहें प्रकाशित करा सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१७) पं० शिवशर्मा जब महामंण्डल में आये उनकी पार्टी बढ़ती ही गई, जहां चुग्गा मिले चिड़ियां अनायास ही पहुंच जाती हैं। वैद्य समाज में ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं जो अच्छे उद्‌भट विद्वान् हैं पर उनके हाथ में यश नहीं, पेट तो रोटी मांगता है, इसे वही व्यक्ति दे सकता है जिसके हाथ में सत्ता हो, साधन हों, पं० शिवशर्मा ऐसे ही व्यक्तियों को काम पर लगाने के लिये प्रचार, संगठन आदि की योजना बनाते और पास करा लेते। अब उस पर महामंडल कोष से रुपया निकाल कर देना उनका काम था।

यह योजनाएं कौन कौन सी थीं (१) आयुर्वेद प्रचार के लिये प्रान्तों का भ्रमण जिसकी आड़ में अपनी पार्टी का दृढ़ संगठन बनाना (२) प्रान्तीय मंडलों का संगठन करना जिसके द्वारा प्रतिनिध्यात्मक पद्धति से महामंडल में चुनाव का उपक्रम करना। जिससे सीधे महामंडल सदस्य बनने का मार्ग बन्द हो जाय। इस पद्धति को आरम्भ करने का अभिप्राय है वृद्ध वैद्यों के हाथों से सदा के लिये महामंडल का आधिपत्य छीन लेना।

यह दोष महामंडल में उत्पन्न करने के लिये प्रतिनिधि प्रपंच रचा गया, अर्थात अथ बल से अपना दृढ़ बहुमत बनाने का या यों कहो पैसे से वोट खरीदने का मार्ग निष्कंटक किया गया।

(१८)महासंडल का रुपया ठिकाने लगाने की योजना– डा० लक्ष्मीपति ने आयुर्वेदाध्यापक शिक्षापरिषद की एक योजना शिवशर्मा के पास भेजी। इस पर दस हजार रुपया खर्च करने की स्वीकृति वह लखनऊ सम्मेलन पर ले चुके थे। यह रुपये वहां कैसे स्वकृत हुए थे? इसका रहस्य सम्मेलन में पधारे वैद्य ही बता सकते हैं।

रुपये की मांग डा० लक्ष्मीपति की ओर से बराबर रही, थोड़ी थोड़ी रकमें तो उन्हें जा रही थीं किन्तु एक मुश्त बड़ी रकम देने से पं० शिवशर्मा डरते थे। इसीलिये दूसरी बार ८-९-४७ की कार्यकारिणी के एजेण्डा में पुनः १० हजार रुपये की स्वीकृति का एक प्रस्ताव रखा गया। जब श्री यादव जी आचार्य ने उसे पढ़ा तो चेतावनी दी 'यदि हमारे इस विरोध की अवहेलना करके इस प्रस्ताव को पास करेंगे तो विद्यापीठ के भंग की जवाबदारी की जुम्मेवारी उन्हीं पर होगी।'' कवि०प्रताप सिंह जी इस अध्यापक शिक्षा परिषद् कमेटी के सदस्य थे, उन्होंने त्याग पत्र दे दिया।

जब भारी विरोध हुआ तो शिवशर्मा ने उक्त प्रस्ताव वापस ले लिया। फिर डाक्टर लक्ष्मीपति ने अपील निकाली कि दो हजार मिल जांय तो हम परिषद का काम चला सकेंगे। शिवशर्मा ने इसे फिर एजेन्डा में रखा, इसका भी काफी विरोध हुआ। तब यह पास हुआ कि डा० लक्ष्मीपति महामंडल के नाम पर चन्दा करलें और इस सम्बन्ध में साधारण खर्च महामंडल से दिया जाय। इस बीच आप डा० लक्ष्मीपति को ६००) भेज चुके थे जिसकी सूचना बहुत देर बाद प्रकाशित की। वह निम्न रूप में थी–

"लखनऊ सम्मेलन पर १० हजार परिषद् के लिये स्वीकृत हुआ था, बाद में अस्वीकृत कर दिया गया। जिसकी सूचना डा० साहब को पहुंचा दी थी। किन्तु उन्होंने परिषद् का कार्य जारी रखा, लगभग ६००) रु० उन्हें पहुंच चुका है। दो हजार चन्दा करने की अनुमति भी दे दी है।'' इसके बाद पं० शिवशर्मा ने उन्हें और रुपये भेजे, जिसका जिकर उन्होंने किसी अधिवेशन में नहीं किया। २२-१२-४२ को जब विद्यापीठ का बजट अधिवेशन में आता है तब पता चलता है कि डा० लक्ष्मीपति को २२४६-११-९ दिये जा चुके हैं। नियमानुसार इतना रुपया देने का उन्हें कोई अधिकार नहीं था।

(१९) पहले जब पं० शिवशर्मा जी प्रचारार्थ निकले थे उनके यात्रा व्यय का कहीं किसी अधिवेशन में जानकर उल्लेख नहीं किया जाता था। तो क्या पं० शिवशर्मा जी महामडल कोष से यात्रा व्यय नहीं लेते थे? लेते नहीं तो क्या अपनी जेब से खर्च करते थे। वह तो ऐसी ऐसी रकमें भी महामंडल कोष से ले लेते थे जो वास्तव में लेनी नहीं चाहिये थीं। उदाहरण के लिये ताजे दो प्रमाण काफी हैं—

आप असम राज्य कांग्रेस के सम्मेलन में हवाई जहाज से जाते हैं, २४ मई को ९ बजे वहां पहुंचते हैं। २ बजे अधिवेशन होता है, यह असम राज्य का पहला वार्षिक चुनाव था, चुनाव देखा और शाम से पहिले ही सभा समाप्त हो गई। इतनी ही बात के लिये महामंडल के ४८०) खर्च करा दिया। प्रस्ताव जो पहले पास करा लिया था फिर आपत्ति कैसी?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२०) पं० जी ने मित्रों से मिलकर मतदान का जो ढंग बनाया है जब तक इस ढंग से मतदान होता रहेगा, हम सबों से अधिक कभी किसी को मत नहीं आ सकते। दूसरी बार के चुनाव कराने में डर रहता है कि कहीं रहस्योद्घाटन न हो जाय। इसलिये यह निश्चय पहिले ही कर लेना चाहिये कि इस बार किस को प्रधान बनाया जाय ? जब मतदान हो तो उसके पक्ष में चारों अपना नाम वापस ले लिया करें। इस तरह दूसरे चुनाव झगड़े से बचा जायगा और इच्छित व्यक्ति को भेजा जा सकेगा, यह क्रम पं० शिवशर्मा ने १९४३ में आरम्भ किया था, राजकोट अधिवेशन पर प्रधान के लिये जो मत आये थे वह उनके तथा अन्य साथियों के थे यथा पं० शिवशर्मा, एम. के मुकर्जी. डा० लक्ष्मीपति, ज्योतिषचन्द्र जी, पं० जीवराम काली दास। मुकर्जी जी के पक्ष में चारों ने अपने अपने नाम वापस ले लिये। यही क्रम फिर आगे के चुनावों में भी चला।

(२१) इस तरह ३ बार एम.के. मुकर्जी. एक एक बार डा०लक्ष्मीपति व कवि हरिरंजन मजूमदार बनाये गये। एक व्यक्ति के पक्ष में अन्य उम्मेदवारों के बैठ जाने की इस परम्परा को कोई ४२० न समझे, इसीलिये १९५२ की नियमावली में सभापति के निर्वाचन में यह नियम जोड़ा गया कि: —

"प्रस्तावित महानुभावों में से यदि चार महानुभाव अपने नाम वापस ले लें तो पांचवें महानुभाव का नाम प्रधान मन्त्री निर्वाचित रूप में घोषित कर दें।"

जब कवि हरिरंजन मजूमदार को इस तरह प्रधान पद पर आसीन किया। यह भी आपकी नीति के पूरे समर्थक थे। उन्हें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास था कि कार्यालय कलकत्ता से दिल्ली आ जाने पर महामंडल की बागडोर हमारे हाथ से जाने की नहीं। यहां उनकी नीति के समर्थक पं० गणेश दत्त जी सारस्वत मिले। श्री आसुतोष मजूमदार तो पहिले ही से उनके घनिष्ठ मित्रों में थे। इसलिये पं० शिवशर्मा की पार्टी यहां मजूमदार पार्टी के नाम से प्रख्यात थी। उसने इनकी नीति की रक्षा कैसे की। इसके एक दो ही प्रमाण काफी हैं:—

जब कवि० हरिरंजन मजूमदार जी प्रधान बने स्थायी समिति का चुनाव हुआ उनमें ऐसे व्यक्ति चुने गये जिन्होंने उस वर्ष सदस्य शुल्क अदा नहीं किया था। यह मामला जब २३-६-४९ की स्थायी समिति में प्रकट हुआ तो वहां सखेद निश्चय हुआ कि उन महानुभावों का स्थान रिक्त समझा जाय जिन्होंने शुल्क नहीं दिया। देखो स० म० दिसम्बर १९४९ पृ० ३८।

यह एक दो व्यक्ति नहीं प्रत्युत ७ थे और इनके स्थान पर लिये गये १५ व्यक्ति क्योंकि कुछ बोगस होंगें।

(२२) दूसरा प्रमाण—१९५० में नये वर्ष के लिये प्रधान का चुनाव होना था, उसके लिये पं० शिवशर्मा के पिता पटियाला से वैद्यों अवैद्यों चपड़ासियों तक को वैद्य बनाकर भर्ती कर लाये और १६-७-५० के अधिवेशन में २६२ नये सदस्यों की सदस्यता स्वीकार करा रहे थे तो वहां आपत्ति उठी कि इन सदस्यों में अनेकों अवैद्य है। इस पर खूब गर्मा गर्मी हुई, निश्चय हुआ कि जिन ७ व्यक्तियों के वैद्य होने में सन्देह है उनकी सदस्यता जांच के लिये स्थगित रखी जाय।" यह तो टालने वाली थी न किसी ने जांच की। बात टल गई।

(२३) पं० शिवशर्मा फिर अखाड़े में— सितम्बर १९५० की स्थाई समिति में नियमावली संशोधन के लिये निम्न महानुभवों का एक उपसमिति बनाई गई। (१) वैद्य शिवनाथ शर्मा (२) सुरेन्द्र मोहन आचार्य (३) श्री आशुतोष मजुमदार (४) पं० रामगोपाल शास्त्री। (देखो स० पत्रिका सितम्बर १९५०)

(२४) नियमावली में जो संशोधन हुए ये पं० शिवशर्मा की इच्छानुकूल हुए ये वह प्रान्तीय संगठन की स्थिति को दृढ़ करने वाले थे और उनके अधिकार बढ़ाते थे। पं० कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये ११-१२ अगस्त १९५१ को गाजियाबाद में स्थायी समिति का विशेष अधिवेशन होता है। श्री यादव जी आचार्य अस्वस्थ रहने के कारण न आ सके तब पं० शिवशर्मा जी उसके सभापति बने। कार्यक्रम अनुसार कमेटी की रिपोट पर सर्व प्रथम विचार होना था किन्तु पं० शिवशर्मा की आज्ञा से मन्त्री जी ने संशोधित नियमावली पर विचार का विषय उपस्थित कर दिया। सदस्यों ने आपत्ति की, यह विषय एजेण्डा में नहीं है, शिवशर्मा ने इस आपत्ति को नहीं माना, उन्होंने मतदान कराया, वे हार गये। इस तरह जब वे परास्त होते है तब उनमें बदला लेने की भावना उग्र रूप धारण करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२६) १४ जून १९५२ को उपरोक्त नियमावली पर विचार के लिये अधिवेशन होता है। शिवशर्मा ने इसकी सूचना पटियाला भेजी, पं० रामप्रसाद जी दो ट्रक वैद्यों अवैद्यों के लेकर पहुंच गये। अधिवेशन में इस बार उपस्थिति १४० से ऊपर पहुंचती है। इस अधिवेशन में बाहर से ऐसे व्यक्ति भी लायें गये जो सम्मेलन के सदस्य नहीं थे, मतदान के समय यह आपत्ति उठाई गई। मन्त्री जी ने कहा जब जाँच का समय आवेगा तब जांच कर लेंगें, किन्तु मतदान के समय उन्हें नहीं हटाया गया। तब विरोध स्वरूप कितने ही सदस्य बहिर्गमन कर गये, काफी सदस्यों ने विरोध स्वरूप त्याग पत्र दे दिये, जब यह सूचना श्री यादव जी महाराज को मिली उन्होंने भी अपना त्याग पत्र भेज दिया।

सदस्यों के मीटिंग से उठकर चले जाने पर भी कार्यवाही जारी रही और शिवशर्मा का बनाया निम्न प्रस्ताव पास हुआ—

स्थायी समिति का यह अधिवेशन निश्चय करता है नियमावली निर्माण, परिवर्तन स्वीकृति और लागू करने के अन्तिम अधिकार स्थायी समिति को हैं या महासम्मेलन को यह निर्णय महासम्मेलन में मत संग्रह से कराया जाय। जब तक मतदान की गणना का निर्णय न हो जाय तब तक के लिये नवीन नियमावली लागू न की जाय।

मतपत्रक १ अगस्त ५२ को पोस्टल सार्टीफिकेट्स द्वारा भेजे जायं, उन पर स्थानीय उप प्रधान और प्रधान मन्त्री के हस्ताक्षर हों। १६ अगस्त को मतगणना की जाय। बैलट बक्स उपप्रधान और प्रधान मन्त्री के सामने खोला जाय और प्रधान मतपत्रों की गणना करावे।

(२७) यह प्रस्ताव शिवशर्मा ने बनाया था, उसका इरादा था कि मत पत्रों द्वारा जिस तरह प्रधान के लिये वह मत प्राप्त कर लेते हैं, उन्हीं हथकण्डों से यहां भी प्राप्त कर लेंगे, किन्तु इस बार नये प्रधान मन्त्री श्री गुरुदत्त जी जो उसकी पार्टी में सम्मिलित हुए थे उन पर उसका सन्देह बढ़ गया तभी तो 'मतदान पत्रक पोस्टल सार्टीफिकेट्स द्वारा भेजे जाँय, और उन पर स्थानीय उप प्रधान के हस्ताक्षर हों बैलट बक्स भी उपप्रधान के सामने खोला जाय' इत्यादि शर्तें लगा दी।

श्री गुरुदत्त जी ने अपनी नियत पर जब सन्देह की बात देखी उन्होंने प्रधान मन्त्रित्व पद से त्याग पत्र दे दिया। शिवशर्मा ने उन्हें लिखा—'मैं आप पर पूर्ण विश्वास करता हूँ" इसके उत्तर में श्री गुरुदत्त जी ने सूचित किया—मैंने त्याग पत्र स्थगित कर दिया है। किन्तु शिवशर्मा की यह इच्छा बिलकुल नहीं थी कि वह त्याग पत्र वापस लें। इसीलिये इसके उत्तर में शिवशर्मा ने लिखा चूंकि आपका त्यागपत्र अभी वापस नहीं हुआ, इस पर आगामी मीटिंग में विचार होना है इस कारण इसकी भी वही अवस्था है जो अन्य त्यागपत्रों की। आपके कार्य छोड़ देने पर—यदि आप चाहें—तो मैं आपत्ति नहीं करता।

(२८) वास्तव में पं० शिवशर्मा को ध्यान आ गया कि मत पत्रों के समय यदि श्री गुरुदत्त जी प्रधान मन्त्री पद पर रहे तो मत पत्रों की जालसाजी का कहीं भांडा फूट न जाय। इस रहस्य का भांडा श्री गुरु दत्त जी ने आखिर फोड़ ही दिया उन्होंने लिखा—

प्रधान पं० शिवशर्मा ने मत संग्रह पर जो अपना रूलिंग दिया निम्न है:—

मत पत्र किन किन को भेजे जांय ? (१) महासम्मेलन के सम्पूर्ण सदस्य जिन्होंने पिछले सभापति के निर्वाचन में भाग लिया था (इनमें वह वैद्य भी सम्मिलित हैं हैं जिनका नये वर्ष का सदस्य शुल्क अभी तक नहीं आया) (३) वह वैद्य जिनका सदस्यता शुल्क १४ जून ५५ तक कार्यालय में तो आ गया किन्तु कार्याधिक्य से उनकी सदस्यता स्वीकृति नहीं हुई। (जिनकी सदस्यता स्वीकृति नहीं हुई थी वह मतदान में कैसे अधिकारी थे।)

रूलिंग की इस आज्ञाको प्रधान मन्त्री श्री गुरुदत्त जी ने मानने से इन्कार कर दिया तभी शिवशर्मा ने उन्हें प्रधान मन्त्री मानना बन्द कर दिया। स्वयम् तो पं० शिवशर्मा ने लिखा 'आपका त्याग पत्र अभी वापस नहीं किया। आगामी समिति में उस पर विचार होना है' जब उनकी आज्ञा का पालन पं० गुरुदत्त जी ने नहीं किया, तो तुम प्रधान मन्त्री नहीं रहे। क्या यह डिक्टेराना हरकत नहीं ?

(२९) वास्तव में इन्होंने मत पत्र भेजने में शिवशर्मा की इच्छा पूर्ति नहीं की, दूसरे मत पत्र गणना में जो ४२० की जाती थी, इनके मन्त्रित्व पद पर रहते नहीं हो सकती थीं, इसीलिये वह इस कांटे को हटाकर निष्कंटक होना चाहते थे। उन्होंने अपने विश्वस्त साथी वामनराव वैद्य को भेज दिया, उन्होंने आते ही श्री गुरुदत्त जी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार्ज लेने का प्रयत्न किया, किन्तु उन्हों आगामी अधिवेशन से पूर्व चार्ज देने से इन्कार कर दिया।

तब प० शिवशर्मा ने रूलिंग द्वारा प्रधान मन्त्री से मतपत्र जारी करने का अधिकार छीनकर बामनराव वैद्य को दे दिया।

(३०) इस प्रकार रूलिंग द्वारा अधिकार छीन कर देना बिल्कुल अवैध कार्य है, किसी संस्था में ऐसी अन्धेर-गर्दी नहीं देखी जाती कि रूलिंग द्वारा अधिकार छीने जाँय। यहां तो पं० जी का मुख्य उद्देश्य था वैद्य, अवैद्य, चपड़ासी जो भी वैद्य नाम धारी उन्होंने भर्ती किये थे उन सबों को मत पत्र पहुंचने चाहिये। यह बात श्री बुद्धदत्त जी के रहते हीती दिखाई नहीं दी।

उस रूलिंग को लेकर वामनराव जी देहली आये और स्वयं हस्ताक्षर करके मतपत्र भेजने का आयोजन किया तो सदस्यों ने विवश होकर सब जज की अदालत से निषेधाज्ञा जारी कराई–कि ९ अगस्त तक मत पत्र न भेजे जांय और उस दिन उपस्थित होकर बतावें कि किस नियम से असदस्यों को मत पत्र भेजना चाहते हैं।

(३१) शिवशर्मा की इस अवैधानिक कार्यवाही से उनके मित्र बहुत खिन्न हुए और उन सबों ने त्यागपत्र दे दिये।

इस तरह के मामले जब उपस्थित होते हैं तो पं० जी एक चालबाजी और करते हैं किसी मित्र की ओर से उन त्याग पत्र देने वालों के विरुद्ध झूठे इल्जाम लगवाते हैं, उसकी आड़ में प्रस्ताव उपस्थित करवाकर त्याग-पत्र स्वीकृत करवाते हैं। इन्दौर अधिवेशन पर यही किया और अदालती निषेधाज्ञा के कारण भांडा फूटने के डर से निम्न प्रस्ताव पास कराते हैं।

"स्थायी समिति का यह अधिवेशन इस समय की परिस्थिति को देखते हुए १४ जून वाले मत-संग्रह सम्बन्धी प्रस्ताव के अनुसार अब मत-संग्रह करना आवश्यक नहीं समझता, अत: अब रेफरेण्डम न लिया जाय।"

(३२) नियमावली संशोधन सम्बन्धी निम्न प्रस्ताव वहाँ फिर पास कराते हैं।

"स्थायी समिति का यह अधिवेशन निश्चित करता है कि निम्नलिखित महानुभावों की एक उपसमिति नियमावली में उपयुक्त संशोधन करके इसे विषय निर्वाचनी के विचारार्थ उपस्थित करे।"

वास्तव में पं० जी विधि विधान का रंचक मात्र भी ज्ञान नहीं रखते। अपनी इच्छा को विधि विधान का स्थान देते चले आये हैं। इसका प्रमाण देखिये—

२ दिसम्बर १९५२ को नई स्थायी समिति का अधिवेशन होता है उसके प्रधान शिवशर्मा जी होते हैं। आप पिछले वर्ष के कार्य विवरण को पढ़ने का आदेश करते हैं। केशव प्रसाद जी ने कहा नियमानुसार यह पढ़ा नहीं जाना चाहिये क्योंकि पिछले वर्ष के अधिवेशन की कार्यवाही का सिलसिला तो अधिवेशन के समाप्त होने पर समाप्त हो जाता है।

आप कहते हैं—आपत्ति तो युक्तियुक्त है तो भी प्रचलित प्रथा के अनुसार ऐसा किया जा रहा है। यह है आपका विधि विधान सम्बन्धी ज्ञान।

और देखिये! झगड़े की जड़ १४ जून वाला जो प्रस्ताव स्वयं उन्होंने बनाया था जिसमें उन्होंने लिखा था "नवीन नियमावली लागू न की जाय" यहां उसका अर्थ करते हैं पुरानी नियमावली लागू की जाय, कौन सी? किस सन की? इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं किया।

(३३) इन्दौर सम्मेलन पर उपसमिति बनाकर जो इच्छित संशोधन रखकर पास कराये उनमें से कुछ द्रष्टव्य हैं–

'प्रतिनिधि सदस्यों की श्रेणी हटा दी जाय'। यह श्रेणी स्वयं इन्होंने बनाई थी, यहाँ हटादी।

'नियमों में संशोधन आदि का अधिकार सम्मेलन को रहे।' यह अधिकार स्थायी समिति को रहे इसके लिये आपने भयंकर झगड़ा खड़ा किया था, यहां उसे उलट दिया। क्यों? वास्तव में विधि, विधान का ज्ञान होता तो किसी बात पर विचार कर उसके लाभालाभ का निर्णय कर लेने के बाद तब उसे विधि में स्थान देते। वह तो ठहरे अवसर वादी, जैसा मौका देखते हैं जिस तरह उन्हें कार्य सिद्धि का क्रम दिखाई देता है उसे आगे कर अपना उल्लू सीधा करते हैं।

(३४) १० नवम्बर ५३ को दिल्ली में कार्यकारिणी (स्थायी समिति) का अधिवेशन बुलाया गया। अब शिवशर्मा जी नहीं चाहते थे कि दिल्ली, बीकानेर आदि स्थानों पर वार्षिक अधिवेशन बुलाया जाय, क्योंकि यहां अब उनके अनुकूल परिस्थिति नहीं रही थी। उन्हें डर था कि कहीं बागडोर सदा के लिये हाथ से न निकल जाय। उन्होंने प्रसुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रज्ञा को जगाया। पं० पार्थ नारायण को तार भेजी, पिता को सन्देशा भेजा वह ट्रक भरकर वैद्यों को ले आये।

इधर मन्त्री जी ने प्रधान के चुनाव के मत पत्र अपने विरोधी पक्ष के काफ़ी व्यक्तियों के पास नहीं भेजे थे, उन्हें खाली इस अधिवेशन का एजेण्डा ही भेज दिया था। चुनाव सम्बन्धी जो हथकण्डे खेले जाते थे उन्हीं हथकण्डों से काम लिया। जिनको मतपत्र नहीं भेजे गये थे ऐसे ३६ सदस्य केवल दिल्ली के ही थे, उन सदस्यों ने अपने हस्ताक्षरों से युक्त यह आपत्ति मन्त्री को दी।

इस पर पं० जी फर्माते हैं–"जांच के लिये समय चाहिए।" इसके लिये उन्होंने अपने साथियों की एक सब कमेटी बनादी, परिणाम वही ढाक के तीन पात।

(३५) नये वर्ष के प्रधान का जो चुनाव हो रहा था, सदस्यों ने प्रश्न उठाया कि यह निर्वाचन किस नियमावली के आधार पर हो रहा है। जो नियमावली २८मार्च ५१ से लागू थी वह ४ जून ५२ के अधिवेशन में रद्द कर दी गई थी। जो संशोधन इन्दौर में हुए थे, वहां ऐसा कोई प्रस्ताव पास नहीं हुआ था कि यह संशोधन अमुक वर्ष की नियमावली के साथ लगकर लागू होंगे। जब तक नियमावली का निर्णय न हो, यह चुनाव किस नियमावली के आधार पर हो रहे हैं? पहले यह बताया जाय। इसका उत्तर न प्रधान शिवशर्मा के पास था न मन्त्री के पास– वामनराव जी कहते हैं–"मैं इस आपत्ति को संस्था के विरुद्ध एक दुर्घटना कहूंगा। चुनाव किस नियमावली के आधार पर हो रहे हैं यह सर्व विदित है।" क्या विदित है? यह आपने नहीं बताया। पाठक! पढ़कर समझ गये होंगे कि इससे बढ़कर ४२० की घटना क्या हो सकती है।

मार्च १९५४ में संशोधित एवं स्वीकृत नियमावली प्रकाशित हो गई। इस नियमावली में स्मृति-पत्र, उद्देश्य आदि मूल भूत सिद्धान्तों से लेकर सारी नियमावली में अनेक उलट फेर हुए हैं। ऐसे महत्व के परिवर्तन किस आधार पर कर डाले गए? क्यों किये गए? कहां किए गए? यह एक विचारणीय समस्या खड़ी हो गई है। यह नियमावली कब से लागू हुई? इसका उल्लेख किसी प्रस्ताव में नहीं आया। ऐसे उलट फेर पर एक्शन लिया जाना चाहिये।

(३६) क्या आयुर्वेद विश्वविद्यालय पं० शिवशर्मा योग्यता की कसौटी है? १९३८ में पं० शिवशर्मा ने महामण्डल की गद्दी संभाली। संस्था में आते ही आपने आयुर्वेदोन्नति के कौन कौन से काम कर डाले इसका उल्लेख ऊपर हो चुका है। इससे भिन्न सबसे बड़ा काम आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्थापना का भी आपने हाथ में लिया, इसे आपने किस उन्नति के शिखर तक पहुंचाया? इसका लेखा जोखा 'महामण्डल सदस्यों से एक प्रश्न' नामक लेख में कर चुका हूँ। उसे पढ़कर पाठक समझ गये होंगे कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय बनने से क्यों रह गया।

३७ संख्या से लेकर ४२ संख्या तक के अभियोग शिवशर्मा ने अपने दावे में छोड़ दिये थे इसीलिये इनकी चर्चा पुनः करना पाठकों का समय नष्ट करना है। जिन्हें पढ़ने की इच्छा हो नवम्बर १९५५ का आयुर्वेद विज्ञान का अंक मंगाकर पढ़लें।

शिवशर्मा की गर्वोक्ति

आयुर्वेद विज्ञान अंगरेजी की पहली तारीख को निकलता है, आयुर्वेद सम्मेलन पत्रिका १५ ता० को प्रकाशित होती है। मेरा उक्त लेख आयुर्वेद विज्ञान में जब शिवशर्मा को मिला इसने "आलोचकों को शिवशर्मा का उत्तर" नामक शीर्षक के नीचे नवम्बर की सम्मेलन पत्रिका में निम्न सूचना प्रकाशित की?

"विगत कुछ मास से मेरे विरुद्ध कुछ लेख एक दो पत्रों में निकल रहे हैं, जिनके अनुसार मेरे कार्यों से आयुर्वेद तथा आयुर्वेद महासम्मेलन को भारी क्षति पहुंची है। कुछ पत्र और मित्र उत्तर मांगते हैं, निम्न कारणों से उत्तर नहीं भेज सकूंगा।

(१) जो समय लेखों का उत्तर देने में लगेगा, वह अन्य आवश्यक कार्यों में लगाना कहीं अधिक उपयुक्त होगा।

(२) मैं समझता हूँ कि उत्तर देना लेखकों को वह महत्व प्रदान करेगा जो न तो उन्हें प्राप्त है और न आगे होने की सम्भावना है।

(३) यदि कोई व्यक्ति श्वेत वस्त्र पहनकर निकले और कोई उस पर कीचड़ फेंक दे तो न तो वह दूसरे पर कीचड़ फेंकता है, न वह बैठकर कपड़े धोने लगता है। वह कपड़े धोबी को संभाल देता है। इसी प्रकार मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखों द्वारा धवल यश पर फेंके गये कर्दम को दूर करने का भी सुप्रबन्ध है ही न्यायालय।

(४) हमारे सदस्य बन्धु दो प्रकार के हैं। एक सत्य जानना चाहते हैं, दूसरे तमाशा देखना चाहते हैं, न्यायालय दोनों की इच्छा पूर्ति करता है। वहां सत्य का निर्णय भी निश्चयात्मक होता है और हमारे तमाशबीन महारथियों को तमाशा भी अच्छा दीखता है।

(५) व्यक्तिगत रूप से न्यायालय की शरण जाना किसी संस्था को अदालत में घसीटने के तुल्य अपराध नहीं।

इन कारणों से मैंने वह पत्र अपने एडवोकेट को संभाल दिये हैं। वह इन लेखकों को न्यायाधीश के सामने अपने अभियोग सिद्ध करने का पूरा अवसर देंगे। साथ ही यह सुविधा भी होगी कि कार्यालय की जो सामग्री प्राप्त हो सकती है, उसे प्रमाण देने के लिए मंगाया जा सकेगा और लेखक यह शिकायत नहीं कर सकेंगे कि उन्हें कार्यालय ने सुविधा नहीं दी। इसके अतिरिक्त न्यायालय का निर्णय झगड़े को समाप्त कर देता है। आशा है यह पग सभी के लिये जिनमें लेखक भी हैं सन्तोष प्रद सिद्ध होगा।

सम्मेलन पत्रिका में जिस समय मैंने उक्त सूचना पढ़ी खुश हुआ कि हजरत मैदान में आही तो गये। मेरे पास सम्मन जनवरी १९५६ के अन्तिम दिनों में पहुंच गये। और मैं ठीक समय पर अदालत में हाजिर हो गया।

मुकदमा मिस्टर वी०एम०गेहानी प्रेजीडेन्सी मजिस्ट्रेट १६ ए स्प्लेनेड कोर्ट, बम्बई की अदालत में था।

उन्होंने मेरे ऊपर भारतीय दण्ड विधान की धारा ५०० के आधीन मानहीन का अभियोग लगाया था मैंने अर्ज की कि मेरा लेख इस धारा के नीचे नहीं आता, न मैंने शिवशर्मा की मानहानि की है। माननीय जज ने कहा— नहीं, अभियोक्ता के दावों में दिये गए अभियोगों से यह ५०० धारा के आधीन आता है और मुझे इस केस को सुनने का अधिकार है। अतः मैं इस केस को सुनूंगा। शिवशर्मा के वकील ने जो अभियोग सूची पेश की उनकी संख्या ४२ थी। किन्तु उसेने ३६ अभियोग ही अदालत के सामने पेश किये।

माननीय न्यायाधीश ने कहा—इनमें से ६ अभियोग जिन्हें गम्भीर समझते हो उन्हें छांट लो। शिवशर्मा ने उनमें से १-३-६-९-१९-२७ छांटकर दिये।

अदालत में शिव शर्मा का बयान

मैं पिछले २५ वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सक के रूप में प्रेक्टिस कर रहा हूं। मैं आयुर्वेद के लाभ में रुचि रखने वाली विभिन्न संस्थाओं से सम्बन्धित रहा हूं।

(१) मैं स्टेट फेकल्टी आयुर्वेद एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन, बम्बई राज्य का चेयरमैन हूं।

(२) मैं बोर्ड आफ आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन का प्रधान हूं।

(३) बम्बई सरकार की नकली देसी दवाइयों की रोक थाम कमेटी का भी चेयरमैन हूं।

(४) मैं बनारस यूनीवर्सिटी का प्राचीन व नवीन चिकित्सा पद्धति के लिये फेलो हू।

(५) मैं पहली पंचवर्षीय योजना के योजना कमीशन के स्वास्थ्य विभाग का भी एक सदस्य हूं और पंचवर्षीय योजना में आयुर्वेद के भविष्य पर विचार करने वाली कमेटी का सदस्य बनने के लिये निमन्त्रित किया गया हूं।

(६ नवम्बर १९५५ में मैं सीलोन आयुर्वेदिक प्रेक्टिशनर कान्फ्रेंस कोलम्बो अधिवेशन में मुख्य अतिथि था।

(७) वैद्य रत्न की उपाधि सरकार ने मुझे नवम्बर १९४६ में ही दी थी।

(८) मेरे पास झांसी आयुर्वेद विश्वविद्यालय द्वारा दी हुई आयुर्वेद वृहस्पति की आनरेरी डिग्री भी है।

(९) १९३७ में मैं पंजाब सरकार की एल्लाईड साइन्सिज की कमेटी का सदस्य नियुक्त किया गया था।

(१०) पंजाब सरकार की इण्डीजनिस मैडिसन इनक्वायरी कमेटी का भी मैं एक सदस्य था।

(११) मैं पंजाब सरकार के बोर्ड आफ इन्डीजीनस मेडीसन का इसके जन्म से ही सदस्य था।

(१२) मैं आयुर्वेद से सम्बन्धित विभिन्न सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओं से सम्बन्धित रहा हूं।

विभाजन से पूर्व तक मैं लाहौर में प्रेक्टिस करता था विभाजन के बाद से मैं बम्बई में प्रेक्टिस करता हूं।

मैं अभियुक्त स्वामी हरिशरणानन्द को जानता हूं वह अयुर्वेद विज्ञान का सम्पादक व प्रकाशक है। मैं अभियुक्त द्वारा दिल्ली जिला मजिस्ट्रेट के सामने दाखिल किये डिक्लेरेशन की प्रमाणित कापियां पेश करता हूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद विज्ञान पत्र बम्बई के कई व्यक्तियों को प्राप्त होता है। मुझे भी गत २-३ वर्ष से दिल्ली कार्यालय से इसकी एक प्रति प्राप्त होती रही है।

मै लगभग २० वर्ष से अ. भा. आ. महासम्मेलन का सदस्य हूँ। यह इसका नया नाम है जो दिसम्बर १६३८ में दिया गया था। यह भारत में आयुर्वेद व्यवसाय संरक्षण की प्रतिनिधि संस्था है, जिसकी शाखायें सभी राज्यों में हैं।

मैं दिसम्बर १६३८ में पहली बार महासम्मेलन का प्रधान चुना गया था।

अभियुक्त १६५२ तक इसका सदस्य था, यह सदा अमृतसर में ही रहता था। विभाजन के बाद उसने दिल्ली में एक कार्यालय स्थापित किया और पत्र का प्रकाशन दिल्ली में बदल लिया।

मैं और अभियुक्त पंजाब आयुर्वेद मण्डल के सदस्य थे, अभियुक्त का मेरे प्रति प्रत्यक्ष व्यवहार शत्रुतापूर्ण था और उसने सदा मुझे वैद्यों की नजरों में गिराने का प्रयत्न किया। उसने जनता की दृष्टि में मुझे गिराने की इच्छा से मेरे विरुद्ध कई लेख लिखे।

१६४३ के आसपास मैंने अभियुक्त तथा कुछ अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध सब-जज लाहौर की अदालत में अपमान जनक पम्फलेट लिखने के कारण मानहानि का तथा ५-५ हजार के हर्जाने का दावा भी किया था। यह दावा एक पम्फलेट 'आयुर्वेद का पतन और महामण्डल में फूट का कारण' नामक लेखके कारण किया था, जिसकी एक प्रति पेश करता हूँ। जिस पर हस्ताक्षर कर्ताओं में अभियुक्त भी एक है और वह इसका मुद्रक भी है। बाकी १३ हस्ताक्षर कर्ताओं ने क्षमा मांग ली थी और अभियोग वापस ले लिये थे, मेरा खर्चा अदा कर दिया था और उन सबों के ऊपर से मैंने मुकदमा उठा लिया था। परन्तु अभियुक्त ने केस लड़ा और यह मुकदमा पंजाब विभाजन के समय तक चलता रहा, किन्तु मुझे यह मुकदमा छोड़ना पड़ा और मैं देश विभाजन के कारण वहां से चला आया।

मैं आयुर्वेद विज्ञान के जुलाई, अगस्त, सितम्बर १६५५ अंक प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिनमें मेरे विरुद्ध सिलसिलेवार लेख माला है जिसका शीर्षक है 'आयुर्वेदोन्नति का पथ कैसे प्रशस्त हो?' बाद में यह लेख सचित्र आयुर्वेद में छपा। मैंने उसके सम्पादक, सहायक सम्पादक के विरुद्ध दावा भी दायर किया हुआ है।

मैं इसी पत्र का अक्टूबर १६५५ का अंक पेश करता हूँ जिसमें एक लेख का शीर्षक है 'क्या यह विवाद है या अपराध ?' इस लेख में दिखाया गया है कि मैंने एक अपराधी को बचाने का प्रयत्न किया। यह सत्य नहीं है।

मैं आयुर्वेद-विज्ञान का नवम्बर १६५५ का अंक पेश करता हूँ जिसके पृष्ठ १८४ पर अभियुक्त ने प्रसंगवश यह कहा है कि मैंने पं० श्रीदत्त के विरुद्ध उचित से अधिक कार्यवाही की, क्योंकि उसने कोई संगीन अपराध नहीं किया था। उसने त्यागपत्र दे दिया, प्रधान मन्त्री नें अधिवेशन की स्वीकृति लेने तक के लिये उसे स्वीकार कर लिया। उस त्याग पत्र की स्वीकृति के साथ मेरा कोई सम्बन्ध न था। यह सही नहीं कि इस मामले को सुलझाने के लिये श्री ढेबर को पंच बना कर उनके हवाले करने में मैं एक अपराध पर पर्दा डालना चाहता था। मैं इस पत्र के दिसम्बर १६५५ के अंक में छपे एक लेख को पेश करता हूं जिसका शीर्षक है 'श्रीदत्त के त्याग पत्र की हकीकत' लेख में यह आरोप है कि मैंने श्रीदत्त से मई १६५५ में ही त्याग पत्र ले लिया था और इसे कई मास बाद दबाये रख कर छल पूर्ण विचार से पेश किया, ताकि सदस्य समझें कि उन्होंने त्याग पत्र अभी पेश किया और वह भी अन्य कारण को लेकर। यह आरोप मिथ्या है।

मैं आयुर्वेद विज्ञान का फरवरी १६५६ अंक पेश करता हूं। इसमें 'पं० शिव शर्मा मैदान में' शीर्षक लेख छपा है इस लेख में मेरे विरुद्ध कई आरोप है। जिससे मेरी मान हानि होती है और वह सत्य नहीं हैं।

मैं आयुर्वेद विज्ञान का मार्च १६५६ का अंक पेश करता हूं जिसमें एक लेख का शीर्षक है 'महामण्डल सदस्यों से नम्र निवेदन'। इस लेख में भी मेरे विरुद्ध अपमानजनक आरोप लगाये गये हैं जो मिथ्या है।

मैं आयुर्वेद विज्ञान का वह अंक पेश करता हूँ जिसके पहले लेख का शीर्षक है 'क्या आयुर्वेद महामण्डल की अन्त्येष्ठी होने वाली है ?' अन्तिम डेढ़ पृष्ठ छोड़ कर सारा अंक इसी लेख से भरा पड़ा है। यह शीर्षक संकेत करता है कि आयुर्वेद महामण्डल शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होने वाला है। लेख का अभिप्राय आयुर्वेद महामण्डल सम्बन्धी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी कार्यवाहियों द्वारा उसके ऊपर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा है। इस लेख में कई असत्य बातें हैं, कई बातें तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर कही गई हैं और कई बातों के सम्बन्ध में अत्युक्ति की गई है जिसका उद्देश्य वैद्यों, सदस्यों और जो यह लेख पढ़े उनकी नजरों से मुझे गिराने का है और मेरी प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाना है।

जिन ६ अभियोगों पर मुकदमा चला

अनुबन्ध १ में मुझे राहु कहा गया है। लेख में यह आरोप है कि जब से राहु के रूप में मैंने आयुर्वेद महा-मण्डल रूपी सूर्य को ग्रसा है तब से इस पर कलंक बढ़ता चला जा रहा है, यहां तक कि अब इसका सर्वग्रास सन्निकट दिखाई देता है। भारतीय साहित्य में राहु एक राक्षस है, ज्योतिष शास्त्र में अनिष्ट का ग्रह है। यह कहना कि मैंने आयुर्वेद महा सम्मेलन को ग्रस रखा है और यह कथन भी कि महासम्मेलन का सर्वग्रास सन्निकट है यह भी मिथ्या है।

आ. महामण्डल पहले की अपेक्षा आज बहुत दृढ़ स्थिति में है। १९३८ में जब पहली बार मैं इसका प्रधान बना था इसके सदस्यों की संख्या ४०० से भी कम थी, अब बढ़कर यह दो हजार तक पहुंच गई है। इसका कोष १५ हजार से बढ़ कर अब लगभग डेढ़ लाख तक पहुंच गया है। १९३८ में इसका कोष पदाधिकारियों के व्यक्तिगत नाम था, अब यह सारी रकम सम्मेलन के नाम पर जमा है।

यह संस्था आयुर्वेद चिकित्सकों की सार्वदेशिक प्रतिनिधि संस्था है। भारत सरकार ने प्रथम पंचवर्षीय योजना कमीशन के स्वास्थ्य सदस्यों की सूची में महा सम्मेलन के प्रधान का नाम भी रखा है।

बम्बई सरकार ने महासम्मेलन की प्रान्तीय शाखा को औपचारिक रूप से यह निमन्त्रण भेजा है कि वह राज्य कर्मचारी स्वास्थ्य बीमा योजना की (Allotation) कमेटी के लिये अपना एक सदस्य नामजद करे।

सम्मेलन की इस प्रगति का कारण कुछ तो स्वाभाविक है, कुछ उसके कर्मठ कार्य कर्ताओं के प्रयत्न का परिणाम है।

अनुबन्ध सं० ३ में स्वार्थ साधक, कीर्ति लोलुप जिस व्यक्ति की ओर संकेत हैं वह मेरी ओर है। यह कथन असत्य है। यह कहना कि उस संस्था का मन ऐसे व्यक्ति के लिये आकर्षण हैं, कम से कम मेरे सम्बन्ध में यह झूठ है। शब्द 'घुसने का' अर्थ है संस्था में प्रवेश करना। मेरा संस्था में प्रवेश संस्था पर आधिपत्य जमाने के उद्देश्यसे था और मैंने गुप्त मार्ग से ऐसा किया, यह सब झूठ है।

यह सत्य है कि मैंने 'अपराधी कौन' शीर्षक वाला पत्रक छापा था और मई १९४२ की सम्मेलन पत्रिका में उस पत्रक के परिशिष्ट रूप में एक लेख भी लिखा था। मैं उसे पेश करता हूँ।

इस अनुबन्ध में मेरे द्वारा १००) रु० भेजकर वोट खरीदने की ओर संकेत है। उक्त लेख में मैंने इस आरोप की चर्चा की थी कि मैंने प्रधान बनने के प्रयत्न में १००) खर्च किये। इस अनुबन्ध में दिया गया मेरे लेख का उद्धरण जहां समाप्त होता है मूल लेख में मैंने उसके बाद यह शब्द भी लिखे थे "क्या यह आपत्ति मुझ पर है या श्री यादव जी पर" उक्त लेख के उद्धरण में से यह शब्द छोड़कर—यह प्रकट किया गया है, कि जैसे मैंने रुपया खर्च करके वोट खरीदे। छूटे हुए शब्दों को जोड़ देने से स्पष्ट होगा कि जो कुछ मैं कहना चाहता था वह यह था कि मुझे नहीं बल्कि श्री यादव जी को यह १०० रु० का मामला आरम्भ करने का दोषी समझना चाहिये। अपने पिता से एक पत्र मिलने पर—यह १००) रु० मैंने श्री यादव जी को चुनाव सम्बन्धी डाक खर्च आदि के लिये भेजे थे।

इसी अनुबन्ध के अन्तिम वाक्य में जहां साम, दाम, दण्ड, भेद आदि सब गुणों की विद्यमानता मुझ में बताई गई है वहां यह भी आरोप है कि मैं और भी अनेक कलाओं में पूर्णतया निपूर्ण हूँ। इससे अभियुक्त ने मुझे एक अत्यन्त चालाक और असाधारण दुष्ट व्यक्ति के रूप में पेश किया है।

अनुबन्ध सं० ६ में संकेत किया गया है कि मेरे प्रवेश से पूर्व महामण्डल विग्रह दोष से सर्वथा मुक्त था, उसे मैंने अपने बौद्धिक बल से पैदा किया। कृत्या एक पुतली (या भुतनी) होती है जिसे काला जादू जानने वाला व्यक्ति बनाता (या बुलाता) है। यह झूठ है कि मेरे प्रवेश से पूर्व महामण्डल में फूट नहीं थी।

महासम्मेलन कार्यालय बनारस से लाहौर परिवर्तित होना इसी फूट का सीधा परिणाम था। इसी फूट के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिणाम स्वरूप दोनों मन्त्रियों ने अपने २ पद से त्याग पत्र दे दिये थे। प्रमाण के लिये सम्मेलन पत्रिका अगस्त १९३८ को पेश करता हूँ।

महासम्मेलन के अप्रैल १९३८ के नागपुर अधिवेशन में कार्यकर्ताओं में काफी मत भेदों को दूर करने वाली कमेटी का मैं एक सदस्य था। यह झूठ है कि मैंने महासम्मेलन में फूट आरम्भ की।

अनुवन्ध संख्या ९—में "हथकण्डे" "पोल" और धोका घड़ी यह शब्द मेरे प्रति अपमान जनक कहे गये हैं और मुझे दूसरों की नजरों में गिराने की नियत से लिखे गये हैं। हथकण्डे का अर्थ (Trick) और धोका घड़ी का अर्थ (Deception) है।

बंगाल के ११ प्रतिनिधि स्थायी समिति के सर्व सम्मत निश्चय से स्वीकार किये गये थे। प्रस्ताव में दिये गये आश्वासन का पूरी तरह पालन हुआ और महासम्मेलन के अगले अधिवेशन से पूर्व ही बंगाल में प्रान्तीय शाखा स्थापित हो गई थी। प्रमाण के लिये मैं अप्रैल १९४१ की सम्मेलन पत्रिका पेश करता हूँ।

अनुबन्ध सं० १९ में यह आरोप लगाया गया है कि मेरे १९४४ से पूर्व के दौरों का खर्च जान बूझ कर महामण्डल के हिसाब में नहीं दिखाया गया, यह झूठा है। इन दौरों के खर्च का उल्लेख महामण्डल के हिसाब में इसलिये नहीं दिखाया गया क्योंकि यह रकम महासम्मेलन द्वारा खर्च नही की गई, प्रत्युत प्रान्तीय शाखाओं द्वारा खर्च की गई। स्थायी समिति केवल महासम्मेलन की रकमों का हिसाब रखती है।

१९५३ में मैंने अपने दौरों के खर्च के लिये महासम्मेलन से कुछ रकम ली थी। मैंने महासम्मेलन से दूसरे दर्जे का रेल किराया लिया। यह सत्य है कि मैं गोहाटी और बंगलौर हवाई जहाज से गया। गोहाटी से कलकत्ता तक मैं हवाई जहाज से वापस आया और कलकत्ता से बम्बई तक रेल द्वारा वापस आया। तथापि मैंने महासम्मेलन से केवल दूसरे दर्जे का रेल किराया लिया और शेष रकम अपनी जेब से खर्च की। मैंने अपने असाम, बेंगलौर, बंगाल और बिहार के दौरों के खर्च के लिये ४७०) रु० के लगभग रकम ली।

बम्बई से गोहाटी तक का हवाई जहाज का किराया २९३) रु० है और बम्बई से बेंगलौर तक का किराया ९५) रु० है। मैं २५-४—५३ को स्थायी समिति की मीटिंग की कार्यवाही से प्रस्ताव संख्या ८(अ) पेश करता हूँ जो मई १९५३ की पत्रिका में छपा है।

अभियुक्त ने अनुबन्ध १९ में यह प्रस्ताव अपूर्ण रूप में उद्धृत किया है और उसी अधिवेशन में स्थायी समिति के सामने दिये मेरे वक्तव्य को जान बूझकर छोड़ दिया है, जिसमें मैंने कहा था—कि मैं महामण्डल कोष से हवाई जहाज का किराया नहीं लूंगा, बल्कि केवल दूसरे दर्जे का रेल किराया लूंगा और सम्मेलन ने मेरे इस वक्तव्य को स्वीकार किया था।

अनुबन्ध सं० २७ में यह आरोप है कि मैं बहुमत प्राप्त करने के लिये मत संग्रह के समय वही चालें चलता था जो कि प्रधान के चुनाव में चला करता था। यह आरोप मिथ्या है और मेरे प्रति अपमान जनक है। इस अनुबन्ध में आगे यह आरोप लगाया गया है कि गुरुदत्त जी मेरी पार्टी के थे, किन्तु मुझे उन पर सन्देह था कि वह मेरे साथ नहीं हैं। मेरी कोई पार्टी नहीं थी। मैंने सुझाव दिया था कि मन्त्री और स्थानीय उपप्रधान मत पत्रों पर हस्ताक्षर करें क्योंकि वह भिन्न २ मत रखने वाले दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व करते थे।

अनुबन्ध सं० ४२ तक के जितने भी आरोप उस पर लगाये गये थे इस तरह वह उनसे मुकर्ता गया और उन्हें असत्य बताता गया।

मैं बम्बई में

कुछ कठिनाइयां—मैं बम्बई का निवासी न था, न वहां के वकीलों से कोई परिचय था। मेरे मित्रों ने वकीलों का प्रबन्ध किया था, एक दो पेशी पर दिखाई दिया कि जो वकील किये गये हैं वह तो इस केस को चला नहीं सकेंगे। फिर उन्हीं वकीलों द्वारा बड़ा वकील किया गया, वह भी अयोग्य सिद्ध हुआ, तब चिन्ता उत्पन्न हुई। जब तक योग्य वकील न हो केस को व्यवस्थित रूप से न समझे, वह अदालत में जाकर क्या जिरह कर सकता है? हिन्दी के जानने वाले वकील वहां ढूंढे न मिलते थे, इस चिन्तित स्थिति में मुझे देख श्रीयुत पं० राम नारायण जी वैद्यराज ने अपना वकील दिया, जिसने केस को व्यवस्थित किया। उसको फिर साथ लेकर अन्य वकीलों में योग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वकील को ढूंढने लगा, बड़े श्रम के बाद श्रीयुत बी. एम. मिस्त्री एडवोकेट मिल गये और उन्होंने एक सप्ताह के भीतर ही केस को पूरी तरह समझ लिया। पं० राम नारायण जी ने इस स्थिति में जो सहयोग दिया उसके लिये मैं सदा उनका आभारी रहूँगा।

अब शिवशर्मा के वस्त्र धुलने और उसके धवल यश के धुलने का समय आगया। अभियोग प्रस्तुत हो जाने के बाद लम्बी तारीख मिली थी, इतने में वकील ने केस को समझ लिया। तारीख पर हमारे वकील ने पं० शिवशर्मा पर एक एक अभियोग को लेकर जिरह करनी आरम्भ की और अनेक प्रमाणों के साथ एक एक अभियोग जब वह सिद्ध करने लगा उस स्थिति में शिवशर्मा ने दर्शकों के बीच अपने को नंगा होता पाया, कभी कभी मारे शर्मिन्दगी के आंख ऊपर न उठाता। अभी तीन ही अभियोग सिद्ध हो पाये थे कि शिवशर्मा के पैर उखड़ गये, उसने अपने मित्रों द्वारा प्रयत्न किया, राजीनामा करलो। मेरा उन लोगों से यही कहना था-केस मैंने दायर नहीं किया, स्वयं उसने किया है, वह कहता है, "हमारे धवल वस्त्र और निर्मल यश पर तुमने कर्दम फेंकी।" इसीलिये उसने स्वयं ही अपने धवल वस्त्र और यश को धोने का मार्ग ढूंढा है, जिसे उसने अपनी गर्वोक्ति में उचित, निश्चयात्मक माना है। इसे अब धुल जाने दीजिये। जब पाँचवा अभियोग भी सिद्ध हो गया तो वह बहुत घबराया और उसकी ओर से सिर तोड़ प्रयत्न किया गया, मेरे छोटे वकीलों को फोड़ा, दबाव डलवाया कि स्वामी जी इतना ही मान लें कि लेख लिखने में असावधानी हुई, मैं केस उठा लूंगा। किन्तु मैं टस से मस न हुआ। वह तो यह चाहता था कि केस बीच में ही किसी तरह समाप्त हो जाय तो अदालत का निर्णय प्रकट न हो सकेगा और मेरी प्रतिष्ठा बनी रहेगी। किन्तु मैं भला कब उसके झांसे में आने वाला था। यदि मैं सुलह कर लेता तो उसके इस धवल यश पर से पर्दा कैसे उठता। वैद्य समाज और महामण्डल के सदस्य गण कैसे जानते कि शिवशर्मा किस प्रतिभा का मालिक है, उसकी योग्यता क्या है?

इस केस के निर्णय से उसकी गर्वोक्ति के प्रत्येक वाक्य सदस्यों, पाठकों के सामने आ गये हैं। जो वास्तविकता को जानना चाहते थे उन्हें उसकी योग्यता का वास्तविक ज्ञान होगया, जो तमाशबीन थे वह अदालत में ही उपस्थित होकर खूब तमाशा देखते थे। जब शिवशर्मा से एक एक अभियोग की बातें—जिनसे वह अपने बयान में मुकर चुका था—जिरह में दो दो दिन लेकर फिर वकील के वाक्जाल में फंसकर चक्रवद्ध गति से नाक पकड़ता था, अदालत का कमरा कहकहे से गूंज उठता था।

श्रीयुत पं० रामनारायण जी के निर्णय में स्वयं माननीय न्यायाधीश ने लिखा है—"कुछ समय की जिरह के बाद उसके जैसे चतुर व्यक्ति को यह मालूम हो जाना चाहिये था कि उसकी कलई खुल गई है, और वह सारी बातें ईमानदारी से स्वीकार कर लेता तथा अपने को इस तरह लज्जित न होने देता। इस स्वीकारोक्ति के लिये ३ पृष्ठ की जिरह करनी पड़ी।" पाठक थोड़े में समझ गये होंगे कि किस तरह अभियोग को सिद्ध करने के लिये वकील को कितना प्रयत्न करना पड़ा।

शिवशर्मा की योग्यता पर प्रकाश

हमारे वकील ने शिवशर्मा पर १३-१२-५६ से जिरह आरम्भ की उसकी योग्यता की पोल तो पं० रामनारायण जी के केस में ही खुल गई थी, किन्तु वे बातें हमारे भी केस में आनी चाहिये थीं इसलिये हमारे वकील ने शिवशर्मा से जब योग्यता सम्वन्धी प्रश्न पूछे तो उसने निम्नलिखित उत्तर दिये—

मैंने पंजाब विश्वविद्यालय की प्राज्ञ परीक्षा पास की है।

हिन्दी का मेरे पास कोई प्रमाण पत्र नहीं।

मैंने साइंस लेकर मैट्रिक पास की है।

मैं किसी यूनीवर्सिटी का ग्रेजूएट नहीं हूँ।

मैं पटियाला आयुर्वेदिक डिपार्ट मेण्ट का आयुर्वेदाचार्य हूँ।

मैं १९२६-२७ में आयुर्वेदाचार्य बना। मैंने पटियाला गवर्नमेण्ट आयुर्वेदिक कालेज में आयुर्वेदाचार्य किया। यह आयुर्वेदिक कालेज बम्बई तथा मद्रास सरकारों द्वारा स्वीकृत है, हो सकता है अन्य सरकारों द्वारा भी स्वीकृत हो। (इस बयान के साथ उसने अपनी योग्यता का एक भी प्रमाण पत्र अदालत में पेश नहीं किया।)

आयुर्वेद बृहस्पति की उपाधि मुझे झांसी आयुर्वेद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय द्वारा एक कनवोकेशन में दी गई, जहां देश के अन्य प्रमुख वैद्यों को भी यह उपाधि दी गई।

अगले दिन जब शिवशर्मा जिरह के समय अदालत में हाजिर हुआ तो उसने आते ही कहा—मैंने कल गल्ती से कह दिया था कि पटियाला आयुर्वेदिक डिपार्टमेण्ट से प्राप्त आयुर्वेदाचार्य का प्रमाण पत्र बम्बई और मद्रास सरकारों द्वारा मान्य है। मुझे यह गलत फहमी हुई।

बम्बई सरकार झांसी आयुर्वेद विश्वविद्यालय की आयुर्वेद वृहस्पति की डिग्री को भी मान्य नहीं करती। जब पूछा गया—आप बम्बई में रजिस्टर्ड किस श्रेणी में हुए? उसने कहा—बम्बई सरकार आयुर्वेदिक चिकित्सकों की एक सूची पुस्तक प्रकाशित करती है, उस पुस्तक के प्रथम खण्ड में उन वैद्यों के नाम हैं जिनके पास कोई प्रमाण पत्र नहीं होते, मेरा नाम इसी सूची पुस्तक के इसी खण्ड में है। क्योकि मेरे पास बम्बई सरकार द्वारा मान्य कोई प्रमाण पत्र नहीं है।

सदस्यगण! शिवशर्मा अदालत में खड़ा होकर भी कितना झूठ बोलता है ऊपर उसकी जबानी और नीचे प्रमाण में देखिये—

पटियाला में एक वैद्य हैं, श्री बलदेव सिंह जी मढ़िया जिन्हें पटियाला गर्वमेण्ट ने १९२८-२९ में छात्र वृत्ति (स्कालरशिप) देकर ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज में शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा था। आप वहां से प्रमाणित होकर आये और पटियाला के एक धर्मार्थ औषधालय में आज भी काम करते हैं। १९५० में उन्होंने पटियाला एजुकेशन डिपार्टमेण्ट को एक पत्र लिखकर पूछा था कि स्टेट की तरफ से कौन सा आयुर्वेदिक कालेज चल रहा है, क्योंकि तब तक वहां स्वास्थ्य की शिक्षा का प्रबन्ध इसी एजूकेशन डिपार्टमेण्ट की ओर से था। १४-२-५० को जो उत्तर पटियाला सरकार की ओर से आया उस लेटर की फोटो प्रतिलिपि नीचे दे रहा हूँ, पाठक पढ़लें। वह कहते हैं—

No. 1050 G Dated. 14-2-50

Returned to the Incharge Charitable Ayurvedic Aushdalya, Patiala with the remark that there is no recognized Ayurvedic School or College under the control of this office in the Union.

There was, however, one institution named as Bhupindra Tibbia College, Patiala in the erstwhile Patiala State. However this does not exist now.

[signature]

Director of Public Instruction
Patiala & E.P.S. Union Govt.
14/2 NABHA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टेट की तरफ से यहां कोई आयुर्वेदिक कालेज नहीं है, हाँ भूपेन्द्रा तिब्बिया कालेज है। वास्तव में १९५२ तक वहां कोई आयुर्वेदिक कालेज नहीं था। हां शिवशर्मा के पिता अवश्य अपने मकान पर कुछ छात्रों को प्राइवेट तौर पर पढ़ाते थे, यह काम वह यहां तब से करते थे जब से वह अपने गाँव टकसाल से आये थे। उन्होंने अवश्य छात्रों को कुछ डिगरियां दीं। किन्तु उनको डिगरी देने का अधिकार पटियाला स्टेट की ओर से कोई मिला नहीं था। न उनकी दी हुई डिग्री को पटियाला स्टेट ने कभी स्वीकार किया।

अमृतसर में १९२३-२४ को जब शिवशर्मा पं० हेमराज नय्यायिक के पास संस्कृत पढ़ने के लिये आया था, मुझसे कई बार मिल चुका था, उन दिनों यह धातु पाठ पढ़ रहा था, संस्कृत का इसे साधारण सा ज्ञान था, हो सकता है इसने एक दो वर्ष में प्राज्ञ की परीक्षा दी हो किन्तु प्राज्ञ और मैट्रिक तो वह प्रारम्भिक डिगरियां हैं जहां से संस्कृत और अंगरेजी के ज्ञान का श्री गणेश होता है।

पाठकों में से जिन्हें उससे मिलकर बात करने का अवसर मिला होगा वह उसे अंगरेजी में फर्र फर्र बोलता देखकर और उसके बयान से मैट्रिक पास का शब्द सुनकर आश्चर्य तो अवश्य कर सकते हैं और इसका कारण जानने की उनके भीतर भारी उत्कण्ठा हो सकती है किन्तु मैं इसे अभी रहस्य के गर्भ में ही रहने दूंगा।

१९३८ के बम्बई अधिवेशन पर नि. भा. आ. महा सम्मेलन का प्रधान बन कर वहां जो उसने संस्कृत में छपा भाषण विद्वानों में वितरण कराया था और पढ़ा हिंदी का भाषण था। सम्मेलन में आये अनेक विद्वान वह लालित्य पूर्ण संस्कृत का भाषण पढ़कर बड़े प्रभावित हुए थे, वह अब उसके अदालत में दिये संस्कृत की योग्यता का बयान पढ़ते हैं तो हो सकता है वह आश्चर्य में डूबे हों और इस रहस्य को जानने की उत्कण्ठा रखते हों पहले मैं भी इस चमत्कार से चकित हुआ था, तब एक मित्र, जो उनकी घनिष्ठता में रहता था कहने लगा चकित न हों यह तो किसी मित्र की करामात थी। हाथ कंगन को आरसी क्या-नहीं विश्वास है तो हजरत से शुद्ध संस्कृत में चार पक्तियां लिखवाकर देख लो।

और प्रमाण—वैद्य समाज से यह बात भूली नहीं होगी कि मैंने १९३२-३३ में त्रिदोष मीमांसा प्रकाशित कर वैद्य समाज में खलबली मचा दी थी। उस समय बड़े २ आयुर्वेद के धुरन्धर विद्वान् व दर्शन शास्त्रियों ने मिलकर १९३३ में बनारस में पंचभूत त्रिदोष सम्भाषा परिषद बुलाई, उन्हीं दिनों एक सम्भाषा परिषद पनवेल में और एक नासिक में भी हुई थी। इसके बाद आजसे दो वर्ष पूर्व एक विद्वत् सम्भाषा परिषद पटना में और एक हरिद्वार में पं० रामनारायण जी वैद्यराज के प्रयत्न से हुई। इन परिषदों में शिवशर्मा क्यों नहीं आया? यदि वह संस्कृत का ऐसा विद्वान होता जैसा उसके संस्कृत भाषणों से ज्ञात होता था तो इसमें कोई संशय नहीं कि उसकी कीर्ति पताका दिगन्त व्यापि हो जाती। पर उसे तो भय था कि इन परिषदों में गया तो अपनी योग्यता की कहीं पोल न खुल जाय। उसे पैसा कमाने के लिये सुलभ सा यश, कीर्ति फैलाने का मार्ग चाहिये था, वह उसे मिला हुआ था, फिर उसे इस विडम्बना से क्या लेना था।

कुछ और डिगरियां—शिवशर्मा के पास विद्यालंकार वैद्य शास्त्री आदि की कुछ और डिगरियां थीं, वह आप भाव प्रकाश के हारीतक्यादि निघण्टु की शिवदीपिका नामक भाषा टीका की पुस्तक जो सन १९२६ में खेमराज श्रीकृष्णदास बम्बई वेंकटेश्वर प्रेस में छपी है उसके टायटिल पर शिवशर्मा के नाम के साथ प्रकाशित हैं, यह डिगरियां उसने कब और कहां से प्राप्त कीं? या बोगस लगाई हुई है? इसका रहस्य भी प्रकाश में नहीं आया।

धन्वन्तरि आदि कुछ चापलूस मासिक पत्र उसे बी. ए. की उपाधि से सदा अलंकृत करते चले आये हैं। सम्मेलन पत्रिका ने तो उसे एम. ए. तक लिखा है। जब वह मैट्रिक था, पाठक कहेंगे—उसने अपने नाम के साथ लगी यह उपाधियां एक बार नहीं प्रतिबार पढ़ी होंगी अपने चित्र के साथ लगी हुई देखी होंगी। जब वह मैट्रिक था तो उसने अपने नाम के साथ लगी बी. ए., एम. ए. की डिग्री को देखकर उसका प्रतिवाद क्यों नहीं किया? उन्हें बारम्बार प्रकाशित करने से क्यों नहीं रोका? वह भला प्रतिवाद क्यों करता, यह तो उसकी ख्याति का साधन था। उसने तो वैद्य समाज और जन समाज की आंखों में धूल झोंकने में नटवरलाल के भी कान काट डाले हैं। नटवरलाल तो अपना रोजगार इसी चार पांच साल से प्रकाश में लाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हजरत का रोजगार तो आज १८ वर्ष से भी अधिक से चमकता चला आ रहा है। जिसकी बदौलत उन्हें स्टेट फेकल्टीआफ आयुर्वेद एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन बम्बई राज्य के चेयरमैन का गौरव पूर्ण पद और बोर्ड आफ आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी सिस्टम्स आफ मेडिसन का गौरवपूर्ण प्रधान पद तथा कमेटी फार प्रीवेन्शन आफ स्पूरियस इनडिजिनस ड्रग्ज के चेयरमैन का गौरव पूर्ण प्रधान पद प्राप्त हुआ और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की एकेडेमिक कौन्सिल की सदस्यता का सम्मान प्राप्त हुआ। जिन साधनों की बदौलत धन और सम्मान दोनों प्राप्त होते हों भला वह मार्ग कभी छोड़ा जा सकता है। आखिर परिणाम सामने आ गया, इस केस ने तुलसीदास की इस चौपाई को सार्थक बना दिया—

उघरे अन्त न होहि निवाहु। कालनेमि जिमि रावण राहु।

विद्वान न्यायाधीश का निर्णय

अनुबन्ध संख्या ३ का निर्णय—इस अनुबन्ध का निर्णय लिखते हुए विद्वान् न्यायाधीश ने कहा—जहां तक इस आरोप का सम्बन्ध है—कि अभियोक्ता ने गुप्त मार्ग से महा सम्मेलन में प्रवेश किया। अभियुक्त ने इस अभियोग की पुष्टि में इसी अनुबन्ध में स्वयं अभियोक्ता के एक पत्र का उद्धरण दिया है। यह पत्र अदालत के रिकार्ड पर है और अदालत में अभियोक्ता की स्वीकारोक्तियों से स्पष्ट है कि १९३८ में अभियोक्ता जब पहली बार प्रधान चुना गया तो उस सयय प्रधान के चुनाव के सम्बन्ध में ही १००) श्री यादव जी को भेजा गया था। अभियोक्ता का कहना है कि १००) उसने यादव जी को लेखन सामग्री व डाक खर्च के लिये भेजे थे। यदि ऐसा होता तो मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता कि अभियोक्ता का उस पत्र में जो संदिग्ध कथन छपा है इसकी वजाय उसने यही बात साधारण और स्पष्ट शब्दों में क्यों न कही। उस पत्र में उसने कहा है कि वास्तव में यह आरोप यादव जी पर लगाया जाना चाहिये, न कि उस पर। इस कथन का अभिप्राय तो यह निकलता है कि यह आरोप लगाने का आधार तो था, यद्यपि यह यादव जी के विरुद्ध लगना चाहिये था, अभियोक्ता के विरुद्ध नहीं। यदि यह १००) यादव जी को लेखन सामग्री व डाक खर्च के लिये भेजा गया होता तो अभियोक्ता यह सब कुछ कहता। इस परिस्थिति में १००) के सम्बन्ध में अभियोक्ता का यह स्पष्टीकरण स्वीकार करना कठिन होगा।

यह लेख लिखते समय अभियुक्त के सामने अभियोक्ता का वह पत्र था जो उस वर्ष उसके प्रधान निर्वाचन सम्बन्धी दोषारोप करने वाले पम्फ्लेट के उत्तर में प्रकाशित किया गया था और इस पत्र की भाषा जिस प्रकार संदिग्धार्थक थी उससे कोई भी युक्तियुक्त मनुष्य इसी परिणाम पर पहुंच सकता था कि यह १००) वोट खरीदने के लिये भेजा गया।

१९३८ के बम्बई अधिवेशन में जिसका सभापतित्व अभियोक्ता ने किया, सभापति की ओर से एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया जिसके द्वारा पहले पांच नामों में से प्रधान चुनने का अधिकार स्वागत समिति को दिया गया। अभियोक्ता ने ही यह प्रस्ताव किया था और वह यह मानता है कि स्वागत समिति में ऐसे लोग होते हैं जो महासम्मेलन के सदस्य नहीं होते, फिर स्वागत समिति को प्रधान के चुनाव का अधिकार क्यों दिया जाय? यह बात साधारण समझ से परे की वस्तु है और अभियोक्ता भी इस का स्पष्टीकरण नहीं करना चाहता। इस परिवर्तन के सम्बन्ध में सबसे सबल बात यह है कि यद्यपि दिसम्बर १९३८ के बम्बई अधिवेशन में पास हुये सब प्रस्ताव फरवरी १९३९ की सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। परन्तु यह प्रस्ताव प्रकाशित नहीं हुआ। अक्टूबर १९३९ में अभियोक्ता पुनः प्रधान चुना गया और उसके बाद दिसम्बर १९३९ की सम्मेलन पत्रिका में यह प्रस्ताव प्रकाशित किया गया। अभियोक्ता यह स्वीकार करता है कि यह देखना उसका कर्तव्य था कि सब प्रस्ताव अधिवेशन के तुरन्त बाद पत्रिका में छापे जाएं, परन्तु वह कहता है कि इस भूल की ओर उसका ध्यान नहीं गया। वह यह भी स्वीकार करता है कि उसने फरवरी १९३९ की पत्रिका पढ़ी और यह भी कि—यह प्रस्ताव एक महत्व पूर्ण प्रस्ताव था, परन्तु इन स्वीकारोक्तियों के होते हुये वह चाहता है कि मैं यह मान लूं कि इस भूल की ओर उसका ध्यान नहीं गया। १९३९ में जिस प्रकार से अभियोक्ता प्रधान चुना गया उसकी गलती का स्वयं उसे ध्यान था, यह बात उसके उस पत्र से स्पष्ट है जिसमें उसने स्वागत समिति को लिखा कि मैं आगामी अधिवेशन का सभापतित्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं करूंगा और वह किशोरी दत्त को चुन लें। वह कहता है कि ऐसा उसने हिर्लेकर के पत्र के बाद लिखा, परन्तु उस पत्र के कारण नहीं। किन्तु इस कथन को मन्त्री द्वारा प्रकाशित स्पष्टीकरण का वह पत्र झूठा प्रमाणित करता है।

प्रधान चुना जाने की इस रीति को ही अभियुक्त ने उस गुप्त मार्ग का नाम दिया है जिसके द्वारा अभियोक्ता ने महामण्डल में प्रवेश किया। अतः इस परिस्थिति में मेरा यह विचार है कि इस टिप्पणी के करने में अभियुक्त ने न तो कोई विशेष भूल की और न ही अनुचित अयुक्ति युक्त बात कही है।

अदालत ने अपने निर्णय में लिखा है कि यहां प्रसंग वश इस बात का उल्लेख करना भी उचित है कि अभियोक्ता के महासम्मेलन के राजनीतिक मंच पर प्रकट होने के बाद महासम्मेलन के विधान में ६ बार परिवर्तन किया गया और इन छहों अवसरों पर अभियोक्ता महासम्मेलन का कोई न कोई पदाधिकारी था। इनमें से ४ बार तो वह प्रधान था, एक बार उपप्रधान और एक बार प्रधान मन्त्री था।

छहों बार विधान परिवर्तन प्रधान की चुनाव रीति के सम्बन्ध में ही हुआ और कई बार तो पूर्व वर्ष की छोड़ी हुई प्रथा को परिवर्तन द्वारा फिर अपनाया गया। यह परिवर्तन क्यों किये गये? और एक क्रम जो एक वर्ष पूर्व मान्य समझा गया उसे अगले वर्ष क्यों अमान्य किया गया? और उससे भी अगले वर्ष उसे फिर दुबारा क्यों अपनाया गया? इस बात का अभियोक्ता के पास कोई स्पष्टीकरण नहीं।

मा०न्यायाधीश ने आगे लिखा है कि यहाँ यह उल्लेख करना भी उचित है कि अभियोक्ता के १९३८ में प्रधान के चुनाव में एक और अनियमितता भी हुई, वह यह कि दूसरी बार का मतदान दो बार किया गया। पहली बार मतगणना बनारस में हुई और इसे रद्द कर दिया गया। दूसरी बार मत गणना बम्बई में हुई। यद्यपि विधान के अनुसार यह बनारस में ही होनी चाहिये थी। जब अभियोक्ता से इसका स्पष्टीकरण मांगा गया तो उसने इस बात की आड़ ली कि दुबारा मतदान करने और मतगणना का स्थान बनारस से बदलकर बंबई निश्चित करने का फैसला जिस स्थायी समिति के अधिवेशन में किया गया था उसमें वह उपस्थित नहीं था। परन्तु वह इतना स्वीकार करता है कि जहां तक उसे स्मरण है दुबारा मतदान का निश्चय इसलिये किया गया क्योंकि पहली बार मतदान में हस्ताक्षेप हुआ था। अदालत ने आगे लिखा है कि दुबारा मतगणना करने की अनियमितता एवं उसे बनारस को छोड़कर बम्बई में करने की घटना को यदि यादव जी को १००) भेजने की पूर्वोक्त घटना के साथ रखकर देखा जाय तो मेरे विचार में इस अनुबन्ध में गुप्त मार्ग सम्बन्धी लगाये गये अभियोग के लिये पर्याप्त औचित्य दीख पड़ता हैं।

कीर्ति लोलुप और स्वार्थ साधक—

अभियोक्ता का कथन है कि अनुबन्ध संख्या ३ में उसे स्वार्थ साधक एवं कीर्ति लोलुप कहा गया है और यह प्रकट करने के लिये प्रमाण मौजूद हैं कि कम से कम १९३८ में अभियोक्ता को अधिकार प्राप्ति की इच्छा अवश्य थी और यह इच्छा ही उसके प्रधान पद पर आसीन होने का कारण थी। उसने यह भी स्वीकार किया है कि उस समय उसने वोट भी माँगे। इससे प्रकट है कि वह ऐसा व्यक्ति था जिसके हृदय में प्रसिद्धि और सत्ता प्राप्ति की लालसा थी और इसीलिये वह प्रधान बनना चाहता था। अतः लेखक द्वारा कथित कीर्ति लोलुप की श्रेणी में तो वह फिट बैठता ही है।

अभियोक्ता कहता है—प्रधान पद के पहले वर्ष के बाद अर्थात १९३८ के बाद वह प्रधान पद से ऊब गया था, परन्तु तथ्य उसे झूठा प्रमाणित करते हैं। मेरे सामने यह प्रकट करने के लिये काफी प्रमाण विद्यमान हैं कि अधिकार प्राप्ति की उसकी लालसा १९५५ तक बनी रही, अन्यथा मई १९५५ के त्रिवेन्द्रम अधिवेशन में तीन दिन तक सभापतित्व करने और उसके बाद त्याग पत्र देने का और कोई उसके पास स्पष्टीकरण नहीं। बम्बई के मुख्य मन्त्री और त्रावणकोर राज्य के मन्त्री उस अधिवेशन में सम्मिलित हुए थे, उनकी विद्यमानता में तीन दिन सभापतित्व करने का कारण अभियोक्ता यह देता है—कि इस अधिवेशन पर महत्वपूर्ण निश्चय किये जाने थे तथा उसकी इच्छा थी कि उक्त बड़े बड़े व्यक्तियों की उपस्थिति में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिवेशन की कार्यवाही शान और शिष्टता के साथ हो।

ऐसा लगता है मेरी दृष्टि में तो उसका यह कथन केवल उसकी अहमन्यता का एक प्रबल प्रमाण है और इससे वैद्य समाज का बड़ा अपमान है। क्योंकि इससे यह संकेत मिलता है कि वैद्यों में उसके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा व्यक्ति नहीं था जो अधिवेशन की कार्यवाही को शिष्टता और शान के साथ चला सकता। जहां तक महत्व पूर्ण फैसले किये जाने का सम्बन्ध है मैं समझता हूँ कि उन फैसलों का करना उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना उन्हें कार्यरूप में परिणत करने का है और निश्चय ही उसने वह काम एक अपने से निम्न योग्य व्यक्ति के लिये छोड़ दिया। जैसा कि प्रकट है कि वास्तविक कारण यह था कि वह एक ऐसे अधिवेशन का सभापतित्व करने की चमक दमक दिखाने और उसके विज्ञापन का इच्छुक था जिसमें बम्बई के मुख्य मन्त्री और त्रावणकोर राज्य के मन्त्री सम्मिलित होने वाले थे, इससे भी प्रकट होता हैं कि वह कीर्ति लोलुप था और यही कारण है कि जिन ११ वर्षों तक महासम्मेलन के साथ उसका सक्रिय सम्पर्क था वह किसी न किसी पद पर आसीन रहा। वह ७ वर्ष तक प्रधान रहा, एक वर्ष उपप्रधान और बाकी समय प्रधान मन्त्री रहा।

महासम्मेलन द्वारा उसकी ख्याति और विज्ञापन अनिवार्य रूपसे चिकित्सा व्यवसाय को भी बढ़ा देनेवाला है यह बात सामान्य ज्ञान और अनुभव से सिद्ध है। क्योंकि कोई व्यक्ति जब प्रधान के रूप में बड़े बड़े अफसरों और सरकार के मन्त्रियों के सम्पर्क में आता है तो उससे भी उसका विज्ञापन होता है और उसका नाम प्रसिद्ध हो जाता है। इस लिये जब कभी कोई व्यक्ति आयुर्वेदिक चिकित्सा के लिये विचार करता है तो उसका नाम यह समझ कर सबसे पूर्व उसके ध्यान में आता है कि जो व्यक्ति इतना प्रसिद्ध है वह अवश्य ही एक योग्य चिकित्सक होगा। इस प्रकार प्रधान बनने से व्यक्तिगत लाभ भी हो सकता है।

इस अनुबन्ध में जो उसे स्वार्थ साधक और कीर्ति लोलुप कहा गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि अधिकार प्राप्ति एवं प्रसिद्धि की लालसा के उद्देश्य से ही अभियोक्ता, महामण्डल में प्रविष्ट हुआ।

अनुबन्ध संख्या का ६ निर्णयः—इस अनुबन्ध में यह अभियोग लगाया गया है कि अभियोक्ता ने विग्रह रूपी कृत्या को जन्म दिया। अभियोक्ता ने इन शब्दों पर आपत्ति की है. परन्तु अभियुक्त का कथन है १९४१ से लेकर १९४४ तक मूलचन्द खैरातीराम ट्रष्ट के मामले में महामण्डल में जितने विरोध और मतभेद उत्पन्न हुए उन सबोंके लिये अभियोक्ता ही उत्तरदायी था तथा १९५० के बाद मत संग्रह के विषय पर जो झगड़े हुए उनके लिये भी वही उत्तरदायी था। इन्हीं विषयों पर यादव जी, वैद्य बापालाल शाह और पं० किशोरीदत्त जी आदि प्रमुख वैद्यों ने जो मत प्रकट किये हैं उनके आधार पर अभियुक्त का यह कथन कि १९४१ से १९४४ तक अभियोक्ता ही महासम्मेलन में विरोध एवं झगड़े का कारण था, यह कथन स्पष्ट रूप से ईमानदारी से किया गया एवं वास्तविकता पर आधारित है। यही नहीं, जहां तहां अपने बयान में अभियोक्ता ने यह स्वीकार किया है कि इस झगड़े के लिये वह जिम्मेदार था और यह झगड़ा महासम्मेलन के लिये नितान्त हानिकारक था।

इसी प्रसंग में माननीय जज महोदय ने आगे लिखा है कि १९४४ में जब अभियोक्ता महासम्मेलन के राजनीतिक मंच से ओझल हो गया तब से लेकर १९५० तक महासम्मेलन में कोई झगड़ा नहीं हुआ। रिकार्ड पर विद्यमान तथ्यों में से कोई भी यह सिद्ध नहीं करता कि इन ६ वर्षों में महासम्मेलन के शान्त वातावरण को क्षुब्ध करने वाली कोई घटना घटी या स्वयं अभियोक्ता ने उक्त समय में किसी ऐसी घटना का आरोप लगाया हो कोई रिकार्ड पर नहीं हैं। परन्तु १९५० में उसके प्रधान चुने जाने के शीघ्र ही बाद फिर एक तूफान उठ खड़ा हुआ और एक ऐसा विवाद चल पड़ा जिसका केन्द्र अभियोक्ता ही था। जनवरी १९४३ की सम्मेलन पत्रिका में छपे उसके अपने भाषण में अभियोक्ता ने कहा—"यह कहना अनावश्यक है कि यदि यह मुकदमा न किया जाता तो पंजाब के वैद्यों में फूट न पड़ती।"

१२ जनवरी १९५१ को श्री यादव जी की प्रधानता में स्थायी समिति ने महासम्मेलन के विधान में कुछ संशोधन किये। २९-४-५१ की स्थायी समिति के अधिवेशन में एक सज्जन ने यह आपत्ति उठाई कि विधान में संशो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन करना व धानिक रूप से स्थायी समिति के अधिकार से बाहर की बात है। अतः इस विषय पर कानूनी परामर्श लिया गया जो दोनों पक्षों की पुष्टि में मिला। उसके बाद महासम्मेलन का विशेष अधिवेशन गाजियाबाद में हुआ, जिसका कार्य वाहक प्रधान अभियोक्ता था। यह विषय यद्यपि उस अधिवेशन के एजेण्डा में नहीं था, परन्तु प्रधान शिवशर्मा ने इस पर मत लिये जाने की अनुमत्ति दे दी और यह विषय मतदान में गिर गया। तत्पश्चात ९ दिसम्बर १९५१ की स्थायी समिति के अधिवेशन में उस संशोधन को लागू करने का निश्चय ६४ पक्ष में और ३ विपक्ष में मतों के आने से हुआ। जिसका तात्पर्य यह था कि विधान संशोधन का अधिकार स्थायी समिति को है यह मत स्वीकृत किया गया। अभियोक्ता इस सारे काल में महासम्मेलन का उपप्रधान था। दिसम्बर १९५१ की बैठक के बाद श्री यादव जी ने प्रधान पद से त्याग पत्र दे दिया और अभियोक्ता उपप्रधान होने के कारण कार्य वाहक प्रधान बन गया। उसने प्रधान मन्त्री गुरुदत्त जी को कहा मैं इस विषय पर मत संग्रह कराना चाहता हूँ। अभियोक्ता ने यहां यह स्वीकार किया कि वह विधान संशोधन का अधिकार स्थायी समिति को देने का विरोधी था। अतः उसने कार्य वाहक प्रधान बनते ही सब व्यवस्था को उलट कर अपनी मर्जी करने के उद्देश्य से मत संग्रह का यह सिद्धान्त गढ़ लिया, यद्यपि विधान में मत संग्रह करने का कहीं नियम नहीं। विद्वान न्यायाधीश ने लिखा— कि मेरे विचार में रिकार्ड पर विद्यमान तथ्यों के आधार पर बचाव पक्ष के वकील का उक्त तर्क अयुक्ति संगत अथवा न्याय विरुद्ध नहीं। आगे भी न्यायाधीश ने मत संग्रह के झगड़े की चर्चा करते हुए विस्तार से लिखा कि १४-६-५२ की स्थायी समिति में अभियोक्ता ने एक प्रस्ताव पास कराया जिसका आशय यह था कि मत संग्रह स्थायी समिति में न कराकर महासम्मेलन के सम्पूर्ण सदस्यों से कराया जाय। उक्त कारण के विवाद पर प्रधान मन्त्री गुरुदत्त जी ने त्याग पत्र दे दिया, क्योंकि अभियोक्ता चाहता था कि मत पत्रों पर प्रधान मन्त्री के अतिरिक्त उपप्रधान के भी हस्ताक्षर हों और मत पत्रक खोलते समय भी उक्त दोनों पदाधिकारी उपस्थित हों। यद्यपि पहले यह सब कार्य केवल प्रधान मन्त्री करता था।

इस पर अभियोक्ता ने गुरुदत्त जी को दो पत्र लिखे, एक निजी पत्र जिसमें मोठी मीठी चापलूसी पूर्ण बातों द्वारा उनसे त्याग पत्र न देने का अनुरोध किया था। दूसरे औपचारिक पत्र में मत संग्रह पत्रक भेजने के सम्बन्ध में था, जिसमें अपना रूलिंग दिया, उसके अनुसार कुछ ऐसे लोगों को भी मत पत्रक भेजने का आदेश था जो महा-मण्डल के सदस्य नहीं थे। इस रूलिंग से विरोधी पक्ष को आश्चर्य हुआ और उनकी तरफ से विरोध का तूफान उठ खड़ा हुआ। तथा छः पदाधिकारियों ने इसके विरोध में त्याग पत्र देदिये।

विरोधी पक्ष ने इस रूलिंग पर विचार करने के लिये ३१ सदस्यों के हस्ताक्षरों से स्थायी समिति की मीटिंग बुलाने की मांग की परन्तु अभियोक्ता ने यह अधिवेशन बुलाना स्वीकार करने के अथवा अस्वीकार करने के स्थान पर अधिवेशन की मांग करने वालों को धमकी दी कि यदि विधान के अनुसार उन्होंने यह मांग की हुई मीटिंग अपने आप बुलाई तो उनके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जायगी और दोनों पक्षों में से किसी को भी महासम्मेलन से अदा-लती खर्च नहीं मिलेगा।

विरोधी पक्ष ने इन सब धमकियों की कोई परवाह नहीं की और मत संग्रह के विरुद्ध निषेधाज्ञा का दावा दायर कर दिया तथा २१-९-५२ को स्वयं उक्त मीटिंग बुला ली। इस पर अभियोक्ता ने अपनी जिम्मेदारी पर और अपने रुपये से ओंकार प्रसाद जी द्वारा २१-९-५२ की मीटिंग के विरुद्ध निषेधाज्ञा का दावा दायर करा दिया। इस सम्बन्ध में ओंकार प्रसाद के साथ जो उसका पत्र व्यवहार हुआ वह बड़ा रोचक है। एक पत्र में उसने लिखा कि वह इस मामले को सर्वोच्च न्यायालय तक लड़ेगा। एक पत्र में ओंकार प्रसाद को लिखा कि वह एक स्थानीय उपसमिति की होने वाली मीटिंग में जाकर उसे अवैधानिक कह कर रोक दें। अपने फैसले में इन सब घटनाओं का उल्लेख करने के बाद न्यायाधीश ने लिखा है कि अभियोक्ता का कथन है कि उक्त मुकदमे बाजी तथा अन्य सब कार्य उसने महासम्मेलन के हित के लिये किये। परन्तु यदि ऐसा ही था तो मैं नहीं समझता कि इस प्रकार की मुकदमेबाजी आरम्भ करने से पूर्व उसने स्थायी समिति की स्वीकृति क्यों न ली? मेरा विचार है कि प्रधान के नाते उसे बिना स्थायी समिति की स्वीकृति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अपनी जेब से रुपया खर्च करके भी संस्था को इस प्रकार मुकदमे बाजी में उलझाने का कोई अधिकार नहीं था।

इस बात से प्रकट होता है कि अभियोक्ता ने महासम्मेलन के हित में कुछ करने के बहाने इसे (अर्थात मुकदमे बाजी को) एक व्यक्तिगत कार्य के रूप में आरम्भ किया और वह इसे तब तक चलाना चाहता था जब तक कि विरोधियों को दबा न दे। इसी घटना की आगे चर्चा करते हुये माननीय जज ने लिखा कि इस घटना में अभियोक्ता का आचरण ऐसा है जिस से इस अनुबन्ध में दिये वर्णन की पुष्टि होती है अर्थात यह कि अभियोक्ता के बौद्धिक बल से ही महासम्मेलन में ऐसे मतभेद उत्पन्न हुये जो उसके लिये घातक थे। फूट से किसी भी संस्था की उन्नति को धक्का पहुंच सकता है यह एक ऐसा सत्य है जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। अतः इस अनुबन्ध में लेखक ने जो कुछ लिखा है वह रिकार्ड पर आये तथ्यों के आधार पर अनुपयुक्त अथवा अनुचित नहीं।

अभियोक्ता यह स्पष्ट रूप से कह चुका है कि उसके रूलिंग वैधानिक रूप से गलत थे, पर नैतिक रूप से ठीक थे। यदि ऐसा होता तो उसके लिये उस रूलिंग पर स्थायी समिति में विचार होने से डरने की कोई बात नहीं थी, क्योंकि स्थायी समिति के सदस्य भी तो उस रूलिंग के नैतिक बल को देखते हुए वैधानिक आपत्ति की अवहेलना कर सकते थे। मान्य न्यायाधीश का कहना है—जहां तक मैं समझता हूँ उसे वास्तविक भय यह था कि स्थायी समिति उसके रूलिंग के विरुद्ध आपत्तियों को स्वीकार कर लेगी और इसलिये उसने अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण की सफलता के लिये इस विषय पर मुकदमेबाजी आरम्भ कर दी।

इसी सम्बन्ध में न्यायाधीश ने आगे यह लिखा कि इन्दौर अधिवेशन में जिसकी प्रधानता अभियोक्ता ने की नियमावली संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव पास करा कर अभियोक्ता ने विरोधियों की कमर तोड़ दी और विरोधी दल को समाप्त कर दिया। अभियोक्ता का हाथ छुपाये रखने के लिये विधान संशोधन का कार्य एक विशेष समिति के सुपुर्द कर दिया गया, परन्तु इस समिति ने उन्हीं चार संशोधनों की सिफारिश की जो विरोधियों के पैर उखाड़ने के लिये अभियोक्ता चाहता था। अतः अभियोक्ता के यह कहने के बावजूद कि इन संशोधनों में उसका हाथ नहीं था मैं यह मानने को तैयार नहीं।

अनुबन्ध ६ के पूर्वांश का निर्णय—जिसमें अभियोक्ता के हथकण्डों का उल्लेख है। इस पर न्यायाधीश ने लिखा कि अभियोक्ता ने यह स्वीकार किया है कि १९५२ में उसके प्रधान चुने जाने से पूर्व पेप्सू से २५ नये सदस्य बनाये गये थे जिनमें से १४ पटियाला राज्य के आयुर्वेद विभाग से सम्बन्धित थे जिसका डायरेक्टर अभियोक्ता का पिता था।

१९५३ के चुनाव के सम्बन्ध में भी १६-१२-५३ की स्थायी समिति की मीटिंग के समय अभियोक्ता के विरोधी कवि० प्रतापसिंह तथा २५ अन्य सदस्यों ने यह आरोप लगाये थे कि अभियोक्ता ने अनुचित विधियों से चुनाव में सफलता प्राप्त की है।

इसके साथ ही इस बात पर भी ध्यान देना चाहिये कि अभियोक्ता के समय प्रधान के चुनाव सम्बन्धी विधान की धाराओं में कई बार परिवर्तन किये गये। इन सब बातों को दृष्टि सन्मुख रख कर बंगाल के ११ प्रतिनिधियों को बनाये जाने की घटना अनुपयुक्त नहीं कही जा सकती। क्योंकि अभियोक्ता की अपनी गवाही से स्पष्ट है यह प्रतिनिधि प्रधान के चुनाव में मतदाताओं की संख्या में वृद्धि करने के अर्थ बनाये गये थे। तब फिर अभियुक्त ने यदि इसे हथकण्डे कह दिया तो मेरे विचार में यह अनुचित नहीं। यद्यपि यह शब्द कुछ अधिक कठोर है।

इस ६ वें अनुबन्ध के उत्तरांश का निर्णय मान्य न्यायाधीश ने अन्त में दिया है।

अनुबन्ध संख्या १६ का निर्णय—अभियोक्ता को आपत्ति यह है कि इस अनुबन्ध में उस पर यह अभियोग लगाया गया है कि उसने अपने दौरों का खर्च महासम्मेलन से लिया।

इस सम्बन्ध में अदालत ने लिखा है कि इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि १९५३ में बंगलोर अधिवेशन के बाद वह (अभियोक्ता) सम्मेलन से यात्रा व्यय लेता रहा है, उससे पूर्व उसने यह खर्च, सम्मेलन की प्रान्तीय शाखाओं से लिया। वास्तव में महासम्मेलन और उसकी आधीनस्थ प्रान्तीय शाखायें एक ही वस्तु हैं। अतः मेरी सम्मति में इस अनुबन्ध के प्रथम दो वाक्य वस्तुतः ठीक हैं।

श्री मिस्तरी (अभियुक्त के वकील) ने इस सम्बन्ध में मेरा ध्यान अभियोक्ता की १९३८ की उस घोषणा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और दिलाया है जब पहली बार प्रधान बनते समय उसने कहा था कि मैं भिन्न भिन्न प्रान्तों का दौरा करूंगा, परन्तु खर्च महासम्मेलन से न लेकर अपनी जेब से करूंगा। अभियोक्ता अपनी गवाही में कहता है कि उक्त घोषणा सम्मेलन पत्रिका में गलत छपी है। यह पूछा जाने पर कि उसने उस समय इस भूल का सुधार क्यों न कराया अभियोक्ता कहता है कि दौरों में व्यस्त रहने के कारण उसने यह पत्रिका नहीं पढ़ी। माननीय जज ने लिखा है कि मुझे भय है कि इस स्पष्टीकरण पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

अभियोक्ता ने इस पैरा के दूसरे भाग पर आपत्ति की है जिसमें कहा है कि वह महासम्मेलन से ऐसी ऐसी रकमें ले लेता था जो नहीं लेनी चाहिये थीं।

श्री मिस्तरी ने ऐसे कई उदाहरण गिनाये हैं जिनसे मैं भी यह अनुभव करता हूँ कि अभियोक्ता को यह रकमें महासम्मेलन से नहीं लेनी चाहिये थीं। यह, वह ५००) की रकम है जो उसने मीटिंग की मांग करने वाले सदस्यों के विरुद्ध निषेधाज्ञा के मुकदमों में खर्च करने के लिए अपनी जेब से पं० ओंकारप्रसाद को देहली भेजी थी। इस सम्बन्ध में यह स्मरण रखना चाहिये कि इस विषय पर श्री गुरुदत्त के साथ अपने पत्र-व्यवहार में अभियोक्ता ने यह स्पष्ट कर दिया था कि दोनों में से कोई पार्टी भी इस मुकदमे बाजी में महासम्मेलन का रुपया खर्च नहीं करेगी। परन्तु इन्दौर अधिवेशन में २०००) कानूनी व्यय के लिए स्वीकार होने पर अभियोक्ता ने उक्त ५००) सम्मेलन से ले लिया।

वैधानिक रूप से जो बजट पास होता है वह आगामी वर्ष के खर्च के लिये होता है। परन्तु इन्दौर अधिवेशन में जो दो हजार रुपये की रकम कानूनी व्यय के लिये स्वीकृत हुई अभियोक्ता और उसके साथियों ने १५३०≡)॥ का अपना पिछला कानूनी व्यय उसमें से वसूल कर लिया। इस मद की स्वीकृति के समय श्री आसुतोष मजूमदार ने जब यह प्रश्न किया कि यह २०००) की रकम भावी कानूनी व्यय के लिये है अथवा पहले हो चुके व्यय के लिये है तो प्रधान मन्त्री ने यह उत्तर दिया कि जो जैसे बिल आवेंगे चुका दिये जायेंगे।

यह एक वाक्छल था। वास्तव में इस प्रकार का कानूनी व्यय स्वीकृत न था, जब यह प्रस्ताव पास किया गया उससे प्रकट होता है कि अभियोक्ता और उसके साथियों का रुपया वापस लेने का यह तरीका अनियमित था। अभियोक्ता ने अपनी गवाही में कहा है कि कुछ और लोगों का रुपया भी उस समय खर्च हुआ था उन सबों ने वापस ले लिया, अतः अभियोक्ता ने भी ले लिया। यदि इस बात को ठीक भी मान लिया जाय तो भी मैं नहीं समझता कि क्योंकि अभियोक्ता ने स्वयं यह रुलिंग दिया था, अतः नैतिकता के नाते यह ५००) अस्वीकार करने में उसे क्या बाधा थी। अभियोक्ता के पास इस बात का कोई स्पष्टीकरण नहीं, इस लिये यह इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि अभियोक्ता किस प्रकार महासम्मेलन से ऐसी ऐसी रकमें ले लेता था जो उसे नहीं लेनी चाहिये थीं।

माननीय न्यायाधीश ने १९५३ में पं० शिवशर्मा की गोहाटी यात्रा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि चुनाव की देख भाल के लिये कुछ घण्टों के लिये असाम जाकर ठहरना। ऐसा चुनाव जो उसके बिना भी हो सकता था और जिसमें उसकी (पं० शिवशर्मा की) उपस्थिति आवश्यक नहीं थी। केवल इस थोड़े काल के लिये गोहाटी जाना यह महासम्मेलन के धन को नष्ट करना मात्र है।

अतः इस पैरा के दूसरे भाग में लेखक का कथन वास्तविक है महासम्मेलन का रुपया व्यर्थ नष्ट करने का यह उदाहरण स्पष्ट रूप से सिद्ध है।

इसलिये मेरा मत है कि यह आरोप निराधार एवं अन्याय युक्त नहीं है।

अनुबन्ध संख्या २७ का निर्णय

इस अनुबन्ध का फैसला लिखते हुए विद्वान न्यायाधीश ने पं० जीवराम कालीदास और पार्थनारायण पण्डित के प्रधान चुने जाने की घटनाओं की चर्चा की और लिखा है कि पार्थनारायण का चुनाव स्थाई समिति ने विधान के धाराओं की धज्जियां उड़ाते हुए कर लिया। अभियोक्ता ने उसका नाम प्रस्तावित किया और अपने भाषण में कहा कि हम अभी यहीं प्रधान का चुनाव करेंगे, जिससे प्रकट होता है कि वह उसे चुनवाने के लिये तैयार होकर आया था। इसलिये यह इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि अभियोक्ता की मर्जी का आदमी प्रधान की कुर्सी पर बिठाने के लिये किस प्रकार विधान की धज्जियाँ उड़ाई गईं। इससे यह भी प्रकट होता है कि अनुबन्ध ३ में जब अभियोक्ता को (साम, दाम, दण्ड, भेद के अतिरिक्त) अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलाओं का ज्ञाता भी लिखा गया तो लेखक का संकेत इन घटनाओं की ओर था और मेरी सम्मति में यह घटनायें उस व्यङ्ग के संकेत को न्याय युक्त ठहराती हैं।

"कृत्या" शब्द की चर्चा करते हुए विद्वान् न्यायाधीश ने लिखा कि इसका अभिप्राय यह है कि अभियोक्ता ने महासम्मेलन में विग्रह रूपी दैत्य को जन्म दिया, जो सम्मेलन के लिये घातक सिद्ध हो रहा है। अभियुक्त ने इसे न्याय संगत ठहराने का प्रयत्न किया है और मेरा विचार है कि उसमें उसे सफलता मिली है।

विरोध और मतभेदों से निश्चित ही संस्था की हानि होती है। अभियोक्ता का कथन है कि महासम्मेलन के साथ उसके सम्बन्ध काल में महासम्मेलन की आर्थिक स्थिति सुधर गई थी। किन्तु महासम्मेलन का कोष जिस धन से बढ़ा है वह विद्यापीठ का धन है, महासम्मेलन का नहीं। साथ ही यह बात भी है कि संस्था का जीवन केवल उसकी आर्थिक स्थिति पर ही निर्भर नहीं होता, अपितु संस्था के सदस्यों में ऐक्य, संगठन की भावना तथा संस्था के लक्ष्यों की पूर्ति के लिये कार्यकर्ताओं के दृढ़ संकल्प के आधार पर ही वह फलती फूलती है। परन्तु इतने लम्बे काल में जबकि अभियोक्ता का सम्पर्क महासम्मेलन से रहा इन सब बातों का उसमें अभाव रहा।

इस प्रकार सब पर विचार करते हुए मैं समझता हूँ कि अनुबन्ध सं० ६ और २७ अपवादों से विधिरक्षित हैं।

अनुबन्ध संख्या १ का निर्णय—यह अनुबन्ध सारे निबन्ध का निचोड़ है और इसमें जो कठोर पौराणिक उपमा दी गई है इसके अतिरिक्त इसका अभिप्राय यह है कि अभियोक्ता का नेतृत्व और प्रभाव महासम्मेलन के लिये बहुत हानिकारक रहा है और इसके लिये घातक सिद्ध हुआ है। यह अर्थ दर्शाने के लिये 'राहु' और 'कलंक' शब्द अधिक सख्त हैं। परन्तु केवल एक सख्त उपमा का प्रयोग इस अनुबन्ध में होने से मैं यह परिणाम नहीं निकल सकता कि यह अनुबन्ध द्वेष-भावना से लिखा गया अथवा इसे लिखते समय उचित सावधानी नहीं बर्ती गई, यदि वह दोषारोप पर्याप्त सत्य हों अथवा पर्याप्त सत्यों से युक्ति पूर्वक समझ में आने वाले तथ्यों पर आधारित हों।

सख्त भाषा का प्रयोग करने के आरोप से तो स्वयम् अभियोक्ता भी मुक्त नहीं; क्योंकि राजकुमारी अमृतकौर की नीति के सम्बन्ध में बोलते हुए उसने अपने एक भाषण में अमृत कौरीयमारकाण (Amrit kunverian Frankastine) शब्द से पुकारा था। यह उपमा भी अभियुक्त द्वारा दी गई उपमा से अधिक कठोर नहीं तो तद्वत अवश्य है। अन्तर केवल इतना है कि अभियुक्त ने पौराणिक उपमा का प्रयोग किया, जबकि अभियोक्ता ने अपेक्षाकृत आधुनिक उपमा का चयन किया। इस प्रकार एक अन्य स्थान पर उसने राजकुमारी अमृतकौर के लिये गाली देने वाली जैसी भाषा प्रयुक्त की। अनुबन्ध संख्या ६ के फैसले से प्रकट होगा कि अभियुक्त द्वारा अभियोक्ता के नेतृत्व और प्रभाव के सम्बन्ध में अभियुक्त की नुकताचीनी न तो अन्याय है न अनुचित और वह पर्याप्त सत्यपूर्ण तथ्यों पर आधारित है। वह मतभेद और फूट जिसका कारण अभियोक्ता था महासम्मेलन पर एक कलंक है अन्त में जाकर इसकी जड़ों को हिला देगा और इसे बिल्कुल समाप्त कर देगा। यह अभिप्राय है जो इस अनुबन्ध में लेखक ने व्यक्त किया है अतः यह अनुबन्ध भी यद्यपि सख्त भाषा और सख्त उपमा लिये हुए हैं परन्तु मेरी सम्मति में यह भी विधिरक्षित है।

अभियोक्ता की ओर से दी गई इस दलील का कि 'यह लेख द्वेष भावना से लिखा गया है' इसके सम्बन्ध में अदालत ने लिखा कि अभियुक्त स्वयं एक वैद्य है और एक आयुर्वेदिक पत्र का प्रकाशन कर रहा है, अतः ऐसे पत्र में आयुर्वेद तथा आयुर्वेद महासम्मेलन एवं आयुर्वेद महासम्मेलन से सम्बन्धित अभियोक्ता के कार्यों पर इसमें लेख लिखना जनहित एवं महासम्मेलन के हित के लिये है। यदि उन लेखों में उसने महासम्मेलन से सम्बन्धित अभियोक्ता के कार्यों पर नुकताचीनी की है तो इससे किसी द्वेष भावना का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। माननीय न्यायाधीश ने इस सम्बन्ध में आगे लिखा कि अनुबन्ध सं० ९ के अतिरिक्त शेष अनुबन्धों में अभियुक्त ने अभियोक्ता के विरुद्ध टीका टिप्पणी की है, इस टीका टिप्पणी में कहीं भी औचित्य और युक्ति युक्तता की सीमा का उल्लंघन नहीं किया और सदा उसकी टीका टिप्पणी सत्य घटनाओं से अथवा इन सत्य घटनाओं के आधार पर समझ में आने वाले तथ्यों पर आधारित रही हैं।

विद्वान न्यायाधीश ने अपने ६१ पृष्ठ के फैसले के सार रूप से अन्त में यह लिखा है कि 'इसलिये मेरी सम्मति में यह सारा लेख उचित सावधानी से लिखा गया और जनहित के लिये लिखा गया है और जिन अंशों पर

[शेष ट्राइटल के तीसरे पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सूचीपत्र से पूर्व के सूचीपत्र रद्द किए गये। १-१०-५७

जगत् प्रसिद्ध व अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन द्वारा सम्मानित तथा म्युनिस्पिल कमेटियों, डिस्ट्रिक्ट बोर्डों, धर्मार्थ औषधालयों के लिये मान्य

व

पञ्जाब सरकार द्वारा स्वीकृत

पञ्जाब आयुर्वैदिक फार्मेसी

का

षाण्मासिक-सूचीपत्र

कूपीपक्करस-निर्माण-विज्ञान, आसव-विज्ञान, क्षार-निर्माण-विज्ञान, मन्थरज्वर-विज्ञान, त्रिदोष-मीमांसा, ज्वर-मीमांसा, सृष्टि-रचना शास्त्र, व्याधि-मूल-विज्ञान, रोग-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, औषध-परीक्षा विज्ञान, भस्म-विज्ञान आदि ग्रन्थों के लेखक और मासिक "आयुर्वेद-विज्ञान" के

सम्पादक

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

अध्यक्ष—पंजाब आयुर्वैदिक फार्मेसी,

६०-६१, अकाली मार्केट, अमृतसर

दूसरा पता-

पंजाब आयुर्वैदिक फार्मेसी, खारी बावली, देहली।

१००वीं आवृत्ति, } संस्थापित १९१९ [१ अक्टूबर १९५७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एजेन्सी के नियम

(१) आयुर्वैदिक रस, भस्म, आसव, अरिष्ट, घृत, तैल, पाक, अवलेह, चूर्ण, गुटिका आदि औषधियां ही एजेन्सी में दी जायेंगी। (वनस्पतियां, खनिज तथा प्राणिज द्रव्य, क्षार और शुद्ध वस्तुयें इसमें शामिल नहीं)

(२) कोई भी विक्रेता या वैद्य जो एक बार १००) रु० की उक्त बनी औषधियों का आर्डर देगा वह एजेण्ट स्वीकृत होगा।

(३) कम्पनी की आविष्कृत औषधियां जो व्यक्ति १००) रु० की एक बार खरीदेगा वह भी एजेण्ट स्वीकृत होगा।

(४) जो व्यक्ति प्रस्तुत और आविष्कृत दोनोंका मिश्रित आर्डर १००) रु० का देगा वह भी एजेण्ट स्वीकृत होगा।

(५) मंगाई हुई औषध ६ मास तक एजेण्ट से न बिक सके तो ऐसी औषध--यदि ठीक पैकिंग में बन्द हो—एजेण्ट अपने खर्च पर उसे वापस कर उसके स्थान पर अन्य औषध मंगा सकता है।

(६) सूची पत्र में अङ्कित जिस वजन के मूल्यका पैकट नियत होगा उतनेही वजन के पैकट उस मूल्य पर भेजे जाएंगे। छोटे वजनके पैकट—जिनकामूल्य अधिक है यथा ढाई ढाई तोला, पांच पांच तोलों के पैकट, २० तो० के पैकट के भाव पर नहीं भेजे जाएंगे। १ तो० का मूल्य ५ तो० का $\frac{१}{४}$ होगा।

(७) औषधियां वी० पी० पार्सल से या बैंक द्वारा भेजी जायंगी। उधार या जामन पर नहीं भेजी जाएंगी।

(८) १०००) रु० नकद जमानत जमा कराने पर माल उधार पर भेजा जा सकता है।

एजेंसी कमीशन दर और सुविधा

(१०) धारा नं० २ के अनुसार बनने वाले एजेण्टों को कम्पनी की प्रस्तुत आयुर्वैदिक औषध पर १२$\frac{१}{२}$ प्रतिशत।

(११) धारा नं० ३ के अनुसार बनने वाले एजेण्टों को कम्पनी की आविष्कृत औषध पर २५ प्रतिशत।

(१२) धारा नं० ४ के अनुसार बनने वाले एजेण्टों को कम्पनी की मिश्रित औषध पर १२$\frac{१}{२}$ प्रतिशत।

(१३) जो व्यक्ति सौ रुपये का बना माल जब २ मंगावेगा पैकिङ्ग खर्च और गुडस ट्रेन का किराया फ्री होगा अर्थात F. O. R. जहां ग्राहक मंगावेगा। यदि ग्राहक पार्सल ट्रेन से माल मंगावेगा तो आधा किराया उसे देना होगा।

नोट—नं० १३ का यह नियम मद्रास तथा आन्ध्र राज्यों के ग्राहकों, ऐजण्टों पर लागू न होगा।

(१४) ५०) रु० अथवा अधिक के माल पर पैकिङ्ग खर्च माफ होगा। इससे कम माल मंगाने वालेको यह सुविधा नहीं दी जाएगी।

(१५) एजेण्ट बन जाने पर बने माल के थोड़े से थोड़े आर्डर पर भी उक्त हिसाबसे बराबर कमीशन मिलता रहेगा।

(१६) विज्ञापन के लिये हमारी फार्मेसी इस समय सिवाय सूचीपत्र के और साधन नहीं जुटाती। प्रचार का प्रबन्ध स्वयम् एजेण्ट अपने खर्चे से कर सकता है।

विशेष बातें नोट करें

(१७) प्रत्येक आर्डर के साथ पेशगी आनी आवश्यक है। अथवा एकबार १०) रुपये स्थायी ग्राहक के रूप में जमा करा छोड़ें। उन्हें ग्राहक नम्बर मिल जायगा, ऐसे ग्राहक को फिर पेशगी भेजने की जरूरत न होगी।

(१८) यहां से पैकिंग अच्छी तरह देखकर किया जाता है। पोस्ट या रेल कर्मचारियों की असावधानी से माल की जो हानि हो जाएगी उसकी जिम्मेवारी फार्मेसी की नहीं होगी। हां प्रामाणिक व्यक्ति के सामने बन्द माल का पैकिंग खोलने पर कोई माल कम होगा तो उसकी पूर्ति की जा सकती है।

मैनेजर

ग्रन्थ संकेत

र० प्र० सु०	रस प्रकाशसुधाकर	फा० वि०	फार्मेसी विधि	रसे० सं०	रसेन्द्रसार संग्रह	र० यो० सा०	रसयोग-सागर
यू० वि०	यूनानी विधि	बृ० यो०	बृहदयोग-तरंगिणी	भै० र०	भैषज्य रत्नावली	रसा० सं०	रसायन संग्रह
आ० प्र०	आयुर्वेद प्रकाश	र० र० स०	रसरत्न-समुच्चय	वै० सा० सं०	वैद्यकसार संग्रह	च०	चरक
भा० प्र०	भावप्रकाश	शा० ध०	शार्ङ्गधर	र० चं०	रसचण्डांशु	वै० जी०	वैद्यजीवन
र० रा० सु०	रसराज सुन्दर	यो० र०	योगरत्नाकर	च० द०	चक्रदत्त	र० हृ०	रसहृदय
वै० मृ०	वैद्यामृत	यो० त०	योगतरंगिणी	यो० चि०	योगचिन्तामणि	भा० र०	भारतीय रसायनशास्त्र
र० का०	रसकामधेनु	[illegible]	[illegible]	नि० र०	निघण्टु-रत्नाकर		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्जाब आयुर्वैदिक फार्मेसी अमृतसर

का

सूचीपत्र

भस्में

नाम	२०तो.	१०तो.	५तो.	२½तो.	१तो
अकीक (यू० वि०)	१४)	७॥)	४)	२)	१)
अभ्रक वज्र (भा.प्र)२१पु.	२०)	१०॥)	६)		
अभ्रक वज्र भ. (आ.प्र.)६०,,				४॥)	२)
अभ्रक श्वेत (र.रा.सु.)	३)	१॥।)	१)		
कान्तलोह भस्म (र.रा.सु.)	१०)	५॥)	३)		
कांस्य भस्म (आ.प्र.)	१२)	६॥।)	३॥।)		
कपर्दिका भस्म (आ.प्र.)	३)	१॥।)	१)		
कसीस भस्म (रसे. सं)	३)	१॥।)	१)		
कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म (वै.मृ.)	१४)	७॥)	४)		
केकड़ा भस्म (यू.वि) रक्तष्ठीवने	१६)	९)	५)		
गोमेद भस्म (र.का.) मस्तिष्करोगे				२४)	१०)
जहर-मोहरा भस्म (यु.वि.)	३)	१॥।)	१)		
ताम्र सोमनाथी भस्म (र. रा. सु.)	२०)	१०॥)	६)		
ताम्रकूपीपक्व भस्म (र. रा. सु.)	२०)	१०॥)	६)		
तीक्ष्णलोह भस्म (फा० वि०) शक्तिवर्द्धक				५॥)	२॥)
तुरमली भस्म (फा० वि०) ,,					४८)
तुत्थ भस्म (र०रा०सु०)	७)	३॥।)	२)		
त्रिवंग भस्म (आ०प्र०)२१ पुटी	२०)	११)	६)		
दानायेफिरंगभस्म (यू०वि०)					६)
नागभस्म (आ०प्र०)५० पुटी				५॥)	२॥)
नागभस्म पीत (वृ० यो०)	८)	४॥)	२॥)		
नागभस्म श्याम (र०का०)	१०)	५॥)	३)		
नीलमभस्म (र०का०)उन्मादे					१२)
नीलांजन भस्म(सुरमा) (भा०र०)	८)	४॥)	२॥)		
पन्नाभस्म (यू०वि०) मस्तिष्करोगे					१५)
पुखराज भस्म (र०का०) हृद्रोगे					२०)
प्रवालभस्म अग्निपुटी (आ० प्र०)	१४)	७॥)	४)		
प्रवालभस्म चन्द्रपुटी (यू०वि०)	१०)	५॥)	३)		
पीतलभस्म (आ. प्र.)	४)	२॥)	१॥)		
फिरोजाभस्म (यू०वि०) हृद्रोग					९)
फौलादभस्म अपूर्व (फा०वि०) शक्तिवर्धने					१२)

भस्में

	२०तो.	१०तो,	५तो.	२॥तो.	१तो०
वंगभस्म हरितालेन (आ. प्र.)	१५)	६)	५)		
वंग भस्म श्वेत (र. रा. सु.)	१४)	७॥)	४)		
बेरपत्थर भस्म (यू० वि०)	१०)	५॥)	३)		
मयूर पुच्छभस्म (र० रा० सु०) छर्दिरोगे				४॥)	२)
मण्डूरभस्म (र० रा० सु०)	४)	२॥)	१॥)		
माणिक्यभस्म (यू० वि०) हृद्रोगे					६)
मृगशृङ्ग भस्म (शा. ध.)	४)	२॥)	१॥)		
मुक्ता भस्म (र०का०)शक्तिवर्द्धने	९०) रु० तोला	८) माशा			
मुक्ता भस्म चन्द्रपुटी (यू०वि०)	६०) ,, ,,	८) माशा			
यशद भस्म (यो० र०)	८)	४॥)	२॥)		
रजतभस्म (चांदीभस्म)हरितालेन				१४)	६)
रजतभस्म (चांदी भ०) पारदयोगेन				१४)	६)
राजावर्तभस्म (यू०वि०) उन्मादरोगे					५)
रौप्यमाक्षिकभस्म (र० का०)	७)	३॥।)	२)		
लहसुनिया भस्म (फा. वि.)					५)
लोहभस्म हिंगुलयोगेन(आ०प्र०)	१४)	७॥)	४)		
लोहभस्म स्वयमग्नि(र. रा. सु.)	१२)	६॥)	३॥)		
लोहभस्म वनस्पति (फा. वि.)	८)	४॥)	२॥)		
वैक्रांतभस्म (रसा. सं.) मस्तिष्करोगे				४॥)	२)
शंख नाभि भस्म (र. का.)	३)	१॥।)	१)		
सर्पास्थि भस्म (फा. वि,) कण्ठमालाव्रणे				४॥)	२)
संगयशव भस्म (यू. वि.)	१६॥)	९)	५)		
संखियाभस्म (फा. वि.) शक्तिवर्द्धने				१२)	५)
संगजराहत भस्म (आ. प्र.)	३)	१॥।)	१)		
स्वर्णभस्म (शा. ध.) रसायने					१५) माशा
स्वर्णमाक्षिकभस्म (र. रा. सु)	७)	३॥।)	२)		
सीपभस्म(मोती) (र. रा. सु.)	७)	३॥।)	२)		
सीपभस्म (र. रा. सु.)	३)	१॥।)	१)		
सुरमा श्वेत भस्म (फा. वि.)	२)	१।)	॥।)		
हरताल गोदन्ती भस्म (आ. प्र.)	१॥)	॥।=)	॥)		
हरताल पत्राख्य भस्म					५)
हिंगुलभस्म (फा. वि.) क्लीवत्वरोगे				७)	३)
हीरा (वज्र) भस्म (आ. प्र.) सर्वरोगे	३०) प्रति रत्ती				

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस, रसायन, गुटिका, गुग्गुल आदि

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो
अमीररस (सि भैं.म.) उपदंशरोगे				१२)	५)
अगस्तिसूतराज (वृ. यो.) ग्रहण्याधिकारे				४॥)	२)
अग्निकुमार वृ. (रसे. सं.) अजीर्णे	१४)	७॥)	४)		
अग्निसून (रसा. सं.) ग्रहण्याम्	१०)	५॥)	३)		
अग्निमुख (नि. र.) अग्निमांद्ये	८)	४॥)	२॥)		
अग्निरस (र. र. स.) कासे, उरःक्षते	८)	४॥)	२॥)		
अग्नितुण्डीरस (भै. र.) उदर रोगे	१२)	६॥)	३॥)		
अजीर्णकण्टक (भै. र.) अजीर्णे	१४)	७॥)	४)		
अजीर्णारि (र. रा. सु) अजीर्णे	१०)	५॥)	३)		
अतिविषादिगुटिका (र. चं) बालरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
अपचिविनाशी (फा.वि.) अपचिरोगे	१०)	५॥)	३)		
अश्वकंचुकी (वै.सा.सं.) सर्वरोगे	१८)	९॥)	५)		
अर्शोघ्नी वटी (फा. वि.) रक्तार्शे	७)	३॥।)	२)		
अश्विनीकुमार (अनु. तं.) सर्वरोगे	१८)	९॥)	५)		
आनन्दभैरव (रसेन्द्र) ज्वरातिसारे	१२)	६॥)	३॥)		
आमवातारिरस (भै. र.) आमवाते	१४)	७॥)	४)		
आमवातेश्वर (वृ० भै. र.) "	१४)	७॥)	४)		
आरोग्यवर्द्धनी (र. र.स.) कुष्ठाधिकारे	१४)	७॥)	४)		
इच्छाभेदी (रसे. सं.) उदररोगे	१२)	६॥)	३॥)		
उपदंशकुठार (र.चं) उपदंशरोगे	१४)	७॥)	४)		
एलादिवटी (च.द) कासाधिकारे	४॥)	२॥।)	१॥)		
एकांगवीर (र.रा.सु) वातरोगे	१५)	८)	४॥)		
कनकसुन्दर (रसे.सं.) अतिसारे	१२)	६॥)	३॥)		
कफकेतु (रसे.सं) कफाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
कफचिन्तामणि (रसे.सं) कफाधिकारे	१५)	८)	४॥)		
कफकुठार (र.प्र.सु) श्लेष्मरोगे	१४)	७॥)	४)		
कर्पूरादिरस (र.रा.सु) प्रमेहाधि.	१४)	७॥)	४)		
क्रव्यादिरस वृ. (र.रा.सु) उदररोगे	२५)	१४)	७॥)		
कस्तूरी भैरव वृ. (भै. र.) ज्वराधिकारे					१८)
कस्तूरीभूषण (भै. र.) सर्वरोगे				१६)	७)
कांचनारगुग्गुल (शा.ध) कण्ठमाला	३॥)	२)	१)		
कांकायनी गुटिका (यो.र.) अर्शरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
कामदुघामोतीयुक्त (रसा.सं.) अम्लपित्ते				१८)	६)

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो.
कामदुघा (रसा.सं.) अम्लपित्ते	१६)	१०)	५॥)		
कासहर (फा.वि.) कासरोगे	४॥)	२॥।)	१॥)		
कालकूट रस (वै.चि.) सन्निपाते				७)	३)
कालारिरस (यो.र.) वातव्याधौ	१४)	७॥)	४)		
किशोर गुग्गुल (भै.र) वातरक्ते	३॥)	२)	१)		
कुमारकल्याण (भै. र.) बालरोगे					४८)
केशरादिवटी (फा.वि.) जीर्णप्रतिश्याये				७).	३)
कृष्णमाणिक्यरस (र.रा.सुं) कुष्ठाधिकारे				७)	३)
कृमिधूलिजलप्लव (रसे.सं.) कृमिरोगे.	१४)	७॥)	४)		
खदिरादिवटी (भै.र.) मुखरोगे	८)	४॥)	२॥)		
गगनादिलोह (रसे.सं) सोमरोगे	१५)	८)	४॥)		
गर्भपालरस (र.चं) गर्भिणीरोग	१२)	६॥)	३॥)		
गर्भविनोदरस (रसे.सं) गर्भिणीरोगे	१०)	५॥)	३)		
गर्भचिन्तामणि (भै.र.) सूतिकारोगे	२०)	१०॥)	६)		
गन्धकवटी (र.रा.सु.) जठररोगे	८)	४॥)	२॥)		
गन्धकरसायन (रसे.सं) रक्तविकारे	१६)	१०)	५॥)		
गन्धर्व रस (र.र.स) कम्पवाते	१५)	८)	४॥)		
गुल्मकालानल (भै.र.) गुल्मे	१२)	६॥)	३॥)		
गुल्मनशनरस (र.र.स.) गुल्मे	१०)	५॥)	३)		
गुल्मारिरस (र.का.) गुल्माधिकारे	१८)	९॥)	५)		
ग्रहणीकपाट (र.रा.सु) ग्रहण्याम	१५)	८)	४॥)		
गोक्षुरादिगुग्गुल (यो.र.) प्रमेह	४॥)	२॥।)	१॥)		
चर्तुमुख रस (रसे.सं) सन्निपाते	२०)	१०॥)	६)		
चन्दनादिलोह (भै.र.) जीर्णज्वरे	१८)	९॥)	५)		
चन्द्रप्रभावटी (शा.ध) प्रमेहाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
चन्द्रकला (भै.र.) प्रमेहाधिकारे	१५)	८)	४॥)		
चन्द्रामृत लोह (भै.र.) जीर्णकासे	१०)	५॥)	३)		
चिन्तामणि चतुर्मुख (भै.र.) सर्वरोगे				११)	५)
जयमंगलरस (भै.र.) ज्वराधिकारे					१८)
जातिफलादिग्रहणीकपाट (रसे.सं) ग्रहण्याम्				९)	४)
जीर्णज्वरारिरस (फा.वि.) जीर्णज्वरे	२५)	१४)	७॥)		
जौहररसकपूर (फा.वि.) उपदंशरोगे				९)	४)
जौहर त्रिविष (फा.वि.) उपदंशरोगे				९)	४)
जौहर दारचिकना (फा.वि.) उपदंशरोगे				७)	३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१तो.
नौहरसंखिया (फा.वि.) शक्तिवर्द्धने				७)	३)
जौहर संखिया पीलिका, वातरोगे				४॥)	२)
जौहर हरतालपत्राख्य, कुष्ठरोगे				९)	४)
जौहर नौसादर (स्वर्णवंग का) उदरविकारे				१=)	॥)
ज्वरघ्नी वटी (र.र.स.) ज्वरे	८)	४॥)	२॥)		
ज्वरमुरारि (भै.र.) सन्निपाते	१३)	७)	३॥)		
ज्वरार्यभ्रम् (भै.र.) जीर्णज्वरे	८)	४॥)	२॥)		
ज्वरांकुशच्चोकयुक्त(शा.ध.)विषमज्वरे	१०)	५॥)	३)		
ताम्र पर्पटी(रसे.सं.) ग्रहण्याम्	१९)	१०)	५॥)		
ताप्यादिलोह(रसे.सं.)रसायने				९)	४)
तालसिन्दूर(रसा. सं.) रक्तविकारे				९)	४)
त्वग्रोगान्तकवटी(फा.वि.) चर्मरोगे	७)	३॥)	२)		
त्रयोदशांगगुग्गुल (भै.र.) वातव्याधौ	७)	३॥)	२)		
त्रिभुवनकीर्ति (यो.र.) ज्वरे	१३)	७)	३॥)		
त्रिपुर भैरव (र.रा.सु.) नवज्वरे	८)	४॥)	२॥)		
त्रिवंगवटी (फा.वि.) स्वप्नदोषे				९)	४)
दावानलवटी (फा.वि.) सन्निपाते	२५)	१४)	७)		
दुर्जरजलजेता(र.च.)अजीर्णाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
दुग्धवटी नं.१ (भै.र.) अहिफेनयुक्त				१२)	५)
दुग्धवटी नं.२ (भै.र.) ग्रहण्याम्	१०)	५॥)	३)		
धात्रीलोह (रसे.सं.) कामलायाम्	१३)	७)	३॥)		
नवायसलोह (र.रा.सु.) पाण्डुरोगे	१५)	८)	४॥)		
नारायणज्वरांकुश(यो.र.) ज्वरे	१०)	५॥)	३)		
नाराचरस (रसे.स.) उदररोगे	१३)	७)	३॥)		
नागरस कस्तूरीयुक्त(र.च.)श्वासे				१२)	५)
नित्यानन्द (भै.र.) श्लीपदे	१५)	८)	४॥)		
नित्योदित रस (रसे.सं.)अर्शरोगे	१०)	५॥)	३)		
नृपतिवल्लभरस(र.रा.सु.)ग्रहण्याम्	१५)	८)	४॥)		
पंचामृत पर्पटी(रसे.सं.)ग्रहण्याम्	१९)	१०)	५॥)		
पंचवक्त्र रस (रसे.सं.)सन्निपाते	१०)	५॥)	३)		
पारे की गोली (वाजीकर) एक गोली का मूल्य					३)
प्रतापलंकेश्वर(वृ.यो.) सूतिकारोगे	१५)	८)	४॥)		
प्रदरान्तकलोह(फा.वि.)प्रदरानुभूत	२०)	१०॥)	६)		
प्रदरारिवटी (फा.वि.) श्वेतप्रदरे	१३)	७)	३॥)		
प्रदररिपु (रसे.सं.) प्रदरे	१३)	७)	३॥)		

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२॥तो.	१ तो.
प्राणदागुटिका (भै.र.) अर्शरोगे	४॥)	२॥)	१॥)		
प्रमदानन्दरस(रसे.सं.) रसायने	१९)	१०)	५॥)		
प्रवालपंचामृत(यो.र.)गुल्माधिकारे				२७॥)	१२)
पुनर्णवागुग्गुल(भै.र.)शोथाधिकारे	३॥)	२)	१।)		
पुनर्णवादिमण्डूर(भै.र.)पाण्डुरोगे	८)	४॥)	२॥)		
पुष्पधन्वारस(भै.र.)रसायने				७)	३)
पुटपक्वविषमज्वरान्तकलोह(भै.र.)ज्वराधिकारे				१८)	८)
पूर्णचन्द्ररस वृ. (रसे.सं.)रसायनाधिकारे				२२॥)	१०)
वालरस(र.रा.सु.)वालरोगे	१०)	५॥)	३)		
वालार्क रस(रसा.सं.)वालरोगे				७)	३)
वालशोषान्तकवटी(फा.वि.)वालशोषे	१०)	५॥)	३)		
वोल पर्पटी (रसा.सं.) रक्तपित्ते	१९)	१०)	५॥)		
वोलवद्धरस (वृ.यो.त.)अर्शाधिकारे	१०)	५॥)	३)		
मण्डूरवटी (भै.र.) पाण्डुरोगे	८)	४॥)	२॥)		
मल्लसिन्दूर (रसा.सा.) सर्वरोगे				९)	४)
मन्मथाभ्ररस (रसे.सं.) वाजीकरणे				९)	४)
मरिचादि वटी(शा.ध.) कासरोगे	३)	१॥)	१)		
मृत्युञ्जय रस(भै.र.) सन्निपाते	१०)	५॥)	३)		
मृत्युञ्जयलोह(रसे.सं.) उदराधिकारे	१४)	७॥)	४)		
मृतप्राणदायी रस(नि.र.) ज्वरे	१६॥)	९)	५)		
मृगाङ्क स्वर्णसंयुक्त (शा.ध.) क्षये					४८)
ज्वरांकुश वृ.(भै.र.)ज्वराधिकारे	१०)	५॥)	३)		
योगराज गुग्गुल महान् १। लक्ष चोट का—समस्त धातुयुक्त (शा.ध.) वातव्याधौ	१६॥)	९)	५)		
योगराज गुगुल साधारण (शा.ध.)	३॥)	२)	१।)		
यकृदरिलोह वृ. (भै.र.)यकृताधिकारे	१०)	५॥)	३)		
रजःप्रवर्तिनी (भै.र.) ऋतुकष्टे	१०)	५॥)	३)		
रसचन्द्रिकावटी (रसे.सं.) शिरोरोगे	१३)	७)	३॥)		
रक्तपित्तकुलकण्डन(र.रा.सु.)रक्तपित्ते	१६)	९)	५)		
रसमाणिक्य (तालवाला)रक्तविकारे	१४)	७॥)	४)		
रसमाणिक्य(र.रा.सु.) कुष्ठाधिकारे				४॥)	२)
रससिन्दूर द्विगुण (र.का.)	१८)	९॥)	५)		
रससिन्दूरचतुर्गुणगन्धकजीर्ण				४॥)	२)
रससिन्दूर षड्गुणगन्धकजीर्ण				९)	४)
रसपर्पटीहिंगुलोत्थ(र.रा.सु.)ग्रहण्याम्	१८)	९॥)	५)		
रसपर्पटी विशुद्धरसेन				७)	३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२½तो.	१तो.
रामबाणरस (भै.र.) अजीर्णाधिकारे	७)	३।।।)	२)		
राजचण्डेश्वर (र.चं.) सर्वरोगे	१५)	८)	४।।)		
राजमृगाङ्क (शा.ध.) क्षयरोगे					३६)
लवंगादि वटी (वै.जी.) कासरोगे	७)	३।।।)	२)		
लक्ष्मीनारायण वृ.(रस.योग.द्वितीय)रत्नोपरत्नयुक्त					८४)
लक्ष्मीनारायणरस(र.चं.)वातरोगे	२०)	१०।।)	६)		
लक्ष्मीविलासवृ. (र.रा.सु.)शिरोरोगे	१६।।)	९)	५)		
लशुनादि वटी (शा.ध.)वातरोगे	४।।)	२।।)	१।।)		
लीलावतीवटी(र.रा.सु.)उदररोगे	१२)	६।।)	३।।)		
लोकनाथरस वृहत् (शा.ध.) क्षये	१२)	६।।)	३।।)		
लोकनाथ रस लघु (शा.ध.) क्षये	७)	३।।।)	२)		
लोहरसायन (वं.से.) रसायने	२५)	१४)	७।।)		
लोह पर्पटी (रसे.सं.) सर्वरोगे	१९)	१०)	५।।)		
वातगजांकुश (रसे.सं.) वातरोगे	२०)	१०।।)	६)		
वातविध्वन्स (वृ.यो.त.)वातव्याधौ	२०)	१०।।)	६)		
वसन्तकुसुमाकर (शा.ध.) सर्वरोगे					२४)
विश्वतापहरणरस (र.रा.सुं.)सन्नि.	१९)	१०)	५।।)		
विषमुष्टिवटी (फा.वि.) आमवाते	१०)	५।।)	३)		
विजयपर्पटी (भै.र.) ग्रहण्यधिकारे					१५)
विषमज्वरान्तकलोह(भै.र.) ज्वराधि.	२०)	१०।।)	६)		
वंगेश्वर वृहत (भै.र.)प्रमेहाधिकारे					१८)
व्योषादि वटी (यो.चि.) कासे	३)	१।।)	१)		
श्वासकुठार वृ. (र.रा.सु.)श्वासे	१३)	७)	३।।।)		
शम्बूकादिवटी(भै.र.) शूलाधिकारे	८)	४।।)	२।।)		
श्वासारिलोह (भै.र.)श्वासे	८)	४।।)	२।।)		
श्वासान्तकरस (फा. वि.) श्वासे	१४)	७।।)	४)		
शिरःशूल वज्रारि(भै.र.) शिरःशूले	८)	४।।)	२।।)		
शिलासिन्दूर (र.रा.सुं.) कुष्ठरोगे				९)	४)
शीतगजकेसरी(भा.प्र.)शीतज्वरे	१३)	७)	३।।।)		
शीतवातेश्वर(फा.वि.)हृदयावसादे				४।।)	२)
शीतारिरस (भै.र.)ज्वराधिकारे	१३)	७)	३।।।)		
शीतांकुश रस (र.प्र.)चातुर्थिकज्वरे				४।।)	२)
शूलवज्रणी (रसे.सं.) शूलाधिकारे	१०)	५।।)	३)		
शूलगजकेशरीताम्र (शा.ध.) शूलरोगे	२६)	१४)	७।।)		
शूलगजकेशरीवटी(फा.वि.)पार्श्वशूले	८)	४।।)	२।।)		
श्रृङ्गाराभ्ररस(रसे.सं.),कासे जीर्णज्वरे	१५)	८)	४।।)		

रस	२०तो.	१०तो.	५तो.	२।।तो.	१तो.
शोथ कालानल (भै.र.) शोथे	८)	४।।)	२।।)		
शंखवटी वृहत् (भै.र.) अग्निमान्द्ये	८)	४।।)	२।।)		
समीरगजकेसरी(र.रा.सु.)वातव्याधौ				७)	३)
समीरपन्नग रस(र.चं.) वातरोगे				११)	५)
सर्वांगसुन्दर (र.सं.) शूलरोगे				७)	३)
सर्वज्वरहरलोह (र.सं.)ज्वराधिकारे	१५)	८)	४।।)		
सिद्धप्राणेश्वर (रसे.सं.)ज्वरातिसारे	१४)	७।।)	४)		
सिद्धमकरध्वज (पिष्ट) स्वर्णभस्मयुक्त					७२)
सिंहनाद गुग्गुल(यो.चि.) वातरक्ते	४।।)	२।।)	१।।)		
सुखविरेचनी(फा.वि.) सुखविरेचने	१०)	५।।)	३)		
सूतिकाविनोद(भै.र.) सूतिकारोगे	१०)	५।।)	३)		
सूतशेखर(नि.र.) अम्लपित्ताधिकारे				२०)	६)
सौभाग्य वटी (भै.र.) कासज्वरे	१०)	५।।)	३)		
संजीवनी वटी (शा.ध.) अजीर्णे	८)	४।।)	२।।)		
स्मृतिसागर (यो.र.) अपस्मारे	२५)	१४)	७।।)		
स्वर्णचन्द्रोदय षड्गुणगन्धकजीर्ण					२४)
स्वर्ण पर्पटी (र.रा.सु.) क्षयाधिकारे					१८)
स्वर्णवसन्त मालती (भै.र.) क्षयरोगे					२४)
स्वर्णवंग नं० १ (र.रा.सु.) प्रमेहे				५।।)	२।।)
स्वच्छन्द भैरव(भै.र.) ज्वराधिकारे	१२)	६।।)	३।।)		
हुताशनरस (यो.र.) श्लेष्मरोगे	८)	४।।)	२।।)		
हृदयार्णव रस (यो.र.)हृद्रोगे	१३)	७)	३।।।)		

अंजन तथा नेत्रवर्ती

नाम वस्तु	५ तो.	१ तो.
चंद्रोदयावर्ती (शा.ध.) नेत्ररोगे	१।।)	।=)
चन्द्रप्रभावर्ती(यो.र.) नेत्ररोगे	१।।)	।=)
नागार्जुनीवर्ती (भै.र.) ,, धुन्धजालायां	३।।)	।।।=)
मुक्तादि महाञ्जन (यो.र.) नेत्ररोगे	७)	१।।)
नयनामृत सुरमा (शा.ध.) ,, ज्योतिवर्द्धने	९।।)	२)
सुरमाज्योतिवर्द्धक(फा.वि.) ज्योतिवर्धने	९।।)	२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसव अरिष्ट

नाम वस्तु	१०पौं.	५पौं.	२पौं.
अमृतारिष्ट (आयु. वे. सं) ज्वरे	१८)	९॥)	४)
अर्जुनारिष्ट (भै.र.) हृद रोगे	१८)	९॥)	४)
अशोकारिष्ट ,, ,, प्रदरे	१८)	९॥)	४)
अश्वगन्धारिष्ट (वं. से.) प्रमेहे	१८)	९॥)	४)
अभयारिष्ट (भै. र.) अर्शरोगे	१८)	९॥)	४)
कुटजारिष्ट ,, अतिसारे	१८)	९॥)	४)
खदिरारिष्ट(भै. र.) कुष्ठरोगे	१८)	९॥)	४)
जीरकाद्यरिष्ट (भै. र.) प्रसूतरोगे	१८)	९॥)	४)
दशमूलारिष्ट (शा.ध) प्रसूतरोगे	२२॥)	११॥)	५)
दशमूलारिष्ट (कस्तूरीयुक्त),,	३२॥)	१७)	७)
द्राक्षारिष्ट (शा. ध.) क्षये	१८)	९॥)	४)
रोहितकारिष्ट (भै.र.) प्लीहारोगे	१८)	९॥)	४)
लक्ष्मणारिष्ट (फा.वि)	२४)	१३॥)	६)
सारस्वतारिष्ट (भै. र.) मानसिकरोगे	२२॥)	११॥)	५)
सारिवाद्यरिष्ट (भै. र.) कुष्ठे, रक्तविकारे	१८)	९॥)	४)
उशीरासव (शा. ध.) रक्तपित्ते	१८)	९॥)	४)
कनकासव (भै. र.) श्वासरोगे	१८)	९॥	४)
कुमार्यासव (शा. ध.) उदररोगे	२२॥)	११॥)	५)
चन्दनासव (भै. र.) प्रमेहे	१८)	९॥)	४)
द्राक्षासव (शा. ध.) अर्शोदरे	१८)	९॥)	४)
पुनर्णवासव (भै. र.) शोथे	१८)	९॥)	४)
पिप्पल्यासव (शा. ध.) अर्शे, गुल्मे	२२॥)	११॥)	५)
लोहासव (शा. ध.) पाण्डुरोगे	१८)	९॥)	४)
लोध्रासव (गदनिग्रह) पाण्डु, अर्शे	१५)	८)	३॥)
शंखद्राव (र. का.) गुल्मे	१०तो. ४॥)	५तो. २॥)	
आसवनिर्माणार्थ किण्व (सुराबीज)	५ तोला का २)		

मृतसञ्जीवनी सुरासाधित आसव

नाम वस्तु	२½ तो.	१ तो
अहिफेनासव (भै. र.) अतिसारे	४॥)	२)
कर्पूरासव (भै. र.) विसूचिका रोगे	२।)	१)
मृगमदासव (भै. र.) सन्निपाते श्वासावेगे	१८)	८)

प्रसिद्ध अवलेह पाक

नाम वस्तु	२॥ सेर	१सेर	१पाव
कुटजावलेह (शा. ध.) अतिसारे	१३)	६)	१॥।)
कूष्माण्डावलेह (शा. ध.) रक्तपित्ते	१३)	६)	१॥।)
कंटकार्यवलेह (वं. से.) कासे	१३)	६)	१॥।)
च्यवनप्राशवलेह (च.) रसायने	१६॥)	७)	२)
भार्गी गुड़ (भै. र.) हिक्का, श्वासे	१३)	६)	१॥।)
मदनानन्दमोदक (र. रा. सु.) वाजीकरणे	२५)	११)	३)
मूसलीपाक (यो.चि.) क्लीवत्वे	२७॥)	१२)	३।)
वांसावलेह (भै. र.) क्षय, कासे	१३)	६)	१॥।)
श्लेष्मान्तक अवलेह (फा. वि.) शुष्कश्वासे कासे		१४)	४)
सौभाग्यशुंठी पाक (यो.चि.) प्रसूतारोगे	१३)	६)	१॥।)
सुपारीपाक (यो. चि.) प्रदररोगे	२१॥)	९)	२॥)
हरिद्रा खण्ड (भै. र.) शीतपित्ते	१३)	६)	१॥।)
हरीतकी खण्ड ,, शूले	१३)	६)	१॥।)

सिद्ध घृत व तेल

नाम वस्तु	१सेर	४औंस
फलघृत (चक्रदत्त) योनिरोगे	२०)	३)
ब्राह्मीघृत (चक्रदत्त) रसायने	१६)	२।)
महात्रिफलादि घृत (चक्रदत्त) नेत्र रोगे	२०)	३)

नाम वस्तु	२पौंड	४औंस
अर्क तेल (शा. ध.) कुष्ठे	८)	१।)
आमला तेल (फा. वि.) शिरोरोगे	१०)	१॥)
अपामार्गक्षार तेल (भै. र.) कर्णबधिरतायां	८)	१।)
इरिमेदादि तेल (शा. ध.) मुखरोगे	८)	१।)
कासीसादि तेल (शा. ध.) अर्शरोगे	१२)	१॥।)
केशराज तेल (फा. वि.) केशवर्द्धने	१०)	१॥)
चन्दनादि तेल (भै. र.) जीर्णज्वरे	१२)	१॥।)
दशमूल तेल (भै. र.) वातरोगे	८)	१।)
ब्राह्मी तेल (फा. वि.) बुद्धिवर्धनार्थे	१२)	१॥।)
भृंगराज तेल (भै. र.) क्षुद्ररोगे	१०)	१॥)
महानारायण तेल (शा. ध.) वातरोगे	२०)	३)
मरिचादि तेल (चक्रदत्त) कुष्ठे	१०)	१॥)
महालाक्षादि तेल (शा. ध.) जीर्णज्वरे	१२)	१॥।)
विषगर्भ तेल (यो. र.) वातरोगे	१०)	१॥)
शुष्कमूलाद्य तेल (धन्वन्तरि) कर्णस्रावे	१०)	१॥)
षटबिन्दु तेल (चक्रदत्त) शिरोरोगे	१२)	१॥।)
क्षार तेल (शा. ध.) कर्णशूले	१०)	१॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्रीय प्रचलित चूर्ण

नाम वस्तु	१सेर	४०तो.	२०तो.
अजमोदादि चूर्ण (शा. ध.) वातरोगे	५)	२॥)	१॥)
अग्निमुख (वं. से.) अजीर्णाधिकारे	८)	४॥)	२॥)
अपचिविनाशी (फा. वि.) कण्ठमालारोगे	८)	४॥)	२॥)
अविपत्तिकर (वं. से.) अम्लपित्ते	५)	२॥॥)	१॥)
अष्टांगलवण (च.) अग्निमांद्ये	७)	३॥॥)	२)
अश्वगन्धादि (शा. ध.) वाजीकरणे	५)	२॥॥)	१॥)
अर्कलवण (वं. से.) उदररोगे	१०)	५॥)	३)
उलट कम्बल चूर्ण, ऋतुकष्टे	८)	४॥)	२॥)
कामदेव चूर्ण (यो. र.) क्लीवत्वे	८)	४॥)	२॥)
गंगाधर बृहत् (शा. ध.) अतिसारे	५)	२॥॥)	१॥)
गोक्षुरादि चूर्ण (वा. भ.) वाजिकरणे	७)	३॥॥)	२)
चन्दनादि चूर्ण (यो. त.) प्रदरे, रक्तपित्ते	७)	३॥॥)	२)
ज्वरनाग मयूर चूर्ण (भै. र.) सर्वज्वरे	२८)	१५)	८)
तालीसादि चूर्ण (शा. ध.) ज्वरे, कासे	८)	४॥)	२॥)
दाड़िमाष्टक चूर्ण (शा. ध.) अरुचिरोगे	५)	२॥॥)	१॥)
न्यग्रोधादि चूर्ण	५)	२॥)	१॥)
नारसिंह चूर्ण (च. द.) क्लीवत्वे	७)	३॥॥)	२)
नारिकेल लवण (वं. से.) शूले	८)	४॥)	२॥)
पंचसम चूर्ण (शा. ध.) उदररोगे	५)	२॥॥)	१॥)
नारायण चूर्ण (शा. ध.) उदरविकारे	५)	२॥॥)	१॥)
प्रदरान्तक चूर्ण (फा. वि.) प्रदररोगे	५)	२॥॥)	१॥)
पुष्यानुगचूर्ण केसरयुक्त (भै. र.) प्रदरे	१४)	७॥)	४)
महाखाण्डव (शा. ध.) अजीर्ण रोगे	७)	३॥॥)	२)
लवणभास्कर (शा. ध.) अग्निमांद्ये	७)	३॥॥)	२)
लाईचूर्ण 'नायिका' (भै. र.) ग्रहण्याधिकारे	७)	३॥॥)	२)
लवंगादि वृ. (शा. ध.) ज्वरे, कासे	१६)	९)	५)
शिवाक्षार पाचन (फा. वि.) पाचने	८)	४॥)	२॥)
सारस्वतचूर्ण (भै. र.) मस्तिष्क रोगे	७)	३॥॥)	२)
सर्पगन्धा चूर्ण (ब्लडप्रेशर पर)	१२)	६॥)	३॥)
स्वादिष्ट विरेचन (फा. वि.) मृदुरेचने	५)	२॥॥)	१॥)
सितोपलादि चूर्ण (शा.ध.) कासे, क्षये	१३)	७)	४)
सुदर्शनचूर्ण वृ. (शा. ध.) ज्वराधिकारे	८)	४॥)	२॥)
सुदर्शन चूर्ण (चक्रिका)	१०)	५॥)	३)
हिंग्वाष्टक चूर्ण (शा. ध.) उदररोगे	७)	३॥॥)	२)
हिंग्वादि चूर्ण (शा. ध.) उदररोगे	७)	३॥॥)	२)
त्रिफला चूर्ण	४)	२।)	१।)

लेप और मरहम

नाम वस्तु	४०तो.	५तो.
अर्शघ्न मरहम, अर्शे	७)	१)
कालीमरहम, व्रणशोधनार्थे	३)	॥)
दशांग लेप, विसर्प रोगे	३)	॥)
नीली मरहम, व्रण रोपक	२)	।-)
पीली मरहम, व्रण रोपक	२)	।-)
पारदादिमरहम, जन्तुघ्न या कीटाणुनाशक	८)	१।)
श्वेत कुष्ठहरलेप, श्वित्र कुष्ठे	३)	॥)
सिध्महरलेप, सिध्मरोगे, खर्जुरोगे	७)	१)

क्वाथ

नाम वस्तु	१सेर	२०तो.
दशमूल क्वाथ (शा. ध.) प्रसूतारोगे	१)	।-)
देवदार्व्यादि क्वाथ (शा. ध.) ज्वरे	१॥)	।≡)
लघुमंजिष्ठादि क्वाथ ,, ,, रक्तविकारे	१॥)	।≡)
महामंजिष्ठादि ,, ,, कुष्ठे	२॥)	॥॥)
महारास्नादि क्वाथ ,, वातरोगे	२॥)	॥॥)
सुदर्शन क्वाथ (शा. ध.) सर्वज्वरे	२॥)	॥॥)
हवन सामग्री	१॥)	।≡)

फार्मेसी द्वारा प्रस्तुत शुद्ध वस्तुयें

शुद्ध वस्तु	१सेर	५तो.
कज्जली शुद्ध पारदसे		४)
कान्त लोह	५)	।=)
कुचला	३)	।)
कुचलाचूर्ण	६)	॥)
गन्धक आमलासार	१०)	॥॥)
गुग्गुल	६)	।≡)
जमालगोटा	१८)	१।)
तुत्थ	४)	।-)
दालचिकना		४)
धतूर बीज श्याम	८)	॥=)
पारद अष्ट संस्कार पूर्ण		१०)
पारद हिंगुलोत्थ	५०)	३॥)
भल्लातक	२)	≡)
मण्डूर	१।)	=)
मैनसिल	१८)	१।)
रस कपूर		४)
रसौंत	६)	।≡)
राजावर्त 'मशगूल'		४)
लोहचूर्ण रेतीका	४)	।-)
वंग	१६)	१=)
वज्राभ्रक (धान्याभ्रक)	४)	।=)
शंख टुकड़े	१)	=)
शंखनाभी	१॥)	≡)
शिंगरफ	५०)	३॥)
शृङ्गिक (काला)	८)	॥=)
शृङ्गिकचूर्ण	१०)	॥॥)
सीप मोती	१०)	॥॥)
संखिया		२)
हरताल वर्की		४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वानस्पतिक क्षार

नाम वस्तु	२०तो.	५तो.
अपामार्ग क्षार	३)	१)
अर्क ,,	३)	१)
इन्द्रायण ,,	४)	१।)
इमली ,,	४)	१।)
कण्टकारी ,,	३)	१)
कदली ,,	३)	१)
गोक्षुरू ,,	३)	१)
चना ,,	३)	१)
तिल ,,	३)	१)
पलाश क्षार	४)	१।)
पुर्ननवा ,,	४)	१।)
मूली ,,	३)	१)
यव ,,	३)	१)
वज्र ,,	४)	१।)
वांसा ,,	३)	१)
स्नुही ,,	४)	१।)
सत्यानाशी,,	४)	१।)
सज्जी ,,	१)	।)

वानस्पतिक तेल व प्राणिज स्नेह

नाम वस्तु	१पौण्ड	२औं.	१तो.
अजवायन तेल	५)	।॥)	≡)
इलायची(जापानी)	५॥)	।॥)	≡)
इलायचीविलायती	२५)	३॥)	१)
कास्ट्रायल(आगरा)	२)	।=)	
कुष्ठ तेल		३)	।॥)
खसखास रोगन	६॥)	।॥=)	।)
गुल रोगन	३।)	॥)	=)
चावल मोंगरा	५)	।॥)	≡)
जमालगोटा तेल	४८)	७)	१॥)
जायफल तेल	२५)	३॥)	।॥=)
जैतून तेल	८)	१।)	।-)
तुवरक तेल	१०)	१॥)	।=)
तारपीन तेल	१)	≡)	
दालचीनीतेल	२५)	३॥)	१)
धतूरा तेल			२।)
नीम तेल	३)	॥)	≡)
बादामरोगन	१५)	२)	।≡)
बावचीतेल	९)	१।)	।-)
बिरोजा तेल	५)	।॥)	≡)
भिलावा तेल		२)	॥)
मालकंगनीतेल	६॥)	।॥=)	।)
यूक्लिप्टसआइल	८)	१।)	।-)
रीछ की चर्बी	५)	।॥)	
लौंगतेल	२५)	३॥)	१)
वराहकी चर्बी	५)	।॥)	
सूस मछलीकातेल		४॥)	१)
सौंफतेल	२०)	३॥)	।॥)
सांडेकातेल			३)
चन्दनतेल		९)	२)

विषोपविष

निम्नलिखित विष मंगाते समय लाइसेन्सदार अपने लाइसेन्स का नम्बर व पूरा २ पता, डिवीजन के साथ दें तथा डाक्टर व वैद्य महोदय पत्र में यह शब्द अवश्य लिखें कि "हम व्यवहार के लिये मंगाते हैं", तभी माल भेजा जायगा।

विष	१सेर	५तोला
संखिया सफेद	६)	॥=)
संखिया खनिज	१२)	१)
संखिया पीला	१२)	१)
संखिया लाल	१२)	१)
रसकपूर	५०)	३॥)
रसकपूर पपड़ी का	५६)	४)
दारचिकना	५०)	३॥)
धत्तूर बीज श्याम	५)	।=)
धतूर बीज सफेद	३)	।)
मीठातेलिया सफ़ेद	६)	॥)
मीठातेलिया काला	८)	॥=)
हरतालवर्की बढ़िया	८०)	६)
हरतालवर्कीनं०१	५४)	३।॥)
हरतालवर्कीनं०२	४०)	३)
हरताल वर्कीचूरा	२०)	१॥)

प्राणिज व खनिज द्रव्य

नाम वस्तु	१सेर	१तो०
अम्बर अशहब नं० १		३६)
अम्बर अशहब नं० २		१८)
अभ्रकश्याम बढ़िया	२॥)	
अभ्रक वज्र नं० २	१॥)	
अकीक दाना नं० १		१।)
अकीक दाना नं० २		।॥)
अकीक दाना नं० ३		॥)
अकीक खरड	४)	
कस्तूरी(खुतन)दानेदार		९०)
कस्तूरी नैपाली		८४)
कस्तूरी काश्मीरी		६६)
कछुआ खोपड़ी	२)	
कसीस हरा	॥)	
कासीस लाल	३।)	
कान्तलोह ग्वालियर	३)	
केंचुवे धुले	३॥)	
कौड़ी पीली मोटी	३)	
कौड़ी पीली छोटी	१।॥)	
गोरोचन असली नं० १		५४)
गोमेद		८)
जहरमोहरा बढ़िया	५)	
जस्ता पटड़ी का	२)	
जस्ता फूल	२॥)	
जंगार असली	२५)	
जुन्द बेदस्तर		२॥)
जोंक	३५)	
तुरमली बढ़िया		२०)
ताम्र बुरादा	५)	
नखू (नख)	७०)	
नाग (सीसा)	२)	
नीला थोथा	२।)	
नीलम नं० १		८)
नीलम खरड		१)
नौसादर देशी		२।)
नौसादर ढ्यडा	१॥)	
नौसादर टिकिया	१।॥)	
पन्ना नं० १		८)
पन्ना नं०२		५)
पन्ना खरड		१॥)
प्रवाल शाखा नं.१	२८)	
प्रवाल मूल	२)	
पारद	३८)	
पीतल चूर्ण	४)	
पत्थर का दिल		२)
पुखराज		८)
फिटकरी लाल	॥)	
फिटकरी श्वेत	॥)	
मखुश्वेत	४)	
राजावर्त		१)
फिरोजा		८)
बंग ईंट की	१२)	
वीर बहूटी	२०)	।=)
बारासिंगा	१॥)	
बेरपत्थर	१४)	
मुर्दासिंग	२॥)	
मण्डूर पुराना	।॥)	
मैनसिल	३॥)	
मैनसिल चूरा	२॥)	
माणिक्य 'चूनी' नं० १		८)
माणिक्य ,, नं० २		४)
माणिक्य ,, नं० ३		१॥)
माणिक्य खरड		।॥)
मोतीवसरई नं० १		८४)
मोतीवसरई नं० २		६६)
मोती आस्ट्रेलिया नं०१		५४)
मोती आस्ट्रेलिया नं० २		४२)
मोती चावला बड़ादाना		४०)
मोती चावला छोटा दाना		४८)
मोती बेडोल		४८)
मोती बिंधा हुआ		४२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वस्तु	१सेर	१तो.
मोम देशी असली	६॥)	
रूपामक्खी चतुष्कोण	४)	
रूपामक्खी(गोलदाना)	३)	
लोहचूर्ण रेतीका	२)	
लोहचूर्ण मुंड	१॥)	
वैक्रान्त नं० १	५)	
वैक्रान्त नं० २	२॥)	
शिलाजीत पत्थर	४॥)	
शिलाजीत सूर्यतापी	३०)	।॥)
शिलाजीत अग्नितापी	२४)	॥=)
शिलारस	५)	
शोरा कलमी	२)	
शंख टुकड़े	॥=)	
शंखकीट		३)
शखनाभी	।॥=)	
संग सरमाही	२४)	
संग्रासक	८)	

नाम वस्तु	१सेर	१तो.
सफेदा काशगरी	१।)	
समुद्रफेन	३॥)	
सरतान	६)	
सिंगरफ रूमी	३६)	
सिंदूर	२॥)	
सीप मोती बाजारी	१८)	
सीप मोती असली	६)	
सुरमा काला	३।)	
सुहागा	१॥)	
सुहागा चौकिया	३॥)	
सोना गेरू	॥)	
सोनामक्खी अ.नं.२.	८)	
हरताल गोदन्ती वढ़िया	१॥)	
हरताल गोदन्ती नं०२	१)	
हरताल पीली	८)	
हाथी दांत बुरादा	२)	

आयुर्वैदिक तथा यूनानी वनस्पतियां

नाम वस्तु	१सेर
अकरकरा असली	६०)
अगर बुरादा	३)
अगर काला	५।)
अतीस श्वेत कटु नं० १	३२)
अतीस मीठी	५)
अतिवला पंचांग (कद्वी)	१)
अनन्तमूल (बंगाल)	१॥)
अनन्तमूल (देशी)	।॥)
अपराजिता (विष्णुक्रांता)	२)
अपराजिता बीज	५)
अपामार्ग बीज	१।)
अमलतास गूदा	॥)
अम्लवेद गुच्छी (चूका)	२॥)
अर्जुन त्वक्	॥)
अंजीर मूल	२)
अंजीर फलसूखे	२)
अरणी छाल	।॥)
अशोक छाल	१।)
असगंन्ध नागौरी	२)
अफतीमून	८)
अवेरशाम	१६)
अजवायन खुरासानी	३)

नाम वस्तु	१ सेर
अजवायन देशी साफ	१)
अजवायन दाना	।॥=)
अनारदाना	३।)
अजमोद	॥=)
आंवला	।≡)
अंकोल बीज	१)
अंकोल छाल	।॥)
अर्कदुग्ध	८)
अष्टवर्ग	६)
इक्षुमूल	।॥)
इन्द्रयव मीठे	१।॥)
इन्द्रयव कड़वे	१)
इन्द्रायण मूल	१)
इन्द्रायण फल	१)
इमली छाल	।॥)
इलायची छोटी नं० १	३०)
,, ,, नं०२	२७)
इलायची वड़ी(डोडा)	६)
इलायची दाना	१०)
इरिमेद छाल	।॥)
ईसवगोल भूसी असली	४॥)
ईसवगोल दाना	१॥)
ईश्वर मूल	२)
उटंगन बीज	२)
उन्नाब	३)

नाम वस्तु	१ सेर
उशबा मगरबी असली	६)
उलट कम्बल	७)
उशक	३)
उस्तेखदूस	१०)
ऊंटकटारा	॥=)
ऊद सलीब	७॥)
एरण्डमूल	।॥)
एरण्ड बीज	१)
एलवालुक फल	२॥)
एलुवा(मुसब्बर)असली	७॥)
ऋषभक(बहमनश्वेत)	३)
कचूर	१।)
कतृण (रोसाघास)	।॥)
कदम्बछाल	।॥)
कपित्थ फल	।॥)
कपूर कचरी	।॥=)
कमरकस	३॥)
कमल केसर	८)
कनेर मूल	१॥)
कत्था	१०)
कंचन फल	८)
कबीला छना हुआ	३॥)
कश्मीरी पत्ता	१।)
कपूर देशी डली का	१०)
कपूरभीमसेनी असली	२) तो.
,, ,, बाजारी	॥) तो.
कमल गट्टे	१।) से.
कमल फूल	२) से.
करंज पत्र	१।)
करंज बीज	१)
कलिहारी (लांगुली) मूल	५)
कहरवा (स्पैशल)	६) तो.
कहरवाशमईनं. १,२.	।॥), ।=)तो.
कहरवा चूरा	।) तो.
कायफल	॥=)से.
कालीजीरी	१।)
काहू	४।)
काकनासा (काकनज)	२॥)
काकनासा (वाघनखी)	।॥)
काकोली श्याममूसली	१।)
काकोली (बंगाल)	२०)
काकोली (देहरादून)	४)
कालमेघ	१)
काकजंघा पंचांग	।॥)
काकड़ासिंगी	२॥)
कुकरौंधा	॥=)

नाम वस्तु	१सेर
कुलंजन	१।॥)
कुन्दरगोंद	२।)
कुटकी	४)
कुठ मीठी	१)
कुष्ठ उत्तम नं० १	४।)
कुष्ठ ,, ,, २	२)
कुष्ठ चूरा मोटा अच्छा	१)
कुटज (कूड़ा) छाल	॥–)
केसरमोंगरा काश्मीरी	१०)तो.
केसर लच्छा	६॥) तो.
कौंचवीज (काले छोंटे)	१) सेर
कंटकारी लघु पंचांग	॥=)
कंटकारी फल	१॥)
कंटकारी वृहती पंचांग	॥=)
कंकुष्ठ (उशारा रेवन्द)	२५)
खतमी	२)
खब्बाजी	१)
खस (बम्बई)	१॥)
खदिर छाल	॥=)
खसखास	२॥)
खुरफा	१॥)
खूबकलां	२॥)
गजपीपल	॥=)
गम्भारी छाल	।॥)
गन्ध प्रसारणी	।॥)
गारीकून	३२)
गावजबां	२॥)
गिलोय	॥)
गुञ्जा श्वेत	५)
गुञ्जा लाल	१)
गुग्गल महिषाक्ष साफ	३)
गुड़ ५० साल पुराना	८)
गुड़मार बूटी	१)
गुल गावजबां	२४)
गुलबनफशा नं०१	१२)
गुलबनफशा नं०२	६॥)
गुल सुर्ख पेशौरी	४)
गुल सुर्ख देशी(पद्धदी)	४)
गोखरू पञ्चाङ्ग	॥)
गोखरू फल लघु	।॥=)
गोखरू फल वृहत	१॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वस्तु — १सेर

- गोंदबबूल ३)
- गोंदकतीरा ४)
- गोंद छुहारा ७)
- गोरखमुण्डी ||=)
- गोरखपान १)
- गौरीसर (सिरवाला) १||)
- गँगेरन छाल १|)
- चन्दन काष्ठ श्वेत ५||)
- चन्दन बूरा श्वेत ६||)
- चन्दन बूरा लाल १=)
- चव्य (कृष्ण मिर्च मूल) १||)
- चक्रमर्दबीज ||)
- चन्द्रसूर (हालों) १)
- चावल मोंगरा बीज ४)
- चाकसू १|||)
- चित्रक मूल छाल ३||)
- चिड़िया कन्द १||)
- चिरायता २||)
- चिरौंजी ५)
- चोकमूल पञ्जाब १|)
- चोपचीनी असली ५)
- चोरक (ग्रन्थिपर्ण) ३)
- जलपीपल |||)
- जलनिम्ब १|)
- जलापा ३०)
- जरिश्क मीठा ३)
- जवासा १)
- जायफल ५०)
- जावित्री ४२)
- जामुन गुठली ||=)
- जीवक (हरा) ४)
- जीवपुत्रक (जियापोता) १||)
- जीरा श्वेत ३||)
- जीराकाला असली नं.१ १०)
- जीवन्ती (बंगाल) ३||)
- जूफा ५)
- जैपाल बीज(जमालगोटा) ३||)
- जंगली प्याज सूखा १)
- तगर (सुगन्ध बाला मूल) २)
- तालमखाना २)
- तालीस पत्र असली २)
- तिंतडीक(समाक दानां) १||)
- तुरञ्जबीन असली ५||)
- तुख्म रेहां १)

नाम वस्तु — १सेर

- तुख्म कसूस असली २)
- तुख्म खिरनी ५)
- तुख्म बालंगा २||)
- तुलसीपत्रअसली ५)
- तेजपत्र |||)
- तेजबल बीज (कबाबा) १||)
- तेजबल त्वक् १||)
- तोदरी लाल ३)
- तोदरी श्वेत ६)
- दन्तीमूल १)
- दरूनज अकरबी ८)
- दरियाई नारियल ७)
- दशमूल चूर्ण (क्वाथ) १)
- दशमूल विना कुटा |||)
- दालचीनी ४)
- दारुहल्दी (लकड़ी) |=)
- दारुहल्दी बुरादा १||)
- देवदारु |||)
- देवदारु बुरादा १||)
- देवदालीफल(बन्दालडोडा) १||)
- द्रोणपुष्पी |||)
- धवलबरुआ (चांदमरुआ) ८)
- धतूरा पंचांग |||)
- धातकी (धावेके) फूल |||=)
- धनियां १||)
- धमासा १)
- धूपलकड़ी ३)
- नकछिकनी १)
- नगन्ध बावरी १)
- नागरमोथा ||=)
- नासपाल |||)
- नागकेसर असली ३०)
- नागकेसर बाजारी दाना २||)
- नागबला |||)
- निर्गुण्डी पंचांग ||=)
- निर्मली १)
- निम्बत्वक ||)
- निंबोली नीम की |)
- निम्बफूल १||)
- निर्विसी (जदवार) १२)
- निसोत(त्रिवृता] ७)
- नीलकण्ठी १||)
- नीलोफर फूल १||)
- पतङ्ग काष्ठ १||)
- पतङ्ग बुरादा ३)

नाम वस्तु — १सेर

- पटोल पत्र २)
- पद्मकाष्ठ (पद्माख) ||)
- परस्योशां (हंसराज) १)
- प्रसारणी |||)
- पाव्ला त्वक् ||)
- पाठा मूल (पाढ़ मूल) १)
- पाषाण भेद |||)
- पिप्पली लघु १५)
- पिप्पली वृहत ५|)
- पिप्पली मूल नं०१,२, ८||) ५)
- पीपल जटा ३)
- प्रियंगू फल (बङ्गाल) ६)
- प्रियंगू (पञ्जाब) असली १||)
- पित्तपापड़ा (शाहतरा) ||)
- पियाबांसा |||)
- पिपरमेन्ट ५०) पौंड १||)तो.
- पृश्निपर्णी लम्बा पत्र ३)से.
- पृश्निपर्णी १)
- पुनर्णवा मूल १)
- पुष्कर मूल ४)
- पुदीना पंचांग |||)
- पुदीना जंगली |||)
- फरफीऊन विलायती १पौंड २||)
- फालसा छाल |||)
- फिन्दक २)
- फिरंजमुश्क २)
- बच मधुर ३||)
- बच मधुर बारीक ३)
- बला पञ्चांग (खरेटी) |||)
- बहमन सफेद २||)
- बहमन लाल १||)
- बहुफली |||)
- बच तीक्ष्ण १)
- बकायन छाल ||)
- बकायन फल |||)
- बबूल छाल |||)
- वृद्धि (सालव कसेरु) ४)
- ब्रह्म दण्डी |||)
- ब्रह्मीबूटी धुली हुई २)
- ब्रह्मीबूटी १||)
- बराहीकन्द १)
- बावची ||=)
- बालछड़ (बिल्लीलोटन) ३||)
- बादरंजबूया ||=)
- बादावरद १|)

नाम वस्तु — १सेर

- बायविडंग १|)
- वांसा मूल त्वक् ३)
- वांसा पत्र (पञ्चाङ्ग) ||)
- वांसा मूल |||)
- वट जटा |||)
- विजया बीज छोटेअसली २)
- विजया बीज मोटे १|)
- विहीदाना १०)
- विदारी कन्द १)
- विधारा बीज १०)
- विधारा मूल १)
- विरोजा सूखा १|)
- ,, गीला १)
- विस्फायज १||)
- विजयसार छाल १)
- विजयसार लकड़ी |||)
- विजयसार गोंद(दमुलखैवन) ३२||)
- विल्वछाल |||)
- बीजाबोल (मुरमकी) १२)
- बीजबन्द (काले) १||)
- बीजबन्द लाल |||=)
- बंसलोचन नं. १,२,५७), ५२)
- बंशलोचन नं. ३ ५१)
- मिलावा ||)
- भूआंवला १||)
- भोजपत्र १||)
- मकोय दाना २)
- मगज कद्दू ३||)
- मगज खरबूजा ४)
- मगज खीरा ५)
- मगज तरबूज १|||)
- मगज बादाम १०||)
- मस्तगी रूमी असली ३०)
- मयूर शिखा १||)
- ममीरी मूल ८)
- महाबला (सहदेवी) |||)
- महामेदा ८)
- मूषाकर्णी असली ८)
- मरोड़फली |||)
- मैनफल १)
- महुआफूल |||)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम वस्तु	१ सेर
माजूफल	६)
माषपर्णी	१)
माँईं	२)
मिर्च श्वेत	१२)
मिर्च काली नं० १	३॥)
,, ,, ,, २	३)
मुनक्का काला (असली)	२)
मुश्कतरामसी	२॥)
मुद्गपर्णी	।॥)
मुलहठी	१।)
मूसली श्वेत	१२)
मूसली श्याम	१)
मेदा (शकाकल)	२॥)
मेढ़ासिंगी	१॥)
मैदा लकड़ी	॥)
मोचरस असली	३॥)
मौलश्री छाल	१॥)
मजीठ	२॥)
रतन जोत	१॥)
रसौंत	३॥)
रास्ना मूल बंगाल	१।॥)
राल	२॥)
रुद्रवन्ती	२)
रेणुका बीज	२॥)
रेशा खत्मी	२।॥)
रेवंद चीनी	१॥)
रोहितक छाल	१)
लता कस्तूरी	५॥)
लवंग (लौंग)	१२)
लाख पीपल	३)
लाजवन्ती बीज (छोटा)	२)
लोबान कौड़िया	३)
शरपुंखा	॥=)
श्योनाक छाल	।॥)
शालपर्णी	।॥)
शिवलिंगी बीज	६)
शङ्खपुष्पी	१)
समुद्रशोष	१॥)

नाम वस्तु	१ सेर
सत्यानासी बीज	६)
सप्तपर्णछाल	१॥)
सपिस्तान(लसूड़ियां)	।॥)
सकमूनिया ऊंटनी मा. १पौं.	२५)
सतावर	सेर १।॥)
सनाय	२)
समुद्र फल	॥=)
स्थौणेयक (जम्बू)	४)
सातला (शिकाकाई)	१)
सालब प्याजी	४॥)
सालब लहसुनिया	४॥)
सालब मिश्री	३०)
सालब पंजा नं० १	३५)
सालब पंजा ,, २	२४)
सिरसबीज सफेद	२)
सिरस बीज काले	३)
सिम्बलमूसली	१)
सीतलचीनी(सर्दचीनी)	१२)
सुपारी काठा	४॥)
सुपारी दक्षिणी	७)
सुगन्धवाला पंचांग	१)
सत्व गिलोय	१०)
सत्व अजवायन प्रतिपौंड	२०)
सत्व पुदीना ,, ,,	५०)
सत्व लोबान ,, ,,	६)
सत्व निम्बू सेर	५॥)
सत्व मुलेठी	१०)
सुरञ्जां शीरीं (मीठी)	५॥)
सुरञ्जांतलख (कड़वी)	६)
सुहांजना छाल	॥=)
सोंठ पूर्वी (बम्बई)	२)
सोमवल्ली (ईफेड्रावलेगरस)	१।)
सोया	॥=)
सौंफ	[illegible]॥)

नाम वस्तु	१ सेर
सौभाञ्जन बीज	३)
हरमल बीज	॥)
हाथी सुण्डी	।॥)
हाऊबेर	।॥)
हिरन तूतिया	२०)
हिरनखुरी	॥=)
हिंगु पत्री	१।॥)
हींग तालाब	४०)
हींग अंगूरी	३६)
हींग हीरा	३२)
हींग बाजारी	६)
क्षीर काकोली (बंगाल)	६)
क्षीर विदारी	१॥)
त्रायमाण	४)

वर्क (पत्र) सोना चांदी

स्वर्ण दफ्तरी १२० पत्र५रती	७॥)
स्वर्ण ,, ,, १माशा	१४)
स्वर्ण ,, ;, २ माशा	२६)
स्वर्ण ,, ,, ३ माशा	४१)
स्वर्ण का चूरा १ माशा	१०)
चांदी १ दफ्तरी ३ माशा	१॥)
चांदी दफ्तरी ४॥ माशा	२॥)
चांदी ,, ६ माशा	३)
चांदी ,, ८ माशा	३॥)
चांदी ,, १० माशा	४)
चांदी चूरा १ तोला	३॥)

हरीतकी भेद

नाम वस्तु	१सेर
हरड़ जीवन्ती नं० १	२४)
हरड़ जीवन्ती नं० २	१६)
हरड़ जीवन्ती— नं० ३,४,५	१२),८),४)
हरड़जीवन्ती साधारण	२४)
हरड़जी अभया(लघुबीजा)न०१	१२)
हरड़ अभया—नं० २, ३, ४	८), ६), ४)
हरड़ विजया गोल	२०)
हरड़ अमृता (काबली)— नं० १. २. ३	१०),४), २)

हरीतकी प्रति नग

हरीतकी नग एक ३।) तो.	४०)
हरीतकी ,, ,. ३) ,,	३०)
हरीतकी ,, ,,२।॥) ,,	१५)
हरितकी ,, ,, २॥) ,,	१०)
हरीतकी ,, ,, २।=) ,,	८)
हरीतकी ,, ,, २।-) ,,	६)
हरीतकी ,, ,, २।) ,,	४)
हरीतकी ,, ,, २≡) ,,	३॥)
हरीतकी ,, ,, २=) ,,	३)
हरीतकी ,, ,, २-) ,,	२॥)
हरीतकी ,, ,, २) ,,	२)
हरीतकी१तो. १६माशा की	१।)

आयुर्वेदीय सिद्धांतों की विज्ञान सम्मत विवेचना के लिये एवं नव्य ज्ञान विज्ञान की नित्यप्रति हो रही प्रगति से अपने आपको परिचित रखने के लिये प्रसिद्ध मासिक पत्र 'आयुर्वेद विज्ञान' का स्वाध्याय करें।

वार्षिक मूल्य केवल ३)

आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय

२२—फैजबाजार, दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी द्वारा आविष्कृत

गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया से रजिस्टर्ड

हजारों बार की परीक्षित औषधियां

अनेमीन

(पाण्डु, कामला, हलीमक की बेनजीर औषध)

लाभ—विषम ज्वर के पश्चात् यकृत, प्लीहा बढ़ जाने पर यह दवा लाभ करती है। शरीर में रक्त की कमी को दूर करती है। एक सप्ताह के सेवन से ही इसका चमत्कार पूर्ण प्रभाव दिखाई देता है। रक्त कमी, शोथ, जलोदर आदि रोगों में रामबाण है। मात्रा १ गोली सुबह, १ गोली शाम को।

सेवन विधि—दही, तक्र व दूधसे दोनों समय सेवन करावें १४ गोली के पैकट का मूल्य १।।)

अमीरी जुलाब

योग—**गुलाब की गुलकन्द में कुछ सरल रेचक द्रव्य मिलाये गये हैं।**

गुण—नाजुक और अमीर मिजाज के आदमी या निर्बल स्त्रियों के लिये जुलाबी गुलकन्द बड़ी स्वादिष्ट हैं और बच्चे से लेकर बड़ों तक जिनका मृदुकोष्ठ हो बड़ी मुफीद है। इसके खाने से न तो जी मचलाता है, न पेट में दर्द, जलन व मरोड़ ही होता है; इतना बेनजीर जुलाब है कि रात्रि को सोते समय ३-४ माशा पानी से या दूध से खा लो सुबह को १-२ दस्त खुलकर आ जाते हैं। जुलाब लेना हो तो सुबह को गर्म दूध या गर्म जल से ३-४ माशे के लगभग दवा खा लें २-३. दस्त खुलकर आ जाएंगे।

२।। तोले दवा के पैकट का मूल्य १।।)

अनिद्रांतक वटी

नवीन आविष्कृत चांद बरुवा चूर्णकी टिकिया

गुण—जिन रोगियों को खून का दबाव बढ़ जाने के कारण नींद नहीं आती या किसी मानसिक रोग जैसे उन्माद, मालीखोलिया, चिन्ता या अन्य किसी ऐसे विकार से जिसका प्रभाव दिमाग पर बना रहता है और नींद नहीं आती-ऐसी हालत में इस दवा को दो चार दिन खिलाने से ही रोगी को आराम की नींद आने लगती है। उक्त कारण के उन्माद रोगियों में से ८० प्रतिशत को यह पूरा लाभ पहुँचाती है। २।। तोला के पैकट का मूल्य १।।) रु०, ५ तोला का २।।) है।

मात्रा—१ से २ टिकिया पानी या दूध से दें।

अलसोरीन

(मुँह के छालों की अजीब दवा)

लाभ—किसी भी रोग के कारण मुँह में छाले पड़े रहते हों और जख्म बने रहते हों, ऐसी हालत में यह दवा उक्त छालों को ठीक करने में बेनजीर है। मुँह में छिड़कते ही ठण्डक मिलती है, और दर्द शीघ्र ही जाता रहता है।

½ औंस का पैकट मूल्य १।।)

ऑपथलमीन

लाभ—आंख आना या आंख दुखना, आंख की पुरानी लाली, आंख के गोलकों का दर्द, रोहे या कुकरे, धुन्ध, जाला, आंख से पानी जाना और खारश पर फौरन लाभ दिखाती है। सलाई द्वारा आंख में लगावें। दो ड्राम की शीशी का मूल्य १।।)

आस्थमीन

(बलगमी दमा की उत्तम दवा)

लाभ—यह दवा बलगमी दमा पर अच्छा काम देती है, जिसका दौरा प्रभातको अधिक होता हो और बलगम गाढ़ी, पीली अधिक मात्रामें निकलती हो, कुछ दिन सेवन करने पर दमा जड़ से जाता रहता है।

सेवन—१ गोली पानी या दूध से दें।

१४ गोली के पैकट का मूल्य १।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एट्रोफील

(सूखिया मसान रोग की अद्भुत दवा)

गुण—यह दवा बच्चों के **सूखा** रोग (मसान) में अत्यन्त गुण करती है। जिसे लोग सूखिया मसान या परछाई पड़ना भी कहते हैं, उसमें यह दवा अत्यन्त लाभ करती है। कुछ दिन सेवन करने से बच्चा खूब मोटा ताजा हो जाता है। १ गोली सुबह १ शाम पानी से दें। १४ गोली के पैकट का मूल्य १।।) ।

एलोप्सीन

(बालचर की बेनजीर दवा)

गुण—कभी-कभी एकाएक सिर के या दाढ़ी मूँछ के बाल गिरने लग जाते हैं और दुवन्नी चुवन्नी के बराबर जगह बिल्कुल साफ हो जाती हैं। इस रोग को बालचर या बालखो भी कहते हैं। इसके लिये हमारी यह औषध अत्यन्त लभदायक है। सेवन-थोड़ी सी मरहमको अँगुलीसे उस जगह पर लगाकर मालिश करें। आधे औंस के पैकट का मूल्य १।।) ।

एस. टुथ पौडर

(सर्वश्रेष्ठ सुगन्धित मंजन)

लाभ—दांतों का दर्द, दांतों में पानी लगना, दांतों का कमजोर होना, हिलना, मुँहसे दुर्गन्ध आना इत्यादि दांतों व मसूढ़ों की बीमारियों में लाभ करता है।

एक औंस का पैकट मूल्य ।।)

एस. डिस्पेप्सोल

शाही हाजमा

(बड़ा स्वादिष्ट, पाचक चूर्ण)

लाभ—बदहजमी, खट्टे डकार, वमन, मितली, अतिसार, उदरपीड़ा आदि को दूर करता है। १ पाव के पैकट का मूल्य २।।)

एस. पायोरीन

(पायोरिया की अचूक औषध)

लाभ—यह धारणा अब छोड़ दो कि पायोरिया दांत निकलवा कर ही जा सकता है। एस. पायोरीन के प्रयोग से एक तो गला हुआमांस ठीक होकर पुनःभरने लगता है, दूसरे हिलते हुए दांत फिर मजबूत होजाते हैं।

प्रयोग—ब्रश या दातुन पर दवा को लगाकर मसूढ़ों की जड़ों में मंजन की तरह लगाओ, और कुल्ला कर डालो। एक औंस के पैकट का मूल्य २।।)

एस. बाल घूंटी

प्रायः देखा जाता है कि जहां पेट में नुक्स हुआ कि बच्चों के पेट में दर्द, अतिसार, ज्वर आदिके उपद्रव दिखाई देने लगते हैं। ऐसे समय यह बाल घूँटी बड़ी ही लाभदायी है। इसकी १-२ माशे तक की मात्रा जलमें घोलकर पिला देने से एक दो दस्त खुलकर आ जाते हैं। यदि १ माशेसे कम दिया जाय तो मल का पाचन होजाता है जिससे आते हुए दस्त बन्द होजाते हैं और ज्वर आदि उपद्रव सब जाते रहते हैं। इस घूँटी को सप्ताह में एकबार बच्चों को देते रहें तो किसी किस्म की बीमारी होने का भय नहीं रहता।

२।। तोला का पैकट मूल्य १)

एस. बाल शर्बत

(बच्चों की ताकत के लिए आयुर्वेदिक शर्बत)

यह शर्बत बच्चों की प्रत्येक निर्बलता में अत्यन्त लाभदायक है। बीमारी से उठे हुए बच्चों के लिए तो यह शर्बत अमृततुल्य है, अत्यन्त रक्त-वर्द्धक तथा शक्ति वर्द्धक है। पाण्डु, रक्त की कमी आदि रोगोंमें बड़ों को भी फायदा करता है। मू० ४औंसकी शीशी १।।)

एस. वेजीटेबोल

(विष्टम्भहर और रेचक गोली)

लाभ—रात्रि को सोते समय ३ से ४ गोली तक यदि खाई जायें तो सुबह तक एक दो पाखाने साफ आ जाते हैं, ४ से ६ गोली दिनमें खाई जावें तो चार पांच जुलाब आकर उदर साफ हो **जाता** है।

८० गोली की पैकट मूल्य १।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओज़ीना

नये-पुराने जुकाम, पीनस की तत्काल फलप्रद औषध

लाभ—जिन व्यक्तियों का जुकाम के कारण दिमाग कमजोर हो या जुकाम बिगड़कर नजला या पीनस बनगया हो, कोई औषध शरीर के अनुकूल न बैठती हो ऐसी दशा में ओज़ीना दो चार खुराकें ही जुकाम ठीक कर देती हैं।

१० तोला माजून का पैकट मूल्य १।।)

कटारीन

लाभ—दमा की बीमारी, पुरानी खांसी में सुबह के समय जब काफी बलगम खारिज होती हो और बलगम की अधिकता से रोगी अधिक कमजोर हो चुका हो तो कटारीन के सेवन से अत्यन्त फायदा होता है।

सेवनविधि—सारी दवाको १० तोला खांड में डालकर मिलालें और शीशी में भर कर रखलें खुराक १½-१½ माशे दोनों समय पानी से दें। १ मास की दवा के पैकट का मूल्य १।।)

कर्णदुःख हर तेल

लाभ—यह तेल कान के दर्द को फौरन बन्द करता है। इससे भिन्न इसमें सबसे बड़ी खूबी यह है कि कान से पानीवत् पाक या राद सदा बहता हो, कान के भीतर जख्म हो रहे हों तो इसके कुछ दिन डालते रहने से कान का बहना बिल्कुल बन्द हो जाता है।

१ तोले की शीशी ।।), २।। तोले की शीशी १)

कफसोल

(खांसी की बेनजीर दवा)

लाभ—राजयक्ष्मा की खांसी को छोड़ कर बाकी प्रत्येक खांसी में इसके सेवन से अवश्य लाभ होता है। श्लेष्मज श्वास व दौरे के श्वास को भी रोकती है। इसके सेवन से पुरानी से पुरानी खांसी भी जाती रहती है

मात्रा—एक रत्ती तक शहदमें दें।

१ औंस के पैकट का मूल्य १।।)

कायाकल्पवटी

लाभ--जिन आदमियों को अस्थि व्रण हो रहे हों, गम्भीर व्रण निकलते रहते हों, नासूर हो गया हो, जिनके जख्म जल्दी न भरते हों, शरीर पर रक्त विकार के भयङ्कर चिन्ह बने रहते हों, ऐसे व्यक्तियों को इन गोलियों के सेवन करने से पूरा लाभ होता है

५० गोली पैकट १।।)

१०० गोली पैकट २।।)

कार्बंकोलीन

लाभ—कार्बंकल फोड़ा, शराविका, कच्छपिका अदीठव्रण आदि जिसके नाम हैं, यह मरहम उस व्रण को राजी करने में अद्भुत प्रभाव दिखाता है। यह मरहम-केन्सर में भी लाभदायक हैं। जो व्रण प्रसरणशील भयङ्कर उपद्रव वाले दाहकारी हों जिनमें मांस, त्वचा गलती चली जाती हो उनमें अत्यन्त शांति देता है।

२।।) तोले के पैकटका मूल्य ४)

कुन्तल-जीवन

(केशवर्धक अद्भुत लेपन)

लाभ—जिन व्यक्तियों के बाल अधिक झड़ते हों या किसी निर्बलतादि कारणों से टूटते रहते हों या आधुनिक कृत्रिम सुगंधित तेलों के बुरे प्रभाव से गिरने लग रहे हों, किसी चिन्ता, शोक के कारण निर्बल होकर झड़ रहे हों अर्थात सामूहिक रूप में समय से पूर्व ही बाल कमजोर होकर गिर रहे हों तो उस दशा में इस लेप को एक सप्ताह लगा कर स्नान करने से बालों को पुनः नवजीवन प्राप्त होता है। बालों की ग्रंथियां इस लेप से पुनः पुष्ट होकर दृढ़ बालों को जन्म देती हैं और इसके १-२ मास इस्तेमाल से बाल इतने सघन लम्बे और दृढ सचिक्कण हो जाते हैं कि स्त्रियां उन्हें देख कर प्रसन्न हो जाती हैं।

प्रयोग विधि—स्नान से पूर्व १ तोला दवा को पानी में घोलकर पतला करलें और उसे सिर में लगालें। कुछ देर मलें और उसके सूखजाने पर स्नान करलें। चाहे साबुन लगा कर स्नान करें कोई हर्ज नहीं। यही सरल इसकी प्रयोग विधि है। २० तोले के पैकट का मूल्य २।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोराञ्जन

(पड़वाल का अद्भुत सुरमा)

लाभ-जिन व्यक्तियों की पलकें सुर्ख और मोटी होकर उनमें फुन्सियां निकला करती हैं तथा आंखों में बाल चुभते रहते हैं, जिन्हें पड़वाल या पद्मकोप भी कहते हैं, इस अञ्जन के लगाने से उक्त रोग समूल जाता रहता है। ६ माशा की शीशी का पैकट १।।)

गनरोल

(सुजाक, मूत्रकृच्छ्र की रामबाण दवा)

लाभ—यह योग इतना अद्भुत है कि तीव्र से तीव्र और जीर्ण से जीर्ण सुजाक में भी अवश्य लाभ करता है इसकी पहली मात्रा से ही लाभ दिखाई देता है कृच्छ्रता दवा खाने के दो तीन घंटे बाद ही बंद हो जाती है और जख्म दो तीन दिन में भर जाता है

२४ कैपसूल का पैकट मूल्य ४)

डाईसैंट्रोल

(पेचिस मरोड़ की अचूक दवा)

लाभ—यह औषध ९९ प्रतिशत व्यक्तियों को पेचिस में अवश्य ही लाभ करती है। कैसा ही मरोड हो, आंव और खून जाता हो गुद-भ्रंश या कांच निकलती हो, दिन में तीन-चार मात्रा खाते ही आराम आजाता है। पुराने से पुराने पेचिश वाले भी इसके सेवन से निराश नहीं हुए।

सेवन विधि—प्रथम हल्का जुलाब देकर पश्चात ६-६ माशे औषध दोनों समय तक्रसे दें।

४ औंस का पैकट मूल्य १।।)

डिलेरीन

(१३ सन्निपातों पर चमत्कृत प्रभाव रखने वाली दवा)

लाभ--मन्थरज्वर, न्यूमोनिया, प्रसूता ज्वर, इन्फ्लूएंजा आदि के होने पर जब अधिक ज्वर होकर मनुष्य को सरसाम या सन्निपात होजाता है और रोगी अधिक बकवास करता है, बेहोश रहता है, ऐसी हालत में यह औषध दो-दो घण्टे बाद अद्रक रस शहद से दें। रोगी की सान्निपातिक अवस्था जाती रहती है। मात्रा--१ गोली। १४ खुराक के पैकट का मूल्य १।।)

छूमंत्र

लाभ-सिर दर्द, दाढ़ दर्द और इनके अतिरिक्त कहीं भी कोई दर्द हो जरासी दवा लगाते ही दर्द छू-मन्त्र हो जाता है, बिच्छू, बरैंया, ततैय्या (भिड़) आदि के काटने पर इसके लगाने से जहर जाता रहता है।

मूल्य प्रति शीशी ।।।), १ दर्जन ८।।)।

दद्रुसंहार

लाभ--यह दवा सचमुच दाद पर लगाने से दाद को जड़ से मिटा देती है, और सबसे बड़ी खूबी तो यह है कि लगती जरा नहीं। बिना तकलीफ के दाद को समूल नष्टकर देती है। ½औंस मरहम की शीशी।=)

न्यूरेलजीन

(आधाशीशी की त्वक्वेधी अद्भुत औषध)

लाभ--आयुर्वेद में सर्वप्रथम त्वक्चोभन द्वारा सिर दर्द को लाभ पहुँचाने वाली यह औषधि है। एकबार के त्वक्चोभन करने पर दर्द इस तरह जाता है जिस तरह मन्त्र द्वारा भूत। एक शीशी ५०-६० बीमार के लिये काम में आ सकती है। मूल्य प्रति पैकट १।।)

नज़लोल

(नजले की अपूर्व औषध)

लाभ--नजला चाहे हलक में गिरता हो या नाक के रास्ते से बहता हो प्रत्येक प्रकृति के व्यक्ति को अवश्य ही लाभ करता है। उष्ण प्रकृति व्यक्ति इसे शर्बत केसाथ सेवन करें। ८० गोली का पैकट मू० १।।)

न्यूमोनिओल

(न्यूमोनिया में ८० प्रतिशत लाभकारी दवा)

लाभ--न्यूमोनिया की प्रत्येक अवस्था में इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवन करातेरहने से फेफड़े व श्वास नाली पर पड़ा हुआ न्यूमोनिया का प्रभाव दब जाता है। हृदय की निर्बलता में, व हार्टफेल की स्थिति में यह बहुत लाभ करता है। १४ गोली का मूल्य १॥)।

पुंसोलीन (तिला)

लाभ—ध्वजभंग (नामर्दी) चाहे प्रकृति विपरीतमैथुनसे हुआ हो अथवा अति मैथुनसे हुआ हो, एकबार तो यह अपना फल अवश्य दिखाता है और नष्ट हुई शक्तिकोपुनः लौटा लाता है।

एक सप्ताह के सेवन योग्य दवा का मूल्य १॥)

पुंसोल

(नामर्दी की अचूक दवा)

लाभ—जिन व्यक्तियोंको इच्छानुसार समय पर चैतन्योदय नहीं होता, या मैथुनके समय शिथिलता आजाती है वह विकार चाहे हस्तमैथुनजन्य या क्षीण वीर्यके कारण अथवा मानसिक हो, सब में लाभ करता है।

१४ खुराक का मूल्य १॥)

प्रोराईगोन

(खारिश, खुजली की दवा)

लाभ—यह औषध प्रत्येक प्रकार की गीली सूखी छूतदार खारिश (खुजली) में अत्यन्त लाभप्रद है।

प्रयोग – दवा में १० तोला तेल सरसोंका मिलाकर मालिश करें और बाद में साबुन लगाकर स्नान करें।

१ पैकट का मूल्य १॥)

प्लोरीन

(पार्श्वशूल या दर्द पसली की दवा)

लाभ—सर्दी लगकर या न्यूमोनिया के आरम्भ में जो श्वास के साथ पसलियों के नीचे दर्द उठ रहा हो और दर्दके कारण श्वास न लिया जाता हो, उस हालत में इसकी एक मात्रा देते ही दर्द जाता रहता है। यह जोड़ों के दर्द, बदन के दर्द, पेट के दर्द में भी अपना चमत्कार दिखाती है। आधे औंस के पैकटका मूल्य १॥)

फीवर पिल्स

लाभ—हमने हजारों रोगियों पर उक्त दवा को आरम्भिक ज्वरावस्था में देकर इसका खूब अनुभव लिया है। हर प्रकार के साधारण ज्वर को यह दवा एक से दो दिन में ही अवश्य उतार देती है। जिनका बुखार दूर नहीं होताउनके ज्वर के रूप को भी यह दवा प्रकट कर देती है और वह चौथे पांचवें दिन ज्वर का रूप स्पष्ट हो जाता है। इसके सेवन से कभी कोई कष्ट नहीं बढ़ता।

८० गोली के पैकट का मूल्य १॥)

मकर ध्वजवटी

शक्ति वर्धक प्रसिद्ध योग

योग—स्वर्ण-घटित मकरध्वज, केसर, कस्तूरी आदि मूल्यवान द्रव्यों के योग से यह दवा तय्यार की गई है। निर्बलता, प्रमेह, धातु क्षीणता, शीघ्रपात, स्वप्नदोष आदि में लाभदायी पाई गई है। इस योग की मांग अधिक देखकर हमने भी निर्माण करना आरम्भ कर दिया है।

१४ गोली का पैकट मूल्य ३)

माजून सिर दर्द

लाभ—कुछ व्यक्तियों को दौरे से सिर दर्द की बीमारी होती है। दर्द इतना जोर का होता है कि रोगी अत्यन्त व्याकुल हो जाता है। कुछ बीमारोंको वमन भी आती है। सिर दर्द दो तीन दिन रह कर जाता रहता है। कई व्यक्तियों को दर्द आरम्भ होने के समय पीठ की ओर से दर्द सिरकी ओर बढ़ता प्रतीत होता है। यह दर्द ऐसा खराब है कि कई २ साल पीछा नहीं छोड़ता। हमने उक्त माजून का अनुभव कई वर्ष से किया है। इस माजून को यदि दो चार महीना सेवन किया जाय तो पुराने से पुराना सिर का दर्द जाता रहता है।

मात्रा—६ माशे से १ तोलातक। दोनों समय पानी से सेवन करना चाहिए। मूल्य एक पाव का पैकट ४॥)

मेहोरीन

[प्रमेह, धातुक्षीणता, जरियान की दवा]

लाभ—पेशाब के साथ मिलकर आने वाली या पेशाब के पीछे आने वाली धातु को रोकने में यह दवा बेनजीर है, तथा बहुमूत्र में बड़ा ही लाभ करती है। बड़ी ही बलवर्द्धक, शक्तिवर्द्धक है। १४ गोली की शीशी का मूल्य १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेमो

[सूखी खांसी, तालुकण्टक, कौवा गिरने की दवा)

लाभ—जब बच्चोंके दांत निकलनेवाले होते हैं तो प्रायः बच्चों का तालु लटक जाता है और हरे पीले दस्त आने लग जाते हैं। बच्चा रात दिन सिर मार कर रोता रहता है। गर्दन सूख जाती है, कान की लौर पतली पड़ जाती है, मन्द-मन्द ज्वर बना रहता है। ऐसी हालत में रोगीके तालु भागको उक्त दवा लगी अंगुली से दो-चार बार उठाने पर और इसी दवाको दिनमें दो तीन बार खिलाने पर अवश्य हीलाभ होता है। इससे भिन्न जिन व्यक्तियों को सोते समय सीधा लेटने पर सूखी खांसी उठती है उनको इसके सेवन से अद्भुत लाभ होता है। मूल्य १ औंस का पैकट १।।)

रसवटी

(संग्रहणी के लिये आविष्कृत)

लाभ—पुराने अतिसार ग्रहणी जिसमें भोजन अपक्व रूप में ही दस्तों के द्वारा निकल जाता है पेट में गुड़-गुड़ाहट होकर प्रायः दस्त आते हैं। यह रसवटी ऐसी तकलीफ को दो चार दिन में ही ठीक करदेती है मल तो दो तीन दिन में बन्ध कर आने लगता है और भूख बढ़ जाती है।

इसमें अफीम, धतूरा बीज आदि कोई नशीली चीज नहीं पडती, यह तो कुछ वनस्पतियों का सार है।

सेवन—तक्र से १—२ गोली (मात्रा ४ माशे तक) मूल्य ५ तोला २।।), १० तोला ४)

रोमेटीन

(गठिया या आमवात को तत्काल लाभ करनेवाली दवा)

लाभ—सन्धिवात, चलितवात, नुकरस, गठिया आदि व्याधियां चाहे उपदंश जनित हों या स्वतन्त्र नई पुरानी सब में अवश्य लाभ पहुंचाती है।

मूल्य ५० गोली का पैकट ३), १००) गोली का ५।।)

रिनालकोलीन

(पथरी निकालने वाली अद्भुत दवा)

लाभ—यह दवाई दर्द गुर्दा व पथरीकी अमोघ औषध है। १ मात्रा देते ही दस मिनट में वृक्कशूल बन्द हो जाता है और मूत्र साफ आता है। कुछ दिन में धीरे-धीरे सारी पथरी घुलकर बाहर आजाती है, हजारों बार की आजमाई हुई औषध है। १० तोला कच्चे दूधमें पावभर पानी मिलाकर उसके साथ दोनों समय सेवन करें। मात्रा ६ माशे। ४ औंस पैकट का मूल्य २।।)

रक्त शोधक अर्क

(५० के लगभग रक्तशोधक औषधियों का अर्क)

लाभ—बरसातके दिनोंमें बच्चों को सफेद पानीवाली फुन्सियां निकलती व फूटती रहती हैं जहां फुन्सी निकलती है वहां छाले जैसी सूरत बन जाती है। बड़े आदमियों को उपदंश, आतशक आदि के कारण रक्त के विकार हो जाते है। उनको यह अर्क बहुत फायदा करता है। हजारों बार आजमाया हुआ उत्तम रक्त-शोधक अर्क है मूल्य एक पौंड अर्क १।।)

ल्यूकोरीन टेबलेट

(प्रदर या ल्यूकोरियाकी अचूक औषध)

लाभ—स्त्रियों को सफेद, गुलाबी, रंगबिरंगा कई प्रकार का द्रव योनि मार्ग से जाता है जिसके कारण कमर में दर्द, भूख की कमी व निर्बलतादि बढ़ जाती है, इस दवा के सेवन से सब दूर हो जाती है। १४ टिकियों का पैकट मूल्य १।।)

ल्यूकोरीन वर्तिका

(प्रदर-विनाशनी-वर्ती)

लाभ—यह वर्तिका इतनी फलप्रद है कि रात्रि को एक वर्ती रखने पर अगले दिन ही इसका चमत्कारपूर्ण फल दिखाई देता है। अनेक बार केवल वर्ती के प्रयोग से ही प्रदर की शिकायत जाती रहती है।

१४ बत्ती के पैकट का मूल्य १।।)

विषमोल्ल

(कुनैनसम लाभकारी मैलेरिया की दवा)

लाभ—सर्दी से लगकर चढ़ने वाले बुखारों में तो यह दवा रामबाण है और कुनैन से निम्न बातों में विशेष है—एक तो कड़वी नहीं दूसरे चढ़े बुखार में दीजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरे गर्मी खुश्की नहीं करती, चौथे शर्बत निम्बू खटाई आदि के साथ दें, पांचवें लम्बे चौड़े परहेज की जरूरत नहीं। सेवन—१ टिकिया सुबह एक टिकिया शाम को निम्बू के शर्बत या पानी से सेवन करायें। मलेरिया के दिनों में यदि ५--७ दिन एक २ गोली नित्य सेवन कर ली जाय तो फिर मलेरिया ज्वरके होनेका भय नहीं रहता। मूल्य ८० गोली का पैकट १॥)

व्रणोद्धूलन

(फोड़ा फुन्सी का अद्भुत पांउडर)

लाभ—छोटे-छोटे बच्चों को वर्षाकाल में प्राय: फोड़े फुन्सियां व पाका निकलता रहता है और कई कई महीने बच्चे विचारे इन फोड़े फुन्सियों से तकलीफ उठाते रहते हैं। हमारा यह धूड़ा ऐसा है जिसे लगाते ही जलन दर्द, पीप, पानी सब बन्द हो जाते हैं और रोते हुये बच्चों को अपूर्व शान्ति मिलती है। यह धूड़ा या उद्धूलन स्फोटी (छाले) फैलने वाली फुन्सियां, खारश के जख्म व एक फुन्सी के लाग से बनने वाली अन्य फुन्सियां सब में आश्चर्य-जनक लाभ करता है।

मूल्य ५ तोला १॥)

शाही नस्य

लाभ—सिर दर्द, जुकाम, नजला नाक में छिछड़ा और नकसीर जाना आदि कष्टों में सेवन करके चमत्कार-पूर्ण लाभ देखिये। ६ माशे वाली शीशी का मूल्य ।=)

एक दर्जन शीशी का मूल्य ४)

शाही सुरमा

लाभ—नेत्र ज्योति का कम हो जाना, चश्मा लगाने की आदत पड़ना, नेत्रकी खारिश, पानी जाना व मैल आना आदि कष्ट इसके सेवन से दूर होकर अद्भुत लाभ होता है।

१॥ माशा छोटी शीशी ।), ३ माशा बड़ी शीशी ॥)

श्लेष्मान्तक अवलेह

(दमा की नव्य आविष्कृत औषधि)

कटारीन और अस्थमीन तो दमा की विशेष विशेष अवस्था में लाभ करते है। किंतु श्लेष्मान्तक अवलेह प्रत्येक प्रकार के दमा पर अद्भुत लाभ दिखाता है। यह दौरा तो नहीं रोकता, पर एक एक तोला इसे दोनों समय सेवन करने पर धीरे धीरे दमाका दौरा कम होता चला जाता है। यही नहीं दमा का मूल कारण-सुबह सोकर उठतेही खांसी आना और बलगम निकलना-यह जो नित्य प्रति होता रहता है इसे शनै: २ कम करता है। धीरे धीरे रोगी को इतना आराम मिलता है कि वह चित्त चारपाई पर लेटने लग जाता है। और चित्त लेटने पर गले में खराश होकर जो खांसी आती है वह बिलकुल जाती रहती है। थोड़े दिन में ही इसके सेवन से बलगम का उत्पन्न होना, गले में सरसराहट, नाक का बन्द होना, दमकशी वगरह जितने भी दम के चिह्न हैं सब जाते रहते हैं। प्रयोगविधि--१ तो० अवलेह को १० तोला श्वासान्तक अर्क के साथ दोनों समय सेवन करें। मूल्य १ पाव पैकट का ४)

श्वासान्तक वटी

गत वर्षों में न जाने कहां से श्वास रोगियों की संख्या एकाएक हमारे औषधालय में बढ़ गई। रोगी ऐसे पुराने आये जिनको "श्लेष्मान्तक अवलेह" से लाभ तो होता था पर प्रभातको श्वासारम्भक खांसी का जो ठसका उठता था वह जल्दी न रुकता था, वही ठसका धीरे २ कुछ मिन्टों में श्वासावरोध की ओर रोगी के श्वासको बदल देता था इसको कैसे रोका जाय? इसके निवारणार्थ कई योग बनाये, अन्त में यह गोलियाँ कारगर सिद्ध हुई। इन गोलियों को मिश्री की डली के साथ मुंह में डालकर सुबह, शाम व रात तक ८-१०-१२ गोली तक चूसते रहने से इसका इतना प्रबलप्रभाव देखा गया कि श्वासावरोध के साथ श्वास के खिंचकर आनेका कष्ट घटतेर बिल्कुल घटगया और रोगी अनुभव करने लगा कि मेरा दमा दम के साथ न जाकर "श्लेष्मान्तक अवलेह और श्वासान्तक वटी" से अवश्य जाता रहेगा।

इन दोनों औषधियों के दो दो, तीन तीन माह सेवन से स्वस्थ होने की सम्भावना विश्वास में परिणत होवे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखी गई है। मूल्य ५० गोली के पैकट का २) १०० गोली के पैकट का ४)

श्वासान्तक अर्क

यह अर्क भी श्वासके रोगियोंके लिये ही तय्यार किया गया है। कई रोगियों पर श्लेष्मान्तक अवलेह के साथ दिया गया। जिनका गला खुश्क रहता था या बलगम बहुत खुश्क थी खांसी भी आती रहती थी उन्हें इस अर्कके पीते ही श्लेष्म शीघ्र निकलने लग पड़ी और रोगी को उससे चैन मिला। मूल्य प्रति पौंड १)

शीतपित्तान्तक रस

शीतपित्त या उदर्द ऐसा साधारण किंतु अत्यन्त कष्टदायक रोग है जो कई२ वर्षों तक रोगी का पीछा नहीं छोड़ता। वैद्य और डाक्टर इसे रक्तविकार समझ कर जो चिकित्सा करते हैं उसमें सफल नहीं होते। १० वर्ष से अनुभव लेते २ अनुभव से यह रस ऐसा सिद्ध हुआ है कि ४-६ मात्रा देने पर पुराने से पुराना उक्त रोग जड़ से चला जाता है। पथ्य कोई नहीं, मात्रा १ रत्ती शहद से दोनों समय।
मूल्य १ तोला ४) रु०।

शीत वातेश्वर रस

प्रभाव–हृदय पर होता है।

गुण–बहुतसे हृदय रोगसे पीड़ित रोगियों को यह कष्ट देखा जाता है कि एकाएक ठण्डा पसीना आने लगता है और स्पर्श से शरीर ठण्डा लगता है हाथ-पैर भी ठण्डे शीत होजाते हैं। हृदय बैठता हुआ या उड़ता हुआ प्रतीत होता है कुछ व्यक्ति तो व्याकुलता वश बतला भी नहीं सकते, कुछ कहते हैं हमें कुछ हो रहा है। हृदय की गति रुक-रुक कर चलती है, उस समय हृदयावसादके लक्षण दिखाई देते हैं, इस दशा में यह 'शीत-वातेश्वर रस' अमोघ सिद्ध हुआ है, नव्य आविष्कृत सद्यफल-प्रद रस है।

मात्रा–१ रत्ती शहदसे मिलाकर चाट लें या खांडमें डालकर पानी से सेवन करें। कुछ दिन सेवन करने पर हृदय रोगसे मुक्ति मिल जाती है। मूल्य १ तोला २)।

श्री सुख धारा

(प्रत्येक घर में सदा सर्वदा रहनी चाहिये)

(१) पेटका दर्द, दांत दर्द, सिरदर्द वगैहरा कोई दुःख दर्द हो उसको फौरन हरन कर सुख देने वाली धारा।

(२) बिच्छूके डंक का दर्द, वर्य्या, ततैय्या के डंक का दर्द और कनखजूरा के जहर का दर्द दूर कर सुख लाने वाली धारा।

(३) वमन, रेचन से उत्पन्न कष्ट, विशूचिका की भयंकर व्यथाको मिटाकर सुख पहुंचाने वाली धारा।

प्रयोग–पेटदर्द, वमन, कालरा में ५–१० बूंद खांड में डालकर पानी से दें। बिच्छू, वर्य्या, ततैय्या के डंक मारे स्थान पर लगावें। दांत दर्द, दांत में कीड़ा लगा हो, रूई की फुरेरी बनाकर लगावें, बहुत अच्छी कीट विनाशक, कीटाणु नाशक, शरीर संरक्षक है।
छोटी शीशी का मूल्य १) बड़ी शीशी २)
छोटी शीशी १ दर्जन १०) बड़ी शीशी १ दर्जन २०)

सारस्वत वटी

(हिस्टीरिया की दवा)

यह औषध अभी तैयार की है और कई रोगियों पर आजमाया है दिमागी कमजोरी से या मानसिक व्यथा से हिस्टीरिया का दौरा होता हो ता उसमें लाभ करती है। यह गोलियां नींद न आना मानसिक उद्वेग आदि मानसिक कष्ट में भी लाभ करती हैं। १०० गोली का मूल्य ३) रु० वी. पी. खर्च भिन्न।

सेवनविधि–पानी से एक-एक गोली दोनों समय। वैद्य लाभा-लाभ से सूचित करें।

स्वदेशी चाय

जुकाम, खांसी, गले की खर्खरी, साधारण ज्वर, दर्द बदन, सर्दी लगना, हड़ फूटन इत्यादि में इसका सेवन चाय की तरह करें। इसमें चाय जैसे नशे का दुर्गुण नहीं। मूल्य प्रति पैकट आधा पाव ॥) एक छटांक ।-)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वप्नोल

(स्वप्नदोष की अपूर्व औषध)

लाभ--अधिक स्त्रीचिन्तन, कुत्सित विचारधारणा से उत्तेजनाआकर स्वप्नावस्था या अज्ञातावस्था में रात्रि को वीर्यपात होना और सप्ताह में कईबार होना इत्यादि ऐसे विकारों को रोक देता है । २८ गोली का पैकट मूल्य २।।)

सिफलोल

(उपदंश-आतशक की दवा)

लाभ--बिना मुँह आये ही यह दवा उपदंश को जड़ से उखाड़ देती है और पुराने से पुराने आतशक के फिसाद को दो सप्ताह में दूर कर देती है ।

सेवन विधि--दवाई जो केपसूल में बन्द है केपसूल सहित पानी से निगल जाना चाहिये, दोनों समय ।

१४ केपसूल का बन्द पैकट मूल्य २।।)

सुरमा ज्योतिवर्द्धक

(नेत्र ज्योति बढ़ाने वाला सुरमा)

लाभ--जिन व्यक्तियोंकी नेत्र ज्योति किसी भी कारण से कम हो रही है वह एकबार अवश्य ही प्रयोग कर के देखें नेत्र की ज्योति बढ़ाने में इस जैसा उत्तम सुरमा नहीं मिलेगा । ३ माशे का पैकट मूल्य ।।)

६ माशे का ,, १)

हिमसोल

(गर्मी, बुखार, घबराहट को दूर करने वाली दवा)

लाभ--बुखार के अधिक घबराहट, अधिक गर्मी, धूप से लू लगना, चक्कर, प्यास आदि कष्ट बढ़नेपर इसका सेवन कराइये और अमृततुल्य लाभ देखिये । इसकी समता की शीतलता उत्पन्न करने वाला अन्य ओषधि आपको किसी भी चिकित्सा में नहीं मिलेगी ।

एक औंस का पैकट मूल्य १।।)

हुपीन

(बच्चों की काली खांसी की एकमात्र दवा)

लाभ--काली खांसी या कुत्ता खांसी, ऐसी बुरी बीमारी है कि चिकित्सा कठिन है, किन्तु इस दवा के सेवनसे अवश्य लाभ होताहै । ½ औंसकेपैकटका मूल्य १।।)

हैडीक्योरीन

(सिर दर्द की चमत्कारिक दवा)

लाभ--सर्दीसे, गर्मीसे, कब्ज से और बुखार के समय होने वाले दर्द में इसे दीजिये, ५-७ मिनट में इसका अद्भुत लाभ देखिये । इसको कितनाही सेवन करें हृदय और रक्त पर कोई बुरा प्रभाव नहीं होता । पुराने से पुराने सिर दर्द में या दौरे से होने वाले दर्द में भी यह अपना लाभ दिखाती है ।

४० टिकियों का पैकट मूल्य १।।)

लक्ष्मणारिष्ट

(आसव-विज्ञान)

मुझे यह योग एक तपस्वी बाबा ने बताया था । योग बनाने का अवसर १९२१ में लगा था । मैंने जिन वन्ध्या स्त्रियों को सेवन कराया इसके सेवन से ५० प्रतिशत के सन्तान हुई किन्तु पुरुषों में यदि वन्ध्यत्व हो उसमें इससे लाभ होता है या नहीं ? इसका मुझे ज्ञान नहीं था, मैंने यह योग अपने लिखे आसव-विज्ञान में प्रकाशित कर वैद्यों से प्रार्थना की कि इस योग को बना कर उसके लाभालाभ से हमें सूचना दें । इस ३० वर्ष में एक दर्जन वैद्य इस योग को बनाकर समय-समय पर हमें सूचना देते रहे हैं, उनमें से तीन वैद्यों ने लिखा है कि यह योग स्त्री-वन्ध्यत्व में जितना लाभ करता है उससे अधिक पुरुषों को लाभ करता है ६० वर्ष की आयु को पहुंचे व्यक्ति इसके सेवन से सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ हुए ऐसा उनके पत्रों से प्रकट हुआ । इसीलिए हमने इसे विक्रयार्थ निर्माण करने का निश्चय किया । आशा है जो वैद्य इसे बनाने में असमर्थ हैं इससे लाभ उठायेंगे । मूल्य प्रति पौण्ड ३) सेवन विधि साथ है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुटाई, पिसाई, गोली, टिकिया बनवाई भाव

कोई भी दवाई जो एक सेर से कम होगी कुटाई १) सेर
१ सेर से ५ सेर तक दवाई की कुटाई ।॥) ,,

नोट नं० १—अधिक दवाई का चूर्ण कराना हो तो रेट विशेष पत्र-व्यवहार द्वारा तय करें।

नो० २—कुचला, निर्मली, चिरायता, विधारा-मूल आदि कठोर चीजें यदि कोई सेर दो सेर कुटावेगा तो इनकी कुटाई १॥) सेर होगी। मन दो २ मन कुटाने के लिये पत्र-व्यवहार करें।

गोली, टिकिया बनवाई

$\frac{1}{2}$ रत्ती से २ रत्ती तक का भाव २) पौण्ड।
२$\frac{1}{2}$ रत्ती से ५ रत्ती तक १॥) पौण्ड।
६ रत्ती से १ मासे तक १) पौण्ड।

इसमें पालिश कराई भी शामिल है।

चिकित्सा सम्बन्धी उपकरण

शरीर-ताप-मापक (Thermometer)—जील का मूल्य ३)
,, ,, जापानी १।)
दवाई मिलाने की छुरी (Spatula)—मूल्य—बढ़िया १)
साधारण १।)
गर्म पानी की रबड़ की बोतल (Hot Water Bottle)—का मूल्य ५)
फुप्फुस परीक्षा यन्त्र (Stethoscope)— मूल्य १०)
सूचिकाभरण पिचकारी (English Record Syringe) २ c.c. का मूल्य ६), ५cc ८॥), १० c.c. ११)
प्रोब (शलाका)—मरहम-पट्टी के लिए मूल्य ॥)
कान धोने की पिचकारी (Ear Syringe)—२ औंस ७॥)
४ औंस १०)
दांतों का जम्बूर (Universal Tooth Forceps)--मूल्य ६)
औषध तोलने का कांटा मय बाट (Balance)— ,, ६)
बढ़िया निकल वाला ८)
द्रव औषध मापक ग्लास (Measure Glass)-२ड्राम॥।=)
१ औंस १।) ४ औंस १॥)
ड्रापर (Droppers)—बढ़िया १) दर्जन
दुग्धआचूषक-ब्रैस्टपम्प (Breast pump)— मूल्य १॥)
ग्लिसरीन सिरिंज (Glycerine Syringe)- २ औंस ६)
बस्ति यंत्र (Irrigator) नाली व टूटी सहित- मूल्य ५॥)
स्पिरिट लैम्प (Spirit lamp) कांच की— मूल्य २)
कैंची (Scissors)—बढ़िया मूल्य २)

पावर और हाथ से चलने वाली टिकिया बनाने की मशीन

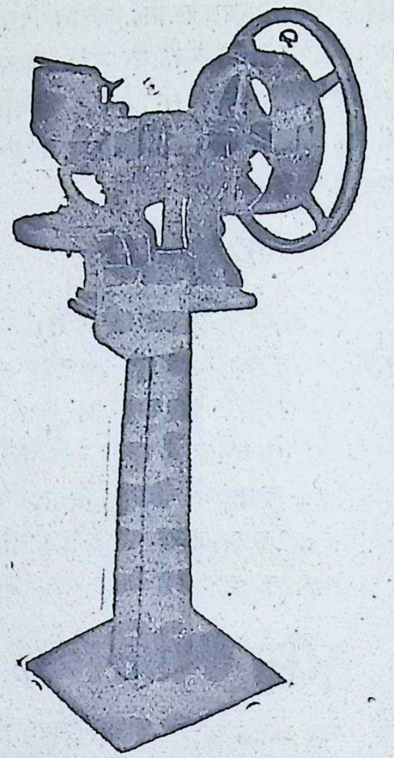

$\frac{1}{2}$ रत्ती से लेकर $1\frac{1}{2}$ माशे तक की टिकिया बनाने वाली बड़ी मशीन। मशीन के साथ दो साइज डाई पंच होंगे। मूल्य ४००)रु०

स्थायी ग्राहकों के लिये विशेष रियायत

कार्यालय के नियमानुसार पेशगी भेजना आवश्यक है यदि आप १०) रुपये एक वार भेज कर स्थाई ग्राहक बन जांएगे तो आप को निम्न सुविधाएं दी जाएंगी।

(१) फार्मेसी की प्रस्तुत तथा पेटेन्ट दवाईयों पर एक-आना प्रति रुपया (एजण्ट न होनें पर) कमीशन दिया जाएगा

[२] बार-बार पेशगी भेजने की आवश्यकता न रहेगी स्थाई ग्राहक नम्बर देना पर्याप्त होगा।

[३] यह रकम स्थाई ग्राहक न रहने पर वापिस कर दी जायगी।

मैनेजर
पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी
अमृतसर, व देहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवास पेटिका नं० १ जर्मन डिजाईन

स्टील क्लिप सहित ऊपर चमड़ा चढ़ा हुआ साइज ११½ × ६ × ८ इंच इसमें होमियोपैथिक ४ ड्रामकी ४८, १ औंसकी १२ और २ औंस स्टापर ४ शीशियां आती हैं।

मूल्य ३४)

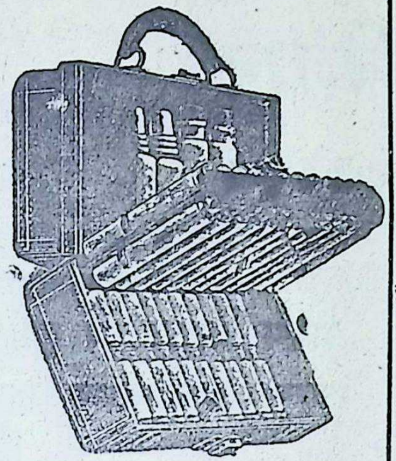

प्रवास पेटिका नं० २ जर्मन डिजाईन

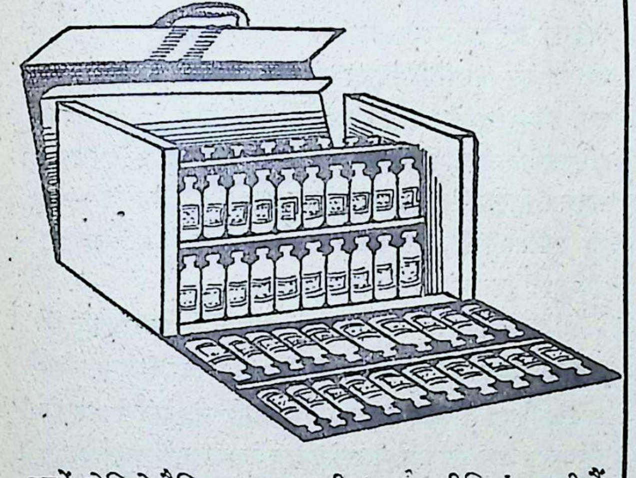

इसमें होमियो-पैथिक २ ड्रामवाली ६ दर्जन शीशियां आती हैं मूल्य २४)

प्रवास पेटिका नमूना नं० ३

बहुसंख्यक वैद्यों के हमें पत्र प्राप्त हुए हैं जिस में प्रार्थना की गई है कि प्रवास पेटिकामें दो साइज आने चाहियें। अर्थात् बड़ी शीशियोंके साथ छोटी शीशियां भी आसकें अब हमने प्रवास-पेटिका नमूना नं० ३ भी तैयार कराया है। इसमें होमियोपैथी की २ ड्राम वाली २४ शीशी, ४ ड्राम वाली १८ शीशी तथा १ औंस की लम्बी गोल ८ शीशी होती हैं। इस का साईज़ $9\frac{1}{4}\times6\frac{1}{3}\times4\frac{1}{2}$ इंच है। मूल्य २१)

औषध पाकेट बक्स नं० १

यह बक्स बटुए के समान है। बक्स सुन्दर और छोटा होने से जेब में आ सकता है। प्रत्येक वैद्य को यह बक्स अवश्य रखना चाहिए। इस में २ ड्राम होमियोपैथिक की १८ शीशी आ सकती हैं। अगर आप वैद्य हैं और दूर रोगी देखने जाना है बड़ा बक्स नहीं ले जा सकते तो इसे आराम से जेब में डालकर ले जाइये। मूल्य शीशी युक्त ६)

औषध पाकेट बक्स नं० २

इसमें २ ड्राम होम्योपैथिक की १२ शीशियां आसकती हैं। मूल्य ५)

नोटः—प्रवास पेटिकाएं ग्राहक की इच्छानुसार डिजाइन प्राप्त होने पर भी बना कर भेजी जाती हैं। परन्तु आधी रकम पेशगी आनी आवश्यक है।

हाथ से गोलियां बनाने की मशीन

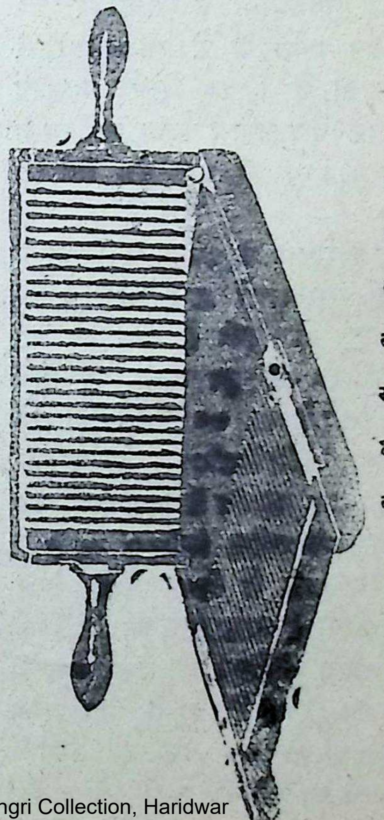

इस मशीन से बड़ी आसानी से एक व्यक्ति दिन में ४—५ सेर दवाई की गोलियां तैयार कर सकता है। गोली का साइज २½ से ३ रत्ती का रहता है।

मूल्य ३०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य की अनुपम कृति

भस्म-विज्ञान

भाषा-टीका सहित दो भागों में मूल्य १०)

धातु भस्मों व रस-चिकित्सा के आविष्कारक कौन थे वह कब हुए ? और आयुर्वेद में रस-चिकित्सा का प्रवेश कैसे हुआ ? साधु सन्तों, महात्माओं की भभूती, सिद्धों की रस सिद्धियों का ज्ञान वैद्यों तक कैसे पहुँचा ? इसके इतिहास का ज्ञान आयुर्वेदज्ञों को बिलकुल नहीं, वास्तव में रस चिकित्सा सिद्धों महात्माओं की देन है। इसका सही इतिहास जानना चाहते हो तो भस्म-विज्ञान का उपोद्घात पढ़िये।

इसमें ८४ सिद्धों का सचित्र विवरण सहित इतिहास दिया है, जिसको खोजने में स्वामीजी ने भारतवर्ष के बड़े-बड़े पुस्तकालयों में जा-जाकर १४० से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थों में से खोजकर सारा विवरण ढूंढ़ निकाला है। वह ऐसा अकाट्य प्रामाणिक ग्रन्थ है कि वैद्य समाज पढ़कर स्तम्भित व चकित रह गया है। ग्रन्थ की यही एक विशेषता नहीं।

सब से बड़ी विशेषता तो इस ग्रन्थ की यह है कि जितने भी सिद्धों महात्माओं द्वारा भस्में बनाने की विधियां आविष्कृत हो चुकी हैं तथा जो रस ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हुए उनमें जो भस्म बनाने की विधियां आई हैं वह सब अप्रकाशित होने के कारण वैद्य समाज उनके निर्माण को नहीं जानता, उनको ढूंढ कर सप्रमाण इस ग्रंथ में संग्रह किया गया है। यही नहीं, इससे भी अधिक विशेषता यह है कि यूनानी, मिश्रानी चिकित्सा में जिन पत्थरों, रत्नों, धातुओं की भस्में बनती हैं उनका ज्ञान भी वैद्यों को बहुत कम है वह समस्त विधियां भी इस ग्रन्थ में सप्रमाण संकलित कर दी गई हैं। इससे भिन्न अनेक धातु भस्मों की विधियां जो अब तक महात्माओं के गुरु परम्परा में चली आ रही थी, उनमें से अनेकों विधियों को बड़े प्रयत्न से प्राप्त कर सब को स्वामी जी ने प्रकट कर दिया है। पुस्तक कैसी है ? इस पर विद्वान् वैद्यों की सम्मतियों से इसका अन्दाजा लगाइयेगा।

भस्म विज्ञान पर कुछ सम्मतियां

स्वास्थ्य, कृष्ण गोपाल धर्मार्थ औषधालय

कालेड़ा बोगला

रस, भस्म विज्ञान भारतीय चिकित्सा विज्ञान का महत्वपूर्ण विषय है, इस विषय के सभी ग्रन्थों में प्रायः रस-भस्मों का परिचय सूक्ष्म रूप से मिलता है। किन्तु विशद विवेचन सह स्वतन्त्र पुस्तक अभी तक प्रकाशित नहीं हुई थी जो रस एवं भस्मों के विषय में ठोस शिक्षा दे सके। इस कमी को लक्ष्य में रख कर आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् स्वामी हरिशरणानन्द जी ने अनेक रस ग्रन्थों के आधार स्वरूप बहुत परिश्रम करके संकलित कर सुन्दर हिन्दी टीका सह इस पुस्तक की रचना की है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिये लेखक का मैं बधाई देता हूं।

इस ग्रन्थ में भस्म बनाने की प्रचीन शास्त्रोक्त विधि विभिन्न प्रमाण भूत ग्रन्थों से ही हैं उसे नव्य विज्ञान संमत उल्लेख किया है और महत्वपूर्ण सूचनायें भी देदी हैं। इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में उपोद्घात के भीतर लेखक ने धातु, उपधातु, रस, रत्न आदि के सम्बन्ध में विज्ञान सम्मत विस्तृत विवेचन किया है, यह अनुभव लेखक को भारतीय रसशास्त्र एवं नव्य विज्ञान सम्पन्न रसायन शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् डा० प्रफुल्लचंद्रराय द्वारा परम्परागत मिला। फिर काफी धन खर्च द्वारा दीर्घ काल पर्यन्त परिश्रम करके तथा विश्लेषण करवा कर अनुभव प्राप्त किया है इस तरह जो अनुभव मिला वह लेखक ने हृदय खोलकर पुस्तक में दे दिया है।

पुस्तक के प्रारम्भ में रस शास्त्र का इतिहास दिया है, एवं रसाचार्यों के नाम, परिचय तथा समय का उल्लेख भी साथ-साथ दिया है, संपूर्ण भस्मों का विस्तृत विवेचन किया है एवं साथ में हिन्दी टीका देकर और अपना अनुभव दर्शाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक को अत्यन्त उपयोगी बना दिया है यह पुस्तक फार्मेसी वालों के लिये मार्गदर्शक है, एवं आयुर्वेद के विद्वान, सामान्य चिकित्सक, छात्रगण तथा सर्व साधारण आयुर्वेद प्रेमी सज्जनों के लिये अत्यन्त उपयोगी होगी मैं हृदय से इसका प्रचार चाहता हूं।

जय आयुर्वेद, जोधपुर अगस्ताङ्क १९५४—

भस्म-विज्ञान के दो भाग हमारे पास आये हैं। प्रथम में तो आयुर्वेद में धातुओं का उपयोग कब कैसे हुआ और उसके बाद रस विद्या तथा शिव, नागार्जुन, ८४ सिद्ध आदि के सम्बन्ध में विभिन्न मत मतान्तरों का वर्णन है। पारद क्या वस्तु है ? इस विषय पर लेखक ने प्रगतिशीलता से काम लिया है और लेखक ने जगत् को एक नवीन देन दी है। आगे द्रुति विधानों के बाद महारसों, वायु और वायव्य तत्त्वों, धातुओं की रचना और उसके कार्यों पर गम्भीरता पूर्वक प्रकाश डाला गया है। तृतीय साधनपाद द्वारा इस विद्या और चिकित्सा के उपयोग में आने वाले विभिन्न उपकरणों पर भी प्रकाश डाला गया है ताकि नवीन रस वैद्य व चिकित्सक कहीं अटकें नहीं।

द्वितीय भाग में भस्मों के प्रकार और भस्मों की निर्माण विधि पर अनुभव पूर्ण विवेचन दिया गया है। लेखक ने व्यवहार में लाकर विभिन्न गुणों अवगुणों एवम् तकलीफों व सुविधाओं का स्पष्ट वर्णन किया है जो ग्रन्थकी खास विशेषता का निर्देशक है।

अब तक इस विषय पर अधिक ग्रन्थ नहीं लिख गये हैं और जो लिखे भी गये हैं वे केवल शाब्दिक परिवर्तन मात्र एवम् टीका मात्र ही सिद्ध हुए हैं। किन्तु प्रस्तुत पुस्तक में लेखक का अक्षय ज्ञान भण्डार हमारे सम्मुख आता है ? इस बातका प्रत्यक्ष अनुभव प्रस्तुत पुस्तक द्वारा आसानी से हो सकता है।

विद्वान लेखक की विद्वत्ता पूर्ण पुस्तक का अध्ययन प्रत्येक वैद्यको अवश्य करना चाहिए। विशेषतः रस चिकित्सक इस पुस्तक को पढ़कर नवीन पथ प्राप्त करेंगे। वास्तव में परीक्षा संस्थाओं को केवल टीका मात्र ग्रन्थको पाठ्यक्रम में न रख ऐसे मौलिक एवम् ठोस साहित्य पूर्ण ग्रन्थों को निर्धारित करना चाहिए ताकि विद्यार्थी जीवन से ही उनके संस्कार सुदृढ़ बनें और आयुर्वेद को लेकर वे कुछ कहने में समर्थ सिद्ध हो सकें। वैद्योंकी स्थितिको देखते हुए ग्रन्थका मूल्य कुछ विशेष है किन्तु उपयोगिता को देखते यह मूल्य नहीं के बराबर है।

अनुभूत-योगमाला-बरालोकपुर, इटावा (यू. पी.)

यों तो भस्मों का विधान यत्र तत्र ग्रन्थों में वर्णित ही था परन्तु वैज्ञानिक विधिसे उनका वर्णन कहीं भी उपलब्ध न था, किस धातुमें कौन २ से अवयव कितने २ परिमाण में है ? क्यों यह लाभकारी हैं ? कैसे तत् प्रतिनिधि रूप में किस भस्म का उपयोग हो सकता है आदि २ विषयों की पूर्ण जानकारी को बड़ी विशिष्ट शैली से प्रतिपादन कर भस्म-विज्ञान में चार चांद लगा कर एक नवीनता ला दी गई है। पुस्तक प्रत्येक वैद्य के देखने योग्य बन गई है।

आपका लिखा उपोद्घात जो २२३ पृष्ठों में समाप्त हुआ है, बड़ा ही महत्व का है और ८४ सिद्धोंके सचित्र पूर्ण पते एवं विवरणात्मक विवेचन बड़ा सुन्दर है। १४६ ग्रन्थों के आधार से उपोद्घात लिखा गया है वस्तुतः इन अमूल्य अप्राप्य ग्रन्थों की खोज एवं उनके अध्ययन के बाद ग्रन्थ प्रणयन कर स्वामी जी ने अपने अदम्य साहस का परिचय दिया है। लेखक अपने विषयके ज्ञान प्रसार में सफल हुए हैं, एतदर्थ बधाई के पात्र हैं।

पूज्य श्री यादव जी त्रिकम जी आचार्य बम्बई

२४—५—५४ के पत्र में लिखते हैं 'भस्म विज्ञान को अक्षरशः सम्पूर्ण तो नहीं परन्तु ऊपर ऊपरसे बहुत कुछ देखा है इसमें वैद्यों के काम की और उपादेय बातें बहुत हैं।

वैद्य घनानन्द जी पन्त,

३१०१ बाजार सीताराम, देहली।

११-४-५४ भस्म विज्ञान दोनों भाग मिले। आप के पूर्व प्रकाशित क्षार विज्ञान, आसव विज्ञान लघु निबन्ध पहिले देख चुका था तदनु कूपी पक्व रस निर्माण विज्ञान बड़ा ग्रन्थ जो कि पारद विषयक उत्कृष्ट ग्रन्थ है—समस्त पढ़ा आज भस्म विज्ञान देखा जिसका २२३ पृष्ट का उपोद्घात अनेक ज्ञातव्य विषयों से परिपूर्ण है। प्रत्येक भस्म विधि पर प्राचीन विचारों का नवीन विचारों से विवेचन किया गया है। आप अपनी लगन के बड़े पक्के हैं। भस्मों के विषय वर्तमान शताब्दी में यूनानी चिकित्सकोंने आयुर्वेद से लेकर जो इसमें ऊहापोह की है उसका भी उस में दिग्दर्शन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकीकादि द्रव्य जो की यूनानी चिकित्सा में विशेषोपयोगी समझे जाते हैं उनका भी आपने समावेश कर आयुर्वेदज्ञों को यूनानी द्रव्य ज्ञानमें सहायता दी है। रत्न उपरत्नों का अनेक प्रकार से शोधन मारण गुणादि का विशद वर्णन, सरल भाषामें है। आपने इस ग्रन्थ को लिखकर भस्मोंके विषय में आयुर्वेद को ऊपर उठा दिया है। पाठ्य पुस्तकों में आलोचनोपयोगी पुस्तक है।

रसायन—दरियागंज, देहली।

एक लम्बे समय के बाद श्री स्वामी हरिशरणानन्द का यह नवीन ग्रन्थ अभी २ प्रकाशित हुआ है 'कूपी पक्वरस-निर्माण-विज्ञान' और 'त्रिदोष-मीमांसा' के पाठक श्री स्वामी जी के वैज्ञानिक दृष्टिकोण और मौलिक विचार धारा से सुपरिचित हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ 'भस्म-विज्ञान' में भी उपरोक्त दोनों बातों का पूर्ण परिचय दिया गया है। धातुओं की मौलिक रसायनिक रचना भूगर्भसे यौगिक रूपमें प्राप्त हुई धातुओं की शुद्ध रूपमें प्राप्तिके आधुनिक ढंग और भौतिक तथा रा सायनिक गुणोंके आधार पर किया गया उनका विवेचन वैद्य समाज के लिए वास्तव में नई चीज है।

खर्पर आदि संदिग्ध पदार्थों के निर्णय में आयुर्वैदिक यूनानी और आधुनिक रसायन शास्त्र के आधार पर दी गई सम्मति विद्वानों के लिये विचार का विषय है। वास्तव में ऐसे स्थल अनुसंधान की दिशा में प्रयत्न शील वैद्यों का पथ प्रदर्शन करते हैं। संदिग्ध द्रव्यों के निश्चय में स्वामी जी का मत शास्त्र तथा प्रत्यन्न के गहरे अध्ययन और अनुभव पर आधारित है।

भस्मों के आधुनिक रासायनिक विश्लेषण, भिन्न-भिन्न विधिसे तैयार की गई भस्मों में अन्तर, अग्निके प्रमाण और पुट संख्या आदि के सम्बन्ध में दिये गये तथ्य तथा विचार वैज्ञानिक भित्ति पर आश्रित होने के कारण नितान्त नवीन और मौलिक है। निःसन्देह यह लेखक के आधुनिक रसायन शास्त्र के गहरे अध्ययन और कठोर परिश्रम का फल है।

भस्म निर्माण सम्बन्धी सम्पूर्ण उपलब्ध ग्रन्थों के पाठों का एकत्र संकलन भी इस पुस्तक की एक विशेषता है। उपोद्घात में रस शास्त्र की ऐतिहासिक परम्परा का वर्णन करते हुए ८४ सिद्धों का सचित्र वर्णन है। पुस्तक विद्वान वैद्यों, सामान्य चिकित्सकों तथा अनुसन्धान के विद्यार्थियों सब के लिए समान रूप से उपादेय है। आशा है वैद्य समाज में इसे उचितआदर प्राप्त होगा।

कूपीपक्व-रस-निर्माण-विज्ञान

यह ग्रन्थ स्वामी हरिशरणानन्दजी की मौलिक कृतियों में से एक है। इस ग्रन्थ की ऐतिहासिक पदार्थ सामग्री संचित करनेमें आपने १५-१६ वर्ष व्यतीत किये और जिन कूपीपक्व रसोंको आप अनेक प्रकारसे बनाकर इसविषयको आज ३० वर्ष से समझते व अनुभव लेते आ रहे हैं उन्हीं रहस्योंका उद्घाटन आपने अपने इसग्रन्थमें किया है। इस ग्रन्थको आयुर्वेदमार्तण्ड यादवजी त्रिकमजी आचार्यने आयुर्वेद विद्यापीठके रसतन्त्र की पाठ्यविधिके आलोच्य ग्रन्थोंमें रखने की सिफारश की है।

२० × ३० सोलह पेजी ऐंटिक पेपर पृष्ठ संख्या ५०० आर्ट पेपर पर मनोहर १४ चित्रोंसे सुसज्जित, ग्रन्थ का मूल्य सजिल्द ५) रुपया, पोस्ट और पैकिंग खर्च भिन्न।

इस ग्रन्थ पर सम्मतियां

(१) 'सुधानिधि' इलाहाबाद जून १९४१

स्वामी हरिशरणानन्दजीने यह बहुतही गवेषणा पूर्ण और महत्वकी पुस्तक लिखी है। चन्द्रोदय, मकरध्वज, रससिन्दूर स्वर्णराजवंगेश्वर, समीर पन्नग आदि कूपीपक्व रस कहलाते हैं। इसमें छोटे बड़े सब मिलाकर ढाई सौ से अधिक कूपीपक्व रसों की निर्माण विधि अनुपान और गुण लिखे गये हैं। किसी किसी रस के सम्बन्धमें यह भी लिख दिया गया है कि इसमें कितनी और कैसी आंच देनी चाहिये। इस पुस्तकमें सबसे महत्वकी बातें १२० पृष्ठके उपोद्घातमें लिखी हुई हैं। रस, निर्माणशाला, उसके उपकरण, शोधन, रस-निर्माणके सिद्धान्त आदि पर अनुभव पूर्ण अच्छा प्रकाश डाला गया है। स्वामीजी की निर्मित अब तक की सभी पुस्तकों में यह शिरोमणि है। रसायन विद्याके इतिहास विवेचनके समय की कुछ बातों में मतभेदभी होसकता है। किन्तु हम उस पर न जाकर इसके गुण गौरवका ही अभिनन्दन करते है। पुस्तक सर्वथा संग्राह्य है।

(२)श्रीयुत बालचन्द्र जी नाहटा सरदार शहर, बीकानेर से १६-२-४२ के पत्र में लिखते हैं— बहुत अर्से के बाद आप को यह पत्र लिख रहा हूँ। दो कारणों से—एक तो आप को बधाई देने के लिये और दूसरे कुछ जानने के लिये।

बधाई! आपके अनुपम ग्रन्थ 'कूपीपक्व-रसनिर्माण-विज्ञान, के प्रकाशनार्थ है जिसको पढ़कर मैंने बहुत अधिक व्यावहारिक ज्ञानप्राप्त किया। मैं आपके उक्त ग्रन्थमें दिये विधानकी विद्युत् भट्ठी बनाने की बहुत इच्छा रहने पर भी समयाभावसे कलकत्ते में न बना सका। किन्तु सामान लाकर एक विद्युत् शास्त्री की सहायता से यहां उसे तैय्यार किया और उसमें १०तोला पारद, १ तोला गन्धक, १ तोला सुवर्ण डालकर उस विद्युत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भट्टीमें मकरध्वज चढ़ाया। १००० हजार वाट प्रति घण्टे के हिसाबसे विद्युत् शक्ति खर्च करके ६ घण्टेमें मकरध्वज बना ही लिया।

जिस परीक्षणकी इच्छा वर्षोंसे थी और जिसकेलिये कलकत्ता की एक फर्मने विद्युत् भट्टीकी कीमतका इस्टीमेट २५०) का दिया था वह विद्युत् भट्टी आपकी कृपासे १५) या २०) रुपये में ही बना कर देखली, देखही नहीं ली उसपर कूपीपक्व रस तय्यार भी कर लिया।

इसके लिये आपको बधाई नहीं अनेकानेक धन्यवाद देना चाहिये। किन्तु यदि इतना ही होता तो धन्यवाद देकर ही रह जाता. आपने तो उसमें और इतनी अधिक प्रायौगिक बातें दी हैं जिसके लिये धन्यवाद पर्याप्त नहीं। बधाई इस लिये कि आप अपने प्रयत्न में सफल हुए।

(३) आयुर्वेदिक कालेज पत्रिका, काशी विश्वविद्यालय अक्टूबर १९४१

उपर्युक्त पुस्तक कूपी द्वारा पके हुए रसों पर लिखी गई है। लेखक उन वैद्योंमेंसे हैं जो हर एक विषयको वैज्ञानिक तरीकों से समझने और समझानेका प्रयत्न करते हैं। पूरी पुस्तक इस बात का प्रमाण है। उपोद्घात विद्वत्तापूर्ण है। रसशास्त्र और इससे सम्बन्धित अन्य विषयोंके इतिहास का संग्रह जिस परिश्रमसे किया गया है वह प्रशंसनीय है। स्थान स्थान पर विषय को नवीन विज्ञानके अनुसार स्पष्ट किया गया है। कई रसों पर प्रयोगोंका वर्णन किया गया है। अग्नि देनेके विषय में निश्चित शतांश देकर लेखक ने रसशास्त्रकी दृष्टि से आयुर्वेदज्ञ लोगोंका उपकार ही किया है पृष्ठ १५५ से अन्त तक शास्त्रोक्त कूपीपक्व रसों का वर्णन है। नवीन आयुर्वेद जगत्को ऐसी ही पुस्तकोंकी आवश्यकता है। आशा है वैद्य समुदाय इस पुस्तक का स्वागत करेगा।

(४) नृसिंहदेव शर्म्मा शास्त्री B. A. आयुर्वेदाचार्य, कविरत्न, रावलपिंडी

श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी

अध्यक्ष 'पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी, अमृतसर द्वारा रचित रसायनकी नवीन पुस्तक, कूपीपक्व-रस-निर्माण-विज्ञान मैंने आद्योपान्त पढ़ी है। स्वामी जी की यह मौलिक कृति है, जिसे पढ़कर कोई भी वैद्य रसों को बिना कुछ हानि उठाये निर्माण कर सकता है। स्वामी जी ने वैज्ञानिक सिद्धान्तोंके इस विषय पर गम्भीर और मौलिक विवेचन किया है। पुस्तकके प्रत्येक पृष्ठ से स्वामीजीके अत्यन्त गम्भीर अध्ययन, मनन और विशाल अनुभव का पता लगता है। पुस्तक वैद्य समाजके लिये अत्यन्त उपयोगी और विद्वानोंके लिये संग्रहणीय है।

(५) वैद्य-रत्न कविराज डा. प्रतापसिंह जी
(भू० पू० डायरेक्टर आफ आयुर्वेद राजस्थान)

मैंने श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा लिखित 'कूपीपक्व रस निर्माण विज्ञान, का आपात अवलोकन किया। श्री स्वामी जी सिद्ध-हस्त लेखक हैं।

इसके पूर्व स्वामी जीने 'कूपीपक्व रसायन' और 'त्रिदोष-मीमांसा'नामक पुस्तकें प्रकाशित की हैं और उससे वैद्यसमाज में नवीन चिन्तन का प्रादुर्भाव किया है।

स्वामीजी क्रान्तिवादी हैं। आयुर्वेद समाज के मृत-जीवन में पुनः क्रान्ति करके नवीन जीवन संचार करने के अभिलाषी हैं,इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये कठिन परिश्रम करते रहते हैं।

कूपीपक्व-रस-निर्माण-विज्ञान इसी मनोवृत्ति का परिणाम है। पुस्तक का प्रकाशन बड़ा ही सुन्दर हुआ है। इसका उपोद्घात प्रत्येक वैद्यके लिये मनन करने योग्य है। इस उपोद्घात में पौर्वात्य एवं पाश्चात्य रसायन शास्त्र का क्रमबद्ध अच्छा इतिहास है। यदि पाश्चात्य मौलिक तत्वोंके सामने उनके प्रचलित वैज्ञानिक नाम अंग्रेजी भाषा में भी दे दिये जाते तो पाठकों के लिये अधिक सरलता होती।

मैं स्वामी जी को इस वृद्धावस्था में भी कठिन परिश्रम के लिये हार्दिक बधाई देता हूँ।

आशा है स्वामी जी 'धातुवाद' पर भी विशेष प्रयोग कर आज के आणविक रसायनवाद का विवेचन कर वैद्यों के ज्ञान में परिवर्धन करने का यत्न करेंगे।

भगवान् जगन्नियन्ता से प्रार्थना है कि स्वामी जी को दीर्घायु करे और स्वास्थ्य प्रदान करे ताकि अपने अनुभव और प्रयोगोंसे चिरकाल तक आयुर्वेदका उपकार करते रहें।

क. प्रतापसिंह. १६-८-५२.

आसव विज्ञान
(तृतीय परिवर्द्धित संस्करण)

यह किसी से छिपा नहीं कि आयुर्वेद का एक चमत्कार-पूर्ण अंग आसवारिष्ट का निर्माण क्रम हमारे पास कितने अपूर्ण रूप में रह गया है। सौ बार आसव बनाइये कठिनता से दो-चार बार खराब होने से बचता है। इसका मुख्य कारण है हमारी प्राचीन रीति का लुप्त हो जाना। इसी लुप्त प्राय: विधि को स्वामी जी ने बड़े परिश्रम से पुनः प्राप्त किया है और उसी को आधुनिक विज्ञान से परिमार्जित कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उक्त पुस्तक में सरल सुस्पष्ट रूप में अंकित किया है। जिसका विस्तार निम्न रूप में है—

[१] आसव की प्राचीनता और उसका ज्ञान, [२] आसव का व्यवहार और उसकी मादकता का अनुभव, [३] नाड़ी यन्त्र का आविष्कार और उसके भिन्न-भिन्न सचित्र रूप, [४] आसव व सुराकी ऐक्यता और उसके प्रभाव, [५] आयुर्वेद में आसव का स्थान [६] आसव बनाने का प्राचीन क्रम व भेद, [७] बने बिगड़े आसव की परीक्षा, [८] आसव बिगड़ने का कारण और उसका विकृत रूप, [९] आसव और चुक्र अम्लादि में भेद, [१०] आसव बनने का कारण, [११] आसव में परिवर्तन और किण्व कीटाणु [१२] आसवोत्पादक वस्तुएं और उनका परिमाण, [१३] उत्ताप ऋतु परिवर्तनादि से आसव का बनना, बिगड़ना, [१४] भिन्न-भिन्न ऋतुओं में आसव का बनाना, [१५] आसव को सुरक्षित रखने का अनुभूत उपाय, [१६] आसव बनाने का अधिकार व राज्य नियम, [१७] आसव का शुद्ध रूप और उसका वैज्ञानिक विश्लेषण [१८] आसव के मौलिक पदार्थ व उनका गुण इत्यादि बातों का खूब अनुभवजन्य वर्णन है। स्वामी जी ने इस पुस्तक को दस वर्ष के परि-श्रम के पश्चात् लिखा है।

दूसरे संस्करण की विशेषता

इस पुस्तक का जब पहिला संस्करण निकला तो अनेक रूढ़िवादी वैद्यों ने उस पर पेट भर कर आलोचनायें की। दूसरे संस्करण के प्रकाशन समय में स्वामी जी ने उनकी आलोचनात्मक बातों का जब प्रामाणिक व तर्कसिद्ध उत्तर दिया और उन वैद्यों को आह्वान किया गया कि वे पुनः इन पर अपने पक्ष का पुष्ट करने के साधन ढूंढें, इस पर उन वैद्यों से कुछ न बन पड़ा। तीसरे संस्करण तक उन वैद्यों में से एकने भी उत्तर देने का साहस नहीं किया, न स्वामीजी के दिये तर्कों का किसी ने खण्डन किया। इससे स्पष्ट हो गया कि स्वामी जी के तर्क प्रायोगिक आधार पर स्थित हैं। आसव बनाते समय उन प्रायोगिक बातों की सचाई जब स्पष्ट दिखाई देती है तो वे अपनासा मुंह लेकर चुप हो जाते हैं।

तीसरा संस्करण

इस तीसरे संस्करण में स्वामी जी ने कई संदिग्ध तथा अन्य कई ऐसी बातों की भी व्याख्या है दी है जिसे वैद्यों द्वारा प्रश्न रूप में उपस्थित किया गया था। पुस्तक अपने विषय की इतनी जानकारी से पुष्ट हो गई है कि वैद्यों को अन्य पुस्तक की आवश्यकता नहीं रहती। ऐसी अत्युपयोगी पुस्तक का मूल्य १॥) पोस्ट खर्च भिन्न।

त्रिदोष-मीमांसा

"गवेषणापूर्ण-नव्यउपोद्घातयुक्त विवर्द्धित"

द्वितीय संस्करण

लेखक—स्वामी हरिशरणानंद वैद्य

प्रथम बार जब यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी, वैद्य संसार में खलबली मच गई थी। बहुतसे वैद्योंने उसे पढ़कर अपनी राय दी—कि "स्वामीजीने यह आयुर्वेद जगत् पर एक बड़ा ही जबरदस्त बम मारा है।" यदि उस समय त्रिदोष मीमांसा वैद्य संसारके लिये बमवत् थी तो निश्चय ही इसबार उसका उपोद्घात परमाणु बमका रूप ही समझिये।

उस समय वैद्य संसार त्रिदोष-मीमांसामें दिये स्वामीजी के प्रत्यक्ष अकाट्य वैज्ञानिक तर्कों को एलोपैथीके बताकर अपने मनको सान्त्वना देताथा, पर इस बारके दिये उपोद्घातको पढ़कर अब काल्पनिक मृग मरीचिकासे उनकी प्यास नहीं बुझ सकती।

त्रिदोष-मीमांसाका यह उपोद्घात ऐसे वैसे तर्कों व प्रमाणोंसे युक्त नहीं प्रत्युत, यह निबन्ध शुद्ध वेद भगवान् की सर्वोपरि प्रकाट्य प्रामाणिकताके आधार पर संकलनकर सिद्ध किया गया है कि हमारी प्राचीन चतुर्विध चिकित्सामें आयुर्वैदिक चिकित्साका उद्‌गम स्थान कहांसे है और वैद्यक वृत्ति का वास्तविक आदि स्रोत कहांसे चलता है।

यदि वैद्य संसार त्रिदोष-मीमांसाके इस दूसरे संस्करणको पढ़ कर भी उस अन्ध प्रगाढ़ निद्रासे न उठा और समयको न पहिचाना तो मानना पड़ेगा कि वैद्य जगत्का अस्तित्व नाम को है वास्तवमें वह समाप्त हो चुका है। वैद्य संसारको प्रबल उद्बोधन कराने वाली ३०० पृष्ठ की सर्वोत्तम पुस्तक का मूल्य २॥), पोस्ट खर्च भिन्न।

सम्मतियां

श्रीयुत डाक्टर सत्यप्रकाश जी एम. डी-लिट्.

वेलीएवन्यू, इलाहाबाद ता० १८-२-४८

"त्रिदोष मीमांसा" के द्वितीय परिवर्धित संस्करण की प्रति के लिये अनेक धन्यवाद।

आपका उपोद्घात मैंने आद्योपान्त देखा। मैं नहीं समझता था कि "त्रिदोष-मिमांसा" जैसे ग्रन्थ के उपोद्घात में प्राच्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयों का इतना सुन्दर समीचीन विवेचन होगा। वैदिक युग पर आपने बहुत अच्छा प्रकाश डाला है इसकेलिये बधाई है। वैद्यवर्ग में त्रिदोषवादके प्रति जो विप्लव आपने आरम्भ किया है, उसका समस्त श्रेय आपको ही रहेगा। न जाने कब हमारा आधुनिक वैद्य समाज रूढ़ियों को त्याग कर सत्यके अन्वेषण के लिये उसी प्रकार अग्रसर होगा, जैसा कि अपने पुरातन ऐतिहासिक काल में था। सत्यप्रकाश

आयुर्वेदाचार्य श्री हरदयालु जी

भूतपूर्व प्रिंसिपल श्रीमद्दयानन्दायुर्वैदिक कालिज, अमृतसर प्रधान—आयुर्वैदिक एण्ड यूनानी रजिस्ट्रेशन बोर्ड, पूर्वी पंजाब

त्रिदोष मीमांसा—जनवरी १९४८ में प्रकाशित द्वितीय संस्करण मेरे सामने है।

इस संस्करण में लेखक ने विद्वत्तापूर्ण उपोद्घात के ६६ पृ. और बढ़ा दिये हैं। इस उपोद्घात से अनेक भ्रम दूर होजाते हैं, वास्तव में यह उपोद्घात सर्वप्रथम पठनीय है। इसमें संशयात्मक स्थलों पर प्रकाश डाला गया है तथा नये और प्राचीन प्रमाणों से सन्देह स्थलों को बोध गम्य बनाने का सफल प्रयास हुआ है।

त्रिदोष मीमांसा के प्रथम संस्करण को पढ़कर वैद्य समुदाय में एक विशेष प्रकार का वायुमण्डल उत्पन्न हुआ था, उन सब प्रश्नों तथा आक्षेपों का उत्तर पूर्ण प्रयत्न से दिया गया है। यदि इससे वैद्य समुदाय का सन्तोष हो जाय तो निःसन्देह लेखक का प्रयत्न सफल समझना चाहिये।

इस विचार से लेखक महोदय अवश्य धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने आयुर्वेदोन्नति के सम्बन्ध में निर्भीकता से अपने विचारों को लेखबद्ध करके आयुर्वेद के महारथियों को सचेत कर दिया है। मत भिन्नता के आधार पर किसी का विरोध करना आर्यत्व का चिन्ह नहीं है। विचारास्पद गहन विषय सर्वदा गूढ़ मनन और तद्विषयक सम्भाषा परिषदों द्वारा निर्णय-स्थान तक पहुँच पाते हैं, लेखक के हृदय में आयुर्वेद के प्रति अश्रद्धा व घृणा नहीं है, प्रत्युत वह उसे विज्ञानानुमोदित शिलातल पर देखना चाहते हैं।

हरदयालुवैद्य १३-४-४८

ज्वर-मीमांसा

आयुर्वेद-ग्रन्थोंमें जिन ज्वरों व सन्निपातोंका उल्लेख आया है, इस समय उनमें से कौन-कौन से ज्वर तथा सन्निपात मिलते हैं उनके इस समय नाम रूप और लक्षण क्या हैं? तथा कौन-कौन से ज्वर व सन्निपात इस समय नहीं मिलते लुप्त हो चुके हैं। इसका ठीक-ठीक ज्ञान बहुत कम वैद्योंको है।

चिकित्सा के लिये रोगका यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना बहुत जरूरी बात है। लक्ष्य को जिसने लक्षित नहीं किया वह ठीक निशाना नहीं लगा सकता। जो वैद्य रोग को (ज्वर) नहीं पहचान पाते निश्चियही वह चिकित्सामें कभी सफल नहीं होते।

इस प्रकार के कठिन कामों को करनेका काम तो निखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन के संचालकों का था, वह वैद्य समुदायको प्राचीन और अर्वाचीन ज्वरों (रोगों) का विवेचन करके आधुनिक समय के अनुकूल उन्हें मार्ग प्रदर्शित कर चिकित्सामें उनकी सहायता करते। किन्तु उन्हें अपने ही कामों से अवसर कहां; अकर्मण्यताको देखकर स्वामीजी ने समयानुसार इस कमी को पूर्ण करने का दृढ़ संकल्प किया। उसी के परिणाम-स्वरूप यह ज्वर-मीमांसा है।

स्वामीजी ने ज्वर-सम्बन्धी विषय को लेकर निदानार्थ जो सुझाव पेश किए है तथा रोग-परिज्ञान-सम्बन्धी उनका अपना २५ वर्ष का जो अनुभव था, विस्तृत रूप से दिया है। पुस्तक कितनी उपादेय है वैद्य स्वयं पढ़कर इसकी गम्भीरता का अनुभव ले सकते हैं। मूल्य १॥)

मन्थर-ज्वर-विज्ञान
(दूसरा संस्करण)
लेखक—स्वामी हरिशरणानन्द जी वैद्य

पाठकों को ज्ञात होगा इस पुस्तक का प्रथम संस्करण 'मन्थर-ज्वरकी अनुभूत चिकित्सा' के नाम से प्रकाशित हुआ थी। आज से २५ वर्ष के मध्य मन्थर-ज्वर पर बहुत ही खोजें व छान-बीन हुई, न जाने कितनी नई नई सैद्धान्तिक बातें सामने आई, हजारों रोगियों की चिकित्सा करने पर इतने समय के बाद जो अधिक अनुभव व ज्ञान लेखक को प्राप्त हुआ, उन सबका इस बार के संस्करण में संकलन कर दिया है। चिकित्सा क्षेत्र में पुस्तक की क्रियात्मक उपयोगिता बढ़ाने के लिए आधुनिक प्रत्यक्ष विज्ञान के अनुसार मन्थर ज्वर जीवाणु की उत्पत्ति, वृद्धि एवं संचार का विस्तृत वर्णन उसमें दिया है जिसे पूर्ण तरह से समझ लेने पर इस रोग के प्रसार को रोकने सम्बन्धी समस्त ज्ञान पाठकों को प्रत्यक्ष हो जाता है। मन्थर ज्वर जीवाणु का शरीर के अन्य अंगों पर क्या २ प्रभाव पड़ता है और क्या २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव होते हैं। तथा उनकी चिकित्सा का भी पूरा वर्णन है।

लेखक के चिरकालिक अनुभव के आधार पर कुछ ऐसे सांकेतिक लक्षणों का वर्णन दिया है जिन्हें देख कर सन्दिग्धावस्था में न रह कर निश्चयात्मक निदान करने में सहायता मिलती है।

चिकित्सा में भी स्वामी जी के चिरकाल से अनुभूत सिद्ध प्रयोगों के साथ २ नवीन आविष्कृत प्रभाव शाली औषधियों का वर्णन भी है जिससे विगड़े से बिगड़े रोगी के उपचार में चिकित्सक को सहायता मिल सकती है।

शरीर की रोग रोधक शक्ति (क्षमता) क्या है वह कैसे बढ़ाई जा सकती हैं? रक्त के श्वेताणु किस प्रकार रोगों के आक्रमण का मुकाबला करते हैं इत्यादि सब बातों का विस्तृत वैज्ञानिक वर्णन भी पुस्तक में किया गया है जो ज्ञान के पिपासु पाठकों के लिये अवश्य ही सन्तोषप्रद सिद्ध होगा। अकेले मन्थर ज्वर पर इतना विस्तार पूर्वक तथा ज्ञानवर्द्धक ग्रन्थ आपको अन्यत्र न मिलेगा। नव्य ज्ञान विज्ञान से पूर्ण होने के कारण ही पुस्तक का नये सिरे से नाम करण करना उचित समझा गया।

पुस्तक को जो भी वैद्य एक बार पढ़ कर इसमें लिखी विधि अनुसार मन्थर-ज्वर या टायफाइड का निदान करेगा तथा उसकी चिकित्सा में प्रवृत्त होगा वह कभी भी असफल नहीं होगा। मूल्य २) डाक खर्च भिन्न।

वैद्य समाज तथा जनसाधारण का परमसहायक

औषध-गुण-धर्म-विज्ञान

(अर्थात् औषधि गुण परिचय तथा सेवन-विधि)

संशोधित एवं परिवर्धित—तृतीय संस्करण

छप कर तैयार हो गया है जिसकी सहायता से वैद्य समाज के अतिरिक्त साधारण मनुष्य भी आयुर्वेदोक्त प्रत्येक औषधि प्रयोग कर लाभ उठा सकता है क्योंकि इस पुस्तक में रोग-व्यवस्था तथा समस्त विख्यात आयुर्वेदिक औषधियों का परिचय, गुण, सेवन-विधि तथा मात्रादि का निरूपण बहुत ही उत्तम शैली और सरल भाषा में किया गया है। इस बार स्वामी जी ने औषधियों के सम्बन्ध में अपने आज तक के अनुभवों को इस पुस्तक में संकलित कर दिया है।

तृतीय संस्करण की विशेषता यह है कि इसमें आयुर्वेदिक औषधियों के अतिरिक्त स्वामी जी को अनेक जितनी भी अनुभूत पेटेंट औषधियां हैं उन सबका विशद विवेचन तथा लाभ सेवन-विधि मात्रादिक का वर्णन भी अच्छी तरह किया गया है। मूल्य १) डाक खर्च भिन्न।

क्षार-निर्माण-विज्ञान

यह किसी से छिपा नहीं कि आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति में भिन्न-भिन्न वानसपत्योद्भूतक्षारों का काफी प्रयोग होता है। किन्तु हम देखते हैं कि वैद्यों द्वारा बनाये हुए क्षार प्रायः मैले धूसर वर्ण और देखने में चित्तकार्षक नहीं होते।

स्वामी जी ने बड़े परिश्रम से क्षार-निर्माण विज्ञान का अनुभव किया और उसको वैद्यों के लाभार्थ क्रमवद्ध कर दिया है। उसमें निम्नलिखित विषयों का समावेश है:—

१. आयुर्वेदिक-चिकित्सा-पद्धति में क्षारों की उपयोगिता। २. वनस्पतियों के मौलिक तत्व व क्षारोद्भव धातुएं। ३. भिन्न-भिन्न क्षारों का रासायनिक रूप। ४. भिन्न-भिन्न वनस्पतियों में भिन्न-भिन्न प्रकार के क्षारजन्य धातुओं की मात्रा। ५. भिन्न भिन्न वनस्पति भस्म से क्षार निकालने की विधि। ६. क्षारों को विशुद्ध स्वच्छ बना कर उसको कण रूप में लाना। ७. भिन्न भिन्न क्षारों के गुण और वज्र-क्षार आदि के बनाने का क्रम तथा क्षारों का उपयोग इत्यादि विषय का खूब खुलासा वर्णन है।

मूल्य प्रति पुस्तक ।।)

रुद्रयामल तन्त्र

भैरवानन्द योगी कृत

भैरवानन्द योगी ने तान्त्रिक काल के अन्तिम दिनों में एक तन्त्र विषयक रुद्रयामल तन्त्र लिखा था। उस ग्रन्थ के भीतर धातु निरूपणम् नाम से एक अध्याय भिन्न दिया गया था। उस अध्याय के रसायन विषयक-प्रामाणिक अंश के कुछ उद्धरण डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय ने हिन्दू रसायन शास्त्र का इतिहास लिखकर उसके परिशिष्ट में उद्धृत किये थे। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ अप्राप्य था। श्रीयुत यादव जी त्रिकम जी आचार्य की कृपा से इस की हस्तलिखित प्रति प्रकाशनार्थ प्राप्त हुई, दूसरी प्रति कृष्ण गोपाल जी काशी निवासी से प्राप्त हुई दोनों ही प्रतियां लेखन प्रमाद से काफी अशुद्ध थी। उन्हें पं श्रीधर मायाधारी जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य से यथाशक्य शुद्ध कराकर प्रकाशित किया है।

मूल्य २) रु, पोस्ट खर्च भिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसव निर्माणार्थ सागवान काष्ठ के उत्तम ढोल

प्राचीन काल से ही वैद्यों में आसव निर्माणार्थ प्रायः मट्टी के पात्रों को प्रयोग करने का प्रचलन है। परन्तु मट्टी के पात्र में दो बड़े दोष हैं एक तो मसामदार होने से आसव द्रव उस में से चू कर बाहर निकल सकता है। दूसरे मृत्पात्र तापवाहक होने के कारण सन्धानार्थ द्रव के अन्दर आवश्यक उत्ताप को स्थिर नहीं रख सकता, जिस से आसव निर्माण क्रिया (सन्धान) में बाधा उत्पन्न हो सकती है। लकड़ी के ढोल इन दोनों दोषों से मुक्त हैं। लकड़ी में भी सागवान की लकड़ी ऐसी कठोर है कि निरन्तर वर्षों तक पानी के संसर्ग में रहने पर भी यह नहीं गलती। अतः सागवान के बने ढोल चिर काल तक खराब नहीं होते और आयु पर्यन्त काम देते रहते हैं। मृत्पात्र की तरह इन्हें घृत परिप्लुत करने का झंझट भी नहीं करना पड़ता। जल से प्रक्षालन कर स्वच्छ करके इन का प्रयोग किया जा सकता है। मृत्पात्र की तरह इनके फूटने का भी भय नहीं।

हमारे यहां वर्षों से इन ढोलों का प्रयोग हो रहा है। श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा लिखित "आसव विज्ञान" पुस्तक के प्रकाशन के बाद से देश के प्रत्येक कोने से इन लकड़ी के ढोलों के लिये अनेकों वैद्यो की मांग आती रही है। अतः हमने विलायत से आने वाले माल के खाली ढोल जो बड़ी बड़ी मिलों में रासायनिक पदार्थों में लग कर आते है उनके संग्रह का प्रयत्न किया है वह साफ करने पर आसव निर्माण के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। आशा है वैद्य समाज तथा औषध निर्माता इन का प्रयोग कर आसव निर्माण प्रक्रिया को समुन्नत करने की दिशा में अग्रसर होंगे। इस से उन्हें सुविधा भी होगी और आसव भी उत्तम बनेंगे। प्रत्येक ढोल की समाई इतनी है कि उसमें ६ मन आसव तैयार हो सकता है। मूल्य प्रति ढोल २०) मार्ग व्यय भिन्न।

आर्डर के साथ पेशगी आना जरूरी है।

निवेदक—मैनेजर पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी
अकाली मार्केट-अमृतसर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद विज्ञान पर कुछ सम्मतियां

सम्पादक, स्वास्थ्य सन्देश, पटना

आयुर्वेद विज्ञान—प्रकाशक–आयुर्वेद विज्ञान आफिस, २२ फैज बाजार, देहली। वार्षिक मूल्य–३)।

यह मासिकपत्र स्वामी हरिशरणानन्द जी के सम्पादकत्व में सम्पादित होता है। प्रकाशक भी आप ही। कुछ दिन पूर्व भी आप इस नाम का मासिक पत्र निकालते थे। अब पुनः इसी वर्ष इस पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया है। मेरे सामने तीसरा अंक है आपकी लेखनी द्वारा लिखा गया लेख बड़ा ही जोश पूर्ण होता है। आप प्राचीन आयुर्वेद अर्थात् त्रिदोष और पंचभूत वाद के विरोधी रहे हैं। आपका यह मासिक पत्र आपके विचार का प्रचारक है। आपका तर्क भी अपने ढंग का होता है। पत्र तर्क की दृष्टि से सुन्दर है। इसे वैद्यों को अवश्य पढ़ना चाहिए।

पं० गिरिजा शंकर भट्टाचार्य वैद्य "शेखर"
अमोघ औषधालय मु० उमरामऊ पो० ऐहार जि० रायबरेली

श्रीमान जी द्वारा प्रेषित आयुर्वेद-विज्ञान पत्र अप्रैल मास का अंक मेरे सम्मुख प्रस्तुत है। इसका सस्नेह ध्यान पूर्वक साद्योपान्त समावलोकन कर मन को महान् मोद मिला।

आप का यह अनुपमेय प्रयास है। पत्र में प्रकाशित लेख पंक्तियां आप की निर्भीकता एवं प्रचुर प्रज्ञान का पवित्र परिचय दे रही हैं।

मैं मानता हूँ कि आप में आधुनिक आयुर्वेद को समझने समझाने की यह अद्वितीय ईश्वर प्रदत्त विमल बुद्धि है।

वास्तव में तमसावृत्त आयुर्वेद जगत को नूतनालोक प्रदान करने वाला यह पत्र सम्पूर्ण कला युक्त सुधाकर है। मैं इस पत्र की हृदय से अभ्युन्नति चाहता हूँ।

प्रिंसिपल क० जगदीशचन्द्र भारद्वाज B. A. M. S.
अध्यक्ष श्री राम आयुर्वेदिक फार्मेसी पनाकितान भवानी (हिसार)

आप का प्रेषित "आयुर्वेद विज्ञान" नामक मासिक पत्र अप्रैल १९५७ का प्राप्त हुआ। जो कि देखने में छोटा परन्तु उसकी सामग्री तथा प्रस्तुत लेख अति सुन्दर तथा सुपाठ्य थे जिसके द्वारा जनता भी लाभ उठा सकती है। विशेषतः चिकित्सक बन्धुओं को तो इस पत्र का ग्राहक बनना आवश्यक है। क्योंकि यह आयुर्वेद क्रांति का अग्र-दूत है। अतः इस पत्र की मैं हृदय से उन्नति चाहता हूँ। भगवान इसे सफलता प्रदान करता रहे।

कविराज माधव प्रसाद जी शास्त्री
सम्पादक जय आयुर्वेद जोधपुर (राजस्थान)

"आपके द्वारा सम्पादित "आयुर्वेद विज्ञान" के ५ अंक प्राप्त हुए, धन्यवाद !

पत्र में प्रकाशित लेखों की निर्भीकता वास्तव में आयुर्वेद जगत् को रसातल जाने से अवश्य ऊपर उठाने में समर्थ सिद्ध होगी। आजके पत्र किसी की गुण-गाथा या विज्ञापन करनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं करते प्रसन्नता की बात है कि आप इन बातों से बहुत ऊपर उठे हुए हैं आपके सुलझे हुए विचार आयुर्वेद महारथियों के उलझे हुए दिमागों को इसी प्रकार सफाई करते हुए उन्हें स्वस्थ बनाते रहेंगे। आपका पत्र आयुर्वेद-विरोधियों से डट कर मुकाबला लेने वाला है। हम इसकी उत्तरोत्तर उन्नति चाहते हैं।"

वैद्यरत्न पं० श्री प्रभुदत्त शास्त्री भिषगाचार्य
प्रिंसिपल–श्री परशुराम पुरीया राजस्थान आयुर्वेद कालेज सीकर (राजस्थान)

"आपके द्वारा प्रेषित 'आयुर्वेद विज्ञान' मासिक पत्र का अक्टूबर मासीय अंक देखने को मिला।

आयुर्वेद को आधुनिक विज्ञान के सम्पुटसे समृद्ध बना कर इसके वैभवका विस्तार और व्यावहारिक उपयोगिता की पराकाष्ठा से वैज्ञानिक जगत को नवीन आलोक प्रदान करने वाला यह पत्र अविलम्ब ही वैद्य महानुभावों द्वारा कराम्बुज स्पर्शी से उद्दीप्तिमान् हो उठेगा। इसमें संदेह जरा भी नहीं, चूंकि यह आपकी ओजस्विनी लेखनी से आपूरित सम्पादन कला–वैचित्र्य का उत्कृष्ट प्रतीक है। आधुनिक युग में ऐसे ही नूतन दृष्टिकोण से उन्मेष पाने वाले पत्रों की पाश्चात्य जगत पर धाक जमाने के लिये आवश्यकता है। धन्यवाद !"

आयुर्वेद वाचस्पति डा० रघुवंशलाल शर्मा (M. Sc. A.)
श्री रविनन्दन आयुर्वेद भवन, मुरादाबाद

आपके द्वारा सम्पादित "आयुर्वेद विज्ञान" का चतुर्थ अंक प्राप्त हुआ अतः धन्यवाद। प्रस्तुत पत्र को ध्यान पूर्वक समावलोकन किया। मैं आपकी इस उत्तम कृति तथा आयुर्वेदोद्धार की प्रशंसा करता हूँ। मैं वैद्य समाज से सानुरोध प्रार्थना करूंगा कि प्रत्येक वैद्य बन्धु "आयुर्वेद विज्ञान" के ग्राहक बन कर अंधकार में पड़े हुये आयुर्वेद को प्रकाश में लायें। मैं इस पत्र की उत्तरोत्तर उन्नति चाहता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पृष्ठ १८० का शेष]

आरोप है उनमें से ९वें अनुबन्ध के उत्तराँश को छोड़कर शेष सब पर्याप्त सत्य घटनाओं पर अथवा उन घटनाओं से युक्ति पूर्वक समझ में आने वाले परिणामों पर आधारित हैं, जो कुछ टीका टिप्पणी हुई है उचित और युक्ति सगत है।

अनुबंध संख्या ९ के उत्तरांश का निर्णय

अनुबन्ध ९ के उत्तरांश का जिसमें पंजाब के १७ वैद्यों वाली घटना की चर्चा है उस पर विद्वान् जज ने लिखा कि अभियुक्त ने इस घटना की सत्यता को पुष्ट करने के लिये कोई प्रयत्न ही नहीं किया। उसने यह भी नहीं बताया कि उसे इस घटना की सूचना कहाँ से मिली। जिन १७ वैद्यों को सदस्य बनाने का आरोप लगाया गया था उनमें से कई मौजूद होंगे, पर उनमें से किसी को गवाही के लिये पेश नहीं किया गया। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि यह आरोप लगाने में उचित सावधानी बर्ती गई। अभियुक्त ने जो बयान दाखिल किया है उसमें कहता है कि इस अंश सम्बन्धी जो रिकार्ड महामण्डल से मंगाया गया था उसने अदालत में पेश नहीं किया, इस बात की ओर मेरा ध्यान उस समय ही दिलाया जाता—जब रिकार्ड आया था—तो मैं उसको पेश करने पर जोर देता और कारण मालूम करता। बाद में की हुई आपत्ति का कोई मूल्य नहीं। अत: हम इस घटना को प्रकाशित करने के सम्बन्ध में अभियुक्त को दोषी पाते हैं।

इसलिये माननीय न्यायाधीश श्री वी० एम० गेहानी ने आयुर्वेद विज्ञान के सम्पादक व मुद्रक स्वामी हरिशरणानन्द को मानहानि के अभियोग में ५००) दण्ड किया। दण्ड की रकम अदा न करने पर अभियुक्त को दो मास का सश्रम कारावास की सजा भुगतनी होगी।"

अभियुक्त ने उसी समय ५००) अदालत में जमा करा दिया।

क्या मैंने १७ वैद्यों के प्रतिनिधि बनाने सम्बन्धी घटना को बिना जाने समझे बूझे लिखा था? ऐसी कोई बात नहीं थी। न यह अभियोग असत्य था। हमारे पास इस घटना को सिद्ध करने के दो आधार थे। (१) महामण्डल रिकार्ड (२) जिन व्यक्तियों को प्रतिनिधि बनाया गया था उनकी गवाही। शिवशर्मा ने अपनी गर्वोक्ति में कहा था—

"लेखकों को न्यायालय के सामने अपने अभियोग सिद्ध करने का पूरा अवसर दिया जायगा। साथ ही यह सुविधा भी होगी कि महामण्डल कार्यालय की जो सामग्री प्राप्त हो सकती है उसे प्रमाण देने के लिये मंगाया जा सकेगा और लेखक को यह शिकायत करने का अवसर नहीं मिलेगा कि उन्हे कार्यालय ने सुविधा नहीं दी।"

मैंने अपने वकील द्वारा अधिकृत रूप से महामण्डल का १९३९-४०-४१-४२-४३ तक का सारा रिकार्ड एक एक चीज खुलासा लिख कर मंगाया था किन्तु महामण्डल का प्रधान कर्मचारी तिलक राम १९५१ से लेकर १९५६ तक का मांगा रिकार्ड तो लाया यह पिछला रिकार्ड नहीं लाया। जिस दिन वह रिकार्ड लेकर हाजिर हुआ था और इस रिकार्ड के सम्बन्ध में उसने जो अदालत में लिखित बयान दिया था उस दिन मेरा वकील किसी दूसरे के केस में चला गया था.वह वहां हाजिर नहीं था। छोटे वकीलों ने—जिन्होंने उसका बयान पढ़ा उन्होंने यह नहीं बताया कि जो रिकार्ड आपने मंगाया था वह नहीं आया, वरना मैं उसी सयय आपत्ति उठाता, क्लर्क चला गया। अगले दिन रिकार्ड देखने की आज्ञा लेकर रिकार्ड देखा तो पिछले रिकार्ड का एक कागज भी उसमें नहीं था। उसने अपने बयान में लिखा था कि कार्यालय में १९३९ से लेकर १९४४ तक का रिकार्ड नहीं है। वकील होता तो पूछता रिकार्ड कहाँ गया? क्योंकि महामण्डल का कार्यालय १९४४ में कलकत्ता चला गया था। १९५० में वह कलकत्ता से दिल्ली आया। यदि महामण्डल का पिछला रिकार्ड कार्यालय में न होता तो पदाधिकारियों का कर्तव्य था कि इस मामले को स्थायी समिति के अधिवेशन में रखते, कि पिछला रिकार्ड नहीं है इसको सभा के अधिकारी मालूम करते। किन्तु ऐसी कोई रिकार्ड के गायब होने की सूचना १९५६ तक के किसी अधिवेशन में नहीं आई। इससे स्पष्ट था कि रिकार्ड तो कार्यालय में था पर शिवशर्मा ने उसे पेश नहीं करने दिया क्योंकि उस रिकार्ड के आ जाने पर इन १७ सदस्यों के प्रतिनिधि बनने की जालसाजी का उससे प्रमाण तो मिल ही जाता इससे भिन्न उन वर्षो में जो

(पृष्ठ उलटिये)

[पृष्ठ १५१ का शेष]

शिवशर्मा तो दोनों ही मानहानि के मुकदमों में बुरी तरह हार कर दम ले रहा हैं। उसके इशारे पर काम करने वाले कर्मचारी महामण्डल पर छाये हुए हैं। महामण्डल की आर्थिक स्थिति बहुत ही गिर गई हैं। जिन महामण्डल सदस्यों को महामण्डल से स्नेह था, जो कुछ वैद्य समाज की सेवा करना चाहते थे, वह सब शिवशर्मा की अधिनायकत्व से रूठकर घर बैठ गये हैं। ऐसी दशा में महामण्डल जिस शोचनीय दशा में त्रिशंकु बना लटक रहा है—क्या आप सब प्रधान मन्त्री या प्रधान के द्वारा अधिवेशन बुलाने की प्रतीक्षा में ही महामण्डल को इसी तरह लटका देखना पसन्द करेंगे? यदि नहीं तो वैद्य समाज की दशा को देखते हुए इसके सुधार का प्रयत्न करिये या इस को सदा के लिये समाप्त कर दीजिये। इसके सिवाय अब कोई दूसरा मार्ग नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनियमितताएं हुई थीं उनका बहुत सा प्रमाण और भी हाथ आ जाता। इसीलिये उसने पिछला रिकार्ड पेश नहीं होने दिया, इस तरह मैं इस प्रमाण से वंचित रहा।

दूसरा प्रमाण मेरे पास गवाहों का था। इन १७ प्रतिनिधियों में से इस समय मेरे पास तीन गवाह थे जिन्हें शिव शर्मा ने १९४० के चुनाव में पंजाब से प्रतिनिधि बनाया था (१) पं० प्राणनाथ पुष्करणा, पुष्करणा आयुर्वेदिक फार्मेसी अमृतसर, दिल्ली (२) श्री अमरनाथ डोगरा म्युनिसिपल कमिश्नर जालन्धर (३) श्री वलदेव राज वैद्य अमृतसर। यह तीनों ही इस बात की साक्षी देने के लिये तैयार थे कि शिव शर्मा ने उन्हें चन्दे के ५१) रुपये की रकम से प्रतिनिधि बनाया था, हमने अपने पास से चन्दा नहीं दिया था। इन सबों को बुलाने और गवाह रखने के लिये मैंने अपने वकील से बहुत कहा, वकील कहता था कि गवाह मत पेश करो। शिवशर्मा जैसे चालाक आदमी से हम सब जिरह में मतलब की बात कहलवा लेते हैं, जब हम गवाह पेश करेंगे हो सकता है उसका वकील अन्य सिद्ध हुए मामलों पर उनसे जिरह करे और वह सिद्ध हुए मामले फिर सन्दिग्ध वन जांय। इस लिये इस एक मामले में ज्यादा से ज्यादा ५००) रु० दण्ड है, दण्ड दे देना अच्छा है बाकी के सिद्ध हुए अभियोगों को बिगाड़ना अच्छा नहीं। हम चाहते थे दण्ड होना नहीं चाहिए, वह कहता था ४२ अभियोगों में से एक अभियोग के आधे अंश के असिद्ध रह जाने पर विचारवान् वस्तुस्थिति को समझ लेते हैं। इसलिये न्याय की दृष्टि में अभियोग को सिद्ध न करने के कारण इस दण्ड को सहन कर लो, गवाह मत दो। यह बात बम्बई के समस्त वैद्य जानते हैं कि वकील के कहने पर गवाह पेश नहीं किये गये, वरना यदि कहीं मैं एक गवाह भी पेश कर देता तो माननीय न्यायाधीश के रिमार्क से यह झलक मिलती है कि वह मुझे इस अभियोग से भी अवश्य ही मुक्त कर देता। अभी अभी शिव शर्मा ने सितम्बर १९५७ की पत्रिका में फिर अपना जो वक्तव्य छपाया है वह महामण्डल के धन से फिर अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने का प्रयत्न है।

पत्रिका के पृष्ठ ५७९ पर कहता है:—"वैद्यों के पत्रों का तूफान उमड़ आया। मुझसे पूछा जाता है कि अपने विरुद्ध इस मिथ्या प्रचार की रोक के लिये मैं न्यायालय की शरण क्यों नहीं लेता।" सकता है? तभी तो वह आगे कहता है:—

"मैंने कानूनी अनिश्चितताओं द्वारा सम्भव भ्रान्त निर्णयों के खतरे को छोड़ कर सीधे सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा सीधी गवाही प्रकाशित कर के सत्य को प्रकाश में लाने का मार्ग क्यों ग्रहण किया है।" आगे कहता है:— "मुकदमा करने पर न्यायाधीश निम्न कारणों द्वारा सत्य रहित निर्णय कर सकता है।" पाठक! इसकी गर्वोक्ति की पंक्ति से इस पंक्ति की संगति को मिलाइये।" (१) मेरे कथन पर विश्वास न करके कि मैंने कभी राष्ट्रपति को शिलान्यास करने को नहीं बुलाया न वह कभी शिलान्यास के लक्ष्य से ऋषिकेश के लिये रवाना ही हुए।"

जब वह शिलान्यास के लिये नहीं गये थे तो उस दशा में तुम वहां उन्हें भाषण सुनाने किस हैसियत से गये? यह तो बताओ। सदस्यगण! वैधानिक रूप से राष्ट्रपति जी को बुलाने का यही जुम्मेवार था। सचित्र आयुर्वेद की जिस 'एक दुखद घटना" शीर्षक पर शिव शर्मा अपनी सफाई पेश करने के लिए महामण्डल के धन का दुरुपयोग कर रहा है उसका मुंह तोड़ उत्तर 'महामण्डल सदस्यों से एकप्रश्न' नामक इसी अंक के प्रथम लेख में पढ़ लें कि "वह सचित्र आयुर्वेद का द्वेष पूर्ण आविष्कार मात्र है" कि सच्चाई पूर्ण?

अदालत का दरवाजा खटखटा कर उसका परिणाम उसके सामने यह आया है "कि न्यायाधीश के सामने जाने पर कानूनी अनिश्चितताओं द्वारा सम्भव भ्रान्त निर्णयों का खतरा है। दूसरे वह सत्य रहित निर्णय कर सकता है।" इसलिये उसका जिस न्यायालय पर बड़ा विश्वास था वह उड़ गया है। अब उसे न्यायालय पर कोई विश्वास नहीं रहा, इसलिये उसने सदस्यों को भ्रम में डालने के लिये संस्था के पैसे से अपनी प्रतिष्ठा स्थापन का मार्ग फिर अपनाया है। वह अपने जेब से पैसे न खर्च करके गरीब वैद्यों के चन्दे से जो संस्था चल रही है उसके धन को अपहरण करता रहता है, वह अब तक भी संस्था का पीछा नहीं छोड़ता। क्या इसके लिए न्यायालय जाना होगा?

एक ही दफा की डबल मार से जिसकी कमर टूट गई हो भला वह कभी फिर सिर उठाने का साहस कर

ग्राहकों का सूचना

वर्षा और बाढ़ों के कारण तथा युद्ध के खतरों से देश विदेश की चीज़ों का भाव एकाएक चढ़ गया है। सूची पत्र छपते छपते निम्न चीजों के दाम और बढ़ गये हैं।

दारचीनी १५५) मन, पारा ४२) सेर,
सिगरफरूमी ४१) सेर, केशर कश्मीरी १३) तोला,
कस्तूरी नैपाली ८६) तोला।

इसी तरह कुछ और चीजों के भाव भी बढ़ रहे हैं। ग्राहक माल मंगाते समय इधर ध्यान रखें या प्रथम पत्र डाल कर भाव पूछ लें।

मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ४ कार्तिक सम्वत २०१४ संख्या ११

नवम्बर १९५७

आयुर्वेद-विज्ञान

चिकित्सा संसार में क्रान्ति लाने वाला मुख्य वैज्ञानिक पत्र

AYURVED-VIJNAN

The Leading Hindi Journal Explaining The Ayurvedic System on Scientific Lines

सम्पादक
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

विषय-सूची

१. व्याधियों का क्रम विभाजन कैसे हो ? १८१
२. यकृत के कार्य १८४
३. दीर्घायु प्राप्ति कैसे हो ? कुछ अनुभव १८६
४. खाद्यपेय और औषधरूप द्रव्यों की क्रियाएं शरीर के भीतर कैसे चलती हैं ? ... १९१
५. विचर्चिका पर सफल प्रयोग (ले० श्री पी. डी. जोशी वैद्य, मुरादाबाद) १९५

प्रकाशक—
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य, आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय, २२ फैज़ बाज़ार, देहली ।

मुद्रक—न्यू दलिया प्रिंटिंग प्रेस, दाईवाड़ा नई सड़क, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियम

१—आयुर्वेद-विज्ञान प्रत्येक अंग्रेजी मास की १ तारीख को प्रकाशित होता रहेगा।

२—डाक-व्यय सहित इसका मूल्य ३) वार्षिक, एक प्रति का मूल्य ।=) होगा।

३—पत्र मंगाने वालों को अपना पता साफ २ अक्षरों में लिखना चाहिये।

४—जिन व्यक्तियों के पास उस मास की ५ ता० तक पत्र न पहुंचे उन्हें इसकी सूचना देनी चाहिये।

५—यदि एक-दो मास के लिये पता बदलवाना हो तो उसका प्रबन्ध स्वयम् डाकखाने से कर लेना चाहिये। अधिक समय के लिये पता बदलवाना हो तो फिर हमें सूचित करना चाहिये।

६—पत्र व्यवहार करते समय ग्राहकों को अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये। अन्यथा उत्तर नहीं दिया जावेगा।

७—पत्र व मूल्य सम्बन्धी पत्र-व्यवहार मैनेजर आयुर्वेद विज्ञान के नाम से और लेख, समालोचनादि व पुस्तकादि सम्पादक के नाम से भेजना चाहिये।

८—कोई भी पत्र, पुस्तक समालोचना के लिये भेजी जाय उनकी दो प्रति भेजनी चाहिये।

९—आयुर्वेद विषयक वैज्ञानिक गवेषणापूर्ण लेखों को पत्र में सर्व-प्रथम स्थान दिया जायेगा और श्रेष्ठ सचित्र लेखकों को पुरस्कृत भी किया जायगा।

१०—वृथा के आडम्बर पूर्ण पृष्ठ-पोषक लेखों के लिये इसमें स्थान नहीं मिलेगा। किसी भी लेख को घटाने, बढ़ाने व प्रकाशित करने, न करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार होगा।

११—जो लेख भेजे जायें, कागज पर एक तरफ हाशिया छोड़ कर लिखे होने चाहिये।

१२—उत्तम २ अलभ्य आयुर्वेद साहित्य सम्बन्धी चित्र लेख व वनस्पतियों आदि को जो सुरक्षित भेजेंगे उनको सपारिश्रमिक मार्ग व्यय आदि सब आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय से दिया जायेगा।

१३—आयुर्वेद शास्त्र सम्बन्धी प्रश्नों को छोड़ कर किसी परामर्श सम्बन्धी या किसी रोगी के लिये रोग-सम्बन्धी प्रश्नों पर प्रति प्रश्न के लिये आयुर्वेद-विज्ञान के ग्राहक आठ आना, जो ग्राहक नहीं वह प्रति प्रश्न एक रुपये का टिकट प्रश्न के साथ भेजेंगे तभी उनके प्रश्न और उत्तर छापे जायेंगे।

विज्ञापन छापने के नियम

१—किसी भी विज्ञापन छापने वाले या बन्द करने वाले को पत्र प्रकाशन से १५ दिन पूर्व सूचना देनी चाहिये।

२—अश्लील सभ्यता के विरुद्ध विज्ञापन नहीं लिये जायेंगे।

३—कोई भी विज्ञापन जनता को धोखा देने वाला सिद्ध होने पर उसका प्रकाशन बन्द कर दिया जायगा और जब तक वह सन्तोषप्रद प्रमाण न देगा जो मूल्य आ चुका है वापस नहीं दिया जायगा।

४—विज्ञापन का मूल्य सर्वथा प्रथम लिया जायगा।

५—आधे कालम से कम विज्ञापन दाताओं को आयुर्वेद विज्ञान विना मूल्य नहीं दिया जायगा।

६—एक वर्ष के लिये विज्ञापन देने वाले को =) रुपया कमीशन काट दिया जायगा।

विज्ञापन के दर

७—१ पृष्ठ यानी २ कालम की प्रतिवार की छपाई ४०)

आधा पृष्ठ	" १	"	"	" २४)
चौथाई ,,	१।२	"	"	" १६)
टाईटल के पीछे के पृष्ठ की			"	" ५०)
"	तीसरे "	की	"	" ४५)
"	चौथे "	की	"	" ६०)

८—ट्रेड डायरैक्टरी में विषय वार विज्ञापन प्रति ३) रु० के हिसाब से लिया जावेगा।

मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद-विज्ञान

आयुर्विदेव वितते किल शास्त्र जाते पुम्भिः प्रयत्नपरकैर्भवतीह लभ्यम् ।
शक्तिं शिवं च जनता यदि कांक्षतीयम् विज्ञानमेव भजतां सततं विशेषम् ।।

वर्ष ४ | २०१४ कार्तिक वि०, नवम्बर १९५७ई० | अंक ११

व्याधियों का क्रम विभाजन कैसा हो ?

आयुर्वेदज्ञों ने रोगों के जो विभाग बताए हैं—जैसे ज्वर, अतिसार, कास, श्वास आदि इन्हीं मुख्य प्रधान लक्षणों को सामने रख कर बनाये हैं और उनका नामकरण किया गया है। ज्वर, कास यह तो रोग के मुख्य लक्षण हैं। वैद्य कहेंगे नहीं, यह तो प्रधान रोग है। एक एक रोग को लेकर व्याधियों का वर्ग विभाजन हुआ है वास्तव में ऐसी बात नहीं है। 'रुज सन्तापे' धातु बताती है कि शरीर मन को दुखित करने वाले लक्षणों का नाम रोग है क्योंकि 'येन लक्ष्यते तल्लक्षणम्' जिस प्रकट रूप से किसी वस्तु का ज्ञान हो उसे लक्षण कहा गया है। कोई खों खों करके फूटे कांसे के बर्तन जैसी जब ध्वनि निकालता है उस ध्वनि को सुन कर हमने उसका नाम कास रख लिया। मल एक दो दफा नित्य सरता है किन्तु जब अधिक बार सरने लगे तो उसका नाम अतिसार दे दिया। इस तरह प्रधान लक्षण का जो नाम दिया गया उसे ही व्याधि नाम से जाना गया। उस व्याधि या प्रधान लक्षण में जो स्थिर रूपान्तर देखे गये उन सबों के विभेद से एक एक वर्ग बना दिया गया। जैसे मूत्र मार्ग से जाने वाले पदार्थों का प्रमेह वर्ग, त्वचा में विकृत रूप लाने वाले को कुष्ठ वर्ग इत्यादि। यह वर्गीकरण वास्तव में बाह्य रूप को देख कर ही किया गया था आन्तरिक कारण रूप को जान कर नहीं।

ज्वर क्यों हुआ ? खांसी क्यों आने लगी ? इसका कारण क्या है ? आज से हजारों वर्ष पूर्व इसको देखने के प्रत्यक्ष साधन नहीं थे, इसीलिये उन लक्षणों वाली व्याधि के साथ जो विशेषताएं दिखाई दीं उनको मुख्य कारण मान लिया गया और उन सबों को तीन वर्गों में बांट दिया गया। जिन्हें हम वात, पित्त, कफ के नाम से जानते हैं। इसकी चरक के वातकलालीय नामक अध्याय से पूरी साक्षी मिलती है।

हमने प्रत्येक रोगों में इन्हें कारण मान लिया और इन्हीं तीन दोषों की न्यूनाधिक स्थिति को समझ कर उस बढ़े हुये दोषों को शमन करने का प्रयत्न किया। परन्तु अब देखने वाली बात सामने यह आ रही है कि हमने जिसको रोगों का मूल कारण मान लिया था वस्तुतः वह है भी कि नहीं। यह संशय तब उत्पन्न हुआ, जब हमारे सामने आयुर्वेद से भिन्न कई प्रकार की चिकित्सा-पद्धतियां आईं और उनके द्वारा रोगों के कारण और उसके वास्तविक रूपों को समझने समझाने के साधन दिखाई दिये।

पूर्व काल में साधनों के अभाव में हम यह समझते थे कि 'वादे वादे जायते तत्वबोधः' तर्क वितर्क से ही वस्तु स्थिति का सही बोध हो जाता है और 'आप्तोपदेशः प्रत्यक्षम् अनुमानं चेति' आप्तोपदेश, प्रत्यक्ष और अनुमान द्वारा जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तर्क सर्वोपरि रहे उसे निर्णायक मान लिया जाता था। परन्तु यह विधि तो तब तक ग्राह्य थी जब तक हम किसी तथ्य को प्रत्यक्ष नहीं कर पाते थे, आप्त और अनुमान से जिसको समझते थे उसे नये नये साधनों से जब प्रत्यक्ष दर्शन द्वारा समझा जाता हो तो फिर वहां इन प्रमाणों की आवश्यकता नहीं रहती। हमारे शास्त्रकारों ने भी प्रत्यक्ष को निर्भ्रम माना है और कहा है 'प्रत्यक्षे किं प्रमाणम्' इसके लिये अन्य प्रमाणों की आवश्यकता क्या?जो वस्तु यथार्थ रूप में प्रत्यक्ष देखी जा सके वही आचार्यों को मान्य थी, और आज समस्त विचारवानों को बिना किसी आग्रह के मान्य है। इसीलिये तो जो आविष्कार पाताल लोक में होते हैं मृत्यु लोक वासी हम सब उसे इसीलिये ठीक मान लेते हैं क्योंकि वह प्रत्यक्ष किये गये हैं।

प्रत्यक्ष में मत या वाद के लिये कोई स्थान नहीं होता। मत और वाद अप्रत्यक्ष कारणों पर लागू होते हैं। हमारा त्रिदोषवाद प्रत्यक्ष साधनों द्वारा जाना हुआ सिद्धान्त नहीं। इसीलिये जिन रोगों में हम उसे कारण रूप से मानते थे यदि उन रोगों का प्रत्यक्ष साधनों द्वारा जाना हुआ कारण होता तो आज अन्य कारण दिखाई न पड़ते। अतः जो हमें दिखाई दें तो हमें उसे मानने में आपत्ति नहीं करनी चाहिये। सत्य को निःसंकोच स्वीकार कर लेना ऋषियों का आदर्श रहा है।

व्याधियों का कारण—जब अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी साधन हाथ आये तो उनकी सहायता से यह जाना जा सका कि जिस तरह हम अन्य प्राणियों, वनस्पतियों को खाकर अपना जीवन निर्वाह करते हैं इसी तरह अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी जिन्हे नंगी आंखों से नहीं देखा जाता–ऐसे प्राणी भी दूसरे प्राणियों के शरीर पर अपना गुजारा करते हैं। 'जीवो जीवस्य जीवनम्' इस शास्त्रीय सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक प्राणी दूसरे प्राणी को खाकर ही जीवित रह सकता है। वह अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी जिनकी जैव (जीवाणु कीटाणु) संज्ञा दी गई है, यह अत्यन्त सूक्ष्म प्राणी मानव जैसे अपने से अनन्त गुणा वृहदाकार को खाते रहते हैं और खाकर उसकी जीवन लीला समाप्त कर देते हैं इसका आभास यद्यपि पूर्वाचार्यो को हो गया था यथा—

उदके बहवः प्राणाः पृथिव्यां च फलेषुच।

सूक्ष्म योनीति भूतानि तर्क गम्यानि भारत। महाभारत।

सूक्ष्मत्वाच्चैके भवन्त्यदृश्याः। चरक।

सौक्ष्म्यात् केचिददर्शनाः। वाग्भट।

केचित् सूक्ष्मास्तथाणवः। हारीत सं०।

उक्त प्रमाण इस बात की पुष्टि करते हैं कि उस समय इन सूक्ष्म जन्तुओं का आभास तो मिला था किन्तु वह तर्क गम्य ही था, क्योंकि उस समय प्रत्यक्ष साधन हाथ नहीं आये थे। इसमें कोई शक नहीं कि उस समय इनको प्रत्यक्ष कर लिया गया होता तो आज रोगों की सम्प्राप्ति दोष धावन वाद पर स्थिर न रहती। जो प्रत्यक्ष देखा जाता उसे ही वह मानते।

उस समय उक्त बात का ही आभास नहीं मिला था प्रत्युत यह भी ज्ञात हो गया था कि चक्षु अगम्य प्राणियों द्वारा व्याधियां भी होती है। यथा:—

कुष्ठं ज्वरश्च शोषश्च नेत्राभिष्यन्द एवच। औपसर्गिक रोगाश्च संक्रामन्ति नरान्नरम्। सुश्रुत।

इन सूक्ष्म जैवों के द्वारा कुष्ठ, ज्वर, राजयक्ष्मा आदि व्याधियां एक दूसरे से लग जाती है। यदि कहीं वे इसे प्रत्यक्ष कर लेते तो आज आयुर्वेद सिद्धान्त का नक्शा ही दूसरा दिखाई देता। हम संसार के विद्यमान रोगों के कारण भूत सिद्धान्त से इतनी दूर न होते जितने कि आज दिखाई दे रहे हैं।

इस समय के इन प्रत्यक्ष साधनों द्वारा जितने भी प्रधाव रूप में ज्वर माने गये हैं वह सब ही इन सूक्ष्म जैवों के शरीर में प्रवेश कर जाने पर होते हैं। यह प्रश्न भिन्न है कि कौन व्यक्ति सक्षम होता है जिनके शरीर में इनके प्रवेश से रोग नहीं होता। अक्षम व्यक्ति में रोग होता है और उन जैवों के बने रहने पर ज्वर भी बना रहता है, उनके नष्ट हो जाने पर ज्वर भी जाता रहता है और अब तो ऐसी औषधियां उपलब्ध हैं जिनसे अवधि बन्धी ज्वर जैसे 'मोक्षाय च वधाय च' की मर्यादा की प्रतीक्षा नहीं करतीं। जिन रोगों को शास्त्रकारों ने असाध्य कहा था आज वे साध्य होते दिखाई दे रहे हैं ऐसी स्थिति में जो भी प्रत्यक्ष है हमें उसी तरह उसे ग्रहण कर लेना चाहिये जिस तरह होम्योपैथी वाले ग्रहण कर लेते हैं। होम्योपैथी वालों का अपना स्वतन्त्र निदान कुछ नहीं होता, इस समय तक जो भी प्रत्यक्ष साधनों से रोग के कारणों का ज्ञान होता है, जैसे उन कारणों को अलोपैथ वाले मानते हैं उसी तरह वह भी मानते हैं, केवल भेद है तो चिकित्सा का है। अलोपैथ रोग के कारण को ढूंढता है और उस कारण को अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा विधियों से नष्ट करन का प्रयत्न करता है। होम्योपैथ इतनी गहराई तक नहीं जाता वह तो बाह्य लक्षणों को देखता है और औषधि के गुण प्रभाव द्वारा उद्भूत लक्षणों से उसका तारतम्य मिलाता है और जिन औषधियों के ऐसे ही लक्षण उत्पन्न करने के गुण होते हैं उनका वह अति सूक्ष्म मात्रा में उपयोग करता है। व्याधियों को इस तरह वह उसी रूप में मानता है जिस रूप में जिन कारणों से उत्पन्न होती है।

व्याधियों का क्रम विभाजन—प्राचीन काल में हमें शरीर विषयक इतना सूक्ष्म ज्ञान नहीं था जितना इस समय है, शरीर के बहुत से अंगों को तो जान लिया गया था किन्तु उन अंगों को शरीर के लिये क्या कार्य-व्यापार करने पड़ते हैं इसका ज्ञान हमें नहीं था, जैसे फुफ्फुस, वृक्क, मस्तुलुंग (मस्तिष्क) ग्रन्थि आदि। इस समय हम इन अंगों का ही नहीं अवयवों (तन्तुओं) कोषाओं तक के सही सही कार्य व्यापार को जान गये हैं और यह भी अच्छी तरह समझ गये हैं कि रोगावस्था में शरीर के अंगों में क्या क्या विकृति या परिवर्तन आते हैं। इस समय यह अच्छी तरह मालूम हो गया है कि व्याधि का कारण चाहे जान्तव हो या दोष, शरीर के जिस अंग को वह प्रभावित करते हैं वहां अपद्रव्य संचय, शोथ, दाह, कोथ, और उस अंग के अवयवों में विनाश का दृश्य देखा जाता है। किस रोग में कौन सी विकृति प्रथम आरम्भ होती हैं और उसके बाद क्या क्या परिवर्तन आते हैं यह सब प्रत्यक्ष देख व समझ लिया गया है। इनमें दोष प्राधान्य से कोई अन्तर नहीं पड़ता, जब व्याधि का कारण और उससे होने वाली विकृति के स्वरूप स्थिर हों तो वहां सम्प्राप्ति की कल्पना एक परिहास का विषय बन जाता है। तभी तो कास चाहे शुष्क हो या तर श्लेष्म आता हो या न आता हो उसका तो प्रथम कारण और विकृति का स्थान जानना आवश्यक होता है। एक ही कास फुफ्फुस प्रणाली की विकृति, कंठ, तालु की विकृति, हृदय की विकृति, यकृत की विकृत से आ सकता है। इसमें कारण क्या है? और विकृति का स्थान कौन सा है? केवल कास को देख कर नहीं जाना जा सकता। 'रोगमादौपरीक्षेत' के लिये जो आदेश दिया है उसका अभिप्राय यही है। रोगी में रोग के स्थान और विकृति के स्वरूप को परीक्षा की विधियों से समझे, रोग ऐसी वस्तु तो है नहीं कि केवल खांसता हुआ देख कर मान लिया इसे कास है। श्लेष्म आता देखा तो श्लेष्मज मान लिया, शुष्क है तो उसे वातज या पित्तज मान लिया, यह कोई परीक्षा नहीं है। रोग का स्थान तो शरीर के भीतर है जिसे हम प्रत्यक्षतया देख नहीं सकते, इसलिये उसे किस तरह देखा और समझा जाय? यह शैली वैज्ञानिक युग की देन है, हमें इसे समझना चाहिए। इसीलिये तो शरीर के कार्य व्यापारों को देख कर उनका विभाजन किया गया। यथा:—

प्राण-वायु या ऊष्मजन का आदान प्रदान शरीर में फुफ्फुस तक होता है, यहीं तक प्राण-वायु पहुंचता है और अपना कुछ अंश शरीर को देकर वहाँ से दूसरा कज्जलद्वि-ऊष्मिद वायु अपने में मिलाकर बाहर लौट आता है। इस कार्य के आधार पर इसको श्वास-प्रणाली या श्वास संस्थान का नाम दिया गया। इसी तरह मुख मार्ग से हम भोजन करते हैं, वह अन्न आमाशय से होता हुआ ग्रहणी में, ग्रहणी से क्षुद्रान्त्र और क्षुद्रान्त्र से बृहदन्त्र में जाता है वहाँ से वह गुण्डुभ स्थल से बाहर कर दिया जाता है। इस के आने जाने और ठहरने का इतना ही स्थल है इसलिये इसका अन्न प्रणाली या अन्न संस्थान के नाम से एक भिन्न विभाग बना दिया गया। इसी तरह रक्त हृदय से होकर शरीर के एक एक कोष तक पहुँचता है और सिरा मार्ग से फिर वहीं लौट आता है इसलिये इसे रक्त प्रणाली या रक्त संस्थान कहा गया। मूत्र वृक्कों में बनता है और मूत्रवाही स्रोतों से बस्ति में संचित होता है और शिश्न मार्ग से बाहर निकल जाता है, इन सम्मिलित अंगों का इतना ही काम है इसलिये इसे मूत्र प्रणाली या मूत्र संस्थान का नाम दिया गया। इसी तरह पेशी संस्थान, स्नायु संस्थान, ग्रन्थि संस्थान, आधार संस्थान आवरण संस्थान आदि उनके कार्य विभागों को देखकर शरीर के १० विभाग कर दिये गये। यह विभाजन इस दृष्टि से ठीक रहा कि कुछ व्याधियां एक विभाग या एक संस्थान में होती हैं तो दूसरी दूसरे संस्थान में। कुछ व्याधियों के कारण जैवों की प्रवृत्ति भी किसी विशेष संस्थान के अंग पर आक्रमण करने और वहाँ केन्द्र बनाकर बढ़ने की होती है जैसे मन्थर ज्वर का अन्न संस्थान में, विषम ज्वर का रक्त संस्थान में, उपदंश, सुजाक का मूत्र संस्थान में, सन्निपात ज्वरों का श्वास संस्थान में आदि।

रोग का स्थल कौन सा संस्थान है, और उस संस्थान में दुष्ट धातु से कितने प्रकार की विकृतियाँ होती हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन विकृतियों से स्थानिक या सार्वदेशिक शरीर पर क्या क्या प्रभाव होते हैं उसमें कौन कौन से लक्षण देखे जाते हैं ? इस विभाजन से इस बात का पता चल जाता है कि रोग के केन्द्र का संस्थान कौन सा है, और उस संस्थान के अंगों में से कौन सा अंग किस रोग से प्रभावित होता है, कैसे होता है इसका जानना सुकर हो जाता है दूसरे परीक्षा के समय उस रोग का प्रभाव स्थानिक या सार्वदेशिक होता है यदि सार्वदेशिक होता है, तो उसके प्रभाव से क्या क्या विकृतियां उत्पन्न होती हैं यह सब बातें परीक्षा से देखी जाती हैं।

हमारे यहाँ जो रोगानुसार रोगों का विभाजन हुआ है उससे हम यह नहीं जान पाते कि राजयक्ष्मा होने पर शरीर का कौन सा अंग विकृत हुआ है और उस विकृति का स्वरूप क्या है और उसकी परीक्षा हम किस प्रकार करें। परीक्षा विधियों की कमी से हम अनेक बार ज्वरों के विभेद को ठीक तौर पर नहीं जान पाते। जब हमारे सामने रोगों को जानने समझने के साधन आ गये हों तो एक चिकित्सक बनने के कर्तव्य में यह बात पहले ही आती है कि परीक्षा द्वारा रोग के स्वरूप को, कारण को जानें, यदि हम अपना रोग विभाजन क्रम छोड़ कर इस प्रयोग जन्य सतपथ की ओर अग्रसर हों तो हम अनेक वादों से मुक्ति पाकर उस वैज्ञानिक मार्ग के पथिक बन जाते हैं जो आयुर्वेद को विद्यमान विज्ञान से समन्वित करने में पूर्ण सहायक सिद्ध हो सकता है। क्या हमारा विद्वत् समाज इस पर विचार विनिमय के लिये समर्थ है ?

आयुर्वेद विश्वभारती सरदारशहर (राजस्थान) के छात्रसंघ का चुनाव सुसम्पन्न

आयुर्वेद विश्वभारती छात्रसंघ का चुनाव वि० २८-९-५७ को आचार्य श्री नरहरिजी शास्त्री, भिषागाचार्य की अध्यक्षता में बड़े उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुआ जिस में निम्न छात्र चुने गये।

१–अध्यक्ष	श्री गणेदासबलभद्री
२–उपाध्यक्ष	श्री योगेन्द्रप्रकाश
३–प्रधानमन्त्री	श्री महावीरप्रसाद महात्मा
४–कोषाध्यक्ष	श्री वैकुण्ठानाथ शर्मा
५–समाज मन्त्री	श्री वेदप्रकाश शर्मा
६–क्रीडा मन्त्री	श्री प्रकाशचन्द्र शर्मा

प्रधान मन्त्री
छात्रसंघ आयुर्वेदविश्वभारती सरदारशहर (राजस्थान)

यकृत के कार्य

यहां प्रसंग वश कुछ यकृत के द्वारा होने वाले कार्यों पर प्रकाश डाल देना उचित समझता हूँ। हमारे शरीर के आन्तरिक भाग की ठीक व्यवस्था को बनाये रखने में यकृत बड़ा भारी काम करता है यह प्रयोगों से ज्ञात हुआ है।

मनुष्य अच्छी बुरी, ग्राह्य, अग्राह्य अनेक प्रकार की वस्तुएं खाया करता है। आप कहेंगे अग्राह्य वस्तु कौन सी है जिसे मनुष्य खाता है। तम्बाकू, पान, अफीम, शराब, सिगरेट, चाय आदि सब ही अग्राह्य वस्तुएं हैं यह एक भी शरीर की क्षय पूर्ति या वृद्धि में काम नहीं आतीं, इसी लिये तो अग्राह्य हैं। इन्हें जाने दीजिये, ग्राह्य स्वादिष्ट वस्तुएं भी जब वह मात्रा से अधिक खा जाता है और उनका विपाक रस ठीक नहीं बनता, वह शरीर के लिये उपयोगी नहीं होता। उसके रूप में अनेक रासायनिक परिवर्तन आते रहते हैं उससे कोषा के लिये हानिकर अनुपयोगी अनेक रूपों के श्लिषीय रूप के पदार्थ बनते हैं, वह सब जब प्रतिहारिणी शिरा मार्ग से यकृत में पहुंचते हैं यकृत की कोषाएं उसके अग्राह्य रूप को नष्ट कर उसका यौगिक बदल देती हैं। उसे ऐसे रूप में ले आती हैं जो शरीर की कोषाओं के द्वारा ग्रहण योग्य हो जाता है अर्थात भुक्त द्रव्य के ऊपर जब विपाक की क्रिया अन्न में अपूर्ण रह जाती है वह यहां पूर्ण हो जाती है, बिषाक्त रूप के पदार्थ निर्विष किये जाते हैं। दूसरे हमारे भोजन में शार्करी पदार्थों की मात्रा वैसे ही अधिक रहती है फिर हम लालच वश मीठा जब अधिक खा जाते हैं तो पाठक यह न समझें कि सारी शर्करा द्राक्षशर्करा में वदल कर रक्त में पहुँच जाती होगी ऐसी बात नहीं है। रक्त में द्राक्षशर्करा की मात्रा १२०सि०ध० तक होती है। भोजनोपरान्त वह १८० सी० घा० तक बढ़ जाती है किन्तु कुछ देर में वह पूर्व स्थिति में लौट आती है। इसमें कारण यह कि बढ़ी हुई मात्रा को यकृत अपने भीतर इतनी देर में जमा कर लेता है। जो बहुशर्करोज (सितसार) आंतों में एक शर्करोज (Monosaccharides) में बदलता है इसे वह मधुजन में बदलकर अपने भीतर संचित करता रहता है। जितनी भी अधिक शर्करा की मात्रा बढ़ी होती है उसे यकृत एकत्र कर मधुजन में बदलकर स्टाक कर लेता है, रक्त में उतनी ही मात्रा जाने देता है जितनी कि उसमें रहनी चाहिये। मान लीजिये दस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पन्द्रह दिन हमें केवल अस्रजनीय पदार्थ अण्डे, मांस, दुग्ध आदि अधिक खाने को मिलते हैं। शार्करी पदार्थों की मात्रा उनमें बहुत कम होती है। हमारा चलने, फिरने, उठने, बैठने का जो व्यापार चलता है इसमें शक्ति का व्यय होता रहता है उसकी पूर्ति द्राक्षशर्करा के दहन से होती रहती हैं। जब बाहर से शार्करी पदार्थ नहीं प्राप्त होते तो यकृत संचित किये मधुजन को फिर द्राक्षशर्करा में बदलता रहता है, यही नहीं उसमें यह भी शक्ति है कि स्नेही पदार्थों के अणुओं को तोड़कर उससे और अस्रजन के अणुओं को तोड़ कर उससे भी द्राक्षशर्करा बनाकर रक्त में उस समय भेजे जब कमी हो। क्योंकि शरीर रूपी गाड़ी कहीं शक्ति के अभाव में रुकने न लग जाय इसको वह देखता रहता है और उसकी पूर्ति करता रहता है। जितने बड़े२ रासायनिक रूपों का परिवर्तन यकृत की कोषाओं में होता है, इतवा और ऐसा शरीर के किसी भाग में भी नहीं होता, इसीलिये इस रासायनिक क्रिया के सम्पादनार्थ उसे अधिक ऊष्मजन की आवश्यकता रहती हैं। ऊष्मजन की मात्रा उसके पास भरपूर रहे तो उसकी कार्य क्षमता बहुत बढ़ी रहती है।

लोह संग्रह—शरीर में रक्त एक ऐसा माध्यम है कि जिसके बिना शरीर की यह गाड़ी चल ही नहीं सकती। यह रक्त जिन रक्ताणुओं के कारण लाल रंग का दिखाई देता है इसकी रासायनिक रचना में लोह का अंश विद्यमान रहता है। इस लोह की जीव रसायन प्रक्रिया से यकृत ऐसी भस्म बनाता है और अपने पास काफी मात्रा में संचित रखता है, जो लोह सदा सक्रिय रूप में रहता है। जिस समय रक्त कणिकाओं की किसी कारण से न्यूनता होती है और मज्जा में रक्ताणुओं की रचना बढ़ती है तो उसके लिये यकृत ही लोह की यह भस्म उसे प्रदान करता है जिससे रक्त की कणिकाएं रंजित होकर लाल हो जाती हैं। यह लोह वह खाद्य द्रव्यों के विपाक रस से और शरीर के भीतर परिभ्रमण काल में नित्य पदमों की संख्या में जो रक्ताणु मरते रहते हैं उनसे जो लोह भस्म मुक्त होती है उसे यह संचित करता रहता है, लोह भस्म की आवश्यकता शरीर को बहुत रहती है इसीलिये यकृत से भिन्न उसे प्लीहा भी संचित करती है, किन्तु मुख्यतया इसके संचय का स्थान यकृत ही होता है।

उदर में चलती रसायन क्रिया से रंजन द्रव्यों का संग्रह :—भुक्त द्रव्यों में कुछ रंजक द्रव्य भी हुआ करते हैं जो पित्त और रक्त को रंजित करते हैं। कुछ रंजक द्रव्य रक्ताणुओं के मृत होने से उससे मुक्त होता है इनमें कुछ लोह युक्त कुछ लोह रहित होता है, इनका उपयोग रक्त और पित्त की रचना में होता है। इसलिये वह इनका भी स्टाक करता है और आवश्यकता के समय स्वयम् भी उपयोग करता है, तथा मज्जा को भेजता है। इन कार्यों से भिन्न वह रक्त को शरीर के भीतर गाढ़ा होने से बचाने के लिये यकृतीन नामक एक ऐसा पदार्थ बनाता है जिसकी विद्यमानता के कारण रक्त एकसा द्रव रूप में बना रहता है? इससे भिन्न इसके विपरीत यदि चोट लगकर रक्त का स्राव होने लगे तो रक्त ज्यादा न बह जाय इसकी रक्षा के लिये रक्त-तन्तु-जन नामक एक और रासायनिक द्रव्य बनाकर रक्त में भेजता रहता है। जिसकी विद्यमानता के कारण चोट लग कर जब रक्त शरीर से बहने लगता है तो उस रक्त-तन्तु-जन द्वारा रक्त में तन्तुओं की रचना होने लगती है, जिसमें रक्त के लाल श्वेत कण फंस कर रक्त को जमा देते हैं। इससे भिन्न यकृत में कुछ कोषाएं ऐसी भी हैं जिनका काम पित्त लवण, पित रंजनी आदि द्रव्यों की रचना भी हैं। यह वस्तुएं पित्त प्रणाली से अन्न संस्थान में पहुँचकर स्नेह से मिलकर उसका साबुनी करण करती है ताकि वह पच कर शरीर के काम आ सके। इस प्रकार यकृत के अनेक महत्व के तो काम ज्ञात हो गये हैं और न जाने कितने होंगे जो जानने वाले हैं।

वृद्धावस्था को दूर करने का नया उपाय

पैरिस के वैज्ञानिक कुछ समय से इस बात की जांच कर रहे थे कि अपरा (Placantd) में जो ओज भ्रूण काल में निकल कर भ्रूण को जीवन-शक्ति प्रदान करता है उस ओज में क्या विशेषता है। उस अपरा के ओज को वैज्ञानिकों ने जब उसका सूचीवेध वृद्धों के शरीर में किया तो उन्होंने देखा कि इस ओज के प्रभाव से वृद्ध पुरुषों की पेशियां जो शिथिल हो चुकी थीं उनमें फिर शक्ति का संचार होने लग पड़ा है। यही नहीं उन वृद्धों की मानसिक शक्ति में काफी विकास हुआ और उस मस्तिष्क की क्रिया

[शेष पृष्ठ १९० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीर्घायु प्राप्ति कैसे हो ? कुछ अनुभव

यह देखा गया है कि जो व्यक्ति बाल्यकाल से ही बीमारियों के पंजे से मुक्त रहते हैं, वह दीर्घायु प्राप्त करते हैं। जो व्यक्ति बहुत कम बीमार हुए हैं जिनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है, उन पर वृद्धावस्था के चिन्ह शीघ्र परिलक्षित नहीं होते। वृद्धावस्था भी तो एक अज्ञात दशा में आने वाली ऐसी व्याधि है जो अपने द्वारा जीवन समाप्ति के चिन्ह परिलक्षित करती है। यदि इन दोनों में से मनुष्य को कोई स्पर्श न करे तो सम्भव है शास्त्र में वर्णित सहस्त्रों वर्ष की आयु मनुष्य प्राप्त करले तो कोई आश्चर्य नहीं। कुछ लोग कहते हैं:—

रोग और बुढ़ापा यह दोनों ही जीवन को समाप्ति की ओर ले जाने वाले अनिवार्य कारण हैं, इनसे बचना सम्भव नहीं, विचारवान् ऐसा नहीं मानते। हमारे ग्रन्थों में उल्लेख है कि प्राचीन काल के ऋषि, मुनि, तपस्वी संयमी, सदाचारी, अभ्यासी, षट्कर्म आदि साधनों के बल पर बड़ी लम्बी आयु प्राप्त कर लेते थे, क्या वस्तुतः इसमें कुछ सच्चाई थी ? इस बात की खोज पूर्वकाल में सामूहिक रूप से किसी ने की हो इसके तो हमारे पास कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं, किन्तु इस नव युग में विद्वानों का इधर ध्यान गया और उन्होंने खोज-बीन की। पहिले तो इस बात को जानने का प्रयत्न किया गया कि किस देश के मनुष्यों में औसतन अधिक आयु के व्यक्ति ज्यादा पाये जाते हैं ? ढूंढ खोज से पता चला है कि विश्व में औसतन अधिक आयु के मनुष्य शीतप्रधान देश तिब्बत, काकेशिया में पाये जाते हैं। किन्तु जिनकी आयु ८० वर्ष से ऊपर हो ऐसे वृद्धों की गणना शायद सर्वप्रथम रूस में हुई। सोवियत संघ की गणना से ज्ञात हुआ है कि वहां ८० से अधिक आयु के दो लाख से ज्यादा व्यक्ति उस संघ में विद्यमान हैं। जिनमें यूक्रेन के खारकोव, कुर्स्क, आर्केंजल प्रदेशों में तो सौ वर्ष से अधिक आयु के लोगों की संख्या सब प्रान्तों से अधिक हैं। इनसे उतरकर मास्को, लेनिनग्राद, वेलो रूस और काकेषस प्रदेश में मिलती है। अभी एक स्त्री सायवेरियनं का १८० वर्ष की अवस्था में पहुँच कर देहान्त हुआ। वहां अभी पूरे सौ वर्ष के एक दम्पत्ति ने अपनी 'जीवेम शरदः शतम्' की जयन्ति मनाई। इससे अन्दाजा लगाइये कि अन्य देशों की अपेक्षा रूस में ही शायद सबसे अधिक आयु के व्यक्ति हैं। जब वहाँ इस बात का ज्ञान हुआ कि अधिक आयु वाले व्यक्ति यूक्रेन में अधिक हैं। तो वहाँ खोजियों का एक दल इस बात की जांच के लिये भेजा गया कि वह मालूम करे वे लोग किन परिस्थितियों में रहते हैं, कैसे रहते हैं, जिसका प्रभावँ उनके जीवन पर होता है। उनकी दिनचर्या, कार्य व्यवहार, रहन-सहन का अच्छी तरह अध्ययन किया गया। कई वर्षों के अध्ययन क बाद प्रो० सर्कीजोव सेराजनी ने बताया कि हमने स्वाभाविक वृद्धावस्था, व्याधिजन्य वृद्धावस्था और मानसोद्भूत वृद्धावस्था में सूक्ष्मभेद पाया है। और इन सबों के कारण भिन्न भिन्न हैं। किन्तु सबों का परिणाम प्रत्यक्षत: शरीर की कोषाओं, स्नायु मण्डलों व मस्तिष्क क्षेत्र पर शीघ्र व देर से एक सा होता है। हमारे शरीर की मुख्य घटक कोषाओं में क्षय-पूर्ति के अर्थ जो क्रियाएं चला करती हैं उसके संश्लेषण, विश्लेषण की क्रियाओं का संचालन जिस केन्द्र संस्थान से होता है उसी में आयु की मर्यादा निहित रहती है। अर्थात उसकी सक्रियता पर आयु की मर्यादा का आधार बंधा रहता है। यदि वह स्वस्थ पूर्ण सक्रिय बना रहें तो कोषाओं के क्षय-पूर्ति करण की क्रिया अपनी स्थिरगति में सदा चलती रहती है यदि वह केन्द्र संस्थान की संचालक शक्ति उसे सक्रियता प्रदान करने में असमर्थ रहे तो कोषाओं के क्षय-पूर्ति की क्रिया घट जाती है इससे कोषाओं के जैवाद्यम में स्थिरता आकर उसमें सिक्थीकरण (Coagulation) होने लगता है। और उसका जैवाद्यम जमकर उसकी जीवन क्रिया समाप्त हो जाती है। इस तरह से शरीर की अनेक कोषाओं में यह सिक्थीकरण का व्यापार बढ़ता जाता है और इन मृत कोषाओं को हटाने भक्षण करने वाले वहां पहुँचकर उस स्थान को रिक्त कर देते हैं तो उससे शरीर का क्षय होने लगता है। यह स्थिति रोगों के द्वारा वेग से आती है और खान पान की अव्यवस्था, संयम रहित दिनचर्या, असेवनीय द्रव्यों (मादक) का व्यवहार जब बढ़ जाता है तो वार्धक्यवा का आगमन शीघ्र हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या रोग और वृद्धावस्था को आने से रोका भी जा सकता है ?

हां रोगों से बचने के लिये सबसे सरल मार्ग यही है स्वास्थ्य के नियमों का ठीक तौर पर पालन किया जाय, रोगों की उत्पत्ति के कारणों को अच्छी तरह समझा जाय, रोगों का अकस्मात् आक्रमण होने पर पथ्य व ठीक उपचार की ओर शीघ्र ध्यान दिया जाय तो बहुत कुछ रोगों के आक्रमण से बचा जा सकता है। रही वृद्धावस्था की बात जिसकी ओर आयु वर्धन होने पर मनुष्य का उधर पयान करना स्वाभाविक है इससे भी बचने की सर्वोत्तम विधियां ज्ञात हो गई हैं।

हमारा शरीर मुख्यतया तीन मोटे विभागों में बंटा हुआ है (१) अन्न प्रणाली विभाग (२) शरीर का आन्तरिक विभाग (३) आधार विभाग (अर्थात अस्थियां) इस समय के अनुसन्धानों से सिद्ध किया जा सकता है कि यदि मनुष्य की अन्न प्रणाली को बन्द कर दिया जाय या निकाल दिया जाय तो इसके बन्द होने या निकाल दिये जाने पर मनुष्य मर नहीं सकता। सिरा मार्ग से विपाकित रस पहुँचा कर शरीर के जीवन व्यापार को स्थिर रखा जा सकता है। शारीरिक जीवन-व्यापार के लिये तो अन्न प्रणाली इतना ही काम करती है कि भुक्त द्रव्य के विपाकित रस को ऐसे रूप में तैयार कर देती है जिसे शरीर के कोषांकुर ग्रहण करने में समर्थ हो जाते हैं। यदि यही विपाकित रस कृत्रिम विधि से बनाकर सिरा मार्ग से शरीर के भीतर पहुंचाया जा सके तो फिर इस अन्न प्रणाली का प्रयोजन जाता रहता है। दूसरे प्रयोगों द्वारा यह जाना गया है कि अन्न प्रणाली में हम संसार के खाद्य, पेय की समस्त वस्तुओं जो निरन्तर डालते रहते हैं उससे धीरे धीरे अन्न प्रणाली में खाद्य, पेय वस्तुओं के अंशों में जो रासायनिक परिवर्तन आते रहते हैं उनसे कुछ विपाकित वस्तुएं उपयोगी और अनुपयोगी भी बना करती हैं। जो अनुपयोगी होती हैं उनमें से कुछ कोषांकुरों के मार्ग से आचूषित होती रहती हैं, कुछ ऐसी भी होतीं हैं जो अन्न प्रणाली की दीवारों में चिपककर वहीं रह जाती हैं। जो अनुपयोगी रासायनिक रूप की वस्तुएं शरीर के भीतर प्रवेश कर जाती हैं उनका बहुत सा अंश प्रतिहारिणी सिरा द्वारा यकृत में पहुंचता है। क्योंकि अन्न और वृहदान्त्र का रस, रक्त एकत्र होकर प्रतिहारिणी सिरा द्वारा प्रथम यकृत में ही जाता है। यकृत शरीर के आन्तरिक विभाग की व्यवस्था को ठीक बनाये रखने में पूरी एक रासायनिक प्रयोगशाला का काम करता है। प्रतिहारिणी सिरा द्वारा जो अयोग्य अनुपयोगी रासायनिक रूप के पदार्थ उस सिरा मार्ग से उसके पास पहुंचते हैं वह उन अयोग्य अनुपयोगी रासायनिक रूप के पदार्थों को उपयोगी रासायनिक रूप के पदार्थों में बदलता रहता है, इस काम के लिये उसे ऊष्मजन की बहुत आवश्यकता होती है इस समय इस बात पर प्रयोग हो रहे हैं कि यकृत तक ऊष्मजन (Oxygen) किस तरह अधिक पहुंचायी जाय। देखा गया है कि वृहदान्त्र के भीतर ऊष्मजन को पहुंचाया जाय तो वृहदान्त्र की दीवार और ग्राहकांकुर दोनों ही ऊष्मजन का आचूषण करते हैं और वह ऊष्मजन प्रतिहारिणी सिरा द्वारा यकृत में पहुंच जाता है। जब यकृत को ऊष्मजन की मात्रा पूरी मिले तो जितना भी अयोग्य अग्राह्य रस अन्नमार्ग से भीतर पहुंचता है उसे यकृत पूर्णतया उपयोगी रूप में बदल देता है तब उसे आगे शरीर के भीतर पहुंचने देता है, यदि ऊष्मजन की कमी रहे तो फिर बहुत सा अंश उसी अयोग्य अग्राह्य रूप में आगे चला जाया करता है और वही अंश आगे जाकर अवयवों और कोषाओं की क्रिया में व्याघात डालता है, उसकी उपस्थिति के कारण कोषाओं का क्रिया-व्यापार शिथिल हो जाता या रुक जाता है। जिन कोषाओं का कार्य व्यापार रुक जाता है देखा गया है कि उसका जैवाद्यम सिक्थ रूप में परिवर्तित हो जाता है। कई बार यह अपद्रव्य इतने तीव्र प्रभावकारी होते हैं कि धमनियों की कला में से गुजरते समय ही वहां के कोषाओं के जैवाद्यम को जमा कर सिक्थ बना देते हैं इससे धमनियों का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है और रक्त मार्ग से विपाकितरस जितना धमनियों में से स्रव कर प्रत्येक कोषाओं तक पहुंचना चाहिये नहीं पहुंच पाता। कोषाओं को पूरा क्षय-पूर्ति कर विपाकितरस जब नहीं मिलता तो वह क्षीण होती चली जाती हैं। इधर जिन धमनियों की दीवारों की कोषाओं के जैवाद्यम का सिक्थीकरण हो जाता है उससे उस स्थान की लचक, स्थितिस्थापता घट जाती है इसीलिये धमनी काठिन्य और धमनी काठिन्य के कारण रक्तचाप वृद्धि का उदय होता है। इसका स्नायुमण्डल और मस्तिष्क पर बहुत बुरा प्रभाव होता है उनकी व्यवस्था में व्याघात आजाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है इससे वृद्धावस्था का वेग बढ़ जाता है और कई बार हृदयावसाद, मस्तिष्क गत केशिका-विदारण आदि करणों से शीघ्र सारी व्यवस्था एकाएक ठप हो जाती है। देखा गया है अन्न प्रणाली में एक साथ बीसों प्रकार की होने वाली रासायनिक क्रियाएं उसी समय तक ठीक और व्यवस्थित रूप में होती रहती हैं जब तक उनको पूरा होने का अवसर दिया जाय। पाठक कहेंगे यह कैसे मालूम किया जाय कि वह व्यवस्थित कैसे चल रही हैं। इसको समझने के लिये हमें अपनी वास्तविक इच्छाओं का अध्ययन करना चाहिये। क्षुधा हमें तब तक नहीं लगती जब तक ओझरी (आमाशय) में खाद्य द्रव्य का एक कण भी विद्यमान रहता है। वास्तविक क्षुधा के लगने पर इस बात का सही पता लग जाता है कि अन्न की थैली अब खाली हो चुकी है। जब वह खाली हो जाती है तभी उसमें गति का उदय होता है, उसकी गतियों का हमें क्षुधा रूप में भान होता है। गति से वह ओझरी सूचित करती है कि मैं रिक्त हो गई हूँ इसलिये इसमें अब कुछ पड़ना चाहिये।

जो कुछ हम खाते हैं वह स्वयं इसी तरह तो एक रूप से दूसरे रूप में चला नहीं जाता। प्रत्युत अन्न प्रणाली की कुछ ग्रंथियों में विकर नामक एक परिवर्तक पदार्थ बनता है, वह उस ग्रन्थि रस के साथ स्रव कर भुक्त द्रव्यों में मिला करता है उसके मिलने से उसके स्पर्श से भुक्त द्रव्य के एक एक अंश में परिवर्तन आता है। यह विकर अपनी अपनी ग्रन्थियों में जहां इनका उत्पादन होता है उस विकर की रचना होने में काफी समय लगता है। जितना विकर एक बार निकलता है उसके स्थान पर बनने वाला विकर ३-४ घण्टे में पूर्ण सक्रिय रूप का बनता है। यदि हमें क्षुधा नहीं अर्थात जो पेट में खुराक पड़ी हुई है उस पर तो अभी पहले विकर का काम चल रहा है दूसरा विकर उस ग्रन्थि में अभी तैयार नहीं हुआ। ऐसे समय हम बिना इच्छा के पुन: कुछ खालें, अध्यशन करलें तो यह खाये हुए पदार्थ में एक तो जो विकर मिलेगा वह अपक्व मन्द क्रिया वाला होगा, दूसरे जो उदर में खाद्य विद्यमान हैं जिस पर परिवर्तन का कार्य हो रहा है अर्थात् वह पच रहा है, नये भुक्त द्रव्य के उसमें मिल जाने पर उसकी चलती क्रिया को एक दम रोक देता है। क्योंकि जब भोजन करते हैं उस समय आमाशय की गति उस भुक्त द्रव्य को ग्रहण कर संचय करने की ओर चलती है। जब पेट भर जाता है तो आमाशय की गति उसे मन्थन करने की ओर चलने लगती है, वह भी अधिकतर आमाशय के मुख के पास, जो ग्रास अच्छी तरह मिलकर लुगदी के रूप में बदल जाता है वही आगे ग्रहणी की ओर बढ़ाया जाता है। अध्यशन के कारण जब चलती क्रिया बन्द हो जाती है, नये खाद्य की उपस्थिति कुसमय में हो जाने पर उससे जो चलती क्रिया में व्याघात आ जाता है उसी व्याघात के कारण रासायनिक परिवर्तन की क्रिया भी बदल जाती है उसमें और जो नये परिवर्तन होते हैं उससे द्रव्यके ठीक रूप नहीं बनते, इस स्थिति में वह उस रूप में न बनकर नये रूप में कुछ परिवर्तित रूप में बनने लग जाता है। ऐसे बदले हुए यौगिक से शरीर का क्षय-पूर्ति का व्यापार ठीक रूप में नहीं चलता। यह अपरिपाकित द्रव्य अन्न प्रणाली में बनते ही यहीं से उसमें ऐसे रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं जिनसे पेट में ही गन्धित, दुर्गन्धित अनेक प्रकार की वायुओं (गैसों) का प्रादुर्भाव होता है, वह चापाभिसरण गति से रक्त में जब प्रवेश कर जाती है उसके मूर्धा में पहुंचने पर वहां उसकी मात्रा बढ़ने लगती है, इससे अध्यशन कर्ता को प्राय: सिरदर्द की शिकायत रहती है इन वायुओं का प्रभाव यकृत, प्लीहा आदि शरीर के विषमार्जक अंगों पर भी पड़ता है। अब आकर प्रयोग कर्त्ताओं को मालूम हुआ है कि यकृत को इस दशा में ऊष्मजन पहुंचाया जाय तो वायवीय रूप के द्रव्य भी जो प्रतिहारिणी सिरा द्वारा यकृत में पहुंचते हैं, उन्हें भी वह समूल नष्ट कर देता है यदि उसके कोष में ऊष्मजन की कमी हो तो फिर यह वायवीय रूप वाले द्रव्य पूरी तरह नष्ट नहीं होते और आगे रक्त में चले जाते हैं और फिर शरीर के अवयव व कोषाएं उसके प्रभाव से प्रभावित होती है उनके जैवाद्यम में सिक्थीकरण होने लगता है अर्थात वह क्रियाहीन हो मृत हो जाती है, जिससे शरीर की क्षीणता बढ़ती चली जाती है।

अन्न प्रणाली में खाद्य द्रव्य पहुंचाने में जितनी अधिक असावधानी मनुष्य करता है, उसका प्रभाव निरन्तर मन्द गति से बढ़ता जाता है। उसके कारण अनेक अजैवी रोग सिर दर्द, मन्दाग्नि, अरुचि, आध्मान, श्वास, कास, आम वात तथा अन्य छोटी छोटी पचासों प्रकार की ऐसी व्याधियां उद्भूत हो जाती हैं जो जाने में नहीं आतीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये अनुसन्धान कर्ताओं का मत है कि अन्न प्रणाली के विकार बीमारी और वृद्धावस्था लाने में जितने सहायक होते हैं इतने आन्तरिक अंगों में उद्‌भूत विकार सहायक नहीं होते। आन्तरिक भाग में तो ज्यादातर जैवोद्‌भवी (जीवाणु, कीटाणुजन्य) व्याधियों के द्वारा उनके विष ही अधिक हानिकर देखे जाते हैं जिनसे बचने के इस समय काफी साधन ज्ञात हो चुके हैं और रहे सहे होते जा रहे हैं इसमें कोई शक नहीं कि इस समय जितनी भी भयकर दुखदाई शीघ्र वयहारी प्राणहारी यह व्याधियां होती हैं, इतनी अजैवी नहीं होती किन्तु इनके अवरोध के तो बहुत कुछ साधन हाथ आगये हैं जिनकी सहायता से—व्याधि का कारण ज्ञात होते ही उसे दूर किया जा सकता है किन्तु अन्नप्रणाली में उत्पन्न हुई त्रुटियों द्वारा जो व्यवस्था बिगड़ती है जिसकी गति मन्द होने के कारण छोटे छोटे कष्टों की प्रायः मनुष्य अवहेलना करता रहता है उसके द्वारा होने वाले प्रभावों का आगे चल कर इतना बुरा परिणाम होता है कि जिसके कारण शरीर के अवयव (तन्तु) और कोषाएं निष्क्रिय होकर मरती रहती हैं, धीरे धीरे शरीर जर्जर होता चला जाता है इसी से आयु घट जाती है, और मनुष्य अवस्था पूर्ण होने से पूर्व ही अकाल मृत्यु का ग्रास बन जाता है। विद्वानों का अन्दाजा है संसार के ६१ प्रतिशत व्यक्ति इसी तरह अकाल मृत्यु के मुख में जाते हैं। तभी तो अधिक तर मनुष्य ६०—७० की आयु के मध्य पहुंचते पहुंचते वृद्ध होकर मर जाते हैं। आज के युग में अधिक व्यक्ति इसी आयु के आसपास पहुँच कर असमर्थ हो जाते हैं और वह किसी आन्तरिक क्रिया व्याघात की व्याधि से ग्रसित होकर शीघ्र संसार से मुक्ति पा लेते हैं।

इससे बचाव के साधन—आयुर्वेदज्ञों ने इस ओर काफी ध्यान दिया था, पूर्व काल में उन्हें रोगों से बचाव की सबसे उत्तम विधि ज्ञात हुई थी वमन, विरेचन, वस्तिकर्म, आदि पंचकर्म जिससे शरीर का संशोधन होता था, पंचकर्म ही अन्न प्रणाली की स्थिति को ठीक करने का सर्वोत्तम साधन है। अजैवी व्याधियों को समूल नष्ट करने के लिये इससे बढ़ कर दूसरा उपाय नहीं है। हमारे आयुर्वेदज्ञों का सिद्धान्त 'उदरं व्याधि मन्दिरम्' प्रयोगों से बिलकुल सही सिद्ध हुआ है। जो व्यक्ति लंघन, वमन, विरेचन, और वस्ति कर्म द्वारा शरीर का पूर्ण संशोधन कर लेते हैं और खान पान में संयम बनाये रखते हैं वह निश्चय ही व्याधियों से बचकर दीर्घ जीवन प्राप्त करते हैं। क्योंकि जो भी विकार या अनावश्यक पदार्थों का आन्तरिक शरीर में प्रवेश होता है, उनके भीतर जाने का मुख्य मार्ग अन्न प्रणाली ही हैं यदि हम इस शरीर की रसायनशाला को सदा स्वच्छ रखने का प्रयत्न करें तो उष्ण देश में भी रहते हुए अधिक नहीं तो शतायु अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। दूसरे अब यह ठीक तौर पर पता चल गया है कि अन्न प्रणाली द्वारा प्रादुर्भूत विकार जब प्रतिहारिणी सिरा मार्ग के रक्त में मिल कर यकृत में पहुँचते हैं तब यकृत के कार्य व्यापार को पूर्ण गतिमान बनाने के लिये ऊष्मजन की उसे अधिक आवश्यकता रहती है। उसके रासायनिक कार्य व्यापार अधिकतर ऊष्मजन की अपेक्षा रखते हैं, जितना ऊष्मजन उसे फेफड़े के मार्ग से गया हुआ मिलता रहता है यह तो स्वाभाविक स्वस्थ स्थिति के लिये काफी होता है किन्तु यदि किसी और साधन से या वृहदान्त्र मार्ग से ऊष्मजन को पहुंचावें तो यह मात्रा यकृत के कार्य व्यापार को बढ़ा देती है। यकृत का मुख्य कार्य व्यापार ही आये हुये अयोग्य द्रव्यों को नष्ट कर उसे उपयोगी रूप में बदल देना है। वास्तव में रक्त को शुद्ध और उत्तम बनाये रखने वाले शरीर में दो अंग हैं—एक फुफ्फुस, दूसरा यकृत। फुफ्फुस तो केवल कज्जल द्विऊष्मिद वायु का हरण कर रक्त को शुद्ध बनाता है इसे तो रक्त की कणिकाएं शरीर के एक एक कोषा के भीतर से बटोर कर लाती हैं जिसे आन्तरिक मल का नाम दिया जाता है। किन्तु जो अयोग्य अग्राह्य द्रव्य रक्त रस में मिले होते हैं अथवा जो पचन विकारोद्‌भूत द्रव्य रस रूप में प्रतिहारिणी सिरा द्वारा यकृत में पहुंचते हैं उनको शुद्ध करके शरीर के योग्य बनाने, विषाक्त द्रव्यों को निर्विष करने का काम यकृत करता है। यदि यकृत को ऊष्मजन की मात्रा अधिक पहुंचती रहे तो फिर रक्त में अयोग्य अग्राह्य द्रव्यों की मात्रा बहुत कम रह जाती है या रहती ही नहीं। वैज्ञानिकों का कथन है कि वृहदान्त्र से या प्रतिहारिणी सिरा मार्ग से यकृत तक ऊष्मजन की मात्रा अधिक पहुंचाई जासके तो शरीर के आन्तरिक भाग में विकार वृद्धि बहुत कुछ रुक सकती है और विकारी अश की मात्रा जब घट जाय तो उस दशा में कोषाओं का जीवन काल बढ़ जाता है। उन में विकार का सचय न हो सके तो इस से जरा की स्थिति उत्पन्न न होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायक साधन--मनुष्य प्रत्येक कार्य व्यवहार का अभ्यासी प्राणी है। देखा जाता है कि जो व्यक्ति नित्य भ्रमण करते हैं वह यदि घूमना छोड़ देते हैं तो उनका शरीर शिथिल पड़ जाता है। एक व्यक्ति नित्य शारीरिक या मानसिक श्रम करता रहता है वह यदि श्रम करना छोड़ दे तो उसे जल्दी वृद्धावस्था घर दबाती है। यह क्यों? इसमें मुख्य कारण यह है कि शरीर का जो मुख्य भाग मांसपेशियों, धमनियों, स्नायु जालों से व्याप्त है जिसके सम्मिलित भाग से शरीर के प्रत्येक अंग उपांगों का निर्माण हुआ है हमारे शारीरिक व मानसिक श्रम से सबों को गतियां मिलती रहती हैं। काम करने, घूमने, कसरत करने, मालिश करने आदि से शरीर के पुट्ठे धमनियां, स्नायु जाल सबों में गतियां, क्रिया वर्धन के साधन बने रहते हैं, इससे उनकी क्रिया शीलता बढ़ती है जो चली आई है वह स्थिर रहती है, अभ्यास के कारण उसमें शक्ति स्थिर रहती है। श्रम, व्यायाम, भ्रमण, अध्यवसाय, आदि शारीरिक मानसिक कार्य यदि मनुष्य सदा करता रहे तो—पैत्रोविचपावलोव, सर्जी कोव सेराजिनी आदि विद्वानों के कीर्धकालीन अनुभव बताते हैं कि–वह मनुष्य दीर्घ जीवन प्राप्त करता है, उसके पास वृद्धावस्था शीघ्र नहीं फटकती।

अनुभव से देखा गया है कि जो व्यक्ति चलने फिरने से रह गये थे उनके शरीर को पंचकर्म से संशोधित कर अच्छा उचित आहार दिया जाने लगा और उनके शरीर को क्रियाशील बनाने के लिये मालिश की जाने लगी तो कुछ ही दिन में—जो चल नहीं सकते थे वह चलने फिरने में समर्थ हो गये। उन्हें फिर टहलने, घूमने की आदत डाली गई तो वह मीलों चलने में समर्थ बन गये। विलायत में वृद्धों की क्लवें बनी हुई हैं, जहां उन्हें क्रियाशील बनाने के उपक्रम होते हैं। वहां पंचकर्म का महत्व नहीं जानते, फिर भी मालिश, व्यायाम, अच्छा खाद्य देकर जब उन्हें चलने फिरने में समर्थ कर देते हैं तो, पंचकर्म द्वारा यदि अन्नप्रणाली को पूर्णतया शुद्ध कर दिया जाय तो मेरा अपना अनुभव है कि इससे आयु निश्चय ही बढ़ जाती है। १९४७ में जब मैं आम सन्धिबात से ग्रसित हो गया था किसी भी विधि से आराम न आने पर मैंने लंघन, वमन, विरेचन, और साधारण वस्ति कर्म का निरन्तर प्रयोग किया तो उस असाध्य व्याधि से मुक्ति ही नहीं प्राप्त की प्रत्युत यह प्रत्यक्ष अनुभव किया कि मेरी अधिक नहीं तो १० वर्ष आयु का काल बढ़ गया है जिसके कारण एक युवकवत् काम करने में समर्थ रहूँगा। आज १९५७ का वर्ष है इस दस वर्ष में मैंने अच्छा स्वास्थ्य रख कर एक युवकवत् ७० वर्ष की आयु पूर्ण की है। अब मैं फिर एक बार पंच कर्म, लंघनादि के साथ करने का विचार कर रहा हूँ और यह देखना चाहता हूँ कि सक्षम रह कर मनुष्य कितनी आयु को आगे खींच लें जा सकता है। वैद्य विचारे अपने प्राचीन ग्रन्थों का डुक्किकरण अवश्य कर लेते हैं पर उदरपूर्ति की चिन्ता ही उन्हें अनुभव लेने का अवसर नहीं देती।

हम सबों ने तीन तीन बार जेलें इसलिये काटी थीं कि देश स्वतन्त्र हो जायगा तो जैसा कि कांग्रेसी नेता कहते हैं देसी चिकित्सा को संरक्षण मिलेगा उसे, आगे बढ़ाने की दिशा में वह बहुत कुछ करेंगे। आजादी मिलने पर हमारी आशाओं पर तुषारापात नहीं, वज्रपात हुआ। जिस तरह देसी चिकित्सा को अंगरेजों ने नहीं दुतकारा था उससे बुरी तरह इसने दुतकार रखा है। अलोपैथी को आप उठाती है करोड़ों रुपया उसके उत्थान के लिए देती है हमें कहती है तुम स्वयं उठो। आंसू पोंछने के लिये अनुदान निकालती है, पर देती नहीं। दे किसे, उसे वैद्यों में कोई योग्य दिखाई ही नहीं देता। हमें जब काम के लिए अवसर ही नहीं मिलता तो हम करें क्या?

[शेष पृष्ठ १८५ का]

शीलता फिर बढ़ गई। जिसका परिणाम यह हुआ कि उन वृद्धों की कर्मेन्द्रियां फिर चैतन्योदय पाकर अपना कार्य व्यापार एक युवा व्यक्ति जैसी स्थिति में करने लगी। अर्थात वृद्धों को इस ओज के सूचीवेध से पुनः नव यौवन प्राप्त होने का अवसर सामने आया। यह प्रयोग अभी चल ही रहे हैं यदि इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई तो कुछ दिन में अपरा ओज–यदि आप वृद्ध हैं तो–घर बैठे आसानी से प्राप्त कर अपने को वृद्धावस्था आने से बचा सकेंगे।

यह हैं इस युग के आविष्कार कि सबको सुलभ हो जाते हैं। हमारे आयुर्वेद युग के यदि आविष्कार हों तो उस वैद्य के जीवन के साथ ही समाप्त हो जाते हैं। यह है हमारे और विदेशी आविष्कार में अन्तर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाद्य पेय और औषध रूप द्रव्यों की क्रियायें शरीर के भीतर कैसे चलती है ?

शरीर अंगों उपांगों और अवयवों कोषाओं में विभक्त है अर्थात शरीर की रचना का आरम्भ उसी तरह कोषाओं से होता है जिस तरह मकान का आरम्भ ईंटों से, ईंट जुड़-जुड़ कर मकान की आकृति बनती हैं, ठीक इसी तरह गर्भ में एक कोष से उसका विभाजन होकर उसकी संख्या द्विगुण चतुर्गुण होती चली जाती है और उन कोषाओं से आगे अवयव तन्तु (Tissue) वनते हैं उन अवयव समूह से उपांग और उन उपांगों से फिर भिन्न भिन्न अंगों का निर्माण होता है। किसी अंग का ह्रास या वृद्धि भी जब होती है तो उन अंगों के निर्माण कर्ता अवयवों की कोषाओं के ह्रास वृद्धि से शरीर की ह्रास वृद्धि हुआ करती है। इन्हीं तक प्रत्येक वस्तुएं पहुंचती हैं। इन अवयवों की निर्माता कोषाओं तक किसी भी ह्रास वृद्धि व स्वास्थ्य-वर्धक द्रव्यों का आदान प्रदान जिस मार्ग से होता है वह एक मात्र मार्ग रक्त है। रक्त की शरीर में गति इतनी तीव्र है कि वह हृदय से चलकर शरीर की एक एक कोषाओं तक पहुंच कर ५ मिनट के भीतर फिर वह हृदय में पहुंच जाता है। रक्त ही प्रत्येक आये रस रूप द्रव्यों कों कोषाओं तक पहुंचाता है।

शरीर में क्रिया के दो भेद हैं, एक तो अंगों, उपाँगों की क्रिया के व्यापार, इनका तो सम्बन्ध सामूहिक रूप से शरीर के साथ होता है। जैसे खाना, पचाना, रस बनाना, अवशिष्ट निकालना, देखना, सुनना, उठाना, धरना, चलना, सोचना आदि। किन्तु कोषाओं के कार्य, व्यापार इनसे भिन्न होते है। वह खाद्य, पेय, औषध द्रव्यों के जो अंश विपाकित रस रूप में रक्त के माध्यम से उन तक पहुँचते हैं उन सबों का उपयोग वह कोषाएं किस तरह करती हैं। उनके उपयोग काल में उन कोषाओं के भीतर अन्तर्क्रिया कैसे चलती हैं ? खाद्य, पेय रस रूप द्रव्यों को वह किस तरह लेकर सात्म्य रूप देती हैं तथा औषध रूप द्रव्य जब उनके भीतर पहुंचते हैं तो वह उनके भीतर चल रही क्रियाओं पर क्या प्रभाव डालते हैं कैसे डालते हैं और उनके द्वारा उन कोषाओं के भीतर क्या क्या परिवर्तन आते हैं कैसे आते हैं। इस यान्त्रिक युग के साधनों से इसका सूक्ष्मता के साथ अध्ययन किया गया है।

जैवाद्यम और श्लिषीय सिद्धान्तः—शरीर की मुख्य निर्माता कोषाओं की अन्तर्रचना कैसी हैं ? इसको अच्छी तरह देख व समझ लिया गया है। कोषा का शरीर इतना सूक्ष्म होता है कि उसे भिन्न करके हम अपनी नंगी आंख से नहीं देख सकते। किन्तु इस नव्य युग के साधन भी इतने सूक्ष्म हैं कि उन कोषाओं के भीतर विद्यमान द्रव्य को अच्छी तरह देखा समझा जाता है, यही नहीं उसके भीतर चलने वाली सूक्ष्म क्रियाओं को भी देख कर उसका अध्ययन होता है। शरीर की प्रत्येक कोषाओं में जो जीवन-मूल नामक तरल व्याप्त होता है उसे ही जैवाद्यम (Protoplasm) कहते हैं। इसका स्वरूप जैसे श्लेष्म होता है ऐसा गाढा चिपचिपा सा होता है, इसी से इसका रूप श्लिष (Colloid) माना गया है। जैवाद्यम कैसा है ? इसको साधारण बोल चाल की भाषा में बताने के लिये हम उसे गाढे चिपचिपे श्लेष्म सा कह सकते हैं। यह श्लिष रूप जैवाद्यम एक ऐसी मृदुकला से आवृत होता है जिसमें से रक्त द्वारा आये खाद्य, पेय के रस और औषध के रस रूप अंश उसमें से होकर चापाभिसरण द्वारा या अवचूषण, शोषण आदि विधियों से प्रवेश करते हैं। वह कोषा का अन्तर्द्रव्य निर्जीव नहीं प्रत्युत सजीव होता है इसीलिये तो उसके श्लिषीय रूप जैवाद्यम में प्रत्यक्ष क्रियाएं देखी जाती हैं। वह विपाक रस में से अम्लजनीय यौगिकों को ग्रहण कर अपनी क्षय-पूर्ति व वृद्धि करता है। शार्करी विपाक रसों से दहन क्रिया का सम्पादन कर उससे शक्ति (ताप) प्राप्त करता है। स्नेहों द्रव्यों से भी इसी तरह अनेक प्रकार के आवश्यकताओं की पूर्ति करता है और औषध द्रव्यों के विपाकित या घुलित अंशों को ग्रहण कर उनके द्वारा उत्तेजना, शक्ति और जीवन की अनेक जटिल क्रियाओं में वृद्धि या ह्रास विकास, और विनाश के व्यापार चलते देखे जाते हैं।

श्लिष रूप कैसा होता है ? :—द्रव्यों के भौतिक गुणों के अनुसार विचारवानों ने पदार्थों की तीन अवस्थाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानी हैं, ठोस द्रव और वायु रूप। विश्व का प्रत्येक पदार्थ इन्हीं तीन अवस्थाओं में से किसी एक रूप में पाया जाता है और विश्व के प्रत्येक पदार्थ इन्हीं तीनों अवस्थाओं (रूपों) में बदले भी जा सकते हैं। ठोस को द्रव में, द्रव को वायु रूप में और वायु रूप द्रव्यों को द्रव व ठोस रूप में भी लाया जा सकता है। अर्थात विश्व का प्रत्येक पदार्थ तीनों अवस्थाओं में आ जा सकता है।

किन्तु जीव-विज्ञानियों ने जब जीवों की अन्तर रचना का अध्ययन किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि द्रव और ठोस द्रव्यों के योग से सजीव जगत में एक और अवस्था का प्रादुर्भाव हुआ है जिसे श्लिष अवस्था कहते हैं। इस रूप में आये ठोस पदार्थ के कण अपने अणु रूप में आकर द्रव में ऐसे लटक जाते हैं जो फिर नीचे नहीं बैठते। द्रव में लटके तथा झूलते रहने से उसमें ठोस के भौतिक गुण की विद्यमानता नहीं रहती, द्रव में एक तरह ठोस का विलय हो जाता है और उसी विलय के स्थिर रूप में बने रहने से उसे पदार्थ की चौथी अवस्था श्लिष नाम दिया गया है। श्लिष की यह अवस्था यद्यपि जीवित प्राणियों में ही मुख्यतया मिलती है तथापि लिसेगेंग नायक वैज्ञानिक ने शिलाओं के स्तरों में भी पत्थर का जीव (कलबुलहिजर) के रूप में इसका अस्तित्व पाया है। पत्थर का जीव नामक द्रव्य पत्थरों की चट्टानों में बिलकुल श्लिष रूप में होता है किन्तु जब तक उसको हवा का स्पर्श नहीं मिलता वह मृदु, चिपचिपा श्लिष रूप का रहता है, हवा लगते ही वह सूखने लगता है और जमकर कठोर हो जाता है।

श्लिश रूप में आये ठोस पदार्थ के अणु इतने लघु और छोटे होते हैं जो किसी द्रव में लटके रहते हैं, और उनमें सम विद्युतावेश रहता है, इसीलिये उनमें निराकरण की प्रकृति विद्यमान रहती है तभी तो वह एक दूसरे से मिलते नहीं, और प्राणियों में यह अवस्था स्थिर बनी रहती है। ठोस द्रव्यों के कण जब तक मिलें न, उनके अणुओं का आकार नहीं बढ़ता इसीलिये वह उस द्रव में रम कर पूर्ण घोल बना लेते हैं। दूध और शरीर के भीतर रक्त, पित्त तथा खाद्य का विपाकित रस सब इसी रूप के सम समीपी द्रव्य होते हैं। चूंकि शरीर के कोषाओं की रचना इसी रूप की है इसीलिये विपाकित रस का जब तक इस रूप में परिवर्तन नहीं होता वह शरीर के भीतर प्रवेश नहीं पा सकता। विपाक स्थिति इसी का नाम है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि प्रकृति गर्भ के भीतर जब आरम्भ में जीवन ज्योति का उदय हुआ था तो इसी श्लिष रूप के कोई जटिल असृजनीय यौगिक में द्विधावेशी विद्युत का उसके अणुओं में आवेश हुआ था। केन्द्र में धन और उससे बाहर के श्लिषीय रूप में ऋण विद्युत का आवेश होने पर उसमें गति उत्पन्न हो गई, और वस्तु ग्रहण, सात्मीकरण, वर्धन, विभाजन, मल विर्सजन की जो चेष्टाएं उसमें परिलक्षित हुईं, यही जीवन का प्रारम्भिक रूप था। जब से इस रूप में जीवन का उदय हुआ यह आज भी इसी अपने प्राथमिक स्थिति में मिलता है। यह जैब (जीवाणु कीटाणु) भी द्रव में घुले ऐसे ही रूप के पदार्थों का सात्म्यीकरण करते हैं जो अन्तत: श्लिष रूप में पहुँच जाता है। जो नहीं पहुँचता उसे वह स्वत: श्लिष रूप में बदल कर तब सात्म्य रूप देता है।

उक्त विवेचन से पाठक समझ गये होंगे कि हमारे शरीर के प्रत्येक कण का (कोषा का) स्वरूप कैसा है? आहार का जो विपाक रूप होता है वह भी तद्वत् होने से ही ग्राह्य होता है जो श्लिषीय रूप को प्राप्त नहीं होता उसे मल मार्ग से बाहर कर दिया जाता है।

शरीर के भीतर यह वस्तुएं कैसे प्रवेश करती हैं?

(१) चापाभिसरण—अन्न प्रणाली में एक पतला स्तर चढ़ा होता है इस को श्लेष्मिक कला कहते हैं। जब हम जल पीते हैं तो वह पेट में चला जाता है और वह आमाशय की कला पर दबाब डालता है इस दबाब से जल, जल में घुले हुए पदार्थ चापाभिसरण (Osmotic Pressure) द्वारा स्वत: उस कला मार्ग से भीतर प्रवेश करते चले जाते हैं और रक्त में मिल कर सारे शरीर में फैल जाते हैं। जिस तरह चापाभिसरण से द्रव पदार्थ श्लेष्मिक कला मार्ग से भीतर प्रवेश करता है इसी तरह भीतर पहुँचे हुए द्रव द्रव्य रक्त में मिलकर धमनियों पर दबाब डालते हैं कुछ दबाब हृदय की गति द्वारा रक्त को धकेलने के समय धमनियों पर पड़ता है इससे रक्त पर चाप की मात्रा बढ़ जाती है और उसमें विद्यमान पदार्थ चापाभिसरण विधि द्वारा भीतर से भीतर कोषाओं तक प्रवेश करते चले जाते हैं।

(२) आचूषण—भुक्त द्रव्य जब आमाशय से होकर ग्रहणी में ग्रहणी से क्षुद्रान्त्र में और वहां से वृहदान्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पहुँचता है तो इस ८-१० घन्टे में भुक्त द्रव्य कांदव में और कांदव से पाक में पाक से विपाक में बदल जाता है वह विपाकित रूप का भुक्तांश श्लिष तद्वत रूप में आ जाता है जिसे वृहदान्त्र के ग्राहकांकुर आचूषित करते रहते हैं। वह आचूषित हुआ विपाक रस प्रतिहारिणी सिरा के रक्त में मिलकर यकृत में जाता है जहां उसे यकृत और अधिक संस्कारित कर श्लिष रूप में बदल देता है। यकृत में पहुंचे पदार्थों पर अनेक प्रकार की क्रियायें होती हैं और विपाक के रूपों में बड़ा रूपान्तर होता है। कई विकृत, विषाक्त रूप के पदार्थ भी उसमें होते हैं वहां उनका रूप बदला जाता है और उसे निर्विष उपयोगी रूप (यौगिक) में बदल दिया जाता है यहां पहुँच कर बहुधा पदार्थ श्लिष रुप में आ जाते हैं जो रक्त मार्ग से समस्त शरीर की क्षय-पूर्ति के लिये एक एक कोषा तक पहुँचते रहते हैं।

(३) शोषण—शरीर की समस्त आन्तरिक कोषाओं पर जो आवरण चढ़ा होता है उसमें भी वह गुण होता है कि श्लिष रूप के द्रव्यों को आचूषित कर अपने भीतर पहुंचावे और अयोग्य अग्राह्य वस्तुओं को अपने आवरक में से निकल जाने दे। उस आवरक के इस गुण के कारण ही प्रत्येक कोषातक श्लिष पदार्थों का आदान प्रदान होता रहता है और शरीर के कोषाओं की क्षय-पूर्ति-वृद्धि का व्यापार निरन्तर चलता रहता है।

कोषाओं के भीतर उनका अपना जीवन व्यापार कैसे चलता है?—एक एक कोषाओं के भीतर जो श्लिष रूप का जैवाद्यम होता है प्रत्यक्ष साधनों से देखा गया है कि उसकी आन्तरिक बनावट मधु मक्खी के छत्ते जैसी मधु भरी होती है जिसके प्रत्येक भाग में कई तरह की एक साथ क्रियायें होती रहती हैं और आगत पदार्थो का लगातार रूपान्तर होता रहता है। अन्दर पहुंची वस्तुओं का रूपान्तर किन कारणों से होता है ? देखा गया है कि प्रत्येक कोषा में एक अन्तः विकर बनता है और कुछ धातवीय उत्प्रेरक अणु भी जहां तहां बिखरे रहते हैं। यह दोनों ही परिवर्तक द्रव्य हैं जिनके कारण आगत श्लिष रूप द्रव्य में अनेक तरह के परिवर्तन आते है और उस परिवर्तन से वह द्रव्य कोषा के श्लिष रूप में ऐसा बदल जाता है कि उसमें बिलीन हो जाता है इसी को आयुर्वेद में सात्म्यीकरण क्रिया कहते है। इसी सात्म्यीकरण से कोषा के आन्तरिक भाग की क्षीणता नष्ट होती है और वह पुष्ट होती है जिसे क्षय-पूर्ति कहते हैं। यह कोषाएं जब विवर्धन की ओर उन्मुख होती हैं तो इनके श्लिप रूप जैवाद्यम की मात्रा बढ़ती है और वह कोषा जब सीमा से अधिक बढ़कर फूल जाती है तो मय आवरक और केन्द्र के दो भागों में विभक्त हो जाती है, इस तरह का एक साथ ही यह व्यापार सारे शरीर में चलता है इसे ही वृद्धि कहते है। यह क्षय-पूर्ति-वृद्धि का व्यापार प्रत्येक कोषा में निरन्तर चलता रहता है।

कोषाओं के जीवन व्यापार पर औषधियों का प्रभाव—कोषाओं के भीतर उसके जैवाद्यम में जो क्षय-पूर्ति निमित्त अनेक प्रकार की क्रियाएं चलती रहती हैं और रक्त द्वारा आगत पदार्थों का रूपान्तर होता रहता है अर्थात उसके यौगिक रूप बदलते रहते हैं उससे एक साथ कई तरह के कार्य व्यापार होते हैं। पवनाम्लों से अस्रजन बनता है, अस्रजन से एक ओर जैवाद्यय बनता है दूसरी ओर मधुविलीन से उत्तेजित हुई द्राक्ष शर्करा उष्मजन के सम्पर्क से दहक उठती है उससे एक ओर जल बनता है दूसरी ओर शक्ति जनित होती है तथा ताप का प्रादुर्भाव होता है,यह ताप एक अणुजनित होता है इसीलिये ताप की मात्रा उसी कोषाके जैवाद्यम को उतनी ही उष्णता प्रदान करने के योग्य बढ़ती है जो जीवन प्रक्रिया के अनुकूल होती है। जब द्राक्षशर्करा जलती है तो उसके कज्जल से ऊष्मजन का सम्पर्क होता है इसी से उसका कज्जल जलकर कज्जलद्विऊष्मिद वायु में बदल जाता है यह वस्तु विष तुल्य अग्राह्य होती है इसीलिये इसे वह अपने आवरण से बाहर निकाल देती है, जिसे रक्त कणिका ग्रहण कर उसे ऊष्मजन देती है और इसे अपनी डबिया में भर लेती है। इस तरह श्लिष रस का रक्ताभिसरण से अहर्निश कोषाओं तक आवागमन बना ही रहता है। कुछ कोषाएं कार्य रत रहने पर चाप, संघर्ष, गति, समूह के कारण अथवा कार्याधिक्यता के कारण क्षीण होने लगती है और उनका क्रिया व्यापार मन्द होने लगता है। कुछ कोषाएं शीतोष्ण, विष विकार आदि प्रभाव से प्रभावित होती हैं और उसके कारण उनके जीवाद्यम की क्रियाएं मन्द पड़ जाती हैं और उस जैवाद्यम में सिक्यीकरण की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिति उत्पन्न हो जाती है अर्थात जैवाद्यम जमने लगता है और उसकी आन्तरिक क्रिया बन्द होने लगती है। ऐसी दशाओं के उत्पन्न होने पर किसी औषध का जब उस कोषा के भीतर प्रवेश होता है तो उसका परिणाम यह होता है कि रुकी हुई या रुकने वाली क्रियाएं फिर चल पड़ती हैं और जिनकी क्रिया मन्द गति से चल रही हो वह बढ़ जाती हैं।

समस्त ओषधियों का समस्त क्रियाओं पर एकसा प्रभाव नहीं होता, न समस्त क्रियाएं एक रूप में एक साथ बन्द होती हैं। कुछ ओषधियां किसी एक क्रिया को बढ़ाती हैं, दूसरी ओषध दूसरी क्रिया को बढ़ाती है। कोई ऊष्मीकरण विधि को तेज कर देती हैं तो कोई अम्लजन सात्म्यीकरण क्रिया को बढ़ा देती है, कोई विकरोत्पादन में सहायता करती है तो कोई उत्प्रेरणा में योग देती है। इस तरह भिन्न भिन्न ओषध के अनेकों प्रभाव देखे जाते हैं। कई ओषधियां ऐसी भी हैं जो इसके विपरीत प्रभाव करती हैं अर्थात चलती हुई कई क्रियाओं में व्याघात डाल देती हैं, उसे रोक देती हैं। जिससे उसके भीतर चल रहा क्षयपूर्ति का व्यापार रुक जाता है, यहीं तक नहीं, कई ओषधों का यहां तक प्रभाव देखा जाता है कि उस औषध प्रभाव से सारे क्रिया व्यापार बन्द हो जाते हैं और जैवाद्यम जमकर सिक्थ रूप में परिणत हो जाता है अर्थात कोषा मर जाती है। इस तरह से कोषाओं के जैवाद्यम में रासायनिक व भौतिक कारणों से जो परिवर्तन आते हैं उनमें ओषधियों का विशेष स्थान होता है और उन ओषधियों का प्रभाव विशेष रूप से देखा जाता है जिनका यौगिक श्लिष रूप में हो वहरक्त रस में तल्लीन हो जाती हैं वही श्लिषमयी ओषधियां शीघ्र ही रक्त के साथ आगे से आगे निर्बाध प्रवेश पा जाती है। ऐसी ओषधियों के रूप जैवाद्यम में मिलकर उसकी क्रिया पर बड़ी जल्दी प्रभाव डालती है। उसका शीघ्र संश्लेषण या विश्लेषण होता है और उससे उस जैवाद्यम के रूप में एकाएक कई प्रकार के परिवर्तन होते देखे जाते हैं उसका प्रभाव कुछ देर में वृद्धि या ह्रास के रूप में परिस्फुट होने लगता है।

आधुनिक युग में सूचीवेध विधि से ओषध द्रव्य को रक्त में पहुंचाने का जो विधान प्रचलित हो रहा है, देखा गया है कि रासायनिक विधियों से यदि हम औषध को पहले ही श्लिष रूप दे दें तो वह ओषध निर्बाध रूप से चापभिसरण, शोषण, आचूषण आदि विधियों से भीतर से भीतर प्रवेश करती चली जाती है और उसका उपयोग कोषा शीघ्र करती है। इसीलिये तो सुवर्ण, संखिया जैसी वस्तुओं को ऐसे श्लिषीय रूप दिये गये हैं जिनका प्रभाव तत्क्षण देखा जाता है। बहुधा ऐसे रूप की दवा बनाने की ओर वैज्ञानिकों का अधिक ध्यान हो रहा है।

रोग की दशा में कोषाओं में परिवर्तन और उस दशा में औषध का प्रभाव—शरीर में कोई विकृति या विकार जब उत्पन्न होता है तो उसका आरम्भ कोषाओं के भीतर विद्यमान जैवाद्यम में प्रथम होता है, एक दो या सामूहिक रूप में उक्त कोषा के जैवाद्यम में क्या परिवर्तन आता है कैसे आता है ? इसको खूब देख समझ लिया गया है। यह दो कारणों से आता है एक तो अनियमित खान पान द्वारा औदरीय दोष से प्रादुर्भूत ऐसे असात्म्य विरोधी श्लिष रूप पदार्थ जो कोषा के भीतर पहुंचकर उसकी क्रिया को शिथिल कर देते हैं और जैवाद्यम में सिक्थी भवन उत्पन्न करते हैं। अर्थात जैवाद्यम का श्लिष रूप सजीव भाग जो सर्वदा गतिशील रहता है वह जमकर मोम जैसा हो जाता है और उसकी गति शीलता बन्द हो जाती है। कभी कभी यह भी देखा जाता है कि अपद्रव्य कोषा के भीतर इतनी अधिक मात्रा में शोषित हो जाते हैं कि जिसके कारण कोषा की गतियां शिथिल हो जाता है और कोषा फूल कर द्विगुण, त्रिगुण आकार में बढ़ जाती है। वह विभाजित होने में समर्थ नहीं रहती, वह उसी दशा में सिक्थ बन जाती है अर्थात मृत हो जाती है। यह दशा जैवी विषों की उपस्थिति के कारण वेग से होती देखी जाती है। कोई जीवाणु या कीटाणु जब किसी मार्ग से शरीरान्तर्गत हो शरीर के किसी निश्चित भाग में पहुंचते हैं तो वह कोषा पर आक्रमण कर उसको मार डालते हैं साथ ही अपने भीतर से विष भी निकालते हैं जो आसपास की कोषाओं में अभिसरित या शोषित होकर उसके जवाद्यम में सिक्थी भवन उत्पन्न कर देता है इससे एकाएक कोषा जमकर मोम सी हो जाती है अब उसे यह जैव खा जाते हैं और उनके भक्षण के बाद जैवाद्यम का जो रूप बन जाता है वही पूय (पाक-मवाद) होता है।

[शेष पृष्ठ १६६ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचर्चिका पर सफल प्रयोग

लेखक --श्री पी० डी० जोशी प्रभाकर, मुरादाबाद

मेरा लड़का दो वर्ष की आयु में ही इस रोग से पीड़ित हो गया। बच्चा अज्ञानता वश व्रणों को खुजाता रहता था और इसी कारण उसके शरीर पर रोग व्यापक रूप से फैल गया। इस अवस्था में कई दिनों तक पुराने व नये चिकित्सकों को निदान में भी कठिनाई हुई। एक ही पैथी के विशेषज्ञ भिन्न भिन्न रोग निदान करते, किन्तु बच्चे के एक्जिमा रोगी के संस्पर्श में रहने के कारण यह निश्चय हो पाया कि यह एक्जिमा ही है।

विचर्चिका (एक्जिमा) के लक्षण–

हाथ पैरों में एक ही स्थान पर छोटी छोटी लाल रंग की बहुत सी फुन्सियां निकलना। ५ या ७ दिन में खुजाहट के साथ स्राव होना। कुछ समय बाद स्राव की पपड़ी बन कर उसके चारों ओर नई फुन्सियां और खुजली होना। नीचे घाव और ऊपर पपड़ी बनती जाना। अर्थात् —स्राव खुजली द्वारा रोग प्रसार पाता है। उदर शुद्धि की दवा का प्रयोग करने पर उदर शुद्धि के साथ साथ रोग का प्रभाव कम होने लगता है। इसके वेग भी देखने को मिलते हैं। कभी कभी सारे शरीर में खुजली होकर छोटी फुन्सियां निकल आती हैं स्राव होने लगता है। रोगी सशोथ मालुम होता है। कुछ समय बाद स्वयं या किसी भी दवा से रोगी ठीक होने लगता है, दूसरा शुष्क होता है। इसमें स्राव नहीं होता परन्तु खुजली बराबर होती है। खुजाने पर त्वचा पर काले दाग और त्वचा मोटी हो जाती है। रोगी द्वारा रोग का प्रसार शीघ्रता से नहीं होता। किन्तु आयुर्वेद में जिसे विर्चचिका कहते हैं यह भी शुष्क होता है ऐसा कहीं देखने में नहीं आया। आयुर्वेद में विर्चचिका के लक्षण इस प्रकार दिये हैं—

"सकण्डू पिड़िका श्यावा बहुस्रावा विर्चचिका"। सुस्पष्ट है।

चिकित्सा—

रोगी की आयुर्वेदीय चिकित्सा कराई गई आयुर्वेद में वर्णित मंजिष्ठादि अर्क, कैशोर गुगुल, गन्धक रसायन, पारद गंधक कज्जली और मरिच्यादि तैल सेवन व प्रलेप किये गये। प्रत्येक नवीन औषधी का प्रभाव तीन दिन से अधिक नहीं देखा, इस प्रकार निरन्तर प्रयास विफल होते देख एलोपैथिक चिकित्सा प्रारम्भ की। डाक्टर महोदयका पेन्सलीन से सफलता का स्वप्न साकार होता दिखाई नहीं दिया और उनकी ३ माह तक चिकित्सा जारी रही। उपदंश जन्य आदि संदेहात्मक चिकित्सा भी सफल न हुई। अन्त में वर्तमान प्रचलित नव्य पेटेन्ट दवाएं प्रारम्भ की। एक दर्जन के लगभग सभी प्रचलित दवाएं प्रयोग की गई किन्तु परिणाम में निराशा के अलावा कुछ मिला नहीं। भारत में प्रत्येक व्यक्ति वैद्य है कुछ न कुछ दवा बता देता है किन्तु एक जानकार व्यक्ति ऐसे कैसा करता लिहाजा ऐसे लोगों से नम्रता पूर्वक पीछा छुड़ाया जाता। एक दिन एक सज्जन घर आये उन्होंने एक काला तैल देते हुए कहा आप बच्चे को इसे लगायें। पहले तो उन्हें भी समझाया इलाज चल रहा है परन्तु यह मानने वाले थे नहीं, अतः दवा की शीशी रख लेनी पड़ी। रोज रात के लिये तैयार रहना पड़ता दिन में किसी तरह खुजाने से बचाते किन्तु रात में जहां मौका मिलता बच्चा खुजा लेता और फिर वही चीख पुकार सब घर वालों की नींद गायब। यह थी रोज की रात्रियां। एकदिव रात को बच्चे ने खुजाकर रोना शुरू किया, दिल में शीशी का ख्याल आया, मंगवाई और लगाई। लगाते ही बच्चा अधिक चीखा अपनी मूर्खता पर दु:ख हो रहा था किन्तु करते भी क्या सोचा आखिर आज अवैद्य की दवा लगा बैठे। देखते रहे, दर्दनाक दशा को, किन्तु थोड़ो देर बाद बच्चा सो गया और सुबह घाव खुश्क थे। सन्तोष की तो कोई बात थी नहीं क्योंकि हर दवा तीन दिन तक फायदा दिखाती ही थी किन्तु हानि का भय दूर हो गया। प्रयोग की इच्छा भी बढ़ी, बच्चे को दही से स्नान कराके पहली दवा छुड़ाकर फिर दवा लगा दी गई। इस प्रकार तीन दिन बाद खुजली व स्राव दोनों ही नहीं थे। अब यह प्रतीक्षा थी कि फिर कब आरम्भ होगा किन्तु दैनिक वही प्रयोग होता रहा और रोग की शान्ति होती गई। पन्द्रह दिन बाद कहीं भी कोई निशान नहीं था। चिकित्सकों को भी दिखाया उनकी राय में भी बच्चा स्वस्थ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तेल क्या था ?

यह था केवल चने का तैल, इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं। चने का तैल अध: पातन यन्त्र से निकाल कर बीस व्यक्तियों पर अब तक प्रयोग किया है। इसमें दो व्यक्ति खुश्क एक्जिमा के थे इन दोनों को कोई लाभ नहीं हुआ किन्तु १८ रोगियों में से एक भी ऐसा नहीं था जिसे पूर्ण लाभ न हुआ हो।

मेरा वैद्य बन्धुओं से यह निवेदन है कि इसे आयुर्वेद की कसौटी पर कसके बतायें कि कौन सा द्रव्य उस तैल में है जो विर्चचिका पर लाभ करता है कि कभी किसी ने शास्त्र में इसका उल्लेख पाया हो तो प्रकाश डालें। अन्यथा यह केवल अंधेरे में तीर चलाना जैसा होगा। आशा है वैद्य बन्धु इस पर अवश्य ही प्रकाश डालेंगे।

नोट—अन्न का छिलका फल का हो या वृक्ष का जब इनका पातालयन्त्र से या अध:पातन विधि से तेल निकाला जाता है तो उसमें क्रियाजोल नामक एक कीटाणु नाशक तेल निकलता है। यही तेल खारश विर्चचिका के कीड़ों को मार डालता है नारियल का छिलका, बादाम का छिलका, शीशम का छिलका, गेहूँ, चने इन सब के भीतर उक्त विधि से निकाले तेल में क्रियाजोल का यौगिक होता है जो लाभ करता है। —सम्पादक

बुरहानपुर के वयोवृद्ध चिकित्सक पं० विष्णुराम जी वैद्य का स्वर्गवास.

मध्य प्रदेश स्थित बुराहनपुर नगर के निवासी श्री पं० विष्णुराम जी वैद्य का रविवार दि० १३ अक्टूबर को ८७ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हुआ।

श्रीमान वैद्य महोदय गत १॥ मास से ज्वर के कारण अस्वस्थ थे। आप आनन्द जिले के मोगर नामक ग्राम के मूल वतनी थे। गत ५, ६ पीढ़ियों से पूज्य वैद्यराज के पूर्वज राजवैद्य की हैसियत से इस नगर में आये थे। सन् १८८८ में आपने मेट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण कर अपनी प्रखर मेधा का परिचय दिया। लगभग १० वर्ष तक आप माधव कालेज उज्जैन में अध्यापक रहे। आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री माणेकराम जी के स्वर्गवास के पश्चात आपने बुराहनपुर में स्थायी रूप से निवास किया और चिकित्सा कार्य करते रहे। आपने अपने सरल स्वभाव, विशाल ज्ञान, तीव्र बुद्धि, सेवा भाव एवं विनयशीलता से न केवल इस नगर में, किन्तु दूर २ तक कीर्ति प्राप्त की। आपके संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर आपके व्यक्तित्व का अमिट प्रभाव पड़ा है।

[शेष पृष्ठ १६४ का]

जब कोषाओं में इस तरह दोष बढ़ रहे हों विष का प्रसार हो रहा हो उस दशा में औषधियां वहां पहुंच कर कोई उत्प्रेरक का काम करती हैं कोई कोषाओं के जैवाद्यम की आन्तरिक गतियों को बढ़ा देती है कोई दूषित द्रव्यों, विषों से मिलते ही उसे निर्विष बना देती हैं अर्थात उसके उस यौगिक का रूप ही बदल देती हैं इससे वह निर्विष हो जाता है कुछ औषधियां जैवों के लिये मारक-रूप होती हैं। उनका स्पर्श पाते ही कभी तो जैवों का संहार होने लगता है कभी कोई औषध मारने में समर्थ नहीं होती किन्तु उन्हें निष्क्रिय बना देती है कोई उनकी वृद्धि रोक देती है। जो औषध जितनी जल्दी श्लिष रूप में पहुंच जाती है अर्थात घुलकर पूर्ण घोल बना लेती है वह उतनी ही शीघ्रता से अपना प्रभाव डालने में समर्थ होती है।

आधुनिक सूचिवेध विधि इतनी उत्तम चिकित्सा की विधि ज्ञात हो गई है कि कोई दवा इतनी सूक्ष्म इतनी घुलित दशा में आ जाय कि पूर्ण घोल बन जाय, अर्थात श्लिष रूप में पहुंच जाय तो उसे सूचिवेध द्वारा शरीर के भीतर पहुँचा देने पर शीघ्र ही वह गन्तव्य स्थान तक पहुँच जाती है और रक्तचक्रिकाएं जहां पर विकृति के कारण आस पास में ज्यादा मात्रा में पहुंची होती हैं वह उक्त श्लेषीय रूप की औषध को बड़ी आसानी से ग्रहण कर उस दूषित जैव पूर्ण, विषाक्त क्षेत्र में उसको छोड़कर उसे निर्जीव निर्विष बनाने में पूर्ण सक्षम हो जाती हैं।

शोथ, पीड़ा, अप-द्रव्य-संचय, काठिन्य आदि रूप तो हमें तब देखने को मिलते हैं जब हजारों लाखों कोषाओं में यह विकार एक साथ फैलकर सामूहिक रूप से किसी अंग को दूषित कर देते हैं। उक्त सूक्ष्म विवेचन तो ऐसे एक सूक्ष्म भाग का है जिसे हम अपने इन भौतिक नेत्र से कभी देख ही नहीं सकते। इसीलिये वैद्यों को सूक्ष्म-दर्शक का उपयोग सीखकर इस सूक्ष्म जगत में विचरण करने योग्य अपने को बनाना चाहिये तभी हम प्रयोगों के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखिल भारतीय देशी औषध निर्माता संघ का द्वितीय अधिवेशन

तिथि २६, २७ अक्टूबर को मारवाड़ी धर्मशाला नई सड़क, दिल्ली में अखिल भारतीय औषध निर्माता संघ का द्वितीय अधिवेशन श्री पं० रामनारायणजी वैद्य अध्यक्ष श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन (प्रा०) लि० की प्रधानता में सम्पन्न हुआ। भारत के विभिन्न भागों से निम्नलिखित औषध निर्माताओं ने उस में भाग लिया।

१. श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन (प्रा०) लि० कलकत्ता।
२. पुष्करणा आयुर्वेदिक फामेंसी अमृतसर।
३. राजवैद्य शीतल प्रसाद एण्ड सन्ज़ दिल्ली।
४. काशी हिन्दु विश्वविद्यालय फार्मेसी वाराणसी।
५. श्री कृष्ण आयुर्वेदिक फामेंसी, अमृतसर।
६. कुँवर आयुर्वेदिक फार्मेसी, कानपुर।
७. मुलतानी आयुर्वेदिक फार्मेसी, दिल्ली।
८. प्रताप फार्मेसी, अमृतसर।
९. सुखदाता फार्मेसी, दिल्ली।
१०. पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी, अमृतसर।
११. खेतल फार्मेसी, दिल्ली।
१२. मजुमदार फार्मेसी, दिल्ली।
१३. देश रक्षक औषधालय, कनखल।
१४. हमदर्द दवाखाना, दिल्ली।
१५. श्री कृष्ण गोपाल आयुर्वेदिक रसायनशाला, कालेड़ा कृष्ण गोपाल (अजमेर)।
१६. भारत सेवक औषधालय, नई सड़क, दिल्ली।
१७. सुखचैन फार्मेसी-तरणतारण।

इनके अतिरिक्त कविराज प्रतापसिंह जी परामर्श दाता देशी चिकित्सा पद्धति, भारत सरकार तथा कविराज श्री अनन्त महाराज जी इन्दौर विशेष निमन्त्रण से उपस्थित हुये।

अधिवेशन में संघ के अन्तरिम विधान में संशोधन किया गया। यह निश्चय हुआ कि संघ को सरकार से रजिस्टर कराया जावे। यह कार्य संघ के एक सदस्य श्री शान्ति प्रसाद जी जैन को सौंपा गया और निश्चय हुआ कि आवश्यकतानुसार अन्य सदस्यों का सहयोग वह लेलें।

यह भी निश्चय हुआ कि संघ के लिये एक वैतनिक मन्त्री और एक कानूनी परामर्श दाता नियुक्त किया जावे।

देशी औषधि निर्माताओं पर लागू होने वाले सरकारी कानूनों से होने वाली असुविधाओं की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट करने के लिये एक मैमोरेण्डम तैयार किया गया जिसमें सरकार से मांग की गई कि वह इन सब असुविधाओं को दूर करे। निश्चय हुआ कि इस मैमोरेण्डम को संघ के कानूनी परामर्शदाता की सहायता से सुव्यस्थित रूप देकर सरकार को भेजा जावे।

अधिवेशन में निम्नलिखित आशयों के प्रस्ताव भी पास किये गये।

१. एक प्रस्ताव द्वारा सरकार से अनुरोध किया गया कि वह आसवारिष्टों को मेडीकल एण्ड टायलट प्रेंपेरेशन्स (एक्साईज ड्यूटीज) एक्ट की सभी धाराओं से मुक्त कर दे क्योंकि आयुर्वेदिक आसवारिष्टों को न तो मद्य की भांति परिस्रुत किया जाता है न उनमें अलग से मद्यसार ही मिलाया जाता है। औषधि मात्रा में आसवारिष्टों के प्रयोग से मदकारी प्रभाव भी नहीं होता और अधिक मात्रा में लेने से उन से विभिन्न प्रकार के कष्ट कर उपद्रव हो जाते हैं।

इन सब कारणों से केन्द्रीय सरकार से मांग की गई कि वह आयुर्वेदिक आसवारिष्टों को मद्यसार की श्रेणी में न लेकर उनको सभी प्रकार के कानूनी प्रतिबन्धों से मुक्त करके देशी औषध व्यवसाय की रक्षा करे।

२. दूसरे प्रस्ताव में बम्बई राज्य सरकार से आग्रह किया गया कि वह अपने राज्य में देशी औषधि निर्माताओं को आसवारिष्ट बनाने के लिये "नानबाण्डेड मैन्यूफैक्ट्री" (अप्रतिबन्धित निर्माणशालाओं) के लाईसेन्स दे।

३. एक अन्य प्रस्ताव के द्वारा सरकार से जादू भरी औषधियों के कानून के अनुसार कतिपय औषधियों एवं रोगों सम्बन्धी विज्ञापन पर लगे अनुचित प्रतिबन्धों को हटाने की मांग की गई तथा सरकार से इस कानून में निर्धारित उन रोगों की सूची जिन के सम्बन्ध में विज्ञापन करने पर प्रतिबन्ध है उसे संशोधित करने की मांग की गई।

अन्त में संघ का स्थाई कार्यालय स्थापित करने का विषय विचारार्थ प्रस्तुत हुआ और निश्चय हुआ कि दिल्ली अथवा नई दिल्ली में किसी उचित स्थान पर संघ का एक स्वतन्त्र कार्यालय स्थापित किया जाय। यह कार्य सम्पन्न करने के लिये तीन सदस्यों की एक उपसमिति नियुक्त की गई। पश्चात कुछ संक्षिप्त भाषणों के अनन्तर अधिवेशन का कार्यक्रम समाप्त हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसव निर्माणार्थ सागवान काष्ठ के उत्तम ढोल

प्राचीन काल से ही वैद्यों में आसव निर्माणार्थ प्रायः मट्टी के पात्रों को प्रयोग करने का प्रचलन है। परन्तु मट्टी के पात्र में दो बड़े दोष हैं एक तो मसामदार होने से आसव द्रव उस में से चू कर बाहर निकल सकता है। दूसरे मृत्पात्र तापवर्धक होने के कारण सन्धानार्थ द्रव के अन्दर आवश्यक उत्ताप को स्थिर नहीं रख सकता, जिस से आसव निर्माण क्रिया (सन्धान) में बाधा उत्पन्न हो सकती है। लकड़ी के ढोल इन दोनों दोषों से मुक्त हैं। लकड़ी में भी सागवान की लकड़ी ऐसी कठोर है कि निरन्तर वर्षों तक पानी के संसर्ग में रहने पर भी यह नहीं गलती। अतः सागवान के बने ढोल चिर काल तक खराब नहीं होते और आयु पर्यन्त काम देते रहते हैं। मृत्पात्र की तरह इन्हें घृत परिप्लुत करने का झंझट भी नहीं करना पड़ता। जल से प्रक्षालन कर स्वच्छ करके इन का प्रयोग किया जा सकता है। मृत्पात्र की तरह इनके फूटने का भी भय नहीं।

हमारे यहां वर्षों से इन ढोलों का प्रयोग हो रहा है। श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा लिखित "आसव विज्ञान" पुस्तक के प्रकाशन के बाद से देश के प्रत्येक कोने से इन लकड़ी के ढोलों के लिये अनेकों वैद्यों की मांग आती रही है। अतः हमने विलायत से आने वाले माल के खाली ढोल जो बड़ी बड़ी मिलों में रासायनिक पदार्थों में लग कर आते हैं उनके संग्रह का प्रयत्न किया है वह साफ करने पर आसव निर्माण के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। आशा है वैद्य समाज तथा औषध निर्माता इन का प्रयोग कर आसव निर्माण प्रक्रिया को समुन्नत करने की दिशा में अग्रसर होंगे। इस से उन्हें सुविधा भी होगी और आसव भी उत्तम बनेंगे। प्रत्येक ढोल की समाई इतनी है कि उसमें १ मन ३० सेर आसव तैयार हो सकता है। मूल्य प्रति ढोल ८) मार्ग व्यय भिन्न।

आर्डर के साथ पेशगी आना जरूरी है।

निवेदक—मैनेजर पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी
अकाली मार्केट-अमृतसर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष ४ मार्ग शीर्ष सम्वत २०१४ संख्या १२

दिसम्बर १९५७

आयुर्वेद-विज्ञान

चिकित्सा संसार में क्रान्ति लाने वाला मुख्य वैज्ञानिक पत्र

AYURVED-VIJNAN

The Leading Hindi Journal Explaining The Ayurvedic System on Scientific Lines

सम्पादक
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य

विषय-सूची

१. चर्म की रचना और गुण धर्म १९७
२. कहरुवा या कहरवा (AMBER) २०२
३. नाड़ी ज्ञान भी सिद्धों की देन है २०५
४. आयुर्वेदज्ञों को विशेषज्ञ बनने की आवश्यकता २०७
५. क्या सरकार द्वारा आयुर्वेद के औषध योगों को अपनाने से आयुर्वेद की रक्षा हो सकती है ? ... २०९
६. क्या मनचाही सन्तान का युग आने वाला है ? २१०
७. देशी औषध निर्माता संघ का दूसरा अधिवेशन २११

प्रकाशक—
स्वामी हरिशरणानन्द वैद्य, आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय, २२ फैज़ बाज़ार, देहली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—चंदोलिया प्रिंटिंग प्रेस, दाईवाड़ा नई सड़क, दिल्ली

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियम

१—आयुर्वेद-विज्ञान प्रत्येक अंग्रेजी मास की १ तारीख को प्रकाशित होता रहेगा।

२—डाक-व्यय सहित इसका मूल्य ३) वार्षिक, एक प्रति का मूल्य ।-) होगा।

३—पत्र मंगाने वालों को अपना पता साफ २ अक्षरों में लिखना चाहिये।

४—जिन व्यक्तियों के पास उस मास की ५ ता० तक पत्र न पहुंचे उन्हें इसकी सूचना देनी चाहिये।

५—यदि एक-दो मास के लिये पता बदलवाना हो तो उसका प्रबन्ध स्वयम् डाकखाने से कर लेना चाहिये। अधिक समय के लिये पता बदलवाना हो तो फिर हमें सूचित करना चाहिये।

६—पत्र व्यवहार करते समय ग्राहकों को अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये। अन्यथा उत्तर नहीं दिया जावेगा।

७—पत्र व मूल्य सम्बन्धी पत्र-व्यवहार मैनेजर आयुर्वेद विज्ञान के नाम से और लेख, समालोचनादि व पुस्तकादि सम्पादक के नाम से भेजना चाहिये।

८—कोई भी पत्र, पुस्तक समालोचना के लिये भेजी जाय उनकी दो प्रति भेजनी चाहिये।

९—आयुर्वेद विषयक वैज्ञानिक गवेषणापूर्ण लेखों को पत्र में सर्व-प्रथम स्थान दिया जायेगा और श्रेष्ठ सचित्र लेखकों को पुरस्कृत भी किया जायगा।

१०—वृथा के आडम्बर पूर्ण पृष्ठ-पोषक लेखों के लिये इसमें स्थान नहीं मिलेगा। किसी भी लेख को घटाने, बढ़ाने व प्रकाशित करने, न करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार होगा।

११—जो लेख भेजे जायें, कागज पर एक तरफ हाशिया छोड़ कर लिखे होने चाहिये।

१२—उत्तम २ अलभ्य आयुर्वेद साहित्य सम्बन्धी चित्र लेख व वनस्पतियों आदि को जो सुरक्षित भेजेंगे उनको सपारिश्रमिक मार्ग व्यय आदि सब आयुर्वेद विज्ञान कार्यालय से दिया जायेगा।

१३—आयुर्वेद शास्त्र सम्बन्धी प्रश्नों को छोड़ कर किसी परामर्श सम्बन्धी या किसी रोगी के लिये रोग-सम्बन्धी प्रश्नों पर प्रति प्रश्न के लिये आयुर्वेद-विज्ञान के ग्राहक आठ आना, जो ग्राहक नहीं वह प्रति प्रश्न एक रुपये का टिकट प्रश्न के साथ भेजेंगे तभी उनके प्रश्न और उत्तर छापे जायेंगे।

विज्ञापन छापने के नियम

१—किसी भी विज्ञापन छापने वाले या बन्द करने वाले को पत्र प्रकाशन से १५ दिन पूर्व सूचना देनी चाहिये।

२—अश्लील सभ्यता के विरुद्ध विज्ञापन नहीं लिये जायेंगे।

३—कोई भी विज्ञापन जनता को धोखा देने वाला सिद्ध होने पर उसका प्रकाशन बन्द कर दिया जायगा और जब तक वह सन्तोषप्रद प्रमाण न देगा जो मूल्य आ चुका है वापस नहीं दिया जायगा।

४—विज्ञापन का मूल्य सर्वथा प्रथम लिया जायगा।

५—आधे कालम से कम विज्ञापन दाताओं को आयुर्वेद विज्ञान बिना मूल्य नहीं दिया जायगा।

६—एक वर्ष के लिये विज्ञापन देने वाले को ≡) रुपया कमीशन काट दिया जायगा।

विज्ञापन के दर

७—१ पृष्ठ यानी २ कालम की प्रतिबार		की छपाई	४०)
आधा पृष्ठ " १	"	"	" २४)
चौथाई ,, १।२	"	"	" १६)
टाईटल के पीछे के पृष्ठ की		"	" ५०)
" तीसरे " की		"	" ४५)
" चौथे " की		"	" ६०)

८—ट्रेड डायरैक्टरी में विषय वार विज्ञापन प्रति ३) रु० के हिसाब से लिया जावेगा।

मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद-विज्ञान

आयुर्विदेव वितते किल शास्त्र जाते पुम्भिः प्रयत्नपरकैर्भवतीह लभ्यम् ।
शक्तिं शिवं च जनता यदि कांक्षतीयम् विज्ञानमेव भजतां सततं विशेषम् ।।

वर्ष ४ | २०१४ मार्गशीर्ष वि०, दिसम्बर १९५७ई० | अंक १२

चर्म की रचना और गुण धर्म

बाहर से शरीर जिस आवरण से आच्छादित हुआ है उसे त्वचा या चर्म कहते हैं। यह चर्म किस द्रव्य से निर्मित हुआ है?आयुर्वेदज्ञों ने अपने सिद्धांत के अनुसार इसे पृथ्वी तत्व से उत्पन्न हुआ माना था यथा–नखास्थिदन्त मांस चर्म वर्चः केश श्मश्रुः लोम कण्डरादि तत्पार्थिवं गन्धोघ्राणंच । चरक ।

वास्तव में यह सिद्धान्त किसी प्रयोग के आधार पर निश्चित नहीं किया गया था, प्रत्युत अनुमान, आप्त आधार पर मान लिया गया था। प्रयोगों से देखने जानने के साधन तो १९ वीं शताब्दी में हाथ आये तभी वस्तुसत्ता को सही जाना जा सका।

तब चर्म की रचना किस द्रव्य से हुई है ? हम अक्टूबर के आयुर्वेद विज्ञान में बतला चुके हैं कि शरीर के प्रत्येक अंग भिन्न भिन्न प्रकार की कोषाओं के मेल से निर्मित हुए हैं, चर्म भी इन्हीं कोषाओं से निर्मित हुई है। किन्तु यह स्मरण रखने वाली बात है कि समस्त कोषाओं का अन्तंद्रव्य अस्रजनोद्भव जैवाद्यम (Protoplasm) एक ही प्रकार का नहीं होता। क्योंकि जैवाद्यम जिस अस्रजन से निर्मित होता है वह अब तक २२ प्रकार का जाना जा चुका है। इनमें से मनुष्य शरीर के अंगों की रचना में लगभग १२ प्रकार का अस्रजन काम आता है। अस्रजन भेद से ही कोषा के जैवाद्यम में विशिष्टता उत्पन्न हो जाती है और उन कोषाओं के जैवाद्यम भेद से अवयवों में विशेषता आ जाती है जो अंगों के रूप में परिस्फुट होती है।

चर्म की निर्माता कोषाओं में श्लिषजन (Collagen) नामक मुख्य अस्रजन रहता है इस श्लिषजन में यह विशेषता है कि यह उष्ण जल में बिलकुल नहीं घुलता चहे कितना ही ताप, चाप (Pressure) देकर उबाला जाय। शीतल हल्के अम्ल व क्षारीय घोलों में भी यह नहीं घुलता केवल फूल जाता है, जैसे सरेस।

चर्मावियवों के मध्य जहां तहां पीत्तावयवी (पीले तन्तु) एक विशेष रूप में फैले दिखाई देते हैं इन तन्तुओं में यह विशेषता है कि यह स्थिति स्यापक होते हैं, इन अवयवों की कोषाओं में जो अस्रजन मिलता है वह भिन्न प्रकार का होता है, इसे स्थितिस्थापी (Elastin) कहते हैं। यह अस्रजन खौलते जल में उबालने पर नहीं गलता, उष्ण अम्ल व क्षारीय घोलों में शनैः शनैः घुलता है। इन दोनों अवयवों के रेशों के जो बण्डल या गुच्छे एक दूसरे में गुंथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर फैलते हैं इनको संयोजित करने वाले अवयव भी इनके मध्य व्यापक होते हैं जो समस्त रेशों को परस्पर मिलाकर जोड़ देते हैं। यह सयोजक अवयव भी विशेष अस्रजन का बना होता है जिसे निर्यासिन (Mucin) कहते हैं, यह अस्रजन गोंद तद्वत चर्म के रेशों में लगकर एक दूसरे को इतनी दृढ़ता से पकड़ लेता है कि वह तन्तु मिलकर एक जान हो जाते हैं इस निर्यासिन को हल्के क्षारीय घोल में भिगो दें तो यह उसमें घुल जाता है। इस तरह इन तीन अस्रजन के योग से चर्म बनता है। शरीर के इस चर्म के ऊपर एक और स्तर चढ़ा होता है जहां केशिका जाल सम्वेदक तन्तु आदि नहीं पहुँचते, इसे उपचर्म कहते हैं। इस उपचर्म की कोषाओं के जैवाद्यम में उक्त तीनों अस्रजन से भिन्न प्रकार का अस्रजन होता है इसका नाम सरेसीन (Keratin) है। सरेसीन भी जल में नहीं घुलता, फूल अवश्य जाता है, उबलते पानी में भी नहीं घुलता। १६०° के उत्ताप पर बहुत देर रखने पर अणुओं में विभक्त हो जाता है तब घुलता है। साथ ही उस समय उस घोल में से उदजन (Hydrogen) नामक वायव्य जनित होता है। इस यौगिक में बलिका अर्थात गन्धक की मात्रा अधिक रहती है । चर्म निर्माता श्लिषजन और उपचर्म निर्माता सरेसीन के यौगिक में थोड़ा सा अन्तर होता है। यदि श्लिषजन काफी उबाला जाय तो उसके यौगिक में एक अणु जल का प्रवेश कर जाता है तब वह सरेसीन के रूप में आ जाता है। और यदि सरेसीन को १००° श. पर कुछ देर रखा जाय तो उस में से जल का एक अणु निकल जाता है तब वह श्लिषजन के रूप में आ जाता है। एक अणु के फेर फार से ही इन दोनों के रचना रूप गुण धर्म में बड़ा अन्तर आ जाता है जिसे पाठक आगे देखेंगे। गर्भ में जब चर्म निर्माता कोषाओं का उद्भव होता है, चर्मावयव बनने लगते हैं उस समय इन अवयवों के साथ ही रक्त लसिका वाहनियों की केसिकाओं तथा नाड़ी तन्तुओं का समूह भी उनके बीच बीच में साथ ही साथ फैलता चला जाता है रक्त वाहनियों, लसिका वाहनियों से तो उसका पोषण होता है और नाड़ी तन्तुओं से स्पर्शानुभव, सम्वेदन शीलता आती है। जब चर्म की रचना हो रही हो उसके साथ उपचर्म के अंश से चर्म में ही लोम ग्रन्थियाँ, प्रस्वेद ग्रन्थियां, मेद ग्रन्थियाँ, पिञ्जूष ग्रन्थियाँ (Coruminous glands) आदि भी निर्मित होने लग जाते हैं। स्मरण रखने वाली बात है कि चर्म के भीतर मूल भाग में उक्त ग्रन्थियाँ उपचर्म के द्रव्य से बनती हैं, और बाहर उसी से नख लोमादि प्रादुर्भूत होते हैं। चर्म के भीतर से रक्त लसिका व नाड़ी सूत्र फैलते फैलते जब चर्म की अन्तिम सीमा पर पहुँचते हैं तो इन सबके समूह से त्वचा पर कान्तिलीन स्तर के नीचे अत्यन्त सूक्ष्म उभार की रेखाएं बन जाती हैं जो कान्तिलीन (Hyaline) पर टेढ़ी मेढ़ी मुंडेरें बना लेती हैं। यह हाथ के हथेली और पैर के तलवों में अधिक स्पष्ट दिखाई देती हैं। अंगुलियों में शंख, चक्र रेखा जिन्हें हस्त रेखा कहते हैं, इन्हीं आन्तरिक उभारों के कारण बनते हैं। त्वचा के इस ऊपरी भाग में मानो केशिका, नाडी सूत्र जाल का झुरमुट एकत्र हो जाता है। इसीलिये जब त्वचा को आड़े काट कर सूक्ष्म दर्शक से देखा जाता है तो त्वचा दो भागों में विभक्त दिखाई देती है। इसीलिये विद्वानों ने इन दोनों भागों के नाम करण किये है यथा:—

(१) अंकुरनी (Papillary layer) चर्म के ऊपरी भाग में जहां केशिकाओं के सूक्ष्म अंकुरों का झुंड फैला दिखाई देता है जिसमें आकर धमनी, सिरा, लसिका, नाड़ी आदि के तन्तुओं का परस्पर मिल कर अन्त हो जाता हे जिसे कान्तिलीन स्तर सुरक्षित रखता हैं इसे अंकुरनी कहते हैं।

(२) जालनी (Reticular layer) यह अंकुरनी के नीचे रहता है इसमें से होकर सिरा, धमनी, लसिका, नाड़ी के सूत्रों का जाल चर्म के रेशों में से फैला हुआ दिखाई देता है। इसमें संयोजक तन्तु, बसाकोषाएं, लोम मूल- ग्रन्थियां, मेद ग्रन्थियां, स्वेदग्रन्थियां और पेशी के जहा तहां तन्तु भी प्रवेश हुए पाये जाते हैं यह स्तर मांस पेशियो से सट कर लगा हुआ होता है। इसे चर्म (Dermis) और इस पर जो अत्यन्त पतला स्तर होता है उसे उपचर्म (Epidermis) कहते हैं। चर्म पर उपचर्म का स्तर इतना पतला होता है कि लगभग इंचका शतांश भाग $\frac{1}{100}$ से भी कुछ कम। इसे चर्म पर से अलहदा करके सूक्ष्म दर्शक से देखा जाय तो यह चिपटी कोषाओं के चार स्तर से बना हुआ मिलता हैं। इन चारों स्तरों को भिन्न करके उनके गुण धर्म मालूम किये गये हैं। उसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के आधार पर उन स्तरों का नाम करण हुआ है यथा—

(१) शृंगिनी (Stratum Corneum) यह स्तर सबसे बाहर होता है इसकी कोषाएं बहुत चिपटी फैली हुई होती हैं। शरीर के कुछ अंगों में यह कोषा स्तर विशेष स्थूल हो जाता है और रूपान्तरित होकर नख, खुर, और शृंग में परिणत हो जाता है। नखों के पीछे एक परिखा होती है जिसे नख परिखा कहते हैं इसी परिखा में से नख बाहर को निकलता है। नखों के नीचे सम्वेदक सूत्र भी होते हैं।

(२) शल्किनी (Stratum Lucidum) यह स्तर शृंगिनी के नीचे रहता है मनुष्यों के उपचर्म में इसके कोई विशेष रूप नहीं देखे जाते किन्तु जलचरों सरिसृपों पर जो छिलके, केंचुल आदि दिखाई देते हैं इसी स्तर से निर्मित होते हैं।

(३) कणिनी (Stratum Granulosum) उपचर्म का यह तीसरा स्तर है जिसकी कोषाएं दानेदार चमकीली होती हैं, यह स्तर आभा, प्रभा प्रद होता है। इसी के निरोग्य रहने पर शरीर की त्वचा में कान्ति दिखाई देती है।

(४) वर्णिनी (Retemucosum) सब से पूर्व इसे माल्पीघियन ने जाना था इसलिये इसे माल्पीघियन स्तर भी कहते हैं। यह उपचर्म का सब से नीचे का स्तर है, इस स्तर की कोषाओं में माल्पीघियन ने वर्णोत्पादनी कणिकाओं का अस्तित्व मालूम किया था और उसने सब से पूर्व यह प्रतिपादन किया था कि इन वर्णोत्पादनी कणिकाओं की उपस्थिति से ही त्वचा का वर्ण ताम्र, पीत, श्याम, भूरा होता है। जाति भेद, वर्ण भेद का उत्पादक यह स्तर है। गोरी त्वचा के व्यक्तियों के इस स्तर की कोषाओं में कोई वर्णोत्पादन कणिका नहीं होती, इसी से उनकी त्वचा गोरी होती है। यहां प्रसंगवश एक और बात इस स्तर से सम्बन्धित होने के कारण उसे बता देना अनुचित न होगा श्वित्र कुष्ठ (सफेददाग) जिसे शास्त्रकारों ने १८ कुष्ठों के भीतर माना है। अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि यह वीरसाणु Virus जन्यरोग है। यह वीरसाणु जब उक्त उपचर्म के चतुर्थ स्तर में घुस जाते हैं तो वह कोषा में विद्यमान उक्त रंग की कणिकाओं को विनष्टकर डालते हैं जितने स्थान के स्तर की कोषाओं का रंग नष्ट हो जाता है उतना स्थान सफेद हो जाता है। इसी से शरीर की त्वचा ऊबड़ खड़ब्बी बदशकल हो जाती है। यह कोई कुष्ठ नहीं होता। उपचर्म का यह स्तर वर्ण युक्त कणिकाओं को धारण करता है। इस लिये इस स्तर में यह विशेषता होती है कि उत्ताप, प्रकाश की बहुत सी किरणों को यह वर्ण शोषित कर लेता है और भीतर अधिक उत्ताप नहीं जाने देता। मालिश करने से, वस्त्र धारण करने से जो उपचर्म में रगड़ लगती रहती है इससे निरन्तर उपचर्म का ऊपर का भाग घिसता उतरता रहता है। उपचर्म तक कोई सम्वेदक तन्तु नहीं पहुंचते, इसलिये इस स्तर के घिसते और झड़ते रहने पर मनुष्य को इनके घिसकर निकल जाने से कोई कष्ट का अनुभव नहीं होता। उपचर्म रूपी रक्षक कोषाओं की सेना मानों त्वचा पर इसीलिये कवच बनकर बिछी हुई है कि इस दुर्ग की वह सदा रक्षा करती रहे। जो कोषाएं मर जाती हैं उनका स्थान नई कोषायें लेती रहती हैं इस तरह यह चक्र अबाध रूप से चलता रहता है।

उपचर्म की कोषाओं से लोम कूप, स्वेद ग्रंथि, मेद ग्रन्थि की रचना होती है। यह त्वचा के विशिष्ट अंग माने गये हैं. इनकी रचना कैसे हुई? इसे भी समझना चाहिये।

बाल और लोम—बाल मोटे और लम्बे होते हैं, लोम बारीक और छोटे होते हैं। पशुओं में लोम प्राय: बालों के भीतर ढंके रहते हैं, शीत प्रधान देश के पशुओं में जो लोम पाये जाते हैं उसे पशम कहते हैं पश्मीने की चादरें इसी से बनती हैं। बाल और लोम वस्तुत: चर्म को शीत, उष्ण वर्षा-जल से बचाने के निमित्त हैं। आदि युग में जब मनुष्य निर्वस्त्र=नंगा रहा करता था इसका सारा शरीर उसी तरह बालों से अच्छादित था जैसे लंगूर या बन्दर का शरीर। किसी किसी मनुष्य के शरीर पर आज भी इतने घने बाल देखे जाते हैं जो पूर्व युग की याद कराते हैं कि ये हजरत कभी पशुओं की श्रेणी में थे। हमारे बाल वस्त्र धारण से ही घिस गये हैं और त्वचा निर्बल हो गई हैं।

बालों की रचना—बालों और लोमों की रचना उपचर्म की कोषाओं के दो स्तरों से हुई है अन्दर के स्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कोषाएं तो गोल छल्लेदार एक पर एक मुंदरी के जुड़ने से बनती है इसी से बालों का मध्य पोला रहता है। जिसमें से होकर पोषण रस, चिकनाई आदि द्रव्य बालों के अन्त तक पहुँचते रहते हैं। दूसरा स्तर जो इन मुंदरियों पर कोषाओं का बनता है उसकी कोषाएं लम्बी सूत्राकार जड़ से चलती है। कई कोषाओं के सूत्रों से बाल के अन्दर का स्तर मंढा जाता है। यह बाहर की कोषाएं वर्णयुक्त कणिकाओं से पूर्ण होतीं हैं । इस वर्ण में यह विशेषता है कि वह प्रकाश का शोषण कर लेता है इसी से बाल काले या भूरे दिखाई देते हैं। इन्हें वर्णप्रद कोषा कहते हैं । जिन बालों की कोषाओं का यह वर्ण नष्ट हो जाता है और बाल की नली में रस का प्रवाह नहीं होता उस बाल में से प्रकाश की किरणें आर पार चली जाती हैं इसीलिये वह पारदर्शक हो जाने से सफेद दिखाई देता है। इन बालों की उत्पत्ति चर्म के निचले जालनी स्तर के मूल में स्थित लोम-कूपों के भीतर होती है, लोमकूप उपचर्म की कई कोषाओं के स्तर से निर्मित्त होता है जिसका बाह्य स्तर संयोजक कोषाओं के जाल से मढा रहता है। वास्तव में यह लोम कूप एक थैली सा होता है जिसमें बाल की जड़, मेद ग्रन्थि की नाली और लसिका, रक्त वाहनियों की केषिकाओं का मुंह खुलता है जिससे बालों को रस, पोषक सामग्री व चिकनाई आदि सब चीजें बालों के अन्त तक पहुँचती रहती हैं। इस लोम कूप में जो बालों की जड़ें धंसी रहती हैं जितनी वह इस कूप के भीतर समाई हुई रहती है वह बाल से मोटी रंग में श्वेत, स्नेह से सिक्त होती है। इस लोम कूप के एक ओर ऐच्छिक मांस पेशी के कुछ तन्तु जुड़े रहते हैं इसके कारण बाल की जड़ एक ओर को कुछ खिंची रहती है। इस पेशी का नाम रोमांचिका पेशी है। भय, शीत, कम्प आदि कारणों से यह पेशी जब संकुचित होती है तो बाल, लोम एक दम खड़े हो जाते हैं, रोमांच इसी पेशी के कार्य व्यापार से होता है। हथेली और तलवों को छोड़कर यद्यपि बाल और लोम शरीर के हर एक भाग में रहते हैं किन्तु इनकी लम्बाई और मोटाई जाति, नस्ल, वर्ण भेद से न्यूनाधिक होती है।

आर्य नस्ल के मनुष्य के सिर के बाल लम्बे होते हैं हब्शियोंके सिर के बाल बूट पालिश के ब्रुश से अधिक बड़े नहीं होते। कइयों के झाड़ीनुमा बिखरे छोटे छोटे झुंडों में देखे जाते हैं। इसी कारण तो इन्हें बुशी कहते हैं।

सिर मूंछ, दाढ़ी, विटप, कक्ष, वरौनी के बाल शरीर के अन्य बालों से मोटे और लम्बे होते है किन्तु पलक और त्वचा के बाल बहुत छोटे पतले होते हैं। इन बालों पर शोक, चिन्ता, व्याधियों का उसी तरह प्रभाव होता है जैसा शरीर पर, यह भी क्षीण होकर झड़ने लगते हैं।

मेद ग्रंथियाँ—शरीर के अन्तःचर्म के स्तर में अंगूरों के गुच्छोंवत् उपचर्म के कई स्तर की कोषाओं से निर्मित थैलियां होती है जो छोटी २ ग्रन्थियां सी लगती हैं, यह अपने कार्य व्यवहार के कारण तीन प्रकार की देखी जाती हैं (१) जो केवल चिकनाई का स्राव करती है, इनकी नलियां लोमकूपों में खुलती हैं। (२) जो लवण युक्त जल का स्राव करती हैं इनके नालियों के मुख लोम कूपों के अतिरिक्त त्वचा में खुलते हैं । (३) जो असलजनीय अंश, चिकनाई, और लवणयुक्त जल का स्राव करती है यह अधिकतर कक्षा, स्तन, विटप प्रदेश में पाई जाती हैं इनके स्राव में विशेष विशेष प्रकार की गन्ध होती है। मुख मण्डल और नाक के अग्रभाग की ग्रन्थियां भी विशेष प्रकार का स्नेह व मद-लस तब उत्पन्न करने लगती है जब मनुष्य २४ वर्ष की अवस्था पार कर पूर्ण ब्रह्मचारी रहे तो इन ग्रन्थियों का मेद मदलस पूर्ण हो जाता है और गाढ़ा होकर मुंहासे या कील बनने लग जाता है। किसी बिरले के यह कीलें पृष्ठवंश पर भी निकलते देखी जाती हैं। हाथ की हथेली और पैर के तलवों में इन मेद ग्रन्थियों का अभाव होता है। इन ग्रन्थियों का स्नेह चर्म को बालों को चिकना, मुलायम बनाये रखता हैं।

पिन्जूष ग्रन्थियां—यह ग्रन्थियाँ उक्त ग्रन्थियों से कुछ बड़ी होती है और केवल कर्ण कुहर में ही पाई जाती है इन ग्रन्थियों से जो स्राव निकलता है वह कर्ण कुहर को स्नेह पूर्ण बनाये रखता है यही स्नेह जब सूखकर गाढ़ा हो जाता है तो कान की मैल के रूप में निकला करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वेद ग्रंथियां—चर्म के निम्न स्तर पर सर्प की भाँति गेंडुली मारे नलिकाकार अत्यन्त पतली सूत्र तद्वत गाँठ सी होती है इसके स्तर उपचर्म की कोषाओं से निर्मित होते हैं जिसके बाहर संयोजक कोषाओं का स्तर चढ़ा रहता है जिसमें जहाँ तहां एच्छिक माँस कोषाएं भी संलग्न होती हैं। इस कुण्डली के आसपास केशिका का जाल फैला रहता है जिसमें से सदा लसिका स्रव कर इस कुण्डली के भीतर पहुंचा करता है। पोषण सामग्री तो वह ग्रहण कर लेती है कई प्रकार के लवण, मूत्रिया, जल आदि पदार्थ जो अवशिष्ट रहते हैं इन्हें वह टेढ़ी मेढ़ी नली मार्ग से—जो चर्म के बाहर आकर खुलती है-बाहर कर देती है जिसे घर्म या पसीना कहते हैं। यह प्रस्वेद ग्रंथियां अन्य स्थानों की अपेक्षा हथेलियों, तलवों, मस्तक और कक्षा, वक्षण स्थल पर अधिक संख्या में होती है। सम्पूर्ण शरीर में इनकी संख्या २२-२४ लाख के मध्य होती है।

स्वेद--इसमें प्रायः वही वस्तुएं मिश्रित होती हैं जो मूत्र में पाई जाती हैं। इससे भिन्न कुछ मेद की चिकनाई का अंश तथा असात्म्य रूप में रहे यत्किंचित अस्रजन का अंश भी होता है। अधिक मात्रा तो इसमें जल ही होता है। इसी कारण इसका गुरुत्व १००३. से लेकर १००५ के मध्य ही रहता है। लवण, मूत्रिया आदि के बढ़ने से गुरुत्व बढ़ जाता है। साधारणतः २४ घण्टे में प्रस्वेद मार्ग से १ सेर के लगभग पसीना गुप्त या प्रकट रूप में निकलता है। गर्मियों में इसकी मात्रा बढ़ जाती है। क्योंकि पसीने का आना शरीर में ताप की उत्पत्ति तथा बाहर के उत्ताप प्रभाव पर ही निर्भर है। हम जब कसरत करते हैं तो पेशियों में अधिक तापोत्पत्ति होने लगती है इसी प्रतिक्रिया के परिणाम स्वरूप पसीना आता है। क्योंकि जो ताप बढ़ता है उसे जल वाष्प लेकर बाहर आ जाता है। इस तरह पसीना निकलने से शरीर के ताप की मात्रा सीमा से अधिक नहीं बढ़ने पाती।

सम्वेदनांकुर—यह चर्म की अन्तिम सीमा पर पहुँची हुई नाड़ी तन्तुओं का गुच्छा सा बन जाता है जिसमें चार प्रकार के सम्वेदक तन्तु मिले हुए होते हैं। जिनसे शीत, उष्ण, स्पर्श, पीड़ा की अनुभूति इलहदा २ होती है। इसमें कोई शक नहीं कि जो सम्वेदक तन्तुओं का अन्त गुच्छ मुच्छ हुआ चर्म के अन्तिम छोर पर उपचर्म के नीचे रहता है उस अंकुर में चारों ही सम्वेदक सूत्र के तन्तु मिल कर एकाकार हुए होते हैं, किन्तु परीक्षकों ने सूक्ष्म विधियों से इनका विभाजन कर इस बात की सूक्ष्मता से जांच करली है कि इनकी अनुभूति के सूत्र भिन्न भिन्न होते हैं और उनको जानने का केन्द्र भी मस्तिष्क में इलहदा इलहदा स्थान पर है। इसलिये उनका काम यदि आगे वंटा न हो तो भ्रम और भूल होने की सम्भावना रहती है। इसलिये प्रत्येक सम्वेदन के अवयव भिन्न भिन्न ही होने में सुव्यस्था है।

चर्म के गुण धर्म—१-चर्म से शरीर का मांस भाग सुरक्षित हुआ है। यह अन्दर के भागों को बाह्य परिस्थिति, परोपजीवी अदृश्य जीवाणु कीटाणुओं के प्रवेश से रक्षा करती है।

२--स्पर्शेन्द्रिय होने के कारण शीत, उष्ण, पीड़ा, चाप प्रभाव से भीतर के भागों को बचाती है।

३--पसीने द्वारा आन्तरिक द्रव वायु रूप मलों को ही नहीं निकालती प्रत्युत ताप का नियन्त्रण भी करती है।

४--प्रकाश में विद्यमान पराकासनी रश्मियों का शोषण कर उनसे खाद्योजांश का उत्पादन करती है।

५--घर्षण, मर्दन अभ्यंगादि द्वारा तेलादि द्रव्यों का शोषण कर बल, वर्ण बढ़ाती है.

६--यत्किंचित यह ऊष्मजन का शोषण भी करती है और कज्जल द्विऊष्मिद (क $ऊ_2$) वायु का त्याग भी करती है। इस तरह शरीर रक्षा के निमित्त इसने अपने में अनेक गुण धर्म धारण किये हुए हैं।

७. चर्म अपने में विद्यमान वर्ण कणिकाओं (Colour pigments) के द्वारा बाह्य ताप प्रभाव से शरीर की रक्षा करता है। संसार के भूमध्य रेखा के समीपस्थ देशों में वर्ष भर सूर्य की किरणें सीधी पड़ती रहती हैं और इन देशों में गर्मी पड़ती है। इस अत्यधिक ताप के प्रभाव से रक्षा करने के प्रयोजन से ही इन देशों के निवासियों जैसे अफ्रीका के हब्शियों आदि के चर्म में यह कणिकायें अधिक संख्या में विद्यमान होती हैं जिस से इन जातियों का वर्ण काला होता है। शीतप्रधान देशों जैसे अफगानिस्तान योरूप आदि के निवासियों में इन वर्ण कणिकाओं की आवश्यकता नहीं होती अतः उनके चर्म में यह बहुत कम संख्या में पाई जाती है और इन जातियों के लोगों का रंग गोरा होता है। विभिन्न देशों व जातियों के लोगों के चर्म में वर्णकणिकाओं की यह न्यूनाधिकता का नियन्त्रण आवश्यकतानुसार प्रकृति स्वयमेव करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहरुवा या कहरवा (AMBER)

यह यूनानी चिकित्सा में व्यवहृत होने वाली एक प्रसिद्ध वस्तु है। प्राचीन काल के आयुर्वेदज्ञ तथा बाद के भारतीय रसायनी भी इससे परिचित नहीं थे। भारत में मुसलमानी राज्य स्थापित होने के बाद जब उनके साथ आये हकीमों ने यूनानी चिकित्सा का प्रचार किया तब से भारतीयों को कहरुवा का ज्ञान हुआ। कुछ वैद्य कहते हैं तृणमणि के नाम से आयुर्वेदज्ञ इसको जानते थे यह उनका भ्रम है, शास्त्र से इसकी पुष्टि नहीं होती। तृण मणि नाम तो इसका तब दिया गया जब कहरुवा को वस्त्र से रगड़ कर सूखे तिनके की ओर करने पर तिनका या पक्षी के पर उससे चिमट जाते देखे गये तो इस आकर्षणी गुण को देख कर उसका नाम तृण-मणि रख दिया। निघण्टुओं में तृण-मणि शब्द का अर्थ कहरुवा नहीं है, प्रत्युत हरा या नीली आभायुक्त हीरा का नाम तृण-मणि है। यह नाम तो बाद में कहरुवा के लिये रखा गया।

इतिहास—प्राचीन काल में एथेन्स, कार्थेज के निवासी स्पेन, फ्रान्स, जर्मनी तक व्यापार के लिये जाया करते थे लौटते समय वे बाल्टिक समुद्र के किनारे २ जब वापस आते थे तो उधर के निवासियों से पीले, लाल चमकीले पत्थर के डले खरीद लाते थे। यह पत्थर नदियों के सोतों में कहीं कहीं मिलते थे। उस समय यह पत्थर बड़े चमकीले सुन्दर देखकर यूनानी, रोम निवासी इन्हें रगड़ रगड़ कर स्त्रियों के आभूषण बनाने लगे। इन पत्थरों की मालाएं अपनी चमक दमक से रमणियों के कण्ठ की जब शोभा बढ़ाने लगीं इसकी माँग बढ़ी। यह जिकर आज से दो सहस्त्र वर्ष पूर्व का है। जब इसका उपयोग आभूषण के लिये होने लगा तो धीरे धीरे इसका व्यवहार संसार में बढ़ा।

जालीनूस और दीर कूरीदूस यूनान के प्राचीन चिकित्सक हुए। इन्होंने इस पत्थर के टुकड़ों की वास्तविकता को जानने का प्रयत्न किया। उन्होंने इसे अग्नि पर डाला तो यह जल गया, तब उन्हें मालूम हुआ कि यह पत्थर नहीं किसी वृक्ष का सर्ज-रस (राल) है। किस वृक्ष की यह राल है? वह इसका सही पता नहीं निकाल सके। क्योंकि बाल्टिक सागर के जिन तटीय नदियों के मुहानों पर यह मिलता था, वहां वह किसी वृक्ष से निकलता तो देखा नहीं जाता था। किन्तु परीक्षा से सिद्ध था कि यह खान से निकलने वाला पत्थर नहीं है। उन्होंने अनुमान के आधार पर मान लिया कि यह वानस्पतिक राल है। कहते हैं प्लीनी नामक विद्वान् ने कहरुवा के अनुसन्धान और उसके उपयोग पर कोई पुस्तक भी लिखी थी। दीरकूरीदूस और जालीनूस ही ऐसे प्रथम चिकित्सक हुए जिन्होंने रुजावस्था में खाने से यह लाभ करता है ऐसा उन्होंने इसका उपयोग मालूम किया था। इन्हीं यूनानी चिकित्सकों के ग्रन्थों का अनुवाद अरब निवासी शेखबूअली सीना, गाफिकी आदि ने किया। इन्होंने लिखा कहरुवा दो तरह का होता है एक रोम देश से आता है दूसरा स्पेन के पश्चिमीय नदी तटों के नगरों से। शेखबूअली सीना ने इसे हौज या हौर वृक्ष का गोंद लिखा। गाफिकी ने दोम वृक्ष का गोंद बताया और उसने लिखा कि दोम का जब किल्ला फूटता है और उसके पत्ते बाहर आते हैं उन पत्तों से एक तरह का गाढ़ा शहद सा रस टपकता है, रस टपक रहा हो उस समय उस पर जो पतंगा, मक्खी वगैरह बैठते थे वह उससे चिपट जाते थे और उसी में सन कर उस रस में जम जाते थे। इसी से जमे हुए कहरुवे के टुकड़ों में यह कीड़े, पतंगे वृक्ष के पत्ते तिनके निकलते हैं।

क्या कहरुवा वास्तव में उक्त वृक्षों की राल है?

प्राचीन काल में तो इसका सही सही पता नहीं लग सका था। जब से कहरुवा के कण्ठहार, लौकट आदि अनेक प्रकार के आभूषण बनने लगे और इसका व्यापार चमका तब से यूनान, रोम, जर्मनी आदि देशों में इसके आभूषण बनाने के केन्द्र बनते चले गये। जर्मनी में कोनिग्सवर्ग, पामनिकेन आदि स्थानों में इसके व्यवसायिक केन्द्र आज से कोई १०० वर्ष पूर्व खूब चमक रहे थे। उन्हीं दिनों कोनिग्सवर्ग में एक बहुत बड़ा विद्यालय स्थापित हुआ और वहाँ एक बहुत बड़ा संग्रहालय बनाया गया। उस संग्रहालय में कहरुवा के उन डलों को एकत्र किया जाने लगा जिनमें अनेक प्रकार के कीट पतंग दबकर सुरक्षित हो रहे थे। कहरुवा के इन डलों में सैंकड़ों प्रकार के कीट पतंगों के अवशेष इतने सुरक्षित थे कि इतने किसी अन्य विधि से प्राप्त होने कठिन थे। पुरातत्व विदों का जब ध्यान इधर गया तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने इन कहरुवा गर्भस्थ प्राणियों को देखकर यह जानने का प्रयत्न किया कि यह कीट पतंग इसी काल के हैं या कि किसी पुरा काल के ? इस ढूंढ खोज से ज्ञात हुआ कि विद्यमान समय के बहुत से कीट पतंगों से इन में भिन्नता है। इन खोजों से यह पता चला कि कहरुवा जिस वृक्ष की राल है यह वृक्ष भी अब पृथ्वी पर नहीं रहा, इसका लोप हो गया है। पुरोविद विज्ञान वेत्ताओं का जब ध्यान इधर खींचा गया और उन्हें कहरुवा के गर्भस्थ वृक्षों की टहनी पत्ते, फूल आदि चीजें दिखाकर उनसे यह जानने का प्रयत्न हुआ कि इसके वृक्ष किस काल में होंगे ? उन्होंने यह तो मालूम कर लिया कि यह देवदारु वर्ग (Coniferae) के वृक्षोंवत् बहुत बड़े वृक्ष थे जिनकी यह राल है, किन्तु इस समय यह वृक्ष लुप्त हो चुके हैं। उन्होंने अन्दाजा लगाया है कि तृतीय काल के अर्ध जल मग्न देवदारु वर्ग के वृक्षों की जातियों में से हो सकते हैं। क्योंकि अनी सदृश्य पत्तों और उसके, फलों फूलों की जो समाधियां इन कहरुवा के डलों में अधिकता से मिलती हैं यह प्रमाणित करते हैं कि जिस काल में यह वृक्ष रहे होगें उस समय उन वृक्षों से जो बिरोजा बहा होगा उस राल में इसी तरह उसी वृक्ष के पत्ते फूल टहनी ज्यादा पाये जाते हैं जैसे आजकल चीड़ बिरोजे में,जो जंगल में अपने आप वृक्ष से फूट कर बह पड़ता है इन्हीं वृक्षों के पत्तों का मिश्रण अधिक प्राप्त होता है।

कहरुवा के डले सेर सेर दो दो सेर से भी कहीं २ बड़े मिलते हैं। इतने बड़े डले तभी बन सकते है जब उस का रस सेरों की मात्रा में चूता रहे।

रासायनिकों की छानबीन—कहरुवा प्रकृति में कैसे बनता है ? इसकी प्रत्यक्ष जानकारी का तो अभाव है। दूसरे जिस रूप में यह प्राप्त है इतना तो विश्लेषण से जाना जा सका है कि यह कज्जल, उदजन और ऊष्मजन का यौगिक है। किन्तु अभी तक पूर्णतया रासायनिक विश्लेषण करना सम्भव नहीं हुआ है क्योंकि इसे जब गरम किया जाता है तो यह नष्ट होने लगता है इस कारण इसकी दृढ़ता का भी अन्दाजा लगाना कठिन है। ज्यादा गरम करने पर इससे जो वाष्प उठती है उसे परिस्रवित किया जाय तो एक उद्वायी तेल (Succinim oil) जिसे कहरुवा इत्र कहते हैं प्राप्त होता है। और इसके सूखे चूर्णं को बन्द वर्तन में रखकर निर्वात में स्रवित करें तो इससे ८ प्रतिशत एक अम्ल प्राप्त होता है जिसे कहरुवाम्ल (Succinic Acid) कहते हैं। इसे जांचने से ज्ञात हुआ है कि यह कई प्रकार के रालीय यौगिकों का समूह है। कहरुवा के डले नदियों के किनारे पानी में भी मिलते हैं। अब तो काफी ऐसे कहरुवा के डले संचित किये जा सके हैं जिनके गर्भ में प्रवाल शाखा, काई अलगी, रेडियो लारिया, घोंघे, मत्स्यशावक आदि जलीय जीवों के अवशेष सुरक्षित मिलते हैं। इनकी बहुतायत को देखकर यह विचार दृढ़ होते जा रहे हैं कि कहरुवा ऐसे वृक्षों की राल है जो अर्ध जलज स्थिति के पुरातन देवदारु वर्ग के वृक्ष थे, किन्तु जब यह राल वृक्ष से द्रव रूप में टपकी होगी उस समय यदि वह जल में गिरी तो उस स्थिति में उसका रासायनिक रूप ऐसा होना चाहिये जो जल में घुलनशील न हो किन्तु कुछ जल के अणुओं को ग्रहण कर कठिन रूप में बदलने वाली हो तभी उसमें जलीय जन्तुओं के अवशेष सुरक्षित रह सकते हैं।

बिरोजा, सकमूनियां, लोबान, सन्दरूस आदि रालों का मूल यौगिक दिव्यौल (Phenol) है जिसका रासायनिक सूत्र (क $उ_५$ ऊ उ) है दिव्यौल इन सबों में विद्यमान रहता है। यह एक ऐसा अतृप्त यौगिक है जो जल का सम्पर्क पाकर गाढ़ा होने लग जाता है। अनुमान है कि कहरुवा जब द्रव रूप में टपक रहा था उस समय उसके अन्दर इस रालीय मूल दिव्यौल का यौगिक विद्यमान था, इसलिये यह जल में गिरने पर जहां जाकर नीचे बैठा वहां जो जीव जन्तु विद्यमान थे इसके द्रवीय रूप में सनकर वे मर गये, वह राल जल के सम्पर्क से गाढ़ा होकर जम गई और ऐसी कठोर हो गई जो फिर जल वायु के प्रभाव से अक्षुण हो गई,तभी उसके भीतर जलीय वनस्पतियों, जन्तुओं के अवशेष प्राप्त हो सके, वरना और किसी विधि से सम्भव न था। कहरवा पर साधारण गर्मी, जल, हवा का कोई प्रभाव नहीं होता। इसीलिये यह करोड़ों वर्ष पूर्व काल की राल आज हमें जो भूगर्भ से प्राप्त हो रही है जिसका रहस्य हजारों वर्षों से छिपा चला आ रहा है, अनेक विद्याओं के ज्ञाता लोगों के सहयोग से ही इसके वास्तविक रूप पर प्रकाश पड़ सका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास्तव में जिस तरह तृतीय कल्प में पृथ्वी गर्भ में उथल पुथल होने पर जंगल के जंगल भूगर्भ में समा गये थे वही वृक्ष आज हमें पत्थर के कोयले के रूप में मिल रहे हैं। ठीक इसी तरह कहरवा भी उस तृतीय कल्प के वृक्षों की रालें जो टपकती रहती थीं जमकर और भूगर्भस्थ होकर अपने विशेष गुण धर्म के प्रभाव से अक्षुण्ण बनी रही। वही रालें आज हमें कहरुवा (Amber) के नाम से प्राप्त हो रही है।

कहरुवा के गुण धर्म--यह एक भंजन शील, स्वच्छ चमकदार, लाल या पीले रंग का राल है जिसके डले बेडौल चमकदार नदियों के तट पर या भूमि में दबे स्पेन, रोम जर्मनी के कुछ प्रान्तों में प्राप्त होते हैं। इसमें न तो किसी प्रकार की गन्ध होती है न खाने में कोई स्वाद देता है। इसके डले को कपड़े पर या बालों पर रगड़ कर तिनके की ओर करें तो तिनका खिंचकर इससे चिपट जाता है किन्तु तुरन्त ही छूट जाता है। हथेली पर खूब रगड़ कर इसे सूंघा जाय तो निम्बूकी सी गन्ध इसमें से आती है। सम्भव है यह हथेली के संघर्ष समय में उत्पन्न होती हो। अग्नि पर डालने से मस्तगी की सी उसके धुएं से महक मिलती है। कुछ ग्रन्थकारों ने लिखा है कि इसे पिघला कर माला की गुरियाँ लौकट, कर्णफूल आदि बनाये जाते हैं। यह बात गलत है इसे वायु शून्य पात्र में बन्द करके भी ६० श. पर पिघलाने का प्रयत्न करने पर यह मृदु होते ही क्षीण होने लगता है और इसकी चमक आभा प्रभा सब जाती रहती है। यह भी बात गलत है कि इसमें किसी अन्य रालों की मिलावट की जा सकती है। हाँ इसके बारीक बारीक टुकड़ों (चूरे)में जरूर सन्दरूस का चूरा गोंद और मिला दिये जांय तो पहचानना कठिन होता है। इस रूप में मिलावट हो सकती है, डले में नहीं।

कहरुवा में यह विशेषता पाई गई है कि इसे पीसकर खिलाया जाय तो यह रक्त ष्ठीवन, नकसीर, रक्तार्श, रक्त पित्त आदि रोगों में आने वाले रक्त को रोकने अर्थात रक्त की द्रवता को घटाकर उसे गाढ़ा करने का विशेष गुण रखता है और हृदय की गति को नियमित बनाये रखने का इसमें विशेष गुण है। अर्थात हृदय की क्रियाओं को व्यवस्थित करने में इसका विशेष प्रभाव देखा जाता है। इसीलिये यह हृदय के लिये बल प्रद माना गया है। नाड़ीमण्डल और मस्तिष्क के मानस क्षेत्र पर भी इसका प्रभाव देखा जाता है इसीलिये उन्माद मनोलिया आदि मानसिक व्याधियों में इसके सेवन से लाभ देखा जाता है। राल रूप होने से इसमें संकोचन शोषण का भी विशेष गुण है इसलिये यह प्रवाहिका, ग्रहणी, अतिसार में भी लाभ पहुँचता है। कहरुवा रालों में एक विशिष्ट राल है इसलिये इसमें दोषों विकारों को शोषण करने का भी गुण है। यह विकारों को शोषित कर अपने साथ बाहर निकाल देता है। इसे यूनानी चिकित्सक अनेक योगों में डालते हैं। उनके यहां इसे उपयोग से पहले सम्पुट में बन्द करके ७०-८० शतांश के उत्ताप पर रखकर जला देते हैं फिर उसे योगों में डालते हैं, किन्तु आजकल बहुधा बिना जलाये ही इसके बारीक चूर्ण को भी योगों में डाला जाता है। बन्द बर्तन में रखकर स्रवित करने पर जो कहरुवा तेल मिलता है अलोपैथी वाले उसे सन्धि बात, आमवात आदि की पीड़ाओं के समय मलने के लिये देते हैं और इस समय की परिष्कृत परिस्रवण विधि से इसका जो अम्ल प्राप्त करते हैं उस कहरुवा अम्ल के साथ क्षारजनक धातुएं या अन्य धातुओं के योग से इसके लवण बनाते हैं जो कहरुवेत कहलाते हैं, इनका उपयोग अनेक रासायनिक कामों में होता है इस तरह से कहरुवा एक अत्यन्त उपयोगी राल है जिसका प्रयोग वैद्यों को भी करना चाहिये। अंगरेजी में इसे एम्बर कहते हैं।

ग्राहकों से निवेदन

१९५७ई० वर्ष के लिये आयुर्वेद विज्ञान के ग्राहकों का चन्दा प्रस्तुत अंक के साथ समाप्त होता है अतः ऐसे सभी महानुभावों से हमारा अनुरोध है कि वह आगामी वर्ष का चन्दा ३) शीघ्रातिशीघ्र हमें भेज दें। जैसा कि आप को ज्ञात है आयुर्वेद विज्ञान प्रति मास की प्रथम तिथि को ही ग्राहकों की सेवा में भेज दिया जाता है अतः चन्दा १ जनवरी १९५८ से पूर्व ही हमारे कार्यालय में पहुंच जाना चाहिये। जिन सज्जनों का चन्दा उक्त तिथि तक हमें नहीं पहुँचेगा उन्हें आयुर्वेद विज्ञान का आगामी अंक वी० पी० से भेज दिया जावेगा। परन्तु वी० पी० भेजने में ।|-) अतिरिक्त डाक व्यय पड़ता है जो पूर्व ही मनी आर्डर द्वारा रुपया भेजने वाले ग्राहकों को बच सकता हैं अतः यथासम्भव पूर्व ही चन्दा भेज देने में ग्राहकों का अपना लाभ है। जो सज्जन किसी कारण से आगामी वर्ष ग्राहक न रहना चाहें वह कृपया इसी मास के भीतर पत्र द्वारा सूचना दे दें ताकि वी० पी० खर्च वृथा न जाय।

—मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाडी ज्ञान भी सिद्धों की देन है

किसी गायक ने एक वैद्य पर व्यंग कसा 'नाडिहू न जाने वैदा निपट अनाड़ी रे।" अर्थात इस वैद्य को तो नाडी का ज्ञान भी नहीं है। इस समय के भारतीय जन समाज में यह किम्वन्ति व्याप्तमान है कि जिस को नाडी देखना आता है, नाडी पर हाथ रख कर रोग को समझ लेता है वही समझदार वैद्य है।

मैंने भारत का बहुत भ्रमण किया है इस घुमन्तु दशा में काश्मीर के कष्टवार, भद्रवा में एक ऐसे वैद्य से परिचय हुआ जो नाडी को पकड़ कर यह बतला देता था कि कल तुमने अमुक अमुक वस्तुएं खाई थीं। फिर अमुक कष्ट हुआ। इत्यादि। में उसके पास एक सप्ताह ठहरा केवल यही जानने के लिये कि वह नाडी स्पन्दन द्वारा भूत काल की बातें कैसे बतला देता है, उससे पूछने पर तो इस रहस्य के भेद का कोई पता नहीं लगा। वह कोई अच्छा पठित भी नहीं था, झाड़, फूंक,मन्त्र,तन्त्र, टोटका, टोना का काम अधिक करता था। कुछ रस बनाता और उनका व्यवहार भी करता था, यह १९१३ की बात है। वहाँ से पर्वत माला को पार करता नाहन सरमौर स्टेट की रेणुका तहसील से होकर १९१४ के शीत काल में गिरी नदी के तट पर एक ठाकुर के ग्राम में आठहरा। वह ठाकुर बड़ा साधु प्रेमी था, उसकी एक भैंस चोरी चली गई थी। उसने एक बाकी (ओझा) बुलाया था। उस बाकी ने—भैंस किसने खोली? कैसे गई? कहां है? सारी बात बता दी। इस तरह उन की भैंस मिल गई। उस बाकी (बकने वाले या बताने वाले) के पास सैकड़ों आदमी अपना प्रश्न जानने के लिये आते थे। चार आने लेकर वह बताता था। कई रोगी भी उसके पास आकर अपनी बीमारी की बाबत पूछते थे, वह उन्हें ठीक भूतकाल से सम्बन्धित खाने, पीने और बीमारी के उत्पन्न होने की घटना को उसी तरह बता देता था। कि जिस तरह वह वैद्य। जहाँ मुझे ठहराया गया था, वहीं उसे भी जगह मिली थी, उसे रात्रिको ही बात करने की फुरसत मिलती थी। दो तीन बीमारों को जो उसने देखा था, मैंने उसे जो दवा देने को बताई उससे रोगियों को लाभ हुआ, फिर वह प्रेम से बातें करने लगा। मैंने उससे एक दिन बातों बातों में पुछा सच बताओ किसी रोगी के भूत काल का ज्ञान तुम्हें कैसे होता है? बड़ी हीलहुज्जत के बाद उसने इतना स्वीकार किया कि यह सिद्धि है। सिद्ध करने पर ही भूत वक्ता बन सका हूँ। वह पढ़ा लिखा कुछ नहीं था। जौन सार बावर में भी एक बाकी और देखने को मिला जो इसी तरह भूत कालिक बातें बता देता था।

मैंने कहीं पढ़ा भी था किसी मुसलमान बादशाह के यहाँ एक हकीम नाडी ज्ञान में ऐसा प्रवीण था जिसे पर्दे के पीछे बंधे हुए भैंस के पैर का धागा हकीम को पकड़ कर उससे पूछा गया था जनाब इस बेगम साहिब को क्या बीमारी है? और खुराक क्या दी जाय। हकीम साहब ने चट बता दिया कि यह दुबली हो रही है इसे खल, बिनौले, अच्छा चारा खाने को दो, बेगम साहबा ठीक हो जायंगी। यह वास्तव में नाडी द्वारा प्राप्त होने वाला ज्ञान नहीं माना जा सकता, हाँ किसी अन्य सिद्धि साधन से मनोबोध की क्रिया का परिणाम हो सकता है। जिसका नाडी विज्ञान से सम्बन्ध मानना स्वयम् भूल में पड़ना है और जनता को भ्रम में डालना है।

यदि नाडी द्वारा शरीर रोग विज्ञान का उल्लेख हमें किसी संहिता ग्रन्थ में मिलता तो हम इसकी प्राचीनता पर विश्वास करते। जहां संहिताओं ने—

"दर्शन स्पर्शन प्रश्नैः परीक्षेत च रोगिणाम्" कहा है

वहां स्पर्श-ज्ञान में नाडी देखने का उल्लेख किसी संहिता में नहीं मिलता। चरक, सुश्रुत वाग्भट, हारीत, काश्यप, भेल, जातुकर्ण आदि जो भी संहिताएं प्रकाश में आई हैं उनमें से किसी में संकेत के रूप में भी स्पर्श ज्ञान के समय नाडी पर हाथ रखकर देखना इसका कोई जिकर नहीं मिलता। तो क्या नाडी परीक्षा प्राचीन आयुर्वेद सम्मत ज्ञान नहीं? आइये? हम इस पर कुछ विचार करें।

नाड़ी सम्बन्धी विषय की अब तक दो तीन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। १९१२ में स्वर्गीय श्री यादव जी त्रिकम जी आचार्य ने राजमार्तण्ड के साथ रावण विरचित नाडी परीक्षा नामक ८४ श्लोकों की पुस्तक प्रकाशित की थी, एक उसके बाद बसबराजीय नामक दक्षिणात्य सिद्ध सम्प्रदाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का दूसरा ग्रन्थ आयुर्वेद वृहस्पति श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणीजी ने प्रकाशित किया, उक्त ग्रन्थ के आरम्भ में नाडी परीक्षा पर ३८ श्लोक दिये हैं। इसके पश्चात नाडी तत्त्व दर्शन नामक आज पांच वर्ष हुए श्री सत्यदेव वशिष्ठ जी ने एक ग्रंथ प्रकाशित किया। उस के दूसरे अध्याय में कणाद कृत नाडी विज्ञान के कुछ श्लोक उद्धृत किये गये हैं, जिससे ज्ञात होता है कि किसी कणाद नामक व्यक्ति ने नाडी परीक्षा पर कुछ लिखा था। इससे भिन्न मद्रास राजकीय पुस्तकालय की पुस्तक सूची में अश्वनि कुमार कृत नाडी परीक्षा नामक २७ श्लोक की एक छोटी सी पुस्तक का उल्लेख मिलता है। इन चार ग्रन्थों से भिन्न शार्ङ्गधर आदि आयुर्वेद प्रतिपादक नव्य ग्रन्थों में इन्हीं ग्रन्थों के आधार पर नाड़ी-परीक्षा संग्रह की गई है, जिनका कोई ऐतिहासिक महत्व नहीं। तब जानना यह शेष रह जाता है कि नाडी ज्ञान के आविष्कारक कौन हुए? और कब हुए? हमें यह बात इन प्राप्य ग्रन्थों के आधार पर खोजने के लिये विवश होना पड़ता है। नाडी विषयक स्वतन्त्र ग्रन्थों में रावण कृत नाडी परीक्षा सबसे बड़ा संकलन मिलता है। इसी रावण के लिखे अब तक तीन और ग्रन्थ प्राप्य हैं (१) अर्क प्रकाश (२) उड्डीश तन्त्र [३) कुमार तन्त्र। अर्क प्रकाश, उड्डीश तन्त्र और कुमार तन्त्र भी प्रकाशित हो चुके हैं इन ग्रंथों के पढ़ने से ज्ञात होता है कि यह व्यक्ति ८४ सिद्धों के समय जब तान्त्रिक मत का प्राबल्य था उन्हीं समयों में हुआ और तान्त्रिक सम्प्रदाय से ही इसका सम्बन्ध था। इसने अपनी नाडी परीक्षा के चौथे श्लोक में लिखा है--

जीवनाडीति सा प्रोक्ता नन्दिना तत्त्ववेदिना।

नन्दी नामा व्यक्ति नाडी ज्ञान का तत्त्व वेत्ता था। उसने ही इस नाडी को जीवन की स्थिति बताने वाली संज्ञा दी है और इसी के आधार पर आगे उस ने लिखा--

अंगुष्ठमूल भागे या धमनी जीव साक्षिणी।
तच्चेष्टया सुखं दुःख ज्ञेयं कायस्य पण्डितः।
नाड़ी परीक्षा

नन्दी आचार्य कौन था? कब हुआ? हम अपने भस्म विज्ञान के दूसरे अध्याय में शैव मत का विवेचन करते हुए पृष्ठ ४८-४९ पर बतला आये हैं कि नन्दी एक ताण्डव नृत्य का आविष्कार करने वाला आचार्य हुआ उस नन्दी को भरत ने अपने नाट्य शस्त्र में शिवका पुत्र लिखा है।

अभिनव गुप्त दसवीं शताब्दी में एक प्रसिद्ध विद्वान संगीतज्ञ हुए हैं उन्होंने भरत के नाट्य शास्त्र की टीका में एक जगह लिखा है-तण्डुमुनि शब्दों नन्दि भरत योर्स्तंन्नामनी। नन्दि का दूसरा नाम तण्डुमुनि था, इस नन्दि नामक आचार्य के सम्बन्ध में वात्स्यायन कृत काम सूत्र में लिखा है।

महादेवा अनुचरश्च नन्दी सहस्रेणाध्यायानां प्रथक् प्रोवाच।

यह नन्दी शिवजी का अन्तःपुरीय भृत्य था। महादेव जब पार्वती से दिव्य सहस्र वर्ष केलिरत रहे नन्दि उनके विषयानन्द की कलाओं को ध्यान से देखता रहा और उस रति रहस्य पर उसने एक सहस्र अध्याय में काम सूत्र की रचना की यह बात उक्त काम सूत्र पर यशोधरी व्याख्या कहती है।

लिंग पुराण में लिखा है—शालंकायन पुत्रो वै शिलाद इति विश्रुतः। अयोनिजो मृत्यु हीनो शैलादि नन्दि केश्वरः।

जो योनि से उत्पन्न नहीं ऐसा अमर शाकलायन का पुत्र शिलाद नन्दि के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यदि यही नन्दि नाडी विज्ञान का आदि आचार्य था तो इसका समय सातवीं शताब्दी से पहले नहीं जाता। नन्दि सिद्ध सम्प्रदायी रस पद्धति के आचार्यों में था, इसका प्रमाण-नाभि यन्त्र मिदं प्रोक्तं नन्दिना सर्व दर्शिनाः। रसरत्न समुच्चये। इस तरह रस शास्त्र में इसको कई स्थानों पर स्मरण किया गया है, इससे ज्ञात होता है कि यह व्यक्ति तान्त्रिक युग के आरम्भ में एक अच्छा आचार्य हुआ। इसका विस्तृत विवेचन देखना हो तो भस्म विज्ञान पढ़ें।

वसवराजीय जो सिद्ध सम्प्रदाय का प्रसिद्ध ग्रन्थ है उसके आरम्भ में नाडी परीक्षा दी गई है उससे भी हम यही परिणाम निकालते हैं कि नाड़ी परीक्षा पद्धति के आविष्कारक व प्रचारक सिद्ध सम्प्रदाय के साधू महात्मा ही थे। वह अनेक प्रकार की सिद्धियां भी जानते थे, हो सकता है किसी व्यक्ति ने भूत सिद्धि प्राप्त करली हो जिसके बल पर वह भूत काल की अनेक बातें बताने में समर्थ हो गया हो।

सिद्धियों का सम्बन्ध तो सिद्धों से ही सिद्ध होता है और नाडी द्वारा खाये पिये का हाल बताना या रोगों की स्थिति बताना. एक सिद्धि ही है जो वास्तव में नाडी की स्थिति को अध्ययन करने वाला व्यक्ति कभी नहीं बता सकता। यह कैसे माना जाय? इसका हम अगले लेख में विस्तृत विवेचन करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदज्ञों को विशेषज्ञ बनने की आवश्यकता

वैद्य बनने की इच्छा रखने वाला विद्यार्थी घर से जब निकलता है, वह प्रायः आर्थिक दृष्टि से निर्बल होता है क्योंकि इस उन्नतिशील युग में कोई भी समझदार साधन सम्पन्न व्यक्ति अपने बच्चे को आयुर्वेद पढ़ाना उचित नहीं समझता। इसकी अपेक्षा अलोपैथी की ओर उसका झुकाव देखा जाता है। हमारे अनेक परिचित वैद्य जो साधन सम्पन्न हैं, स्वयम् अपने बालकों को वैद्य न बना कर डाक्टर बनाना ज्यादा पसन्द करते देखे जा रहे हैं। ऐसी प्रवृत्ति क्यों है ?

अब हम चिकित्सा शास्त्र परार्थ भावना को हृदय में स्थान देकर तो पढ़ते नहीं, हम तो जब आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करने जाते हैं तो हमारी भावना यही होती है कि हम इस विद्या को पढ़ कर इसके सहारे अपनी और परिवार की उदर पूर्ति करेंगे। अर्थात् हमारा दृष्टिकोण इसे पढ़ने का व्यवसायिक होता है। जब हमारा दृष्टिकोण ही बदल गया तो उस स्थिति में हमारा चिकित्सा-व्यवसाय तभी सफल हो सकता है जब हम इसमें विशेषश बने।

आयुर्वेद जिन ग्रंथों तक सीमित है वह ग्रंथ आज से दो सहस्र वर्ष पूर्व के रचे हुये हैं, और वैद्य बनने वाले विद्यार्थी को केवल यह ग्रन्थ पढ़ाये ही नहीं जाते प्रत्युत विश्वास जमाया जाता है कि "यह विद्या जो तुम पढ़ रहे हो सर्वांग पूर्ण है" किन्तु उनका वास्तव में यह कथन अत्युक्तिपूर्ण होता है।

इस समय भूमण्डल पर ढाई अरब से अधिक मनुष्यों का निवास है। भारतीय मानवों की आयु के संरक्षण का प्रश्न जितना आयुर्वेदज्ञों को था और है, उतना ही प्रत्येक भूमण्डल के मानव प्राणी के सामने रहा था और यह बात भिन्न है कि देश,काल परिस्थिति अनुसार उनका रूप हम से भिन्न हो, किन्तु उद्देश्य दोनों का एक ही था और वह था मनुष्यों को रोगों से मुक्ति दिलाना, उन की आयु का संरक्षण करना, बस। किन्तु इस विषय का ज्ञान जो कुछ हम आज से दो सहस्र वर्ष पूर्व प्राप्त कर चुके थे उससे जरा भी आगे नहीं बढ़े। किन्तु हम देखते हैं इसके विपरीत संसार के अन्य देश इस क्षेत्र में बहुत ही आगे बढ़ गये हैं भारत को छोड़ कर अन्य देशों के चिकित्सकों में चिकित्सा क्षेत्र में मिल कर काम करने की प्रवृत्ति इतनी बढ़ी है कि योरुप, अमेरिका, जापान तक एक दूसरे के सहयोगी बन गये हैं और उनमें परस्पर आदान-प्रदान होता रहता है। इसका परिणाम यह हुआ कि शरीर रचना, शरीर धर्म, निदान, औषध विश्लेषण, संश्लेषण, चिकित्सा विषयों में नाना प्रकार के नित्य नये आविष्कार होने लगे और यह प्रत्यक्ष मूलक ज्ञान इतना बढ़ गया कि भूतो न भविष्यति। किन्तु हमारे वैद्य इस दो सहस्र वर्ष में न तो कुछ ज्ञान में विज्ञान में आगे बढ़ पाये हैं न परस्पर सहयोग किया। इसलिये आयुर्वेद तो उतना ही रह गया जितना कि उसका रूप आविष्कार काल में था। इस समय आयुर्वेद रूपी कछुआ संसार की चिकित्सा रूपी खरगोश के साथ भला कैसे साथ साथ चल सकता है ? वैद्य बनते ही एक हाथ में रोगी की नाडी होती है तो दूसरे हाथ में खरल की मुठिया। वैद्य रोगी की समस्त परीक्षा तो नाडी पकड़ते ही क्षणों में कर डालते हैं और संसार के समस्त रोग वात पित्त और कफ के समूहों में उसी तरह समा जाते हैं जैसे रेवड़ में भेड़ें। फिर ज्यादा समझने की जरूरत ही क्या ? रोगी से फुरसत भी इसीलिये जल्दी मिल जाती हैं और स्वयम् औषध निर्माण करना सीख ही चुके होते हैं स्वयम् औषध तैयार कर लेते हैं। उन्हें विश्वास तो यह पहले ही करा दिया जाता है कि यह शास्त्र सर्वांग पूर्ण है, इसलिये वह फिर दूसरे वैद्य से परामर्श लेने की आवश्यकता नहीं सकझते। क्योंकि जितना वह पढ़ कर आये हैं उतना ही तो दूसरा पढ़ा है। एक डर उन्हें और भी रहता है कहीं दूसरे वैद्य को परामर्श के लिये बुला लिया जाय तो वह कहीं वैद्यो वैद्यः नटो नटः की युक्ति न चरितार्थ कर दे और रोगी पर अपना प्रभाव डाले और अपनी चिकित्सा के लिए कहीं फंसा न ले, यह भी एक चिन्ता होती है। इसलिये वैद्यों में सहयोग नाम की वस्तु तो अन्तर्धान ही हो गई है।

चरक का बारहवां वातकलाकलीय अध्याय पढ़ो, उस युग में किस तरह परिषदों में एकत्र होकर एक २ विषय पर कितना विचार करते थे और उनमें कितना सहयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, किस तरह वह ऋषि मुनि एक दूसरे का आदर मान करते थे और किस तरह परस्पर विचार विनिमय के बाद सर्वसम्मत निर्णय होते थे। यह बातें वैद्यों में आज स्वप्न बन रही हैं। दूसरी ओर अन्य चिकित्सक उन ऋषियों के दिखाये मार्ग का बड़ी श्रद्धा से अनुकरण कर रहे हैं, इसीलिये तो वह एक एक विषय में ही इतनी उन्नति कर गये हैं कि उनमें एक एक विषय के ही विशेषज्ञ बनने लग गये हैं। इस पर आप बीती एक घटना शिक्षा से रहित न होगी।

आज तीन मास की बात है कि एक दुर्घटना में ग्रसित होकर मेरे पैर के मूल स्थान की हड्डी टूट गई। डाक्टरों के पलस्तर से कष्ट का अनुभव कर के मैंने उसे प्रकृति की इच्छा पर छोड़ दिया। परिणामतः एक तो देर में जुड़ी, कुछ वक्र होकर जुड़ी, दूसरे २½ इंच पैर छोटा हो गया। जब चलने लगा तो वक्रगति से। सीधा हो नहीं सकता था, फिर उसे ठीक करने का स्वतः प्रयत्न करने लगा और कुछ ठीक भी हो रहा था दिल्ली से सूचना आई यहां अस्थि विशेषज्ञ अच्छे हैं, इन्हें दिखाइये।

मेरा विश्वास था कि अस्थि की स्थिति को ठीक करने वाले अभी ऐसे विशेषज्ञ नहीं होंगे। आग्रह करने पर दिल्ली गया। एक प्राइवेट प्रेक्टिस करने वाले डाक्टर किरी के पास मुझे ले जाया गया। देखने का समय देने में उसे देर लगी। मैं नहीं समझता था कि ऐसे अस्थि विशेषज्ञ के पास भी बीमारों की भीड़ होगी। २०) रु० उसकी परामर्श फीस थी।

जब डाक्टर ने हड्डी टूटने का सारा इतिहास लिख लिया, तब उसने परीक्षा कक्ष में मुझे लिटा कर कई यांत्रिक साधनों से देखकर बताया कि १३० कोण जहां पर अस्थि बनाती है वह सीधी होकर ९५कोण पर आ गई है। उसके पास इतने शुद्ध यान्त्रिक साधन थे जिनसे देख कर बतलाया कि अब पैर दूसरे से १¾ इंच छोटा हो गया है। किस मोड़ पर कितना छोटा है कौन कौन सी कण्डराएं इसको सिकोड़ने में सहायक हैं। एक एक बात उसने विस्तार से बताई। उसने ऐसे ऐसे लुंज पुंज व्यक्तियों को ठीक किया था जो चलने में असमर्थ थे। वह एक समय में ४-५ रोगी देखता है। जिनकी शल्य द्वारा चिकित्सा करता है उनसे तो सहस्रों लेता है। अमेरिका से विशेषज्ञ बन कर आया है यह उसने बताया। पश्चात् उसने क्ष किरण चित्र पैर का उतरवा कर देखा उसके परामर्श से जो मुझे मार्ग दर्शन मिला, बहुत लाभदायक रहा। इस समय उसी के परामर्शानुसार पैर ठीक करने की व्यवस्था कर रहा हूं।

आज ज्ञान के क्षेत्र में इतनी अधिक उन्नति हो चुकी है कि वैद्य बनने के लिये यह सम्भव नहीं कि वह समस्त चिकित्सा के विषय को पढ़ या अनुशीलन कर सके। इसीलिये जो हृदय, मस्तिष्क, नेत्र, कर्ण, अस्थि, फुफ्फुस आदि अंगों का ज्ञान इतना अधिक बढ़ गया है कि एक एक अंग सम्बन्धी विषय के विशेषज्ञ बन कर आ रहे हैं। वह विशेषज्ञ बन जाने के कारण जनता उनके पास बिना बुलाये दौड़ी चली जाती है। वैद्यों भी संसार की चिकित्सा प्रणालियों का पूर्णतया अध्ययन कर वह भी विशेषज्ञ बनने लगें तो इनकी भी इसी तरह पूछ हो सकती है जैसी डाक्टरों की।

हमारे यहां भी कोई कोई वैद्य किसी किसी रोग में चिकित्सा करते २ विशेषज्ञ बन जाते हैं। जो विशेषज्ञ बन जाते हैं उनको रोगियों से एक मिनट की फुरसत नहीं मिलती। किन्तु वे वैद्य "गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं प्रयत्नतः" का पाठ पढ़े होते हैं। अपनी संकुचित भावना के वश उसे साथ ही ले जाते हैं बताते नहीं, तब बताइये आगे विशेषज्ञ कैसे उत्पन्न हों? क्या वैद्यों की मानसिक वृत्ति इस युग में भी बदलने वाली नहीं?

वैद्य समाज के बुरे दिनों के लक्षण

नि० भा० आ० महामण्डल की स्थायी समिति का २८-११-५७को दिल्ली में अधिवेशन हुआ। पटियाला राज्य के दातव्य औषधालयों में जो वैद्य सरकारी तौर पर काम करते हैं ऐसे ५० वैद्य बहुमत बनाने के लिये लाये गये और जिस व्यक्ति के आधीन वह वैद्य हैं वह साथ आया और दिल्ली के कुछ प्रतिष्ठित वैद्यों से मिलकर उसने कहा यदि स्थायी समिति में आप कोई विधान का प्रश्न उठावेंगे तो हम सब आपका कोई सहयोग नहीं देंगे। आगामी सम्मेलन दिल्ली में हो केवल इस बात पर हमारे वैद्य आपका समर्थन करेंगे।

इसका अभिप्राय यह है कि जो भी अवैधानिक कार्य कार्यकर्ताओं की ओर से होते चले आये हैं उन पर मत बोलो, क्या संस्था इस तरह की स्थिति में वैद्य समाज की भलाई का काम कर सकती है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या सरकार द्वारा आयुर्वेद के औषध योगों को अपनाने से आयुर्वेद की रक्षा हो सकती है ?

इसी अक्टूबर की बात है कि विश्व कल्याण आश्रम के संस्थापक श्री अनन्त दिल्ली पधारे, अशोक होटल में आपके स्वागत का प्रबन्ध किया गया, जहां स्थानीय पत्रकार व पत्र प्रतिनिधि काफी संख्या में पहुंचे हुए थे। वहां कवि० प्रताप सिंह जी ने उनका परिचय देते हुए बताया कि आपने जड़ी बूटी सम्बन्धी अनुसन्धान में लगकर आयुर्वेद में एक चमत्कार कर दिखाया है।

तब उपस्थित पत्रकारों ने उनसे अनेक प्रश्न पूछे जिनके उत्तर में श्री अनन्त महाराज ने बताया कि केवल जड़ी बूटियों से–जिनमें कोई भी धातु भस्में नहीं पड़ती—५४ योग ऐसे अब तक आविष्कृत किये हैं जिनसे कैन्सर, श्वास, मृगी, जैसे दु:साध्य रोग कुछ दिनों में दूर हो जाते हैं। यदि हमारी राष्ट्रीय सरकार इनका उपयोग जनहित के लिये करे तो–आप: कहा मैं इन योगों को अपनी राष्ट्रीय सरकार को सौंपने के लिये तैयार हूँ।

सरकार को लाखों करोड़ों रुपया विदेशी दवाइयों पर न खर्च करके आयुर्वेद को अपनाना चाहिये। आयुर्वेद की औषधियां विदेशी औषधियों की अपेक्षा कहीं अधिक फलप्रद दिखाई जा सकती हैं।

केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री श्री करमरकर जी ने अभी कुछ दिन हुए कहा था कि देसी चिकित्सा पद्धति में यदि कोई औषधि लाभकारी है तो उसे अलोपैथी का अंग बना लेना चाहिये। स्वास्थ्य मन्त्री जी के उक्त कथन का अभिप्राय है उपयोगी अंश को ग्रहण कर लेना चाहिये। मान लीजिये! राष्ट्रीय सरकार श्री अनन्त महराज द्वारा आविष्कृत औषधियों को स्वीकार कर लेती है और उनको अलोपैथी चिकित्सा का अंग बना लेती है ऐसा करने से जिन रोगों में श्री अनन्त महाराज के बताये योग लाभ करते हैं उन रोगों पर काम आने वाली विदेशी औषधि को मंगाना राष्ट्रीय सरकार त्याग देती है तो बताइये इससे क्या आयुर्वेद की रक्षा हो सकेगी? हरगिज नहीं। यह तरीका तो आयुर्वेद को समाप्त करने का है।

जब राजकुमारी अमृतकौर जी स्वास्थ्य मन्त्री थीं तब भी उनका यही कथन था कि देशी चिकित्सा की उपयोगी औषधियों को अलोपैथी में मिला लिया जाय। यही बात श्री करमरकर जी भी कह चुके हैं। जिसका स्पष्ट तात्पर्य यही है कि आयुर्वेद में जो तत्त्व की चीज है उसे खींच कर अलोपैथी में मिला लो और देशी चिकित्सा पद्धति के संरक्षण का नाम मत लो।

वह तो कहते हैं–सिवाय औषधियों की गुणकारिता के देसी चिकित्सा पद्धति में और कोई तत्त्व की बात है ही नहीं। तभी तो राष्ट्रीय सरकार आजतक उसे संरक्षण देने में आना कानी दिखाती आ रही है। आयुर्वेद को संरक्षण देने का यह मार्ग भयंकर है और उसे समाप्त कर देने वाला है।

तब आयुर्वेद का संरक्षण कैसे हो सकता है? जो बात श्री करमरकर जी कहते हैं वही मार्ग हम अपनावें तभी आयुर्वेद का संरक्षण हो सकता है, वह क्या? वह यही कि इस समय तक जितना भी शरीर रचना, शरीर धर्म सम्बन्धी ज्ञान बढ़ा है और रोगों के कारणों पर जितना भी अनुसन्धान हुआ है सब का सब यदि हम अपना लें। मतलब की बात जो भी हो उसे लेकर आयुर्वेद को आधुनिक रूप में ले आवें तो हमें सरकार बिना ननुनच के स्वीकार कर लेगी। इस तरह आयुर्वेद का संरक्षण हो सकता है न कि उक्त विधि से।

पुरानी पेचिस पर अनुभूत वनस्पति

देश सेवक श्री भूपसिंह जी
निष्काम त्यागी आश्रम, मूसाखेड़ी

आपने सूचित किया है कि जिस व्यक्ति को मरोड़ के साथ दस्त आते हों और रक्त भी आता हो रोग चाहे पुराना हो चुका हो ऐसे रोगी को लज्जावन्ती जिसे छुई मुई का पौधा कहते हैं उसका रस निकाल कर २ तोला रस में १ तोला शहद मिलाकर सुबह शाम दोनों समय कुछ दिन पिलाने पर आश्चर्यजनक रूप से रोगी को लाभ होता है।

पथ्य–इसमें दही तक्र के साथ चावल (भात) नमक मिर्च, जीरा भुना मिलाकर ६-७ दिन सेवन करना चाहिये फलों में सन्तरा, मुसम्बी, मीठा अनार का रस ले सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या मन चाही सन्तान का युग आने वाला है ?

यह विज्ञान का युग है, कोई भी बात कही जाय अनहोनी नहीं मानी जाती। कोई भी व्यक्ति यह नहीं चाहता कि मेरी सन्तान कुरूप, दुर्बुद्धि हो। सभी यह चाहते हैं कि मेरी सन्तान परम रूपवान्, अत्यन्त बुद्धिमान् व चतुर हो। किन्तु सन्तान का रूपवान् या बुद्धिमान् होना तो उस पैत्रिक संस्कारी माला की मणियों में गुंथा हुआ वह अंश होता है जो वीर्याणु के साथ गर्भ में प्रवेश पाता है जैसा बुद्धिमान् या निर्बुद्धि उसका पिता होगा वैसी ही उसके वीर्य से उत्पन्न सन्तान होगी। यह बात अब प्रयोगों से सिद्ध हो रही है।

इस समय आष्ट्रेलिया नस्ल के साँड़ों के वीर्य से भारतीय गौओं को गर्भित किया जा रहा है उत्तम नस्ल के सांडो के वीर्य से गर्भित गायों की जो सन्तानें हो रही हैं वह उत्तम दूध देने वाली उत्पन्न हो रही हैं। भारत में इस तरह आष्ट्रेलिया से सांडों का वीर्य सुरक्षित रूप में आता है। एक सांड का वीर्य बीसों गायों को सर्गभा बना देता है और यह प्रयोग पूर्ण सफल रहा है।

पाठकों को शायद ज्ञात न हो कि विलायत में एक संस्था स्थापित हुई है जिसका नाम है 'मानव नस्ल सुधार संस्था' इस संस्था द्वारा यह प्रबन्ध किया गया है कि अच्छे विद्वान्, गायक, वैज्ञानिक व्यक्तियों के वीर्य को प्राप्त किया जाता है और मन चाही सन्तान की इच्छुक स्त्रियों को कृत्रिम विधि से गर्भाधान करा दिया जाता है अर्थात ऋतु स्नाता स्त्री के गर्भाशय में ट्यूब द्वारा वह सुरक्षित वीर्य का अंश पहुँचा दिया जाता है। जैसे पैत्रिक गुणों से सम्पन्न वह वीर्य होता है उसी के अनुरूप सन्तान होती है। यह कुछ समय से किये जा रहे परीक्षणों से परिणाम प्राप्त हुए हैं। यद्यपि यह संस्था स्वेडन, नार्वे आदि अन्य देशों में भी फैल चुकी है किन्तु इसका काम अभी गुप्त रूप में ही चल रहा है। अभी थोड़े दिन की बात है अमेरिका के एक व्यक्ति ने उक्त नस्ल सुधार संस्था के पास एक योजना भेजी है जो 'संडे मिरर' पत्र में प्रकाशित हुई है वह कहता है जिस तरह रक्त-बेंक खुल गये हैं, नेत्र बेंक खुल गये हैं इसी तरह वीर्य बेंक खोले जांय। और बड़े २ प्रतिभाशाली वैज्ञानिकों, इन्जीनियरों, संगीतज्ञों, कलाकारों, लेखकों को प्रेरित किया जाय कि वह अपना वीर्य वीर्य-बेंक को दान करें, इसके लिये उन्हें समुचित द्रव्य दिया जावे। और जो स्त्रियाँ वैज्ञानिक, कलाकार, गणितज्ञ जैसी सन्तान की इच्छा रखें उनसे उसका कुछ चार्ज लेकर उन्हें कृत्रिम विधि से सगर्भा बनाया जाय। इस तरह एक व्यक्ति के वीर्य से बीसों स्त्रियां गर्भवती बनाई जा सकती हैं। इससे मानव समाज की नस्ल में महान् सुधार हो सकता है। मालूम हुआ है कि इंगलैंड की उक्त नस्ल सुधार संस्था ने अपने एक अधिवेशन में इस योजना पर विचार भी किया है।

यदि यह योजना प्रकाश में आ गई और वीर्य बेंक खुल गये तो इसमें कोई शक नहीं कि मानव नस्ल में सुधार होना अवश्यम्भावी है। किन्तु उन कुलवन्तों का क्या बनेगा जो अपने वंश का चिराग रोशन रखना चाहते हैं। कृत्रिम गर्भाधान में तो उस पुरुष के वीर्य का कोई मूल्य नहीं रह जाता जिसके साथ उस स्त्री का विवाह हुआ है। स्त्रियां रूपवान, सर्वगुण सम्पन्न पुत्र की इच्छुक अधिक देखी जाती हैं। वीर्य-बेंक खुल जाने पर तथा कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र खुल जाने पर स्त्रियां गुप चुप गर्भ धारण करा आवेंगी तो किसी को क्या पता लग सकता है कि यह सन्तान असली पिता की है या कृत्रिम पिता की ? क्या सारा संसार इस योजना से वर्ण संकर न हो जायगा ? हो जाय भले ही पर इस प्रवाह को जो आंधी के वेग से आने वाला है क्या कोई रोक सकता है। ———

पथरी पर अनुभूत वनस्पति

श्रीराम स्वरूप अग्रवाल किराना मर्चेण्ट

आपको कुछ दिनों से स्वयंअश्मरी की शिकायत हो गई है। आपने अपने मूत्र की परीक्षा कराई है कैल्शियम अग्जेलेट की पथरी निश्चित हुई है।

आपके शहर में एक अध्यापिका की माता को पथरी थी। उसे किसी ने बताया कि पेड पत्ता (सन्जीवनी पत्ता) का एक एक पत्ता नमक लगाकर नित्य खाओ इससे पथरी निकल जायगी। मेरी माता को इससे आराम आगया है। उन्होंने बगीचे से पेड पत्ता नित्य ताजा तोड़ कर उसमें नमक लगाकर खाने लगे। आप सूचित करते हैं कि हमारा मूत्र जो शीशी में रखने से जम जाता था इसके सेवन से जमना बन्द हो गया और पथरी भी घुल कर निकल गई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

079508

देशी औषध निर्माता संघ का दूसरा अधिवेशन

[इस अधिवेशन का संक्षिप्त कार्य विवरण पाठक आयुर्वेद विज्ञान के अंक में पढ़ चुके हैं। विस्तृत सूचना अब प्राप्त हुई हैं जो प्रकाशित की जा रही है।]

चिरकाल से इस बात की गम्भीर आवश्यकता अनुभव की जा रही थी कि भारत भर के देशी-औषध-निर्माणकर्ता संस्थानों का एक ऐसा दृढ़ संगठन होना चाहिये जो पारस्परिक सहयोग की भावना और सामान्य हित-रक्षा प्रयास के उद्देश्य पर आधारित हो। अनेक बार इस सम्बन्ध में स्फुट चर्चाएं हुई और निर्माताओं में पत्राचार हुआ। इधर केन्द्रीय सरकार ने देशी औषधों पर कुछ ऐसे कानून लाद दिये हैं जो नितान्त अविचारपूर्ण हैं और जिनसे देशी औषध व्यवसाय को भारी धक्का तो लग ही रहा है, देशी चिकित्सा पद्धति पर अवलम्बित लाखों व्यक्तियों की जीविका तथा करोड़ों जनसाधारण के स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के महत्वपूर्ण अंग पर उन कानूनों का अहितकर प्रभाव होना निश्चित है।

सरकार द्वारा लगाये गये उन कानूनों की स्थिति का अध्ययन करने से यह स्पष्ट जान पड़ता है कि वे कानून पूरी जानकारी के बिना ही बनाये गये हैं और किसी ओर से देशी चिकित्सा-पद्धति का पक्ष विवेकपूर्वक सरकार के सामने प्रस्तुत नहीं किया गया। यह निश्चय जान पड़ता है कि यदि सरकार के समक्ष वास्तविक स्थिति को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जाय तो सरकार देशी औषधियों पर लगे इन व्यवहारशून्य कानूनों पर अवश्य पुनर्विचार करेगी। हितकर सुझाव भी सरकार के पास यदि संगठित शक्ति द्वारा न रखे जावें तो उनका कोई प्रभाव नहीं होता। यही दशा औषधि-निर्माता-क्षेत्र में है। व्यक्तिगत रूप से हरएक औषधि-निर्माण आज भी सरकारी अधिकारियों के नित नये दुर्व्यवहारों से त्रस्त रहता है। हाल में ही आयुर्वेदीय आसव-अरिष्टों पर जो मद्यकर-कानून लग चुका है, उससे तो इस व्यवसाय का बहुत बड़ा अहित होने जा रहा है। आसव-अरिष्टों पर यह कानून विगत अप्रैल मास से ही लागू हो चुका है और वह सारे भारतवर्ष में एक-सा लागू है। यद्यपि कुछ क्षेत्रों में अभी सक्रियता नहीं दिखाई देती, परन्तु ज्यों ही एक्साइज विभाग के पास पर्याप्त संख्या में आदमी हो जायेंगे, वैसे ही सर्वत्र इस कानून का आकस्मिक प्रहार हो जायगा और कोई भी छोटा या बड़ा निर्माता इससे बच नहीं सकेगा, बल्कि जब से यह कानून लगा है तब से ही आसव-अरिष्टों का पिछला हिसाब और कर इत्यादि हर निर्माता को देना पड़ेगा और आगे जब तक लाइसेंस न मिल जावे तब तक वह आसवारिष्ट का कतई निर्माण नहीं कर सकेगा। उस अवस्था में हर निर्माता के सामने दो ही उपाय होंगे कि या तो वह आसव-अरिष्टों का निर्माण ही बन्द कर दे या फिर इस कानून की धाराओं का पालन करने के लिये एक बड़ा मासिक खर्च अपने ऊपर लाद ले और नियमानुसार बाण्डेड लेबोरेटरी बनाने में कुछ हजार रुपया तो तुरन्त ही लगावे। यदि इस प्रकार से असंगठित रह कर हर निर्माता इस कानून के अन्तर्गत कार्य करेगा तो अलग-अलग सब हानि उठावेंगे। यह भी निश्चय है कि यदि यह कानून ज्यों का त्यों रहता है तो बड़े-बड़े संस्थान वाले तो सुविधापूर्वक कानून के नियमों की पूर्ति करके अपना काम चला सकते हैं, परन्तु छोटे-छोटे सैकड़ों निर्माताओं के लिये अपना कार्य चलाना सम्भव नहीं होगा। वैद्यों के लिये तो असम्भव ही है।

इस विपत्ति की विभीषिका से निवारण पाने के लिये ही अखिल भारत के देशी-औषधि-निर्माताओं का यह संगठन हुआ है। निश्चय ही यह बड़े सन्तोष की बात है कि बड़े-बड़े निर्माताओं ने इस अवसर पर व्यावसायिक स्वार्थ से ऊपर उठकर संगठन के सम्पादन में अग्रगण्य होकर भाग लिया है। यद्यपि देखा जाय तो आसव-अरिष्ट पर लगे नये नियमों के कारण सैकड़ों ही अल्प स्तर के निर्माताओं, वैद्यों, का कार्य सर्वथा बन्द हो जायगा, जिसका फल बड़े निर्माताओं के हित में हो सकता है, क्योंकि उनकी बिक्री बढ़ सकती है, परन्तु इस अवसर पर बड़े निर्माताओं ने इस व्यक्तिगत लाभ की ही बात को न सोचकर सभी-छोटे बड़े निर्माताओं, वैद्यों के हित में संघर्ष में आगे आने की जो सहयोग वृत्ति दिखलाई है, उससे ही अखिल भारतीय देशी-औषधि-निर्माता संघ का भविष्य स्पष्ट और अच्छा प्रतीत होता है।

देशी औषधि-निर्माता संघ का पहला अधिवेशन दिल्ली में ही गत १५-१६ अगस्त को हुआ था, जिसमें विभिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदेशों के देशी औषध-निर्माताओं ने सम्मिलित होकर संगठन के मौलिक उद्देश्यों को स्वीकार कर यह निश्चय कर लिया था कि निर्माताओं का अखिल भारतीय संघ बनाया जाय और सरकारी प्रतिबन्धों के निवारणार्थ संघ के द्वारा ही कार्यवाही की जावे।

संघ का दूसरा अधिवेशन दिल्ली में जोगीवाड़ा स्थित मारवाड़ी धर्मशाला में अभी २६-२७ अक्टूबर को उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ है। इस अधिवेशन में उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार, राजस्थान, दिल्ली, पंजाब, मध्यप्रदेश इत्यादि प्रदेशों के प्रमुख देशी-औषधि-निर्माताओं ने भाग लिया। केन्द्रीय सरकार के देशी औषधि-परामर्श-दाता कविराज श्री प्रतापसिंहजी भी अधिवेशन में सम्मिलित हुए। यद्यपि दीपावली और व्यापारिक वर्षारम्भ के कारण कई निर्मातागण इस सम्मेलन में स्वयं भाग नहीं ले सके, तथापि उनके सन्देश और विचार जो अधिवेशन में प्रस्तुत किये गये वे निश्चय ही बहुत उत्साहवर्द्धक थे। दिल्ली के हमदर्द दवाखाना और राजवैद्य शीतल प्रसाद एण्ड सन्स जैसे बड़े निर्माताओं का संघ के कार्यों में सक्रिय भाग लेना उत्साहजनक है। इसी प्रकार कालेड़ा कृष्णगोपाल (अजमेर) के श्रीकृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन के संचालक ने पूर्व ही अपना प्रवेश शुल्क और मासिक शुल्क भेजकर संघ की सदस्यता स्वीकार करते हुए संगठन के लिए बड़ महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। पिछले अधिवेशन में प्रायः तीस निर्माता-संस्थानों का सहयोग संघ को प्राप्त हुआ था। इस अधिवेशन में उनके अतिरिक्त कई अन्य संस्थानों का नया सहयोग पाकर सम्मेलन का कार्य अधिक सार्थकता के साथ सम्पन्न हुआ।

सम्मेलन की कार्यवाही

द्वितीय अधिवेशन की प्रथम बैठक दिनांक २६ अक्टूबर ५७ को प्रातः नौ बजे आरम्भ हुई। कार्यवाहक प्रधान श्री वैद्य रामनारायण जी शर्मा के आसन ग्रहण करते ही विधिवत् कार्यवाही का संचालन हुआ। सर्वप्रथम पिछले अधिवेशन में स्वीकृत विधान के प्रारूप में संशोधन का विषय उपस्थित हुआ। पूर्व प्रारूप पहिले ही औषध-निर्माताओं को सेवा में विचारार्थ भेजा जा चुका था और अनेक सदस्यों ने विधान में संशोधन करने के विषय में अपने सविवरण सुझाव मन्त्री जी एवं कार्यवाहक अध्यक्ष के पास प्रेषित किये थे। सामूहिक रूप से विधान में कुछ संशोधन करने के सुझाव पंजाब प्रदेश देशी-औषध-निर्माता संघ व कलकत्ता से भी प्राप्त हुए थे। उक्त दोनों ही प्रादेशिक संघों ने अखिल भारतीय संघ के साथ सम्बन्ध हो जाने के निश्चय के प्रस्ताव अपनी सभाओं में स्वीकृत कर लिए हैं।

संविधान के प्रारूप में संशोधन करने के जो-जो सुझाव विभिन्न सदस्यों और प्रादेशिक संघों से उपलब्ध हुए थे, उनके अनुसार एक नया प्रारूप तैयार करके संघ के द्वितीय अधिवेशन की प्रथम बैठक में उपस्थित किया गया। प्रथम बैठक में संघ की सदस्यता की अर्हता के सम्बन्ध में विचारोपरान्त और कविराज प्रतापसिंह जी के सुझाव पर यह निश्चय किया गया कि जो संस्थान मुख्यतः आयुर्वेदीय एवं यूनानी शास्त्रोक्त औषधियों का निर्माण करते हैं, उनको ही संघ का सदस्य बनाया जाय। सदस्यता एवं प्रवेश शुल्क के विषय में संशोधित विधान में अन्तिम रूप से निम्न निश्चय किया गया—

कर्मठ सदस्य—तीस हजार से एक लाख तक वार्षिक बिक्री वाले संस्थान—१०१) रुपया प्रवेश शुल्क और १०) मासिक शुल्क देने पर।

विशिष्ट सदस्य—एक लाख से पांच लाख तक वार्षिक बिक्री वाले संस्थान—२००) प्रवेश शुल्क और २५) रु० मासिक शुल्क देने पर।

संरक्षक सदस्य—पांच लाख से ऊपर वार्षिक बिक्री वाले संस्थान—१०००) रु० प्रवेश शुल्क और १००) मासिक शुल्क देने पर।

यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि वे संस्थान जो आयुर्वेदिक इन्जेक्शन बनाते हैं, संघ के सदस्य हो सकेंगे अथवा नहीं। पर्याप्त वाद-विवाद के उपरान्त सर्वसम्मति से यह निश्चित हुआ कि इन्जेक्शन निर्माता अपने अनुसन्धान के द्वारा अपने इन्जेक्शनों का आयुर्वेदीय आधार सिद्ध कर दें और उन इन्जेक्शनों की उपयोगिता तथा शुद्ध आयुर्वेदीय एवं यूनानी औषधों से बनाया जाना सिद्ध करदें तो इन्जेक्शन निर्माताओं को भी संघ का सदस्य बना लिया जायगा।

इसी समय इण्डियन फार्मेसिस्ट एसोशियन बम्बई के मन्त्री जी की ओर से सगठन और सहयोग के विषय में एक तार सभास्थल पर ही प्राप्त हुआ। झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लि० तथा धूतपापेश्वर इन्डस्ट्रीज प्रा० लि० का एक अन्य संयुक्त तार विधान में कुछ संशोधन के सुझाव के साथ प्राप्त हुआ। उपस्थित सदस्यों ने दोनों तारों पर बड़ी गम्भीरतापूर्वक विचार किया। इण्डियन फार्मेसिस्ट एसोसियेशन बम्बई के मन्त्री जी ने पत्र द्वारा भी विधान में कुछ सुधारों का सुझाव दिया था। झण्डु और धूतपापेश्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अध्यक्षों द्वारा तार से प्रेषित संशोधनों को वाद-विवादोपरान्त स्वीकार कर लिया गया और तदनुसार विधान के पूर्व प्रारूप में पृष्ठ १२ एवं १३ पर संघ की अंगभूत संस्थाओं के रूप में केन्द्रीय रसायनशाला तथा औषध आयात समिति को संघ के विधान में से सर्वथा हटा दिया गया। इसके उपरान्त भोजनादि के हेतु कार्यवाही स्थगित कर दी गई।

२६ अक्टूबर को ही अपरान्ह ३ बजे से दूसरी बैठक पुनः आरम्भ हुई। विधान के शेष अंश पर विचार विमर्श के उपरान्त सम्पूर्ण संशोधित विधान सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। २७ अक्टूबर को प्रातः तीसरी बैठक में निम्न उल्लेखनीय बातें स्वीकृत हुई—

(१) संघ का मन्त्री कोई योग्य अंग्रेजी हिन्दी का विद्वान नियुक्त किया जायगा जो यथासम्भव कानून और देशी औषधि-उद्योग का ज्ञान रखता हो। मन्त्री वेतनिक होगा।

(२) संघ के स्वीकृत संविधान के अनुसार संघ को शीघ्र रजिस्टर्ड कराने के निमित्त श्री शान्ति प्रसाद जी जैन की प्रधानता में एक समिति नियुक्त की गई। तदर्थ १५०) रु० का व्यय स्वीकृत किया गया।

(३) संघ के लिये वर्ष भर के निमित्त स्थाई रूप से एक कानूनी सलाहकार की नियुक्ति के लिये श्री पुष्करणा जी और श्री शांति प्रसादजी को अधिकार दिया गया।

(४) निश्चय हुआ कि नयी दिल्ली क्षेत्र में संघ के प्रधान कार्यालय के हेतु एक अच्छा मकान ले लिया जावे, जिसका १२५) मासिक से अधिक किराया-व्यय श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन की ओर से दिया जायगा।

(५) निश्चय हुआ कि शीघ्र ही संशोधित और स्वीकृत विधान की प्रतियाँ प्रवेश पत्र के साथ देश भर के देशी औषधि-निर्माताओं के पास इस प्रार्थना के साथ भेजी जावें कि वे यथासम्भव शीघ्र ही अपना प्रवेश पत्र भेज दें और नियमित शुल्क भेज दें।

पूर्व बैठकों में स्वीकृत विधान पर पुनर्विचार के उपरान्त संघ के भावी कार्यक्रम पर विस्तार से विचार-विमर्श हुआ। इण्डियन फार्मेसिस्ट एसोसियेशन बम्बई के मन्त्री जी के पत्रों पर निश्चय हुआ कि हमारा संघ उनका भरपूर सहयोग प्राप्त करने के निमित्त सदा प्रयत्नशील रहेगा। पश्चिम बंगाल देसी औषध-निर्माता संघ एवं पंजाब प्रदेश देशी औषध निर्माता संघ के अखिल भारतीय संघ से सम्बद्ध होने के निश्चयों का स्वागत किया गया।

भावी कार्यक्रम के विषय में निश्चय हुआ कि शीघ्र ही केन्द्रीय सरकार के मन्त्रियों और उच्चाधिकारियों के समक्ष आसव-आरिष्ट पर मद्यकर कनून के विरोध में संघ की ओर से एक ठोस स्मृतिपत्र प्रस्तुत किया जाय। स्मृति-पत्र के हेतु मूल बातें सर्वसम्मति से स्वीकार की गई।

संघ के कार्यक्रम के सम्बन्ध में उपस्थित महानुभावों ने विभिन्न विचार प्रस्तुत किये और यह निश्चय किया गया कि आगे एक ओर तो संघ के संगठन को शीघ्र दृढ़ बनाया जाय, दूसरी ओर सरकार यदि आवेदनिक प्रार्थनाओं पर ध्यान न दे तो आसव-अरिष्टों को मद्यकर से मुक्त कराने के निमित्त कानूनी कार्यवाही का प्रश्रय सघ की ओर से लिया जा सकता है।

तृतीय बैठक में कुछ प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किये गये, जिनका आशय आयुर्वेद विज्ञान के पिछले अंक में पाठक पढ़ चुके हैं।

महत्वपूर्ण निर्णय

इस अधिवेशन में दो निर्णय निश्चय ही बड़े महत्वपूर्ण हुए हैं। एक तो यह कि संघ का मन्त्री वैतनिक विद्वान् रखा जाय और दूसरा यह कि संघ का प्रधान कार्यालय एक स्वतन्त्र मकान में राजधानी नयी दिल्ली में ही रखा जायगा। संघ के समक्ष जो कार्यक्रम है, उसके लिए यह परम आवश्यक है कि संघ का साधिकार प्रतिनिधित्व करने वाला एक ऐसा व्यक्ति हो जो अपना पूरा समय संघ के कार्य में नियमित रूप से देता रहे। इसके लिग वैतनिक मन्त्री की नियुक्ति का निश्चय सर्वोत्तम किया गया है। भारत भर के देशी औषधि-निर्माताओं के रोजमर्रा के प्रश्नों की शिकायतें संघ कार्यालय में नियमित पहुंचा करेंगी और संघ का मन्त्री सरकारी अधिकारियों से उच्चस्तरीय सम्पर्क स्थापित करके उन समस्याओं के समाधान का प्रयत्न करता रहेगा। इसके अतिरिक्त विभिन्न कानूनी असुविधाओं के निवारणार्थ केन्द्रीय मन्त्रियों, संसद सदस्यों आदि से मिलते-जुलते रहने और संघ का स्वर राजकीय क्षेत्र में उठाने के लिये एक व्यक्ति की पूरे समय की सेवाए ही आपेक्षित हैं। निर्माताओं के व्यावसायिक विकास के लिये संघ की ओर से निरन्तर प्रचार के प्रयत्न किये जाते रहेंगे—उनका संचालन और दैनिक कार्यों का निर्वाह वैतनिक मन्त्री द्वारा ही सुलभ हो सकता है। संघ के अधिकांश सदस्यों ने इस निश्चय की सराहना की है।

सहयोग में वृद्धि

पिछले सम्मेलन की अपेक्षा इस द्वितीय सम्मेलन में कुछ और अधिक लोगों का सहयोग संघ को मिला, और प्राप्त सन्देशों के आधार पर यह विश्वास किया जाता है कि शीघ्र ही संघ के सदस्य प्रायः समस्त देशी औषधि-निर्माता बन जायेंगे। इस सम्बन्ध में निर्माताओं से सम्पर्क स्थापित करने का कार्य आरम्भ कर दिया गया है। दिल्ली में संघ के कार्यवाहक अध्यक्ष ने प्रसिद्ध औषध-निर्माता संस्थान श्रीधन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ के अध्यक्ष श्रीयुत देवीशरण जी गर्ग वैद्यराज से मुलाकात की। श्रीयुत गर्ग जी यद्यपि अपने औषध-निर्माण, पत्र-सम्पादन और उससे अधिक चिकित्सा-कार्य में बहुत अधिक व्यस्त रहते हैं, तथापि उन्होंने सघ के संगठन पर हर्ष व्यक्त किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजिस्टर्ड नं० डी-७२०

0२४०६

आसवं निर्माणार्थ सागवान काष्ठ के उत्तम ढोल

प्राचीन काल से ही वैद्यों में आसव निर्माणार्थ प्रायः मट्टी के पात्रों को प्रयोग करने का प्रचलन है। परन्तु मट्टी के पात्र में दो बड़े दोष हैं एक तो [illegible]र होने से आसव द्रव उस में से चू कर बाहर निकल सकता है। दूसरे मृत्पात्र [illegible]ापवाहक होने के कारण सन्धानार्थ द्रव के अन्दर आवश्यक उत्ताप को स्थिर नहीं रख सकता, जिस से आसव निर्माण क्रिया (सन्धान) में बाधा उत्पन्न हो सकती है। लकड़ी के ढोल इन दोनों दोषों से मुक्त हैं। लकड़ी में भी सागवान की लकड़ी ऐसी कठोर है कि निरन्तर वर्षों तक पानी के संसर्ग में रहने पर भी यह नहीं गलती। अतः सागवान के बने ढोल चिर काल तक खराब नहीं होते और आयु पर्यन्त काम देते रहते हैं। मृत्पात्र की तरह इन्हें घृत परिप्लुत करने का झंझट भी नहीं करना पड़ता। जल से प्रक्षालन कर स्वच्छ करके इन का प्रयोग किया जा सकता है। मृत्पात्र की तरह इनके फूटने का भी भय नहीं।

हमारे यहां वर्षों से इन ढोलों का प्रयोग हो रहा है। श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी द्वारा लिखित "आसव विज्ञान" पुस्तक के प्रकाशन के बाद से देश के प्रत्येक कोने से इन लकड़ी के ढोलों के लिये अनेकों वैद्यों की मांग आती रही है। अतः हमने विलायत से आने वाले माल के खाली ढोल जो बड़ी बड़ी मिलों में रासायनिक पदार्थों में लग कर आते हैं उनके संग्रह का प्रयत्न किया है वह साफ करने पर आसव निर्माण के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। आशा है वैद्य समाज तथा औषध निर्माता इन का प्रयोग कर आसव निर्माण प्रक्रिया को समुन्नत करने की दिशा में अग्रसर होंगे। इस से उन्हें सुविधा भी होगी और आसव भी उत्तम बनेंगे। प्रत्येक ढोल की समाई इतनी है कि उसमें १ मन २० सेर आसव तैयार हो सकता है। मूल्य प्रति ढोल ८) मार्ग व्यय भिन्न।

आर्डर के साथ पेशगी आना जरूरी है।

निवेदक—मैनेजर पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी
अकाली मार्केट-अमृतसर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar